हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य

डॉ० साधना निर्भय
एम० ए०, पी-एच० डी०

साहित्य भवन प्रा. लि.
63, के. पी. कक्कड़ रोड
इलाहाबाद-211003

HINDI KI MUSALMAN KAVIYON KA KRISHNA KAVYA

By

Dr Sadhna Nirbhay

प्रथम सस्करण १९८१ लेखक मूल्य ५५-

साहित्य भवन प्रा० नि०, ८३, के० पी० कक्कड रोड, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित

स्टार प्रिण्टस, २८७, दरियाबाद, इलाहाबाद द्वारा मुद्रित

शुभाशंसा

'कृष्ण' ने भारतीय जीवन, साहित्य और संस्कृति को अनेक रूपों में आत्यंतिक रूप से प्रभावित किया है। इतना महान् क्रान्तद्रष्टा और विराट् व्यक्तित्व संसार के इतिहास में दूसरा नहीं हुआ। सचमुच भारतीय धर्म, और संस्कृति के इतिहास में कृष्ण का व्यक्तित्व अत्यंत विलक्षण है।

विश्व के प्राचीनतम साहित्य 'ऋग्वेद' में 'कृष्ण-आंगिरस'—(१, ११६, ८१ ११६, २३, ८, ८५, १-९, ८, ८६, १-५ आदि) का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में कृष्ण ऋषि हैं। वहाँ कहीं वे 'कृष्णायु' के पिता है तो कहीं अपत्यवाचक 'वृष्णिय'।

'कौषीतकी ब्राह्मण' (३०/९) में 'कृष्ण आंगिरस' का वर्णन मिलता है। 'ऐतरेय आरण्यक' में 'कृष्ण हारीत उपाध्याय' का उल्लेख मिलता है।

'ऋग्वेद' (८/९६/१३-१५ और १/१०-११) में कृष्ण को अपने दस सहस्र सैनिकों के साथ 'अंशुमती' (यमुना) तट के प्रदेश का निवासी कहा गया है।

'छान्दोग्य उपनिषद्' में देवकी-पुत्र कृष्ण का उल्लेख मिलता है, वे घोर आंगिरस के शिष्य थे।

श्री मद्भगवद्गीता और छान्दोग्य उपनिषद् के कृष्ण के विषय में सर जार्ज ग्रियर्सन, मजुमदार, राय चौधरी, वान श्राउडर आदि अनेक विद्वानों का मत है कि वे दोनों एक हैं, पर मैक्समूलर, कीथ, तिलक आदि का मत है कि वे दोनों एक नहीं हैं। पार्टिजर का मत है कि वे शात्वत-कुल के यदुवंशी थे और मनु की ९४वी पीढ़ी में हुए थे। यदुवंश में उन्हें वसुदेव-देवकी का पुत्र कहा गया है।

वस्तुतः वेदों में कृष्ण स्तोता 'मन्त्रद्रष्टा' ऋषि हैं, अवतारी नहीं। 'घट' और 'महा उमगा' जातकों में भी 'कण्ह'—कृष्ण—वसुदेव पुत्र है और उनमें उनकी कथा वर्णित है। हरिवंश, विष्णु, भागवत, ब्रह्मवैवर्त आदि अनेक पुराणों में कृष्ण-कथा के सविस्तर वर्णन मिलते हैं।

वस्तुतः कृष्ण की कथा भारतीय लोकजीवन की एक ख्यात-प्रख्यात कथा रही है। पुराणों में धीरे-धीरे उसकी रूपक-कथा के रूप में प्रतिष्ठा हुई। उसमें इतना अवकाश था कि कवियों को अपनी कल्पना के सम्प्रसार का अवसर मिला है। कल्पना के लिए अत्यंत उर्वर क्षेत्र था कृष्ण-कथा का।

कृष्ण योगी योगेश्वर हैं, वे ललित मधुर गोपीजन वल्लभ हैं—और वे भी।

घोर राजनीतिज्ञ है। वस्तुत वे मनुष्य के ज्ञान, राग और कर्म वृत्तियों के सर्वोच्च शिखर कहे जा सकते हैं। इन सभी रूपों मे विलक्षण रूप से एक सूत्रता द्रष्टव्य है।

वस्तुत वेदो मे कृष्ण मन्त्रद्रष्टा ऋषि हैं। महाभारत मे उनका सहस्रो स्थलो पर उल्लेख मिलता है। वे महाभारत के सूत्रधार हैं। हरिवंश तो महाभारत का खिलपाठ है—

पुराणों की कल्पनात्मकता, रूपकात्मकता, प्रतीकात्मकता आदि दृष्टियो से तटस्थ होकर विचार किया जाय तो कृष्ण पूर्णत महामानव और ऐतिहासिक महापुरुष के रूप मे उपस्थित होते हैं।

महाभारत के पश्चात् कृष्ण के साहित्यिक व्यक्तित्व म अद्भुत परिवर्तन मिलता है, वे धीरे धीरे पूर्ण अवतार के रूप मे प्रतिष्ठित हो जाते है। गोपाल रूप मे कृष्ण की उपासना पुराणों की ही देन है, पुराणो मे कृष्ण के गोपाल एवं अवतारी रूपों का सविस्तार वर्णन मिल जाता है। बंगला के प्रख्यात कथाकार बंकिमचंद्र ने अपने ग्रंथ 'कृष्ण-चरित' म कृष्ण की ऐतिहासिकता की प्रामाणिक रूप से स्थापना की है। वस्तुत विष्णु, नारायण, वासुदेव और कृष्ण—एक ही विराट् व्यक्तित्व के रूप हैं। भारतीय अवतारवाद म वराह, कूर्म, कच्छप नृसिंह, परशुराम, राम, कृष्ण आदि म अभेद माना गया है और यह स्थापना की गयी है कि परमतत्व स्वरूप विष्णु या परमात्मा ने समाज म बार-बार अवतार लिये हैं। गीता मे कहा गया है कि—

'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥'

अर्थात् धर्म की हानि होने पर अधर्म का अभ्युत्थान होने पर ईश्वर स्वयं का सृजन या अवतार करते हैं। कृष्ण ने सज्जनो के परित्राण के लिये दुष्कृतो के विनाश के लिए अवतार धारण किया है। भागवत धर्म का प्रचार ईसा की छठी शताब्दी के पूर्व हो चुका था। घोसुण्डा, बेस नगर, नानाघाट, आदि स्थानो से प्राप्त शिलालेखों म संकर्षण-वासुदेव का उल्लेख मिलता है। इससे स्पष्ट है कि भागवत धर्म का प्रचार छठी शताब्दी-दसवीं पूर्व के पहले हो चुका था।

पुलकेशियन द्वितीय के अभिलेख के गणना के अनुसार महाभारत का काल ३१०२ ईसवी पूर्व ठहरता है। आर्य भट्ट के अनुसार यही से कलयुग का प्रारम्भ होता है। वराह मिहिर के अनुसार महाभारत का समय २४४८ ईसवी है—वस्तुत महाभारत के युद्ध के समय के विषय म बहुत कम मतभेद है। हाँ, यह सही है कि महाभारत का युद्ध ३१०० ईसवी पूर्व के आस पास हुआ था, और ३१००+२००० अर्थात् विगत ५००० वर्षों तक कृष्ण के विराट् व्यक्तित्व का विकास होता रहा है।

श्रीकृष्ण के विराट, बहुआयामी और रसमय जीवन ने भारतीय कलाओं को अनेक रूपों में बड़ी गहराई तक प्रभावित किया है।

संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में कृष्ण कथा का उल्लेख भरा पड़ा है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल में ही कृष्ण कथा रास और रासक काव्यों में मिलने लगती है। भक्तिकाल में सूरदास, अष्टछाप के अन्य कवि, तुलसीदास के काव्य कृष्ण भक्ति परम्परा के अनमोल रत्न हैं।

कृष्ण कथा में अद्भुत आकर्षण रहा। परिणामतः हिन्दुओं के साथ मुसलमान कवि भी कृष्ण की ओर आकर्षित हुए। मलिक मुहम्मद जायसी, रहीम, रसखान, ताज, कमाल, महाकवि जान, मुबारक आदि सैकड़ों मुसलमान कवियों ने अपने अन्तः की सर्वोत्तम अभिव्यक्तियाँ हिन्दी साहित्य में अमर कर दी हैं। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने ठीक ही लिखा है कि—

'इन मुसलमान हरिजनन पर, कोटिन हिन्दू वारिये।'

वस्तुतः हिन्दी के सभी कृष्ण भक्त मुसलमान कवि मुसलमान होते हुए भी अत्यन्त उदार हृदय हैं, वे सच्चे अर्थों में हिन्दू-मुस्लिम एकता के पावन संगम या सेतु हैं।

डॉ० चैतन्य गोपाल निभय नेह के नाते मेरे अनुज तुल्य हैं और उनकी सुपुत्री श्रीमती साधना निभय मेरी भी सुपुत्री हैं। उसने अत्यंत परिश्रम के साथ 'हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य'-विषय पर शोध कार्य किया है। उसे इस विषय पर पी-एच० डी० की उपाधि मिला है, उसने ऋग्वेद से लेकर संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश साहित्य में कृष्ण के विकास का अत्यंत शोध पूर्ण अध्ययन उपस्थित किया है। भक्ति और रीतिकाल के विविध कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों का उसने संक्षिप्त, किन्तु पूर्ण परिचय दिया है।

वस्तुतः हिन्दी के मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों पर यह प्रथम शोधपूर्ण उपयोगी और प्रामाणिक शोध कार्य है। इस शोधकार्य की एक और बड़ी विशेषता है कि लेखिका ने मूल आकर ग्रंथों का अध्ययन किया है और उसके प्रकाश में यह शोध प्रबन्ध लिखा है। सामग्री संकलन उसके सुष्ठु मन्थन और प्रामाणिक निष्कर्षों के कारण यह ग्रंथ उपयोगी बन पड़ा है।

हिन्दी के विकास में मुसलमान कवियों का योगदान अप्रतिम माना गया है और हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी के कृष्ण काव्य में मुसलमान कवियों का योगदान भी अप्रतिम और अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। डॉ० साधना निभय ने हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य के अनुशीलन विषय पर विद्वत्ता पूर्ण ढंग से अत्यंत महत्व-

पूर्ण शोध कार्य किया है। उनका यह शोध कार्य सर्वथा अभिनन्दनीय है। विश्वास है कि यह अपने प्रकाशित रूप में सहृदय और सुधी विद्वानों द्वारा समादृत होगा। मेरी शुभाशंसा है कि आयुष्मती साधना और अधिक उत्साह और श्रम के द्वारा इसी प्रकार हिन्दी साहित्य को समृद्ध करती रहेंगी।

शिवसहाय पाठक
हिन्दी अध्ययनशाला
आचार्य एवं अध्यक्ष,
विक्रम विश्वविद्यालय (उज्जैन)

निवेदन

भारतीय साहित्य मे कृष्ण-काव्य की एक सुदीर्घ परम्परा है। वेदो मे कृष्ण का अनेक विध उल्लेख मिलता है। पद्म, मत्स्य, ब्रह्मवैवर्त, वायु, वामन, विष्णु प्रभृति पुराणो मे कृष्ण का आख्यान मिलता है। श्रीमद्भागवत और महाभारत कृष्ण कथा के आकर ग्रंथ हैं। संस्कृत के साथ ही प्राकृत और अपभ्रंश काव्यो मे भी कृष्ण कथा अनेक रूपो मे मिलती है। वल्लभ, चैतन्य आदि अनेक सम्प्रदायो मे कृष्ण के विभिन्न स्वरूपो की उपासना मिलती है। वस्तुत राधा और कृष्ण ने संस्कृत के साथ ही हिंदी साहित्य को भी बड़ी गहराई से प्रभावित किया है।

आदिकालीन हिंदी साहित्य में कृष्ण कथा स्फुट रूप मे मिल जाती है। भक्तिकाल मे भारतवर्ष मे कृष्ण-राधा विषयक अनेक सम्प्रदाय प्रवर्तित हुए हैं, इनमे वल्लभ, चैतन्य, राधा स्वामी आदि अनेक सम्प्रदाय प्रख्यात हैं। अष्टछापीय कवियों के साथ ही मलिक मुहम्मद जायसी, ताज, महाकवि जान, रसखान, जमाल, रहीम, मुबारक प्रभृति कवियो ने कृष्ण-काव्य परम्परा मे अपने अंत की श्रेष्ठ भावाभि-व्यक्तियाँ उपस्थित की हैं। हिंदी रीतिकाल मे शताधिक मुसलमान कवियो ने श्रीकृष्ण और राधा को अपनी कविता का प्रमुख प्रतिपाद्य बनाया है। आधुनिक युग मे भी हिंदू कवियो के साथ मुसलमान कवियो ने भी राधा-कृष्ण विषयक काव्यो की सर्जना की है। कृष्ण-कथा जाति, धर्म, सम्प्रदाय और धर्म की काराओ मे प्रतिबंधित न रहकर मुक्त रूप से प्रभावित हुई है।

प्रस्तुत ग्रंथ छोटे-बड़े कुल छ अध्यायो मे पूर्ण हुआ है। प्रथम अध्याय मे 'हिन्दी कृष्ण काव्य का विकासात्मक अनुशीलन' किया गया है। इसके अंतर्गत भारतीय वाङ्मय मे कृष्ण काव्य की सुदीर्घ परम्परा का सर्वाङ्गीण आकलन किया गया है। इसके अंतर्गत कृष्ण वेदो, उपनिषदो, ज्योतिष ग्रंथो, शिलालेखो, पुराणो आदि के साथ ही चैतन्य, निम्बार्क, वल्लभ आदि सम्प्रदायो और कवियो के काव्यो मे उपलब्ध कृष्ण का सम्यक् परिचय दिया गया है।

द्वितीय अध्याय का प्रतिपाद्य है—'हिन्दी के मुसलमान कवियो का—आदि-कालीन भक्तिकालीन— कृष्ण काव्य।' इसके अन्तर्गत मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत मे कृष्ण कथा के सूत्रो का अध्ययन किया गया है, साथ ही उनकी महान् कृति कन्हावत की खोज का इतिहास, उसकी लिपि, उसकी कथा, उसका मूल स्रोत,

पद्मावत का रूप-सौन्दर्य वर्णन, षट्ऋतु वर्णन, बारहमासा, कन्हावत का महाकाव्यत्व, मसनवी शैली आदि का सर्वांगीण परिचय दिया गया है, तथा तानसेन, रसखान, रहीम, सैयद निजामुद्दीन, कमाल, कादिरबख्श, अकबरशाह, रसमती बेगम, तान तरंग खाँ, शाहजलो, ताज, मनोहर कवि आर, सादिर अहमद, जहाँगीर, मुबारक बिलग्रामी आदि की कृष्ण विषयक रचनाओं का परिचय देते हुए उनकी विशेषताओं का आकलन किया गया है।

तृतीय अध्याय के अन्तर्गत—'हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य (संवत् १७०० से १९८० ई० तक का) अनुशीलन' किया गया है। इसके अन्तर्गत आलम, शेख रंगरेजा, रहमत, फहीम, अब्दुल जलील, नेवाज, मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी, रसलीन, मार्री साहब, अब्दुल्लाह मुहम्मद आरिफ, मीरमाधो, प्यारे खाँ फकीर, आदिल, सतदास साहेब, नाना नजो, बाबा फजल, बाबा गुलशन, संत यार रंग, मीरमुराद, तालिबशाह, नवखान, मीरन, नजीर अकबराबादी, हाफिज, मट्टूखवली, मुहम्मद ईसा, अल्लाह खाँ, शेख मुल्लन, वाहिद, आलम (सुदामा चरित), अलीमन, अलीस, सैयद, रोशन लतीफ, हुसैन प्रभृति कवियों की कृष्ण विषयक कविताओं का सम्यक् परिचय दिया गया है।

चतुर्थ अध्याय में हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण-काव्य में अभिव्यक्त 'कृष्ण चरित' का अनुशीलन किया गया है। इसमें कृष्ण की लीलाएँ—बाललीला, गोचारण लीला, चीरहरण लीला, कुञ्जलीला, रास लीला, मुरली, गोपी विरह, मानिनि प्रसंग, उद्धव प्रसंग, विरह वर्णन, परकीया भाव आदि का सम्यक परिचय देते हुए एतद् विषयक हिन्दी के मुसलमान कवियों की भावाभिव्यक्तियों की मीमांसा की गई है।

पंचम अध्याय 'भारतीय भावात्मक एकता और हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण-काव्य' के अन्तर्गत इस्लाम और वैष्णव भक्ति भावना अमीर खुसरो, हिन्दी मुस्लिम समन्वय के सेतु जायसी, रहीम आदि कवियों के साथ ही इस्लामी संस्कृति के परिणामस्वरूप वास्तुकला, छन्द, काव्यरूप, शब्द, मुहावरे, अलंकरण, खान-पान, वेश-भूषा आदि का परिचय देते हुए इस तथ्य की स्थापना की गई है कि हिन्दी के मुसलमान कवि सच्चे अर्थों में भारतीय भावनात्मक एकता के समन्वय सेतु हैं। हिन्दी के मुसलमान कवियों का एक ही उद्देश्य था रस, प्रेम और आनन्द की मूर्ति श्रीकृष्ण और राधा की लीला का गायन।

ये सभी कवि मानवता के सच्चे अर्थों में आदर्श थे, वे मानव कल्याण की भावना से सम्प्रेरित और हिन्दू-मुस्लिम एकता के उद्घोषक थे।

मनुष्यता की इस उदात्त रसमय भूमि पर आकर लौकिक भेद समाप्त प्राय हो जाते हैं। लोक मगल के आकाश मे ऐसे अनेक मेघ खण्ड मद्रध्वनि से गरजे और धरती को रससिक्त करते रहे। हिन्दी के इन मुसलमान कवियो ने अपने अन्त का सर्वोत्तम दलित द्राक्षावत नि शेष भाव से निचोड कर उपस्थित कर दिया है।,जो भारतीय भावात्मक एकता का पावन अमृत सगम बन गया है।

षष्ठ अध्याय 'उपसहार' के अ तगत 'हि दी के मुसलमान कवियो के कृष्ण का य—की उपलब्धिया एव सीमाओ का आकलन किया गया है' और यह सिद्ध किया गया है कि हिन्दी के यह मुसलमान कृष्ण भक्त कवि हिन्दू-मुस्लिम एकता के सम वय सेतु हैं। ग्रथ के अ त मे परिशिष्ट के अ तर्गत स दभ ग्र थो एव पत्र-पत्रिकाओ की अकारादि क्रम से सूची प्रस्तुत की गई है।

हिन्दी के मुसलमान कवियो के कृष्ण-काव्यो की परम्परा मे 'कन्हावत' वह ज्वाज्वल्यमान रत्न है जिसका आलोक शाश्वत रूप से अक्षुण्ण रहेगा। वस्तुत यह कृष्ण-काव्य-परम्परा का प्रथम एव श्रेष्ठ कोटि का महाकाव्य है। आचार्य शुक्ल जी के द्वारा पद्मावत का सम्पादन एव डा० शिवसहाय पाठक द्वारा कन्हावत का सम्पादन एव प्रकाशन युगीन घटनाएँ है, जो हि दी साहित्य के इतिहास म स्वर्णाक्षरो म अकित रहगी।

परमश्रद्धेय गुरुवर डॉ० शिवसहाय पाठक प्रोफसर, अध्यक्ष हि दी अध्ययन-शाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मेरे बडे पिताजी है, उ होने इस शोधग्र थ म पद-पद पर पूर्ण रूप से निर्देशन किया। मैंने उनके अपने घर के पुस्तकालय का पूर्ण उपयोग किया है, उन्ही के स्नेह, प्रेरणा एव निर्देशन से मै यह प्रब ध पूर्ण कर सकी हू। मैं उनके चरणो म श्रद्धानवत हूँ।

गुरुवर डॉ० भागीरथ बडोले 'निर्मल' रीडर हिन्दी अध्ययनशाला के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ।

मैं अपने पूज्य पिता पडित डॉ० चैत य गोपाल 'निर्भय' के चरणो म प्रतिदिन वे प्रणाम देती हूँ, जिन्होने सदैव मुझे पढने और लिखने की प्रेरणा दी। पूज्य माता श्रीमती रमादेवी 'निर्भय' को भी मैं प्रणाम करती हूँ।

मेरे जीवन-साथी श्री प्रवीण जी ने पारिवारिक उत्तरदायित्वो के वहन म मुझे सहयोग प्रदान किया ह, उनके स्नेह के विषय म कुछ कहना अनुचित होगा।

प्रस्तुत ग्र थ के लेखन मे मुझे जीवाजाराव पुस्तकालय विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन के पुस्तकालयाध्यक्ष और अ य कर्मचारियो से पुस्तको और पत्र पत्रिकाओ की बडी सहायता मिली है, मैं उ हे धन्यवाद देती हूँ।

इस ग्रन्थ के लेखन में जिन विद्वानों की कृतियों से तनिक भी सहायता मिली है—मैं उन सबके प्रति कृतज्ञ हूँ।

अन्त में इतना ही निवेदन है कि इस ग्रन्थ के माध्यम से मैंने हिन्दू मुस्लिम एकता व समन्वय संस्कृति के मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों के कृष्ण काव्य के अनुशीलन का यह विनम्र शोध-प्रयास किया है यदि यह विद्वानों द्वारा समादृत हुआ तो यह मेरा सौभाग्य होगा, अन्यथा मैं मानूँगी कि इस शोध-ग्रन्थ के माध्यम से 'राधा-कन्हाई सुमिरन'—का सुअवसर तो मिला ही है।

३ अप्रैल १९९० ई०
रामनवमी
चैत्र शुक्ल नवमी

निवेदिका
साधना 'निर्भय'

अनुक्रमणिका

अध्याय—तीन

अध्याय—चार

अध्याय—पांच

अध्याय—छ

हिन्दी कृष्ण-काव्य का विकासात्मक अनुशीलन

'कृष्ण' शब्द की व्युत्पत्ति तथा विकास

'कृष्ण' शब्द "कृष" धातु से 'ण" प्रत्यय लगाकर बना है। अर्थ है – "कर्षति मन" – जो मन को आकृष्ट करे। 'ण' प्रत्यय आनन्द वाचक है। इस प्रकार सत्ता और आनन्द दोनो का भाव रूप परब्रह्म कृष्ण कहलाता है। यह भी कहा जाता है कि प्रलय काल मे समस्त जीवों को अपनी कुक्षि मे खींचने वाले को कृष्ण कहते हैं।

ऋग्वेद के 8वें मण्डल के 74 वें मन्त्र मे ऋषि कृष्ण का उल्लेख है। अनुक्रमणिका लेखक ने उन्हे अंगिरस की सन्तान कहा है। छान्दोग्य उपनिषद मे देवकी पुत्र कृष्ण का उल्लेख है। टीकाकारों के अनुसार 'कार्षायण" गोत्र मे होने के कारण वे कृष्ण कहे गये। महाभारत [1] मे कृष्ण को वेदान्त का ज्ञाता और ऋत्विज कहा गया है। प्रश्न है कि क्या वैदिक मन्त्रो के स्रष्टा अंगिरस और घोर अंगिरस के शिष्य देवकी पुत्र कृष्ण एक ही व्यक्ति थे। डॉ भण्डारकर का मत यह है कि कृष्ण के ऋषि होने की परम्परा ऋग्वेद से लेकर छान्दोग्य उपनिषद तक चली आती है। इसी समय 'कार्षायण' नामक कोई गोत्र भी था जिसके मूल पुरुष कृष्ण थे वासुदेव उसी कार्षायण गोत्र के थे। अतः उनका नाम कृष्ण पड गया। [2]

देवकी पुत्र कृष्ण का अंगिरस कृष्ण के साथ सम्बन्ध जोडा गया है।[3] उन्होने छान्दोग्य उपनिषद् मे उनके गुरु अंगिरस की जो उपदेश दिये है वह परवर्ती काल मे कृष्ण द्वारा अर्जुन को दिये गये। जो गीता प्रवचन के कुछ अंशो से ज्यो के त्यो मिल जाते है। [4]

---

1 महाभारत 38 वॉ पर्व।

2 वणविज्म एण्ड शविज्म पृ 11 12।

3 पाचर दी सब आफ कृष्ण, पृ 17।

4 द्रष्टव्य छान्दोग्य उपनिषद 34/17 और श्रीमद् भागवत् गीता 16/12।

आशय यह है कि जो उपदेश अंगिरस कृष्ण ने अपने गुरु से ग्रहण किये थे, वही उन्होंने अर्जुन को दिये। इस प्रकार ऋषि कृष्ण का वेद ज्ञान और देवकी पुत्र का गौरव गर्भागत हुआ और वासुदेव के साथ मिलकर कृष्ण के व्यक्तित्व की गरिमा वर्धित हुई।

भारतीय साहित्य में कृष्ण का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। वहाँ वे अंशुमति के तट पर इन्द्र द्वारा पराभूत होते हैं।[3] वहीं वे एक ऋषि हैं जो विश्वक विष्णापु को आरोग्य प्रदान करने के लिए अश्विनीकुमारों का आह्वान करते हैं। कृष्ण को अंगिरस भी कहा गया है। सम्भवतः उन्हीं का उल्लेख 'कौषितकी ब्राह्मण' में किया गया है। कृष्ण कहते हैं कि – 'जिस प्रकार जाया प्रिय का आलिंगन करती है उसी प्रकार हमारी गति इन्द्र का आलिंगन करती है।[4] अथर्ववेद संहिता में 'केशी' नामक असुर के नाशक के रूप में कृष्ण की कथा दी गयी है। सम्भवतः ये वसुदेव पुत्र हैं।[5]

स्पष्ट है कि "कृष्ण' का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। उन्हें ऋषि कहा गया है। 'अनुक्रमणि' में उन्हें "अंगिरस" की संज्ञा दी गई है। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं में उनका उल्लेख है।[6] वहीं उन्हें "अपत्यवाचक" "वृष्णिय' का उल्लेख है तो कहीं वे "विष्णापु" के पिता हैं।

ऋग्वेद 8/96/13-15 में कृष्ण को अपने दस सहस्त्र सैनिकों के साथ अंशुमती (यमुना) तट के प्रदेश का निवासी कहा गया है। उनका और इन्द्र का युद्ध भी हुआ था। छान्दोग्य उपनिषद् में देवकी पुत्र कृष्ण का उल्लेख है, वे घोर अंगिरस के शिष्य थे। "श्रीमद् भगवद्गीता" और "छान्दोग्य" के कृष्ण के सन्दर्भ में ग्रियर्सन, मजूमदार, राय चौधरी, मान थाइकर प्रभृति विद्वानों का मत है कि – वे दोनों एक ही हैं पर मैक्समूलर, तिलक, कीथ आदि ने इसे स्वीकार नहीं किया है।[8] पार्जिटर[7] ने लिखा है कि वे 'सात्वत कुल' के यदुवंशी थे, वे मनु की 94 वीं पीढ़ी में हुए थे। हरिवंश (2/38/35) में उन्हें सूर्यवंशी वासुदेव और (माता) देवकी पुत्र कहा गया है। वेदों में कृष्ण "मंत्र द्रष्टा" हैं उस समय के कृष्ण को हम अवतारी कृष्ण नहीं कह सकते।

---

1 ऋग्वेद 1/101।

2 वही मण्डल 1 सूक्त 116 से 23 आदि।

3 हिन्दुस्तानी, 1937 ई० (पं० परशुराम चतुर्वेदी का लेख)।

4 बंकिमचन्द्र कृष्ण चरित पृ० 47।

5 ऋग्वेद 8/85/1 7 1/116/7 1/116/23, 117/7 आदि।

6 इन्साइक्लोपीडिया आफ रिलिजन एण्ड एथिक्स भाग 7 पृ० 535 538/ एनशियन्ट हिस्ट्री आफ इण्डिया भाग 3 पृ० 11 12 तथा वैदिक इण्डेक्स भाग 1 पृष्ठ 184।

7 ओल्ड टेस्टामेंट आफ इण्डिया भाग 1 प० 52, गीता रहस्य, पृ० 538, वैदिक इण्डेक्स भाग 7 पृष्ठ 184।

महाभारत काल म भागवत धम का पुन उदय हुआ, उसे पांचरात्र की सज्ञा दी गई है। पांचरात्र मत की विशेषता है कृष्ण भक्ति। शांति पव म कृष्ण स्वय को नारायण कहत हैं, उ होन स्वय को पृथ्वी, स्वग एवम अतरिक्ष भी कहा है। महाभारत म कृष्ण श्यामसुदर, शान्तिदत, कमनिष्ठ, कमयोगी, कुशल सयोजक महान राजनीतिज्ञ, महान विचारक आदि रूपा म आते हैं। गीता में उन्होंने कहा है

'जन्म कम च मे दिव्य मव यो वत्ति तत्वत ।
त्यक्त्वा देह पुनज म नेति मामेति सो अजुन ।[1]

अर्थात् मेरा जन्मकम दिव्य है। इसकी दिव्यता का जानने वाला करोडा म कोई बिरला ही होगा। महाभारत काव्य में कृष्ण का पाडवो का परम हितैषी धर्मचारी और न्यायानुमोदित पथ का आदश नेता माना है। व अर्जुन की प्रेरणा थे, पाण्डवो की शक्ति थे। उन्ही की प्रेरणा स पाण्डव उस महायुद्ध म प्रवत हुए, उन्होंने शस्त्र नही उठाया, वे अर्जुन के सारथी बन। व अवतारी थे साधुओ क परित्राणार्थ दुष्कृतो के विनाश और धम सस्थापन के लिए उन्होंने अवतार धारण किया था। व साक्षात् भगवान् है, योगेश्वर हैं, और कमनिष्ठ हैं।

महाभारत मे लीला पुरुष कृष्ण की कलात्मक भगिमाओ का प्रतिफलन नही है। दुष्टो के अत्याचार से प्रताडित युग म साधु पुरुषो की कल्याण कामना के लिये ब्रह्म की रूप कल्पना का जो विराट फलक तयार किया, युग नायक कृष्ण के शौय पूण कृत्य और धार्मिक कीर्ति उसे अकित करने वाले रखाचित्र हैं। उनम रग भरन का काय पुराणकारो न पूरा किया। [2]परिणामस्वरूप कृष्ण की पुराण कल्पना नाना कोमल मधुरभावों स सुसज्जित होकर प्रस्तुत हुई। पुराणो मे कृष्ण चरित्र का धार्मिक रूपक के रूप म शन शन प्रतिष्ठापन हुआ। उसका लोक प्रचलित होना सगत ही है। वासुदेव कृष्ण अपन समाज के लोगो के द्वारा पूजे जान लग। युधिष्ठिर और अर्जुन के वे भगवान् है। वे धम और राजनीति के सचालक है। महाभारत मे कृष्ण क दिव्य रूप की झाकी मिलती है किन्तु उनकी व्रज लीलाओ का उल्लेख नही मिलता।

बकिमचन्द्र ने भी माना है कि महाभारत काल म कृष्ण पर यदि गालियो का कलक होता तो शिशुपाल वध के सन्दभ म इस बात का उल्लेख अवश्य मिलता। [3] महाभारत में गोपाल पूतना वध, गोवधन धारण आदि के उल्लेख से गोकुल वाली कथा का आभास मिल जाता है। [4]

---

1 श्रीमद भगवत् गीता श्लोक 4/9।
2 म पत्निवर ही कृष्ण प्राग्रस पृ 7
3 डॉ धजश्वर वर्मा हिन्दी साहित्य कोश पृ 240
4 बकिमचन्द्र कृष्ण चरित – पृ 65
5 महाभारत सभा पव 64 / 4 7 8 9 10 12/

द्रौपदी चीर हरण के सन्दर्भ में भी 'गोपी' गोप' जनप्रिय से भी गोकुल लीला का आभास मिलता है। [1] महाभारत के ही भीष्म पर्व में कृष्ण के अवतार का उल्लेख हुआ है। [2] गीता के ग्यारहवें अध्याय में कृष्ण के विराट रूप की झाकी दी गई है। वहाँ वे पूर्ण ब्रह्म के रूप में चित्रित है।

वासुदेव की उपासना के प्रसार के साथ ही नामों में परिवर्तन होता रहा। उन्हें कोई केशव कोई जनार्दन तथा कुछ लोग कृष्ण कहते हैं। पतञ्जलि के महाभाष्य में नामों का प्रयोग पाया जाता है। इसमें कृष्ण नाम सर्वाधिक प्रचलित होता गया।

ऋग्वेद अष्टम मण्डल 74 वें मन्त्र के स्रष्टा ऋषि कृष्ण बताये गये हैं। वे मन्त्र के तीसरे और चौथे छन्दों में अपने को कृष्ण कहते हैं। अनुक्रमणिका लेखक उनको अंगिरस की सतान कहते हैं।

देवकी पुत्र कृष्ण का नाम छान्दोग्योपनिषद में मिलता है यहाँ इन्हें घोर अंगिरस ऋषि यश दर्शन सुनाते है। इससे ज्ञात होता है कि अंगिरस कृष्ण के गुरु हैं।

गाथा या जातक के टीकाकारों का मत है कि "कृष्ण" एक गोत्र का नाम है, जिससे कार्षायण गोत्र प्रचलित हुआ। आश्वलायन सूत्र के अनुसार यज्ञ में क्षत्रियों का गोत्र उनके पुरोहितों के गोत्रों के अनुसार होता है। इस तरह वासुदेव कार्षायण गोत्र के हो गये यद्यपि यह गोत्र ब्राह्मणों का था कार्षायण गोत्र का होने से वासुदेव को कृष्ण कहा गया।

प्राचीन कृष्ण सम्बन्धी समस्त ज्ञान वासुदेव में निहित बताया गया। महाभारत सभा पर्व के 38 वें अध्याय में भीष्म कहते हैं कि कृष्ण को आदर देना चाहिये, क्योंकि वेद वेदान्त के ज्ञाता व ऋत्विज हैं।

छान्दोग्य उपनिषद में कृष्ण का उल्लेख दो रूपों में मिलता है यहाँ इन्हें घोर अंगिरस ऋषि यश दर्शन सुनाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि अंगिरस कृष्ण के गुरु थे।, यदि कृष्ण अंगिरस हैं तो हम कह सकते हैं कि कृष्ण नामक ऋषियों की परम्परा ऋग्वेद से छादोग्योपनिषद् तक चली आई बाद में ऋषि कृष्ण को वासुदेव से मिला दिया गया। गाथा सतसई" में कृष्ण की ब्रजलीला के सम्बन्ध में कई गाथाएँ है। एक में कहा गया है 'आज भी दामोदर बालक है यशोदा जब ऐसा कह रही थी तब कृष्ण के मुख की ओर देखकर ब्रज वनिताएँ ओर में हँस रही थी

---

1 महाभारत सभा पर्व – 90/45
2 श्रीमद् भगवत् गीता – 4/8 8

"अज्जवि बाला दामो अरोति इह, जम्पिए जसो आए।
कलम मुह पेसि अच्छणिहुअ हसिअ व अवह्न हि॥" (2/12)

दूसरी अन्य गाथा में किसी गोपी के उत्कृष्ट कृष्ण प्रेम का पूरा परिचय हमें मिलता है – "कोई निपुण गोपी कृष्ण की प्रशंसा करने के लिए किसी अपनी सहेली गोपी के पास जाती है और उस गोपी के कपोल पर प्रतिबिम्बित कृष्ण का चुम्बन देखकर कह रही है —

"पच्चन सलाहण निहिन पास परिसठिआ जिउण गोपी।
सरिस गोवि आज चुम्बई कपोल॥" (12/14)

इस गाथा से प्रकट होता है कि सबसे पहले राधा का नाम और उनके प्रति कृष्ण का आकर्षण प्राकृत साहित्य में उपलब्ध होता है। प. बलदेव उपाध्याय का कथन है कि – "राधा विषयक काव्य की उपलब्धि तो दोनों साहित्यों में होती है, परन्तु उसके उद्गम स्थल की विवेचना करने पर हम जिस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं, वह अनेक आलोचकों को कुछ विलक्षण सा प्रतीत होगा।"

राधा शब्द की व्युत्पत्ति तथा अर्थ

'वाचस्पत्यम्' (बृहत संस्कृताभिधानम्) में 'राधा" शब्द की व्युत्पत्ति राध् धातु से की गई है जिसमें अच् लगने से यह सम्पन्न हुआ है। 'राधा" स्त्री राध अच। विशाखा नक्षत्रे रिरंसया वमनी देहत्वे नाविभूते गोलोकस्थे परमेश्वरा हभि स्वरूपे।[1] श्री राधा माधव चिंतन में श्रीकृष्ण चरित्र में गोपी चरित्र का ह्रास करके श्री राधा चरित्र का समावेश अत्यन्त आधुनिक है। कुछ लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि अधिक से अधिक तीन चार सौ वर्षों से ही इनका प्रचलन हुआ ऐसे लोगों के लिये यह निवेदन है कि श्री राधा नित्य है और राधा का नाम तथा उनकी उपासना सनातन है।"[2]

प. बलदेव उपाध्याय कहते हैं कि 'मेरी दृष्टि में "राध्" तथा "राधा" दोनों की उत्पत्ति "राध ग्रह" धातु से है, जिसमें "आ" उपसर्ग जोड़ने पर 'आराधयनि" धातुपत बनता है। इन दोनों शब्दों का समान अर्थ है, अराधना, अर्चना, अर्चा। राधा वैदिक राध या राध का व्यक्तिकरण है। राधा प्रविष्ण तथा पूर्णतम आराधना की प्रतीक है। "आराधना" की उदात्तता उसके प्रेमपूर्ण होने में है राधा शब्द के साथ प्रेम के प्राचुर्य का भक्ति को विपुलता का भाव की महनीयता का कालान्तर में जुड़ता गया और धीरे धीरे 'राधा' विशाल प्रेम की प्रतिमा के रूप में

1 वाचस्पत्यम् पञ्चम भाग पृ 4085
2 श्री राधा माधव चिन्तन पृ 633

साहित्य और धर्म में प्रतिष्ठित हो गयी। [3] 1— वेदों में राधस शब्द नाना विभक्तियों में प्रयुक्त किया गया 2— आकारान्त राधा शब्द का प्रयोग भी वेदों में उपलब्ध होता है, 3— परन्तु राधाकृष्ण की शृङ्गारिक लीलाओं का वर्णन वेदों में अप्राप्य है यद्यपि नीलकण्ठ आदि अर्वाचीन विद्वानों ने कुछ मन्त्रों में ऐसे अर्थ निकालने की चेष्टा अवश्य की है जो पूर्व परम्परानुकूल और अनुमोदित न होने से अग्राह्य है। 4— ये शब्द राधा कृष्ण की शृङ्गारिक लीलाओं में किसी समय में आधार अवश्य बन होंगे। [4]

उपनिषदों में राधा

छान्दोग्य उपनिषद् में घोर आङ्गिरस ऋषि के शिष्य के रूप में देवकी पुत्र कृष्ण का नाम अवश्य आया है।

"तद्धैतद् घोर आङ्गिरस कृष्णाय देवकी पुत्रायोक्त्वा
उवाच अपिपास एव स बभूव।

उपनिषदों में राधा का नाम अलभ्य है। पं० बद्रीप्रसाद गोस्वामी ने कल्याण में प्रकाशित अपने लेख में 'श्री राधा तत्व' में वर्णित किया है कि ऋग्वेद के उपनिषद् भाग में एक राधिकोपनिषद है जिसमें से कुछ भाग यहाँ उद्धृत किया है।

'ॐ अथातवर्ध्वमन्थन ऋषय सनकाद्या भगवन्त हिरण्य गर्भ भूपासितस्वस्तु देव क परमोन्य रस शक्ति है।
स उ वाच। ऋग्वेदो कृष्णो ह वा आदि परमोन्य प्रकृति।

ज्योतिष तत्व के रूप में राधाकृष्ण की व्याख्या

ज्योतिष तत्व है। विष्णु सूर्य है। वेद में सूर्य के अर्थ में विष्णु शब्द का प्रयोग प्रसिद्ध है जैसे वषाकपि सूक्त में है (10/87) वह सूर्य रूपी विष्णु ही प्रातः मध्यान्ह और सायं इन त्रिपादों में परिक्रमण करते हैं। इस कथन से ही वामनावतार तथा वामन द्वारा तीन पदों में तीनों भवनों का नापा जाना पुराणादि में कल्पित हुआ। कृष्ण विष्णु के अवतार हैं। अथर्ववेद में राधोविशाखे यह स्पष्ट वचन है। विशाखा का नामान्तर एवं विशाखा नाम राधा ही है। अथर्ववेद में नक्षत्र विशाख नाम का कारण यही है। ईसा की 20,00 ई० के बाद है। सायण इसके पहले का नाम राधा था। सिद्धिकाल क्रम में राधा और विशाखा एक हो गए हैं। राधा और कृष्ण के मिलन विषय में राय महोदय आगे

3 भारतीय वाङ्मय में श्री राधा पं० बलदेव उपाध्याय पृ० 31
4 विद्यापति और सूर काव्य में राधा-श्रीमती कृष्ण शर्मा

कहते हैं कि कार्तिक मे पूर्णिमा मे सूय विशाखा की ओर विशाखा मे रहता है। राधा से सूय का मिलन होता है, लेकिन अदृश्य मिलन होता है। गो रश्मि है। "गोप" कृष्ण है, गोपी तारा है। कवि ने कृष्ण रवि को राम मध्यस्थ और गोपी तारा को मण्डलाकार मे सजाया है। राधा वृषभानु की कन्या है। वृषभानु वृष राशिस्थ भानु, रश्मि है। निष्कष मे कुछ ज्योतिष तत्व ही कवि कल्पना का आश्रय ग्रहण कर रूपक धर्मी हो गए है परवर्ती काल के लोगो ने पौराणिक युग मे इस ज्योतिष तत्व को भूलाकर रूपक को ही सत्य मान लिया है और रूप का प्रिय से बहुपल्लवित राधा कृष्ण - लीला उपाख्यान का उद्भव हुआ। "[1]

हमे वेद म "राधस् शब्द का विपुल प्रयोग मिलता है। दो एक उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं—

"सम्चोदय चित्रमर्वाग् राध इन्द्र वरेण्यम् असन्नित् ते विभु प्रभु।" (1/9/5)

"यस्य ब्रह्मवधन सस्य सोमो यस्यद राध स जनास इन्द्र।" (2/12/14)

"सखाय आनिषीदत सविता स्तोम्यो नुत्व दाता राधासि शुम्भति।' (1/22/8)

इसी प्रकार यह शब्द अपने तृतीया त मे अनेकत्र प्रयुक्त है। (1/48/14, 3/30/20 4/55/10, 10/23/1 आदि) चतुथ्यन्त 'राधसे" भी बहुधा उपलब्ध होता है—1/17/7, 3/4/16, 4/20/2, 5/35/4, 10/17/13 आदि। षष्ठय त राधस का भी कम प्रयोग नही मिलता—1/15/5, 4/20/7, 6/44/5, 10/140/5 आदि "राधसाम्" षष्ठी बहुवचन का प्रयोग एक स्थान पर है (8/90/2) तथ सप्तम्यन्त "राधसि' भी एक ही वार ऋग्वेद मे प्रयुक्त है। (4/02/21)।

निघण्टु मे राध' शब्द धन नाम म पठित है (2/14)। यह शब्द राध' साध ससिद्धो से असुन प्रत्यय जोडने से निष्पन्न होता है इसलिए स्क द स्वामी ने इस पद के अथ की द्योतना की है—वह वस्तु, जो धम आदि पुरुषार्थों को सिद्ध करता है—सहनुवन्ति, सहनुवन्ति धमादीन् पुरुषार्थानिति स्कन्द स्वामी सकारान्त होने के अतिरिक्त यह अकारान्त भी है और इस प्रकार राधा शब्द का प्रयोग दो मन्त्रो मे किया गया उपलब्ध होता है—

(1) स्तोत्र राधाना पते गिर्वाहो वीर यस्त ते विभूतिरस्तु सुनृता।

यह मन्त्र ऋग्वद (1/30/5) म, सामवद म तथा अथववेद (24/45/2) तीनो वेदों मे समान रूप से उपलब्ध होता है।

1- भारतवर्ष पत्रिका, 7 340

(2) इद हमवाजसा सुत राधानां पते पिबात्वस्य गिवण ।

यह मन्त्र ऋग्वेद के एक स्थल (3'51/10) पर तथा सामवेद के दो स्थलों (165 737) पर प्रयुक्त मिलता है । दोनो म त्रो मे 'राधाना पते' इसी रूप म प्रयुक्त है और दोनों जगह यह इन्द्र के विशेषण रूप म याद आया है ।

वस्तुत राध तथा राधा दोनो की उत्पत्ति राध वद्धो धातु से है जिसम 'आ उपसग जोडने पर आराधयति धातु पद बनता है । दोनो का अथ है आराधना अचना, अर्चा । राधा' शब्द वैदिक 'राध या राध का व्यक्तिकरण है । उपर के म त्रो मे इन्द्र को राधा नापते' कहा गया है अर्थात् इन्द्र राधा पति है । पश्चात् जब इन्द्र के उपर विष्णु का प्राधान्य हुआ तब विष्णु या कृष्ण ही राधापति बने । महाभारत काल म भागवत धम का पुन उदय हुआ उस पांचरात्र कहा गया है । इसकी विशेषता कृष्ण भक्ति है । शान्ति पव मे कृष्ण स्वय को नारायण कहते हैं । निखिल विश्व म व्याप्त होने के कारण स्वय का वासुदव कहते हैं, व अतरिक्ष एव पृथ्वी भी ह, महाभारत मे वे श्याम सुन्दर शांतिदूत, कमयोगी, कुशल सयोजक महान राजनीतिज्ञ महान विचारक और विराट रूप है । उनका जन्म और कर्म दिव्य है व पाण्डवो क परम हितैषी महाभारत क सूत्रधार नेता हैं उन्होंने शस्त्र नही उठाया पर उन्ही की प्रेरणा स पाण्डवो को विजयश्री मिली । व अजुन के सारथी थे । दुष्टो के विनाश और धम सस्थापन हेतु ब्रह्म ने ही कृष्ण रूप मे अवतार लिया था । वे भगवान ह योगेश्वर है । महाभारत का काल ई सन् से 31 सौ 36 वष पूव माना गया ह । उस समय वे पूज्य बन गये थे, महाभारत म पूतना वध गोवरधन धारण आदि के उल्लेख (गोकुल वाली कथा से सम्बन्ध) मिलते हैं । द्रोपदी चीर हरण के सदभ मे उन्हे गोप गापी जनप्रिय कहा गया है । [1] गीता के ग्यारहवें अध्याय म कृष्ण के विराट रूप की झांकी दी गई हैं । महाभारत म लीला पुरुष कृष्ण की कलात्मक भगिमाओ का प्रतिफलन नही है । दुष्टो के अत्याचार स प्रताडित युग म साधु पुरुषो की कल्पना कामना के लिए ब्रह्म की रूप कल्पना का जो विराट फलक तैयार किया । युग नायक कृष्ण क शौय पूव कृत्य और धार्मिक कीर्ति उस अकित करने वाले रेखाचित्र हैं इनमे रग भरने का काय पुराणकारो ने पूरा किया । [2] परिणामस्वरूप कृष्ण की पुराण कल्पना नाना कोमल मधुर भावो से सुसगठित होकर प्रस्तुत हुई किन्तु पुराणो म स्वरूप ग्रहण करने के पूव उनका लोक भावन म सचरित होना महत्र सम्भव है । अत पुराणो म कृष्ण चरित का धार्मिक रूपक के रूप म जिसका दान शन प्रतिष्ठापन हुआ ।

---

1 महाभारत सभपर्व 90/45

2 श्रीमद् भगवत गीता 4/8/8

3 न ब पन्निकर दा कृष्ण प्रोब्लम पृ 7

स्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी का कथन है कि 'भगवान श्री कृष्ण और उनकी स्वरूप भूता आह्लादामिनी शक्ति श्री राधाजी सर्वथा अभिन्न और एक ही है। श्रीकृष्ण श्री राधा स्वरूप है और श्री राधा श्रीकृष्ण स्वरूप। 'कृ' राधा है और ष्ण कृष्ण। यहां तक कि 'कृ' में भी 'क' कृष्ण है 'ऋ' राधा। वैसे ही 'राधा' के सम्बन्ध में भी है। किसी भी समय, किसी भी देश में, किसी भी निमित्त से और किसी भी रूप में श्री कृष्ण का पार्थक्य सम्भव नहीं है। एक ही अर्थ के दो शब्द हैं, एक ही वस्तु के दो नाम हैं। जब उनमें देश, समय और वस्तुकृत भेद ही नहीं है तो यह बात कैसे कही जा सकती है, कि वे दोनों दो हैं? यही कारण है कि श्री कृष्ण की लीला श्री राधा की और श्री राधा की लीला श्री कृष्ण की। ऐसी स्थिति में यह कहना कि अमुक ग्रन्थ में श्री कृष्ण की लीला है, श्री राधा की नहीं अथवा श्रीराधा की लीला है श्री कृष्ण की नहीं, सर्वथा असंगत है। श्रीमद्भागवत् के सम्बन्ध में भी ठीक यही बात है।

भगवान् श्री कृष्ण की अथवा भगवती श्री राधा की एकता होने पर भी अनेकता है। भेद में अभेद और अभेद में भेद, यही लीला का स्वरूप है परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि लीला प्राकृत नहीं है। देश, काल और वस्तुओं के भेद की समाप्ति तो मन के साथ ही हो जाती है। जब विशुद्ध ज्ञान के द्वारा अज्ञान का नाश होता है, तब उसके साथ ही अज्ञान स्वरूप अथवा अज्ञानकार्य की प्रकृति का भी आत्यन्तिक लय हो जाता है। उस समय केवल विज्ञान स्वरूप ब्रह्म ही अवशेष रहता है। यद्यपि यह ब्रह्म विशुद्ध तत्व है, तथापि प्रकृति के लय के बाद की स्थिति होने के कारण "तुरीय" के नाम से कहा जाता है। जैसे-प्रकृति जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति रूप है वैसे ही ब्रह्म तुरीयस्वरूप है। ब्रह्म में अवस्थाएँ नहीं है और अवस्थाएँ ब्रह्म नहीं है। वे सर्वातीत और सर्वस्वरूप है। उनके नाम, धाम, रूप और लीला सब के सब विशुद्ध चेतन है। वहाँ किसी भी रूप में जड़ वस्तुओं का प्रवेश नहीं है। वहाँ भगवान् श्री राधाकृष्ण ही विभिन्न नाम, रूप और धाम होकर विभिन्न लीलाएँ बनते रहते है। हमारी भाषा में जो एक क्षण श्री राधा है, वही दूसरे क्षण श्री कृष्ण है। जो अब श्री कृष्ण है, वही दूसरे क्षण श्री राधा है। वह अपने स्वरूप में ही दो से बनकर विहार करते रहते है।

श्रीमद् भागवत में श्री राधा नाम का उल्लेख क्यों नहीं हुआ? यह प्रश्न उठाने समय राधा कृष्ण के स्वरूप पर विचार कर लेना चाहिए। भला, यह भी कभी सम्भव है कि श्रीमद् भागवत में श्रीकृष्ण की लीलाओं का तो वर्णन हो और श्रीराधाजी की लीलाओं का न हो? भगवान् श्री कृष्ण सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। उनकी सत् शक्ति से कर्म लीला, चित् शक्ति से ज्ञान लीला और आनन्द शक्ति से विहार लीला सम्पन्न होती है। यदि किसी भी ग्रन्थ में भगवान् की विहार लीला का वर्णन नहीं होता, तो समझना चाहिए कि उस ग्रन्थ में भगवान् के

आनन्दांश का वर्णन नहीं हुआ है। एक नहीं, अनेक अध्यायों में गोपियों के साथ होने वाली मधुर लीला का अत्यन्त सरसता के साथ उल्लेख किया है। वेणुगीत, युगलगीत, कुरुक्षेत्र का प्रसंग और सबसे बढ़कर रास लीला में तो आठ प्रधान गोपियों और उनमें एक श्रेष्ठ गोपी का भी सुन्दर वर्णन है।"

इस प्रकार स्पष्ट है कि श्रीमद् भागवत में भगवान् की अप्राकृत मधुर लीला का स्पष्ट उल्लेख और उसमें गोपियों तथा श्री राधाजी का भी वर्णन है। 'जब श्रीमद् भागवत् में उनकी लीला का वर्णन है ही तब उसमें श्री राधा का नाम नहीं है—यह कहकर श्रीमद् भागवत् से श्री राधाजी की लीला उठाई तो नहीं जा सकती।" और इस तथ्य का खण्डन हो जाता है कि श्रीमद् भागवत् की रचना के समय राधाकृष्ण की आराधना प्रचलित नहीं थी। निश्चय रूप में यह सकते हैं कि श्रीमद् भागवत् में श्री राधा तत्व का स्पष्ट वर्णन है और श्रीमद् भागवत् में ही क्यों उपनिषदों में भी गान्धर्वी आदि विभिन्न नामों से उन्हीं के सुयश का संकीर्तन है। रास लीला के प्रसंग में श्रीकृष्ण अन्य गोपियों को छोड़कर जिस प्रधान गोपी को केलि क्रीड़ा के लिए एकान्त में ले गये, अन्तत उनका कुछ नाम तो होना ही चाहिये।

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि श्रीमद् भागवत में श्री राधा का वर्णन है, तब यह प्रश्न रह जाता है कि फिर उनका नाम क्यों नहीं दिया गया ? किन्तु यह प्रश्न भी निर्मूल है क्योंकि श्रीमद् भागवत में अन्य गोपियों का भी नामोल्लेख नहीं है। भागवतकार जानबूझ कर किसी भी गोपी या श्री राधाजी का नाम नहीं लिखना चाहते थे जब वस्तु का वर्णन है तब नाम होना और न होना दोनों ही समान हैं। इस प्रकार कोई भी वस्तु का खण्डन तो कर नहीं सकता। रही बात नाम के सम्बन्ध में विकल्प की, सो वह दूसरे पुराणों से निश्चित हो जाती है।

महात्माओं से ऐसा सुना जाता है कि श्री शुकदेवजी श्री राधा के महल में लीला शुक थे और उनकी लीला के दर्शन में मुग्ध रहते थे। ऐसे श्रीजी के अनन्य लीलाप्रेमी वक्ता थे और परीक्षित भी वैसे ही प्रेमी श्रोता थे यदि उनके कानों में उस समय श्री राधा जी का नाम पड़ जाता तो वे इतने भाव मुग्ध हो जाते की आगे की कथा बन्द हो जाती और महिनों तक वे समाधिस्थ रह जाते। परन्तु समय सात दिन का ही था। यही सोचकर श्री शुकदेव मुनि ने श्री राधा नाम का उच्चारण नहीं किया —

'श्री राधानाम मात्रेण मूर्च्छा षाण्मासिका भवेत।
नोच्चारितं मत स्पष्ट परीक्षित मुनि ॥'

'पद्म पुराण' में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि श्री राधा ही श्री कृष्ण की आत्मा है और उनके साथ विहार करने के कारण ही श्रीकृष्ण को आत्माराम कहते हैं —

"आत्मातु राधिका सत्य, तयैव रमणादसवै ।
आत्माराम इति प्रोक्त मेदर्षभि गुह वेदभि ॥"

श्री कृष्ण की आत्मा राधिका है और राधिका की आत्मा श्री कृष्ण है ।"
एक भेव है । वस्तु रूप मे क्या स्वरूप मे और इस आत्मरूप मे राधा को
भागवत म उपस्थित मानना चाहिए ।

दोना नेलो मे राधा

श्रीम ईसा के बाद चौथी शताब्दी के पश्चात् ही कृष्ण चरित्र लीला सम्बन्धी
ल एव प्रस्तर प्रतिमाएँ मिलनी आरम्भ होती हैं ।

मिला प्राचीनतम सकेत मदसौर के मदिर के द्वार पर बन स्तम्भ से मिलता है ।
प्राप्त है, उसे गोवधन लीला का दृश्य कहा जा सकता है । गोपियों और
शिला की मटकियां का दृश्य इस बात का द्योतक है कि समाज मे राधाकृष्ण की
प्रसिद्धि हो चुकी थी । बगाल के पहाड पुरा की खुदाई मे कृष्ण के साथ
जो कु गोपी को भी श्री चाटुर्ज्या राधा बताते हैं । पाँचवीं शताब्दी तक राधा
माखन म व्यापक स्थान पा चुकी होगी । राधा माने तो, इसकी पूजा का काल
काफी छे ले जाना होगा, और यह असगत नही जान पडता । महा बलिपुरम का
प्राप्त प्रस्तर खण्ड उसका प्रतीक है कि गोवधन लीलाएँ पर्याप्त प्रचलित थी ।
समाज चितामणि विनायक वद्य के अनुसार छठी सातवीं शताब्दी तक राधा का उदय
बहुत हा था । प्रेम लक्षणा भक्ति के बाद ही राधा की भावना ने पदार्पण किया,
उसकी स मन्तव्य का कोई ठोस आधार नहीं है जयदेव और विद्यापति के युग
लक्षणा भक्ति का रूप स्थिर नही हुआ था उसमे राधा की भावना विद्य-
नहीं हुई ।[1] सत नामदेव और तुकाराम का मत है कि पुडरीक ने ही विट्ठल
किन्तु । की नीव रखी । महाराष्ट्र मे आज भी श्री कृष्ण के साथ उनकी विवा
तक प्रेम रुक्मिणी की अचना होती है । उत्तर भारत मे राधा की । दक्षिण का
मान थी म्प्रदाय उत्तर की अपेक्षा कहीं अधिक सयत एव सौम्य भावना लिये हैं
सम्प्रदाय सना की बू नही । .. राधा विशुद्ध प्रेम की कल्पलतिका है । उनका
हित परम है कि वह अपने प्रिय के चरणो मे अपने आप को न्योछावर कर देता
वष्णव स कृष्णमयी है । उनके भीतर तथा बाहर सब जगह कृष्ण ही कृष्ण
उसमे वा न है । उनकी सहज भावना इतनी प्रौढ है कि जहा जहाँ उनकी दृष्टि
प्रेम एसा वहाँ वहाँ कृष्ण ही स्फुरित हाते हैं । श्री राधा ही प्रेम की अधिष्ठात्री
है । राधा व किशोरी है । वह श्रीकृष्ण की सेवा मे रत रहती है । श्रीकृष्ण
विराजमा

पडती है दि मेडीवल हिंदू इण्डिया (खण्ड 3) चितामणि विनायक वद्य पृ 415
देवी नित्य वैष्णिज्म एण्ड अदर रिलिजियस सिस्टम्स ऑफ इण्डिया, डॉ भण्डारकर ।

के मन मे जब भावना जगती है तब ही राधा उसको पूर्ण करती है।[1] श्री राधा गोविन्द के सर्वविध आनन्द को प्राप्त करती है। श्री राधा अपने रूप गुण, सौन्दर्य, माधुर्य से तथा विलास वैदग्ध्यादि से श्रीकृष्ण को मोहित करती है। श्री राधा गोविन्द की सर्वस्व है।[2] वे श्रीकृष्ण की कलाओ में सर्वश्रेष्ठ है। श्री कृष्ण की कामनाओ को पूर्ण करना ही इनकी आराधना है, पुराणो मे इनका नाम "राधिका" कहा गया है —[3]

"कृष्ण वाञ्छापूर्ति करे अवराधन ।
अतएव राधिका नाम पुराणे व्याख्याने ।। "

आनन्दघन श्री कृष्ण की भाँति ही राधिका भाव घन स्वरूपा है। उनकी देहेन्द्रियादि सब कुछ घनीभूत महाभाव द्वारा गठित है।

श्री राधाजी सर्वशक्ति गरीयसी एवं पूर्ण शक्ति है — कृष्ण राधा के वशवर्ती श्री राधा-कृष्ण गत जीवना है श्री राधा मूल कान्ता शक्ति है। श्री राधा-कृष्ण के अभिन्न है — श्री राधा कृष्ण अभेद रूप मे एक ही स्वरूप एक ही आत्मा हैं। उनके लीला रस आस्वादन के हेतु रूप धारण करते हैं। रमण के लिए दो की अपेक्षा रहती है। दोनो मे भेद नहीं है। जैसे कस्तूरी और उसकी गन्ध मे तथा अग्नि और उसकी ज्वाला मे किसी प्रकार का भेद नहीं है। उसी प्रकार राधा और कृष्ण का सम्बन्ध भी अविच्छिन्न है।

राधा कृष्ण की युगल उपासना का तत्त्व श्री कृष्ण परम स्वतन्त्र पुरुष है वे प्रेम के वशीभूत है। भक्त मे प्रेम का जितना विकास होता है श्री कृष्ण उसके उतने ही वश मे होते हैं। श्री राधा मे प्रेम का सर्वाधिक विकास होने के कारण श्री कृष्ण उनके सर्वाधिक पास है।

राधिकादि गोपियाँ जाति कुल, शील, स्वजन, परिजन सबको तिलाञ्जलि दे श्री कृष्ण सेवा मे रत रहती हैं। निष्काम प्रेम का प्रतिदान श्री कृष्ण भी नहीं दे सकते वे उनके चिर ऋणी है।[4]

---

1 कृष्ण के कराय श्याम रस — मधुपान,
निरन्तर पूर्ण करें कृष्ण सबकाम ।। चैतन्य चरितामृत 2 2 141
2 गोविन्द नन्दिनी राधा गोविन्द मोहिनी
गोविन्द सर्वस्व सबकान्ता — शिरोमणी ।। चैतन्य चरितामृत 1 4 61
3 चैतन्य चरितामृत 1 4 75
4 गई प्रेमेर अनुरूप नारारे भजिते । अतएव ऋणी हय कहे भागवत ।। चै च

अवतारी कृष्ण

कृष्ण के अवतारी रूप विष्णु का नारायण तथा वासुदेव से तादात्म्य कृष्ण के व्यक्तित्व को देवत्व प्रदान करता है कृष्ण विष्णु के आठवें अवतार बने। कृष्ण को लेकर पौराणिक आख्यान रचे जाने लगे और उनके चरित्र को अनेक छवियाँ उरेही गयी। उनके बालरूप और मनोहर रूप को गोपाल कृष्ण कहा जाता है। गोपाल कृष्ण के साथ प्राय आभीर जाति का उल्लेख किया जाता है। 'गोवर्धन की कथा मे स्पष्ट है – कृष्ण प्राचीन आभीर जाति के नेता थे, जिनकी जीविका गोपालन पर निर्भर थी। कृष्ण का विकास कई चरणो मे हुआ है वासुदेव कृष्ण का विष्णु मे ऐकाकार होकर वैष्णव धर्म के मूलाधार से जुडना कृष्ण के गोपाल रूप की कल्पना, राधा आगमन और अन्त मे उनके बहुरंगी व्यक्तित्व का भक्तिकाव्य मे आकलन किया गया है। बंकिमचन्द्र इसे हरिवंश पुराण से पहले की रचना मानते हैं। [1] विल्सन के अनुसार इसका रचना काल छठी शती है। किन्तु भारतीय विद्वान इसे ईस्वी सन् के पूर्व या उसके आसपास की कृति मानते हैं। [2] इसके प्रथम अंश मे कृष्ण का अलौकिक चरित्र वर्णित है।

कृष्ण विष्णु के अंशावतार हैं। देवांगनाएँ गोपियो के रूप मे विष्णु के विहारार्थ अवतीर्ण हुई हैं। उसके 13 वें अध्याय मे कृष्ण का रास वर्णन परवर्ती पुराण भागवत के ढंग पर हुआ है। यह अंश ब्रह्मपुराण के 189 वें अध्याय से हूबहू मिल जाता है। यहाँ गोपियो मे कृष्ण की प्रियतमा कुल पुण्या मदालसा (श्लोक 33 गोपी का उल्लेख मिलता है [1]

13 वें अध्याय मे रास वर्णन है। वंशी की ध्वनि से मन्त्रमुग्ध गोपियाँ रास मण्डप की ओर खिंची चली आती हैं। किन्तु यहाँ पहुचने पर कृष्ण उन्हे नही मिलते। वह किसी प्राणप्रिया प्रिया गोपी को साथ ले कही निकल पडते हैं। पद चिन्हो से वे गोपियाँ यह भलिभांति भाँप लेती हैं कि कृष्ण किसी रमणी के साथ है, किन्तु आगे चलकर उस पुण्य शीला के भी त्याग देने का संकेत मिलता है।

यहाँ भगवान कृष्ण के चरित्र को वैष्णव सम्प्रदाय के दायरे से निकाल कर एक व्यापक धर्म भूमि म प्रस्तुत किया गया है। अध्याय 33 मे किया गया कृष्ण शिव अभेद वर्णन इसी सामञ्जस्य भावना का परिचायक है। श्रीमद्भागवद् कृष्ण लीला का सर्वाधिक सुव्यवस्थित कोश है। इसके अन्तर्गत प्रथम बार कृष्ण की बाल किशोर और यौवन लीलाओ का व्यापक विन्यास हुआ है। इस प्रकार इसमे कृष्ण चरित्र के भावात्मक पक्षो का सांगोपांग निदर्शन प्राप्त होता है। पूर्ववर्ती पुराणो के संक्षिप्त प्रसंगों का यहाँ यथेष्ठ विस्तार हुआ है तथा अनेक नये

---

1 कृष्ण चरित्र पृ 103

2 आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी – सूर साहित्य पृष्ठ 6

प्रसंगों की उद्भावना भी हुई है। इस सुव्यवस्थित लीला वर्णन तथा रस स्निग्धा गीतिमत्ता के ही कारण यह वैष्णव भक्तों का कंठहार बना रहता है। इसका तत्त्व विवेचन रमणीय है और कवित्व विलक्षण है। स्वयं भागवतकार अपने इन गुणों से परिचित हैं। उसने प्रारम्भ में ही भागवत की विशेषताओं का आलोकपात करते हुए कहा है कि यह निगम रूपी कल्पतरु का सुधारसगलित फल है जिसे शुकदेवजी ने अपने अमृत वचन से संयुक्त कर मधुरातिमधुर बना डाला।[1]

निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम्।
पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः॥

महर्षि व्यास ने बार बार कहा है कि रसिक जनो यदि रस का वास्तविक आनन्द लेना चाहते हो तो भागवत रस को चखो। हे भावुक जनो! तुम्हारे भाव की तृप्ति, हृदय को परमानन्द की प्राप्ति इसी रस सरिता अवगाहन में करने से होगी।

बाल लीला

बाल लीला के चित्रण में स्कन्ध 10 अध्याय 6 से लेकर अध्याय 8 तक के वृत्तान्त लिये जा सकते हैं। इसके अन्तर्गत आने वाली प्रमुख लीलाओं का विवरण नीचे दिया है

(1) पूतना वध स्कन्ध–10 अध्याय–6, श्लोक 13
(2) शकट भंग , –7 [illegible]
(3) तृणावर्तवध , , –7 29
(4) नामकरण, मृत्तिका भक्षण, मुख में विश्व रूपदर्शन – [illegible] वाँ अध्याय 37 बन्धन स्कन्ध–10 अध्याय–9
(5) यमलार्जुनोद्धार , , 10

गोकुल में कृष्ण की उक्त पाँच प्रकार की लीलाएँ ही हुई हैं। इन सभी लीलाओं में उनकी अद्भुत शक्ति का प्रदर्शन हुआ है किन्तु यह उनकी माया का ही प्रभाव है कि भोले भाले ब्रजवासी उनके महत्व को याद अक्षुण्ण नहीं रख पाते। इसी कारण से मनुष्य रूप में उनकी इन लीलाओं के प्रति विमुग्ध होकर धर्म विमूढ़ भी नहीं होते। श्रीमद्भागवत की अन्य परवर्ती लीलाएँ इसी वृन्दावन लीला के अन्तर्गत आती हैं। कृष्ण इस समय तक प्राय पाँच वर्ष के हो गये थे। उनकी वृन्दावन लीलाएँ इस प्रकार हैं—

(6) वत्सासुर वध स्कन्ध 10 अध्याय 11, श्लोक 43
(7) बकासुर वध , ,, 53

---

[1] भागवत 1/1/3

स्वाभाविक है कि कृष्ण प्रिया प्रधाना गोपी के राधा नाम से भागवतकार सशय न करें गोपियों मे एक गोपी कृष्ण की प्रियतमा थी यह सत्य भागवत के रास वर्णन मे बहुत स्पष्ट हो उठा है।[1]

हरिवश के विष्णु पर्व म (20 वें अध्याय मे) कृष्ण की रासलीला का वर्णन है, वहाँ किसी प्रियतमा प्रधाना गोपी का आभास भी नही है। विष्णु पुराण का वर्णन भागवत पुराण के रास वर्णन के ही समान है और यहाँ उस प्रधाना गोपी का नाम कृत पुण्या मदालसा है। यहाँ 'राधित" की जगह अभ्यर्चित शब्द का प्रयोग है।

हरिवश को महाभारत का परिशिष्ट कहा जाता है। इसमे कृष्ण और विष्णु की कथाएँ वर्णित हैं। इसके 34 वें और 35 वें अध्याय मे कृष्ण की कथा है। इस पुराण के कुल 128 अध्यायो मे कृष्ण जीवन की पूरी कथा दी गई है कृष्ण का सौन्दर्य, पूतना वध शकट वध यमलार्जुन पतन, माखन चोरी, कालिया दमन, धेनुक वध, प्रलम्बवध गोवर्धन धारण आदि सभी लीलाओं का विशद वर्णन है। पश्चिमी विद्वानो ने इसका रचना काल ईसा की पहली शताब्दी के आसपास माना है। महाभारत की ही तरह इसमे भी आभीरो का विस्तार के साथ वर्णन है।

हरिवश मे गोपाल कृष्ण के प्रसग मे प्राय 20 अध्याय लिखे गये हैं। यहाँ मुख्यत कृष्ण का दुष्ट दमनकारी रूप प्रधान है। कुल लीलाएँ इस प्रकार हैं — शकट वध, पूतना वध दामबन्ध, यमलार्जुन भग, वृन्दावन वृन्दावन वास, धेनुक वध, प्रलम्ब वध गोवर्धन धारण, हल्लीस क्रीडा, वृषभासुर वध केशिवध आदि।

हरिवश के "विष्णुपर्व के 20 वें अध्याय म सक्षेप म गोपियो के साथ श्री कृष्ण की रास लीला वर्णित है। यहाँ किसी प्रियतमा प्रधान गोपी का आभास मिलता है। इसका मुहूर्त अन्य पुराणो की ही भाँति शरद पूर्णिमा की रात्रि है। गोपियाँ परकिया हैं किन्तु इसे रास" नाम न देकर हल्लीस क्रीडा कहा गया है, किन्तु ऐसी बात नही कि हरिवंश म "रासलीला' का उल्लेख नही हुआ है द्वारकावासी भगवान् कृष्ण जब अनेकानेक अप्सराओं और चुनी हुई

1 (1) यहाँ अनया आराधित या अनया राधित इन दोनों प्रकार के पाठो को स्वीकार किया जा सकता है दोनों पाठो का अर्थ एक है श्रीधर स्वामी ने इस श्लोक की टीका म कुछ भी नही लिखा है लेकिन सनातन गोस्वामी ने अपनी वैष्णव तोषनी टीका म कहा है—
अनयैव आराधित अराध्य वशीकृत न त्वयापि ।
राधायति आराधयति राधति नामकरण च दर्शित ।
विश्वनाथ चक्रवर्ती ने कहा है—पुन हरिर्य राधित राधा इत प्राप्त इत्यादि
(2) राधिका नाम विषय म विश्वनाथ चक्रवर्ती ने अपनी टीका म अलग कहा है।

पटरानियो के साथ यथेच्छ रति क्रीडा कर लेते हैं तो नारद का हाथ पकड़ कर सत्यभामा और अर्जुन के साथ सागर में कूद पड़ते हैं। और इस जल क्रीडा को भी हरिवंश "रास" नाम से अभिहित किया गया है।

> "रासावसाने वय गृह्य हस्ते महामुनि नारदम् प्रक्षेप ।
> पपात कृष्णो भगवान् समुद्रे सात्राजित आर्जुनमेव नाथ ॥'

(विष्णु पर्व अध्याय 89)

इस पुराण में कृष्ण का वंश वृक्ष दिया गया है और इसमें वे सारे चित्रण इतनी स्पष्टता के साथ आये हैं, जितनी स्पष्टता महाभारत में भी नहीं थी। इसमें श्री कृष्ण की वास्तविक प्रकृति, जन्मगत परिस्थितियों, शैशव से लेकर यौवन काल की वृत्तियों आदि को एक सूत्र में पिरोकर समुपस्थित किया गया है। यहाँ कृष्ण सामान्यत एक वीर सामन्त हैं। यद्यपि श्री कृष्ण को विष्णु का अवतार कहा गया है जिसका तात्कालिक प्रयोजन एक अत्याचारी शासक का दमन करना है किन्तु उसकी लीलाओं में किसी प्रकार की अलौकिकता की अवतारणा नहीं की गई है। उसके समस्त क्रियाकलाप ऐंद्रिक है।

हरिवंश में ग्वालों के गोकुल से वृन्दावन विस्थापन का कारण भेड़ियों का प्रकोप बतलाया गया है। बाल कृष्ण की अलौकिक चरितों के प्रति यदि पुराणकार पूर्णत आश्वस्त होता तो असुर निकन्दन कृष्ण के मुख्य रूप में इस एक बहाने नही रखता। दूसरा प्रसंग गोवर्धन धारण का है। पद्म पुराण में कई स्थलों पर राधा का नाम है। रूप गोस्वामी और कविराज कृष्णदास ने अपने ग्रंथों में श्लोक उद्धृत करते हुए इसकी पुष्टि की है।

इस समय प्राप्त और प्रकाशित पद्म पुराण में राधाष्टमी का उल्लेख है, राधाष्टमी के व्रत के महात्म्य का भी वर्णन है। गोलोक वर्णन प्रसंग में राधा का उल्लेख है पाताल खण्ड में गूढ़ ईश्वरीय राधा के अनेक उल्लेख हैं अन्य सीमाओं में भी कृष्ण प्रियतमा आद्या प्रकृति राधिका का वर्णन है।

पद्म पुराण में एक स्थल पर राधा गोपियों के बीच तत्व स्वरूप प्रभा है। वसतना है। चिन्मयी है, शक्ति रूपा है।[1] पद्म पुराण की रचना तिथि

---

1 पद्म पुराण 'तासां तु मध्ये या न्वी सप्तमामीरर प्रभा ।
स्नमाता [illegible] ॥
[illegible]
[illegible]

[illegible]

निश्चित करना कठिन है। छठी व आठवी शताब्दी के आसपास इसकी रचना हुई ऐसा कहा जाता है। इसीलिए विद्वानो की राय है कि राधा विषयक ये उल्लेख परिवर्ती काल मे जोडे गये है।

पद्म पुराण के पाताल खण्ड म कृष्ण चरित का विवेचन है। अध्याय 69 से 72 तक तो श्रीकृष्ण के महात्म का वणन है और अध्याय 73 से 83 तक वृन्दावन आदि का महात्मय और श्री कृष्ण की लीला का विवेचन है गोपियो के अध्यात्म पक्ष और उनकी उत्पत्ति के विषय मे भी विस्तार से वणन किया गया है। इस पुराण मे वृन्दावन, द्वारका गोकुल, मथुरा आदि का बडा सुन्दर वणन हुआ है और द्वादश वनों का भी उल्लेख है। श्लोक 82 से 102 तक श्रीकृष्ण के सौदय का वणन है।

मत्स्य पुराण मे कहा गया है कि राधा वृन्दावन मे है और रुकमणी द्वारावती म।[1] किन्तु इस उल्लेख को डा शशीभूषण दास गुप्त ने प्रामाणिक नही माना है।[2] इस प्रकार वायु पुराण[3], वराह पुराण[4] नारदीय पुराण...[5], आदि प्रभृति पुराणो मे एक या आधे श्लोक म राधा का उल्लेख मिलता है। ब्रह्म वैवत पुराण मे कृष्णलीला का बडा ही सुन्दर वणन मिलता है उसमे राधा कृष्ण का ब्याह भी कराया गया है। ब्रह्मा राधा का 'कन्यादान' भी करते है।[6] ब्रह्म वैवत मे राधा कृष्ण विषयक उपाख्यानो का विस्तार के साथ वणन है। उसमे राधा क उपाख्यानो का प्राचुय और राधा महात्म्य वणन भरे पडे हैं। एक स्थल पर राधा की व्युत्पत्ति भी दी गई है।

"राशब्दोच्चारणाद्भक्तो इत्यादि।"[7]

आधुनिक वैष्णव पुराणो म भागवत के बाद सबसे महत्वपूण पुराण ब्रह्म-वैवत है। राधा वाद का यही चरम प्राधा य है। इस राधा के आश्रय से श्रृङ्गारी वष्णवता अपने पूव समावत स्वरूप म यहाँ प्रगट हुई है। यह अपने प्राप्त रूप मे आधुनिक कृति है फिर भी कुछ विद्वान् इसे 12 वी शतीय जयदेव के गीत गोविन्द काव्य का प्रेरक पुराण मानते है। उनके अनुसार—यह ब्रह्मवैवत पुराण उस समय (जयदेव काल 12 वा शतक) प्रचलित और अत्यन्त सम्मानित न होता तो गीत गोविन्द कभी न लिखा जाता और इस ब्रह्मवैवत पुराण मे श्रीकृष्ण जन्म

1 रुक्मिणी द्वारवत्यां तु राधा वृन्दावने वने। आनन्दाश्रम स 13/38
2 डॉ शशिभूषण दास गुप्त श्री राधा का क्रम विकास पृ 111
3 वायु पुराण आनन्दाश्रम स 104/52
4 वराह पुराण बगवासी प्रस 163/33/34
5 नारदीय पुराण बगवासी प्रेस 1/83/44
6 ब्रह्मवैवत पुराण श्रीकृष्ण खण्ड 48 40 (बगवासी प्रस सं)
7 ब्रह्मपुराण श्रीकृष्णजन्म खण्ड अध्याय 19 (बंगवासी प्रस सं)

खण्ड का 15 वाँ अध्याय उस समय प्रचलित न होता तो गीत गोविन्द का पहला श्लोक "मेघैर्मेदुरमम्बरम्" इत्यादि कभी नहीं बनता।[1]

डॉ शशिभूषण दास गुप्त ने भी इसी सन्देह में अपने राधा तत्वानुसन्धान में इस पुराण की उपेक्षा की है।[2] किन्तु प बलदेव उपाध्याय ने गौडीय गोस्वामी विषयक उक्त सन्देह का उल्लेख कर भी इस पुराण की उपेक्षा नहीं की है। उनके शब्दों में ब्रह्मवैवर्त पुराण राधा माधव की लीला से ओत प्रोत है।[3] इन सारी बातों के बावजूद ब्रह्मवैवर्त पुराण राधा कृष्ण के युगल चरित्र का प्रतिपादक अत्यन्त प्रभावशाली पुराण है। कृष्ण लीला और कृष्ण चरित्र के भावात्मक स्वरूप का जितना सांगोपांग चित्रण इसमें हुआ है उतना श्रीमद्भागवत को छोड़ अन्य किसी पुराण में नहीं हुआ। यह बात अलग है कि गौडीय गोस्वामियों ने इसका उल्लेख नहीं किया। रूप गोस्वामी के भक्ति रसामृत सिन्धु में" द्वितीय 'साधन भक्ति लहरी' के प्रकरण में अन्तर्गत एकादशी महात्म्य में प्रमाण में जो 80 सम्यक श्लोक उद्धृत है, वह ब्रह्मवैवर्त का है गीता और 'ब्रह्म पुराण' जैसे प्राचीन ग्रन्थों का भी यहाँ एक ही बार उल्लेख हुआ है [illegible] 16 वीं शताब्दी के पहले प्रसिद्ध था यह निर्विवाद है।

ब्रह्मवैवर्त में कृष्ण

ब्रह्मवैवर्त में राधा भाव की चरम परिणति का प्रभाव [illegible] भी पड़ा है। कृष्ण यहाँ नित्य किशोर नित्य विलासी, श्यामसुन्दर [illegible] रासेश्वर हैं। ये विशेषताएँ उनकी लीला सहचरी राधा के [illegible] शृंगार रति, चेष्टा तथा उद्दाम केलि की अतृप्त [illegible] है।[4] अतः ब्रह्मवैवर्त के नायक कृष्ण की केलि-क्रीडाओं [illegible] शास्त्र तथा कामशास्त्र की दृष्टि से भी [illegible]

वायु पुराण के द्वितीय खण्ड अध्याय 34 [illegible] कथा लिखी है और फिर श्रीकृष्ण के जन्म का [illegible] 16 सहस्र पत्नियों और उनके पुत्रों आदि का [illegible] लीलाओं और राधा की भक्ति का वर्णन [illegible] सुर और कालनेमि के वध की कथा है। [illegible]

---

1 बंकिमचन्द्र – कृष्ण चरित्र पृ 56,
2 इसके अतिरिक्त वह [illegible] श्रीकृष्ण जन्म खण्ड [illegible]
3 प ब उपाध्याय [illegible]
4 यहाँ प्रासंगिक [illegible]
5 अध्याय 53 के [illegible]

श्रीकृष्ण द्वारा महादेव की आराधना और श्रीकृष्ण से पुना की कथा है। गरुड़ पुराण में कृष्ण की लीलाओं का उल्लेख है जो अध्याय 144 में हुआ है। इसमें पूतना वध, यमलार्जुनोद्धार, गोवर्द्धन धारण केशी चाणूर इत्यादि का वध, कालिय दमन और शकटासुर वध का उल्लेख है। कृष्ण का 'सान्दीपनि' गुरु से शिक्षा प्राप्त करने का भी उल्लेख है। कृष्ण की रुक्मिणी, सत्यभामा आदि आठ पत्नियों का तथा गोपियों का उल्लेख तो है। परन्तु राधा का नाम नहीं है। विष्णु पुराण के चौथे अंश के 1५ वें अध्याय में शिशुपाल की मुक्ति का कारण बतलाते हुए श्रीकृष्ण जन्म का उल्लेख हुआ है। पाँचवें अंश में कृष्ण का चरित्र विशेष रूप से लिया हुआ है।

महाभारत से लेकर पौराणिक युग तक जितना भी कृष्ण का विवेचन हुआ है, वह सब समन्वित रूप में श्रीमद्भागवत में मिल जाता है। भागवतकार ने अवतारों का वर्णन करते हुए 'एते चांशकला पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' कहा है। महाभारत में कृष्ण के जिस नारायण रूप का उल्लेख हुआ है, उसको भागवतकार ने इस प्रकार लिखा है कि नारायण के कृष्ण और शुक्ल स्वरूप असुर मर्दित पृथ्वी का भार उतारने के लिए कृष्ण और बलराम के रूप में आविर्भूत हुए।

श्रीमद् भागवत कृष्ण भक्ति और कृष्ण लीला का आकर ग्रन्थ है। इस महान ग्रन्थ में कृष्ण की विशद प्रणय लीला अत्यन्त भव्य और मनोमय रूप में अंकित है। इसके रास पंचाध्यायी में उनके उदात्त प्रेम का निरूपण है। परवर्ती कृष्ण भक्ति मूलक वैष्णव ग्रन्थों में इसी का परिवर्धित संक्षिप्त रूप मिलता है। इसमें कृष्ण के जीवन और उनकी लीलाओं का समग्र चित्र उकेरा गया है।

श्रीमद् भागवत में भगवान श्रीकृष्ण की लीलाएँ तो है, किन्तु कुछ विद्वानों को बड़ा आश्चर्य है कि उसमें राधा का नामोल्लेख तक नहीं है। पं० बलदेव उपाध्याय का कथन है कि इसमें राधा का नाम प्रतिपादित है परन्तु वह भी अस्पष्ट रूप से ही है।' द्वितीय स्कन्ध के चतुर्थ अध्याय में श्री शुकदेवजी ने कथा आरम्भ करने से पहले जो दिव्य स्तुति की है, उसके एक पद्य में राधा का अस्पष्ट उल्लेख माना सकता है —

नमो नमोऽस्त्वृषभाय सात्वतां
विदूर काष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम्।
निरस्त साम्यातिशयेन राधसा
स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः॥ भागवत 2/4/14

श्लोक का तात्पर्य है जो भक्तों के पालक हैं हठपूर्वक भक्तिहीन साधन करने वाले लोग जिनकी छाया भी नहीं छू सकते, जिनके समान किसी का ऐश्वर्य नहीं है, फिर उससे अधिक तो हो ही कैसे सकता है? ऐसे ऐश्वर्य से युक्त होकर जो निरन्तर अपने ब्रह्मस्वरूप धाम में विहार करते हैं, उन भगवान् श्री कृष्ण को मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ।

इस पद्य में 'राधस' शब्द शक्ति तथा ऐश्वर्य का वाचक है। राध् धातु से "सर्वधातुभ्योऽसुन्" इस औणादिक सूत्र से असुन् प्रत्यय का प्रयोग करने पर "राधस्" शब्द सिद्ध होता है और इसी की तृतीया विभक्ति है 'राधसा'। "राधा" शब्द भी इसी "राध" धातु से सिद्ध होता है। फलतः राधस तथा राधा एक ही अर्थ के वाचक शब्द हैं।

स्पष्ट है कि भले प्रत्यक्ष रूप से "राधा" का नामोल्लेख न मिलने पर भी अप्रत्यक्ष उल्लेख का निषेध नहीं किया जा सकता। फलतः श्रीमद्भागवत को "राधा" से नितान्त अपरिचित कहने का साहस किसी भी विज्ञ आलोचक को नहीं होना चाहिये।[1] भागवत में रासलीला के प्रसंग में वर्णन आता है कि कृष्ण रासमण्डल में से एक अपनी प्रियतमा गोपी को साथ लेकर अन्तर्हित हो जाते हैं। इस व्यापार से सब गोपियाँ व्याकुल हो उठती हैं, और कृष्ण को ढूंढ निकालने का प्रयत्न करती हैं, खोजते खोजते यमुना के उस विमल बालुका राशि में उन्हें कृष्ण के पदचिह्न दिखलाई पड़ते हैं वे अकेले नहीं हैं, उनके पास किसी व्रज बाला का पद चिह्न दृष्टि गोचर होता है। उसके सौभाग्य की प्रशंसा करती हुई गोपियाँ कह उठती हैं —

अनयाराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः ।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद्रहः ॥ — भागवत 10/30/24

इस रमणी के द्वारा अवश्य ही भगवान् कृष्ण आराधित हुए हैं। क्योंकि गोविन्द हमको छोड़कर प्रसन्न होकर उसे एकान्त में ले गये हैं। धन्या गोपी की प्रशंसा में उच्चारित इस पद्य में राधा का नाम झीने चादर से ढके हुए किसी गूढ़ बहुमूल्य रत्न की तरह स्पष्ट झलकता है। । - इस श्लोक की टीका में गौडीय वैष्णव गोस्वामियों ने स्पष्ट ही "राधा" का गूढ़ संकेत खोज निकाला है। "अनया" "राधित" का पदच्छेद दो प्रकार से किया गया है — अनया+राधित तथा अनया+अराधित दोनों में समान अर्थ की ही अभिव्यक्ति होती है। श्री सनातन गोस्वामी ने अपनी वृहत्तोषिणी" व्याख्या में लिखा है — राधयति आराधयतीति श्री राधेति नामकरणञ्च[1] श्री जीव गोस्वामी ने भी यही बात दुहराई है अपनी वैष्णवतोषिणी व्याख्या में। विश्वनाथ चक्रवर्ती तथा धनपति सूरि ने भी यहाँ "राधा" का नामकरण गुप्त भाव से स्वीकारा है। 'विशुद्धिरसदीपिका" ने इस श्लोक की व्याख्या में 'गोविन्द" नाम की महत्ता प्रदर्शित की है। वाराह तन्त्र का वचन है कि भगवान् हरि वृन्दावन में "गोविन्द" नाम से प्रख्यात होते हैं, अर्थात् वे वृन्दावन के ईश्वर हैं। फलतः आराधना के द्वारा उस गोविन्द को अपने वश में करने वाली गोपी निःसन्देह 'वृन्दावनेश्वरी" है।

---

1 पं बलदेव उपाध्याय भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा पृ 15

इस प्रकार इस श्लोक के द्वारा प्रधान गोपी का नाम ही संकेतित नहीं होता, प्रत्युत उसकी भूयसी महत्ता भी प्रदर्शित होती है —

"सच अनया मद यातया राधित वशीकृत सन गोविन्द
श्री वृन्दावनस्वरी वाद् अन्या । नस्य च वन्दावनस्वरत्वादितिभाग
य-न्दावनस्वरत्वादिनी भाव । य दावन नु गावि-मिनिवराहत मोत ।

निम्बार्क मत के अनुयायी टीकाकार शुकदेव ने अपने 'सिद्धान्त प्रदीप' म राधित पद की एक विलक्षण व्याख्या की है। "राधित का अर्थ है राधा स मयुक्त। अर्थात् कृष्ण के विहार मे राधा ही हेतु भूत है। उसके बिना वृन्दावन मे कृष्ण का विहार ही फीका और निष्प्राण है। राधा के कृष्ण का निकुञ्ज विहार नितान्त गोपनीय होता है। वह अनुभवैकगम्य दिव्य वस्तु है।

श्री सनातन गोस्वामी की कल्पना है कि जब शुकदेवजी गोपियों के अद्भुत प्रेम की लीला प्रस्तुत कर रहे थे, तब उनकी विरहाग्नि की कणिका स उनका हृदय विकल हो उठा कि व अपना देहानुसन्धान भूल गये। ऐसी विकलता मे यदि "राधा" का नाम उनके मुख से बाहर नही निकला, तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ?

गोपीना विततादभुतस्फुटतरप्रेमानलाचिश्छटा
दग्धाना किल नामकीर्तनकृतात् तासा वियोगात् स्मृते ।
तत्तीक्ष्णा ज्वलनच्छिखाग्र कणिकास्पर्शेन सद्योमहा-
वैकल्य स भजन् कदापि न मुखे न मुखेनामानिकर्तुंप्रभु ॥

—श्रीमद्भागवदमृत

रसिकों का कथन है कि राधा का नाम गुप्त रखना शुकदेवजी की चातुरी है कि उन्होंने अन्य लीलाओं का वर्णन नदी के समान उन्मुक्त शली मे किया परन्तु रास का वर्णन कूप जल के समान निगूढ शली म किया —

लीलाशुकस्य भीलेय लीला न्यासावर्णिता ।
कल्लोलिनी स्वरूपेण रास कूपजलोपमम् ॥"

इसका आशय यह है कि जिस प्रकार नदी से कोई प्यासा बिना पात्र के ही जल पाकर अपनी प्यास बुझा सकता है उसी प्रकार भागवत म श्रीकृष्ण के सख्य वात्सल्य आदि लीलाओं का आस्वादन प्रत्येक प्रकार का भक्त कर सकता है किन्तु रास की वर्णन-भंगी कुए के जल के समान है। इसी प्रकार जिस व्यक्ति के पास निष्ठा रूपी डोरी तथा प्रेम रूपी पात्र का अभाव है वह चाहे कितना भी जिज्ञासु क्यों न हो रास पंचाध्यायी का एक अक्षर भी यथावत नही समझ सकता। रास पंचाध्यायी के प्राण है श्री राधिका। उन्हे समझने के लिए शुकदेव मुनि जिज्ञासु-जनों म विशुद्ध भक्ति का उद्रेक चाहते हैं, तभी तथ्य प्रकट हो सकता है।

अवश्य ही उसने अपने पूर्वजन्म में सर्वात्मा श्री विष्णु भगवान की उपासना की होगी।

"अत्रोपविश्य वै तेन काचित् पुष्पैरलङ्कृता।
अन्यजन्मनि सर्वात्मा विष्णु रम्य चितस्तया॥" (5/13/35)

इस श्लोक का "अभ्यर्चितस्तया" अनयाराधित के समान ही शब्द याजना मे है।" राधित या आराधिता के स्थान पर यहाँ अभ्यर्चित पद का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार भागवत तथा विष्णुपुराण के रास वर्णन मे भाव तथा भंगी की दृष्टि से बहुत कुछ अनुरूपता है। भागवत का पंचाध्यायी रास वर्णन विस्तृत है। विष्णु पुराण का एकाध्यायी वर्णन संक्षिप्त है। बस अन्तर इतना ही है।

भागवत एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है। इसके आख्यानों को पृथक कर दिया जाय तो श्रीकृष्ण का मानवीय रूप ही हमारे सामने आता है। उन आख्यानों मे भागवत धर्म और उसके तत्त्व का निरूपण बड़ा महत्वपूर्ण है। उसी तत्व का वैज्ञानिक समन्वय श्रीमद् भगवत गीता मे हुआ है। श्रीभागवत में भक्ति की इच्छा के लिये उसी तत्व की व्याख्या की गई है।

भागवत में अनेक अवतारों का वर्णन है। परन्तु अन्य अवतारों को ब्रह्म का अंश रूप मानकर कृष्ण को ही पूर्ण ब्रह्म माना है।[1] पुराणों मे अवतारों की विस्तृत व्याख्या की गई है और तीन प्रकार के अवतार माने गये हैं (1) पुरुषावतार, (2) गुणावतार (3) लीलावतार। भगवान के चार व्यूह माने हैं श्री वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध। गुणावतारों में विष्णु ब्रह्मा और रुद्र माने हैं तथा लीलावतार 25 माने हैं। इसके अतिरिक्त 14 मन्वन्तरावतार होते हैं, जो स्वायम्भुव आदि 14 मन्वन्तरों मे प्रकट होते हैं।

श्री मद् भागवत में श्री कृष्ण का अवतार ही माना है। देवकी श्रीकृष्ण की स्तुति करती हुई कहती है

'हे आद्य, जिसके अंश (पुरुषावतार) का अंश प्रकृति है उसके अंश (सत्वादि गुण) के भाग (परमाणु आदि) द्वारा इस विश्व की सृष्टि स्थिति और प्रलय हुआ करती है मैं आपकी शरण हूँ।[2] गीता मे कई स्थलों पर इस प्रकार के वाक्यों को दुहराया गया है।[3] श्री मद् भागवत में कुन्ती द्वारा की गई कृष्ण की स्तुति में कृष्ण का स्वरूप एवम् भगवान के अवतार का प्रयोजन बताया गया है। अन्त में कुन्ती कहती है—हे भगवन्! कोई लोग कहते हैं कि आपन पुण्य श्लोक राजा

---

1 एते चांशकला पुंस कृष्णास्तु भगवान् स्वयम्। श्रीमद् भागवत 1/3/28
2 श्रीमद् भागवत 14/85/31।
3 यथा विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेनस्थितो जगत/गीता 20/42
मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय 7/7

युधिष्ठिर का यश बखान के लिए ही यदुवंश में जन्म लिया। —"जो लोग भावों प्रेम तथा भक्ति भावना से भरी हुई अद्भुत लीलाओं का कथाओं से सुनते हैं, श्रोताओं को सुनाते हैं तथा स्वयं गाकर और स्मरण करके आनन्दित होते हैं वे शीघ्र ही इस जन्म मरण रूपी सांसारिक प्रबल प्रवाह को धारण करने वाले आपके श्रीचरण कमलों का दर्शन प्राप्त करते हैं।[1]

"भागवत में कृष्ण के सभी रूप आ गये हैं। जैसे 1 अदभुत कर्मा 2 असुर सहारक कृष्ण, 3 बालकृष्ण 4 गोपीविहारी कृष्ण, 5 राजनीतिज्ञ कूटनीति विशारद श्री कृष्ण 6 योगेश्वर श्री कृष्ण 7 परब्रह्म स्वरूप श्रीकृष्ण मुख्य रूप से हम कृष्ण के तीन रूप देखते हैं, (1) महाभारत के कृष्ण, (2) गीता के कृष्ण तथा (3) भागवत के कृष्ण। भगवान के वीरत्व, विधायक स्वरूप के दर्शन महाभारत में परब्रह्म स्वरूप गीता में और रसिकेश्वर में भागवत में होते है। वैसे तो "भागवत में कृष्ण के प्राय सभी रूपों का विवेचन हुआ है परन्तु प्राधान्य रसिकेश्वर स्वरूप का ही है। भगवान के असुर सहारक, राजनीतिवेत्ता तथा कूटनीतिज्ञस्वरूप का वर्णन भागवत के दशम स्कन्ध के उत्तरार्द्ध में हुआ है। दशम स्कन्ध के पूर्वार्द्ध में निबद्ध कृष्ण के बाल्यकाल की असुरों के संवद्ध की कथाएं भगवान के बालरूप की कहानियां होने के कारण उनके अलौकिक चरित्र में आती है। कंस वध तक की लीलाएँ बाल लीलाएँ हैं, इनमें किशोरावस्था की भी क्रियाएँ आती हैं। उनके राजा पद की प्रतिष्ठा जरासन्ध से युद्ध के अनंतर द्वारका दुर्ग निर्माण काल में होती है और यहीं से गीता की "परित्राणाय साधूनाम् वाली उक्ति की चरितार्थता प्रारम्भ होती है।

श्री मद्भागवत में 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' तथा 'जन्म कर्म च दिव्यम्' आदि की चरितार्थता पूर्णतया हुई है।

वैदिक साहित्य में जिस रूप में कृष्ण का उल्लेख मिलता है उसमें उन्हें न तो हम अवतार की ही संज्ञा दे सकते हैं और न देवता की ही। महाभारत में भी कृष्ण का अवतार रूप से अधिक वर्णन नहीं हुआ है।

श्री कृष्ण ही भागवत धर्म के इष्टदेव के रूप में हमारे सामने आये हैं और भागवत धर्म का सर्वप्रथम वर्णन 'महाभारत' के नारायणीय आख्यान में हुआ है।

---

1 भागवत 1/8/32/43

'पातञ्जल महाभाष्य' मे पतञ्जलि ने स्पष्ट लिखा है कि पाणिनि के सूत्र मे उल्लिखित "वासुदेव" केवल क्षत्रिय वंशीय राजा ही नही, उच्चकोटि के उपास्य भी है। "वासुदेव" के साथ "अर्जुन" शब्द इस बात की पुष्टि करता है कि वासुदेव कृष्ण का ही नाम है।[1]

"महाभारत" मे कृष्ण के ऐतिहासिक व्यक्तित्व की सूचना मिलती है और विदित होता है कि प्रारम्भ मे कृष्ण सात्वत जाति के कोई पूज्य पुरुष थे। "घतजातक" मे वर्णित देव गब्भा और उपसागर के पराक्रमी, उद्भुत, क्रीडाप्रिय पुत्र वासुदेव कण्ह (वासुदेव कृष्ण) की कथा कदाचित इन्ही ऐतिहासिक कृष्ण की कथा है जो सम्भवत पर्याप्त लोकप्रिय हो चली थी। इस कथा का श्रीमद्भागवत मे वर्णित कृष्ण कथा से अद्भुत साम्य है। वासुदेव कण्ह ने मुष्टिक चाणुर और अन्य वैरियों का नाश करके द्वारका मे अपना राज्य स्थापित किया था। 'घतजातक" म वे वासुदेव कन्ह पुत्र शोक मे दुखी चित्रित किए गए हैं। "महा उमग्ग" जातक म भी वासुदेव कृष्ण का उल्लेख है और कहा गया है कि उन्होंने कामासक्त होकर चाडाल कन्या जाम्बवती को महिषी बनाया था।

कदाचित "महाभारत और पुराणो" ने कृष्ण के जिस चरित का विकास किया वह ऐतिहासिक वासुदेव से भिन्न था। इसी कारण उन्हे बारम्बार यह बताने की आवश्यकता हुई हो कि यही कृष्ण वासुदेव है यही द्वितीय वासुदेव है।" महाभारत और पुराणो मे कृष्ण द्वारा मिथ्या वासुदेव राज पुरुषोत्तम और वीरपुर के राजा शृगाल को मारकर अपना एक मात्र वासु देवत्व प्रमाणित करने का उल्लेख है। 'महाभारत" म कृष्ण सम्बन्धी अनेक वृत्तान्त है। भारत युद्ध मे कृष्ण का प्रमुख स्थान और उनके व्यक्तित्व मे पराक्रम, ऐश्वय और शौय ही नही देवत्व का प्रचुर समन्वय पाया जाता है। सभा पर्व मे भीष्म उन्हे समस्त वेद वेदाग के ज्ञाता राजनीति म निपुण, बलवान योद्धा कह कर उनकी प्रशसा की है। उद्योग पर्व म कहा गया है कि अर्जुन वज्रपाणि इन्द्र की अपेक्षा कृष्ण को अधिक पराक्रमी समझकर उन्हे युद्ध मे अपनी ओर करने मे अपना सौभाग्य मानते है क्योकि कृष्ण ने दस्युओ का मारा था, भोज राजाओ को नष्ट किया था, पाण्ड्य का सहार किया था काशी नगरी का उद्धार किया था, निषादो के राजा एकलव्य का वध किया था, उग्रसेन के पुत्र सुनाम को मारा था इत्यादि।

ग्रियर्सन, केनेडी, वेबर आदि पाश्चात्य विद्वानो ने अनुमान किया था कि गोपाल कृष्ण का बाल चरित जिसे वैष्णव भक्तो ने प्रेम भक्ति के आलम्बन रूप म अपनाया क्राइस्ट के बालचरित का अनुकरण है। परन्तु पूतना को वर्जिन तथा प्रसाद को लव फीस्ट मानने का विचार सर्वथा अमान्य हो चुका है। सभावना यह है कि गोपाल कृष्ण मूलत शूरसेन प्रदेश के सात्वत वृष्णि की पशु पालक क्षत्रियो के कुलदेव थे और उनके क्रीडा कौतुक की मनोरजक दशाएँ मौखिक रूप म लोक प्रचलित थी।

1 वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन् 4/3/98 सू स 23

भट्टनारायण ने "वेणी संहार" नाटक के नान्दी श्लोक में रास के अन्तर्गत राधा के केलिकुपित होने और कृष्ण के अनुनय करने का उल्लेख किया है। प्रसिद्ध है कि भट्टनारायण कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। उन्हें बंगाल के राजा आदिशूर (राज्यारोहण 715 ई० सं० 772 वि०) ने वैदिक धर्म के प्रचार के लिए कन्नौज से बुला भेजा था। आठवीं शताब्दी ई० में कान्यकुब्ज के राजा यशोवर्मा के सभा कवि वाक्पतिराज द्वारा लिखित प्राकृत महाकाव्य "गउडवहो" में, लक्ष्मीपति, विष्णुस्वरूप होने के साथ साथ यशोदा के वात्सल्य भाजन बालरूप और राधा तथा गोपियों के द्वारा नख क्षतयुक्त किशोर कृष्ण का पूज्य भाव से उल्लेख किया गया है।[1] यह पद्य दसवीं शताब्दी ईसवी के कवीन्द्र वचन समुच्चय में भी पाया जाता है।[2] 'ध्वन्यालोक" में उद्धृत एक अन्य श्लोक में मधुरिपु कृष्ण के द्वारावती चले जाने के बाद राधा के विरह का वर्णन[3] किया गया है। निश्चय ही यह दोनों श्लोक नवीं शताब्दी ईसवी के पहले के हैं ? सदुक्ति 'कर्णामृत" में सकलित कृष्ण लीला संबंधी श्लोकों में दो श्लोक अभिनंद नामक कवि के हैं जो अनुमानतः नवीं शताब्दी ईसवी के पहले के हैं। जो अनुमानतः नवीं शताब्दी का था।[4] 'कवीन्द्रवचन समुच्चय' नामक कविता संग्रह भी दसवीं शताब्दी ईसवी का माना गया है। इसमें सकलित कविताएँ निश्चय ही उससे पहले की होंगी। इनमें कई कविताएँ कृष्ण की गोपी और राधा सम्बन्धी लीला विषयक हैं।[5]

दसवीं शताब्दी ईसवी (सं० 1031 भाद्रपक्ष सुदि 14) के मालवाधीश वाक्पति मुंज परमार के एक अभिलेख में श्रीकृष्ण की स्तुति में कहा गया है कि जिन्हें लक्ष्मी के वदन दुःख से सुख नहीं मिलता जो वारिधि के जल से आर्द्रित नहीं होते जिन्हें अपनी नाभि के कमल से शान्ति नहीं मिलती, जो शेषनाग के सहस्र फणों के मधुर श्वास से आश्वस्त नहीं होते, उन राधा विरहातुर मुररिपु का कपित वपु तुम्हारी रक्षा करें।[6]

बारहवीं शताब्दी में हेमचन्द्र ने अपने प्राकृत व्याकरण में राधा कृष्ण सम्बन्धी दो पद्य उद्धृत किए हैं तथा 'द्वयाश्रयकाव्य" में गोपगीत का उल्लेख किया है। बारहवीं शताब्दी के पहले भी राधा कृष्ण सम्बन्धी सम्पूर्ण ग्रन्थ रचे गए थे। इसका प्रमाण रामचन्द्र गुणचन्द्र (बारहवीं शताब्दी) के नाट्य दर्पण' में उल्लि-

---

1 गउडवहो — मंगलाचरण देवतास्तुति 20 23
2 कवीन्द्र वचन समुच्चय 501
3 श्री राधा का क्रम विकास शशीभूषण दास गुप्त पृ० 119 पर उद्धृत।
4 श्री राधा का क्रम विकास शशीभूषणदास गुप्त पृ० 119 पर उद्धृत।
5 कविन्द्रवचन समुच्चय 21 22 14 41 42 512।
6 इण्डियन एंटिक्वेरी 5 पृ० 51 तथा एपिग्राफिका इंडिका 23, 108 ।

खित राधा विप्रलम्भ तथा शारदातनय (बारहवीं शताब्दी ई) के भाव प्रकाशन म उल्लिखित "रामाराधा" नामक नाटकों से मिलता है। इसी प्रकार कवि कर्णपूर ने अलंकार कौस्तुभ" म कंदर्प मंजरी" नामक नाटक का उल्लेख किया है। यह नाटक भी राधा कृष्ण विषयक बताया गया है। [1] बारहवीं शताब्दी मे कृष्ण-काव्य अपेक्षाकृत अधिक परिमाण मे लिखा गया। साथ ही उसकी प्रकृति भी जो "गाहा सतसई" मे नितान्त शृंगारिक थी, उत्तरोत्तर धार्मिक होते होते बारहवीं शताब्दी तक और अधिक भक्ति भाव समन्वित हो गई। लीला शुक का "कृष्ण-कर्णामृत" स्तोत्र उसी शताब्दी की रचना मानी जाती है। कहा जाता है कि चैतन्य महाप्रभु उसे दक्षिण से अपने साथ लाए थे और अत्यन्त प्रेमाभाव से उसे सुना करते थे। ईश्वरपुरी द्वारा रचित "श्री कृष्ण लीलामृत" का शृंगार रस मिश्रित रूप मे माधुर्य भक्ति है इसी प्रकार महाकवि जयदेव का 'गीत गोविन्द' राधा माधव के उद्दाम शृंगार का वर्णन करते हुए भी एक धार्मिक काव्य है। स्वयं कवि ने उस हरि स्मरण के द्वारा मन को सरस रंजन तथा विलास कलाओं के प्रति कौतूहल की तृप्ति करने के दुहरे उद्देश्य से रचा था। वस्तुतः कृष्णकाव्य की यह विलक्षणता न्यूनाधिक रूप म निरन्तर देखी जा सकती है, कि जहाँ एक ओर वह लोक रंजन की रस पेशल, ललित सामग्री जुटाता रहा। वहाँ दूसरी ओर पूजा और भक्ति की लोक भावना को भी आबद्ध करता आया है।

संस्कृत साहित्य म 'गीत गोविन्द" एक अनूठी काव्य कृति है। आधुनिक आलोचकों ने उसे गीतिकाव्य, गीतिनाट्य संगीत रूपक यात्रा काव्य आदि विविध नामों से अभिहित किया है। उसमे राधा कृष्ण की निकुंजलीला का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वसंत के मनोरम वातावरण मे विरहाकुल राधा गोपीवल्लभ केशव की मुग्ध माधुरी के ध्यान मे लीन हैं। वे अपनी सखी के द्वारा कृष्ण के पास सन्देश भेजती ह। उधर श्री कृष्ण भी राधा से मिलने को आतुर हैं, और उसी के द्वारा उनके पास सन्देश भेजते है। कवि विप्रलब्धा राधा को क्रमशः वासकसज्जा, खण्डिता, कलहांतरिता, मानिनी और अभिसारिका के रूप म चित्रित करता हुआ अंत म उनके कृष्ण मिलन और केलिविलास का वर्णन करता है। 'गीत गोविन्द" सर्गबद्ध काव्य हैं। उसके बारह सर्गों के नाम ही सामोद दामोदर, मुग्ध मधुसूदन साकांक्ष पुंडरीकाक्ष विलक्ष लक्ष्मी, सुप्रीति पीताम्बर आदि कवि की कांत कल्पना और ललित पदावली का परिचय देते हैं।

'सदुक्तिकर्णामृत'का उल्लेख किया जा चुका है। यह मुक्तक संग्रह श्रीधरदास ने बारहवीं और तेरहवीं शताब्दियों की संधि मे तैयार किया था, जिसमें बारह वीचकों में गोपालकृष्ण की लीला के साठ श्लोक है संग्रह मे स्वयं राजा लक्ष्मणसेन उनके पुत्र केशवसेन और जयदेव की तरह लक्ष्मणसेन के सभा कवि थे। वैष्णव

1- श्री राधा का क्रम विकास पृष्ठ 123, - शशिभूषण दास गुप्त

मतानुयायी सेन राजाओं की काव्य रसिकता के फलस्वरूप कृष्ण काव्य को जो प्रगति मिली वह कदाचित अभूतपूर्व थी। समसामयिक कवियों की कविताओं के अतिरिक्त 'सदुक्ति कर्णामृत" में अनेक श्लोक पूर्ववर्ती संग्रह 'कवीन्द्र वचन समुच्चय' के भी पाए जाते हैं, जिससे उनकी प्राचीनता प्रमाणित होती है।

बारहवीं शताब्दी ई० के बाद कृष्णकाव्य प्रबन्धों के रूप में भी रचा गया प्रतीत होता है। वोपदेव की "हरिलीला" तथा वेदान्तदेशिक की 'यादवाभ्युदय" रचनाएँ तेहरवीं चौदहवीं शताब्दी ई० की है।

पन्द्रहवीं शताब्दी ई० की जिन रचनाओं की सूचना मिली है, वे हैं – व्रज बिहारी (श्रीधर स्वामी) गोपलीला, (रामचन्द्र भट्ट) "हरिचरित काव्य" (चतुर्भुज) 'हरिविलास काव्य" (व्रजलोलिम्बराज), गोपाल चरित" (पद्मनाभ) 'मुरारिविजय नाटक" (कृष्ण भट्ट) और कंस निधन महाकाव्य (श्री राम)।[1] सोलहवीं शताब्दी में गौडिय वैष्णव भक्त के विद्वान रूपगोस्वामी ने नाटक चन्द्रिका में केशवचरित और 'हरिविलास' के तथा उज्जवल नीलमणी में 'गोविन्दविलास" के नामोल्लेख सहित उदाहरण दिए है। सम्भवतः ये रचनाएँ उनसे पहले की कम से कम पन्द्रहवीं शताब्दी ई० की होंगी। रूपगोस्वामी ने ही अपनी "पद्यावली' में अनेक पूर्ववर्ती संस्कृत कवियों की कृष्णलीला सम्बन्धि कविताओं को संकलित किया था।

इस प्रकार आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में कृष्ण भक्ति साहित्य की रचना होने से पहले प्राकृत और संस्कृत साहित्य की एक लम्बी परम्परा थी। इस साहित्य का लोकगीतों और लोक कथाओं से घनिष्ट सम्बन्ध था तथा वह अधिकतर गीति और मुक्तक के रूप में था जो रचनाएँ प्रबन्ध काव्य और नाट्य के रूप में हुई उनमें भी कदाचित गीति भावना प्रधान रही होगी। संभवतः इसी कारण संस्कृत साहित्य में उन्हें अधिक गौरव का स्थान नहीं मिल सका। परन्तु आगे चलकर परिस्थितियाँ बदल गई जिनके फलस्वरूप काव्य की प्रेरणा भावना रूप और भाषा में आमूल परिवर्तन हो गया। इसी परिवर्तन के क्रम में हिन्दी कृष्ण काव्य, को जन्म मिला जिसकी प्रकृति मूलतः धार्मिक है।

बारहवीं शताब्दी के लगभग दो शताब्दियों की साहित्यिक गतिविधि की जानकारी कम से कम जहाँ तक हिन्दी प्रदेश का सम्बन्ध है अपेक्षाकृत बहुत कम है। इस बीच देश की राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में जो अभूतपूर्व परिवर्तन घटित हुए उनके कारण नई समस्याएँ एक महान चुनौती के रूप में आ गई। उस चुनौती का सामना करने के लिए समाज की जीवनी शक्ति जिन विविध रूपों में प्रकट हुई, उनमें सबसे प्रमुख भक्ति धर्म का वह प्रबल आन्दोलन था

1– हिस्ट्री ऑफ ब्रजबुलि लिटरेचर सुकुमार सेन पृष्ठ 485

जिसने सम्पूर्ण उत्तर भारत के जन-जीवन को नई आस्था और नई स्फूर्ति से अनुप्रमाणित कर दिया।

कृष्ण भक्ति के विविध सम्प्रदायो का इस आन्दोलन को देशव्यापी बनाने मे सर्वाधिक सबसे अधिक हाथ है। अतः हिन्दी कृष्ण काव्य के पर्यवेक्षण से पहले उसके प्रेरणा स्रोत कृष्ण भक्ति का सामान्य परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

भारतीय धर्म साधना मे दस अवतार प्रसिद्ध है। मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। अवतारो के रूप मे सृष्टि प्रक्रिया का वैज्ञानिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है। पहले जलचर, फिर उभयवासी फिर थलचर मे पशु, फिर अन्य पशु, अर्ध मानव फिर अपूर्णमानव और अन्त मे पूर्ण मानव। यही सृष्टि रचना का विकास क्रम है। इन अवतारो मे भी अन्य अंशावतार हैं, किन्तु कृष्ण पूर्णावतार—

"अन्य चांशकला प्रोक्ता कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।"

भारतीय वाङमय मे श्रीकृष्ण के स्वरूप विकास के पांच सोपान मिलते है – वैदिक युग के कृष्ण, उपनिषदो के कृष्ण और श्रीमद् भागवत के कृष्ण, लोक जीवन के कृष्ण महाभारत के कृष्ण और श्रीमद् भागवत के कृष्ण ऋग्वेद के अष्टम तथा दशम मण्डल मे ऋषि कृष्ण का उल्लेख मिलता है। कौशीतकी ब्राह्मण मे अंगिरस ऋषि के एक शिष्य का नाम कृष्ण का उल्लेख है। इससे यह संकेत मिलता है कि वैदिक वाङमय मे भी कृष्ण का अस्तित्व विद्यमान था।

आगे चलकर महाभारत, भागवत आदि के द्वारा श्रीकृष्ण के जिस स्वरूप का विकास हुआ उसका सम्बन्ध वैदिक साहित्य से है अथवा नही इस पर विद्वानो मे मतभेद है। डॉ भंडारकर और लोकमान्य तिलक आदि ने अंगिरस कृष्ण और महाभारत कालीन कृष्ण को पृथक् पृथक् माना है योरोप के कुछ विद्वानो ने तो गोपालकृष्ण का सम्बन्ध आभीर जाति से जोड़ने का प्रयत्न किया है। ग्रियर्सन वेबर आदि विद्वानो ने कृष्ण की बाल लीलाओ पर क्राइस्ट के बाल रूप का प्रभाव बताया है। किन्तु इस प्रकार की कल्पनाएँ निराधार है। वस्तुत श्रीकृष्ण एक ही थे और क्राइस्ट के जन्म के कई शताब्दियो पूर्व ही उनके चरित्र का विकास हो चुका था। पौराणिक कृष्ण और महाभारत के कृष्ण भी दो भिन्न व्यक्ति नही है? कृष्ण के चरित्र के दो पक्ष हैं – एक ऐश्वर्य, रूप दूसरा माधुर्यरूप। महाभारत मे कृष्ण के ऐश्वर्यरूप का प्रतिपादन है। वह ज्ञान, शक्ति, बल ऐश्वर्य, वीर्य और तेज इन छः गुणो से सम्पन्न हैं। जबकि पुराणो मे उनके माधुर्य रूप की झांकी है। लेकिन महाभारत मे भी श्रीकृष्ण के गोपाल रूप के संकेत मिलते है। सभा पर्व मे राजसूय की समाप्ति पर अग्रपूजा के अवसर पर शिशुपाल ने श्रीकृष्ण की निन्दा की है। उन निन्दात्मक वाक्यो मे कृष्ण की ब्रज और मथुरा लीला के उल्लेख हैं। उस अंश से यह स्पष्ट ध्वनित होता है कि महाभारत के कृष्ण वही हैं जिन्होने

बाल्यकाल में पूतना, केशी आदि राक्षसों का वध किया था, गोवर्धन पर्वत उठाया था और कंस का वध भी उन्हीं के हाथों हुआ था। वस्तुतः कृष्ण की लीलाओं का सम्बन्ध तीन स्थानों से है — व्रजलीला, मथुरा लीला और द्वारिका लीला। इस त्रिविध लीला में भागवत तथा अन्य पुराणों में वृन्दावन लीला और मथुरा लीला को प्रमुखता दी गई है तथा महाभारत का प्रमुख उल्लेख द्वारिका के प्रौढ़ जीवन की घटनाओं का वर्णन है। पौराणिक साहित्य के अतिरिक्त संस्कृत भाषा में काव्य और नाटकों के माध्यम से कृष्ण चरित्र पर विस्तार से लिखा गया है। इस दृष्टि से भास का नाम सर्वप्रथम आता है। यह कालिदास के पूर्ववर्ती नाटककार हैं। भास के बाद भट्टनारायण के "वेणीसंहार" में महाभारत के अट्ठारह दिन के युद्ध का चित्रण है। इस ग्रन्थ में श्रीकृष्ण को अनन्त आश्चर्य और परब्रह्म के रूप में दिखाया गया है। भट्टनारायण के कुछ समय पूर्व माघ ने शिशुपाल वध नामक काव्य की सातवीं शताब्दी में रचना की थी। इस काव्य में श्रीकृष्ण को ब्रह्मा का अवतार बताया गया है और उनके राजनीतिज्ञ और वीर रूप का परिचय दिया गया है इस काव्य में सर्वप्रथम उद्धव को कृष्ण के अभिन्न सखा और मंत्री के रूप में उपस्थित किया गया है।

परवर्ती कवियों ने कृष्ण की बाल लीला और यौवन लीला को मुख्यरूप से काव्य का विषय बनाया। गोपी कृष्ण विशेष रूप से राधा कृष्ण की प्रेममयी लीलाओं को सर्वोपरि स्थान दिया गया। पुराणों तथा ज्योतिष साहित्य के अतिरिक्त लौकिक भाषाओं में श्रीराधा कृष्ण के प्रणय की चर्चा पहली शताब्दी से ही मिलने लगती है। इस दृष्टि से हाल की गाथा सप्तशती का सर्वप्रथम उल्लेख आता है। हाल का वास्तविक नाम शालिवाहन था और ये ईसा की प्रथम शताब्दी में प्रतिष्ठानपुर के राजा थे। इन्होंने गाहा सत्तसई में प्राकृत भाषा के कवियों की शृंगारपरक रचनाओं का संग्रह कराया था। इसमें एक गाथा में कहा गया है कि हे कृष्ण! तुम मुख के पवन के द्वारा राधा के मुँह में लगे गोरज को हटा रहे हो। अपने इस कार्य से तुम अन्य गोपियों के गौरव का हरण कर रहे हो।

मुह मारुएण त गोरअ राहिआएँ अवणे तो।
एताण बलवीण अण्णाण वि गोरअं हरसि ॥ 1–29

हाल के बाद पाँचवीं शताब्दी में लिखित पञ्चतन्त्र में राधा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। भट्टनारायण ने (छठी शताब्दी) वेणीसंहार में नान्दीश्लोक में केलिकुपिता राधा और उससे अनुनय करते हुए कृष्ण का उल्लेख किया है। 9वीं शताब्दी में आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक में राधा की चर्चा की है इसी प्रकार दसवीं शताब्दी के त्रिविक्रम भट्ट रचित "नल चम्पू काव्य" में और वल्लभ देव की रचनाओं में राधा कृष्ण के मनोविनोद और नागर प्रत्युत्तर के रोचक चित्र मिलते हैं। जयदेव के गीत गोविन्द और लीलाशुक बिल्व मंगल की कृष्ण कर्णामृत नामक रचनाओं के द्वारा राधा और कृष्ण की प्रेमलीला का अपूर्व विस्तार

मिला। 12वी, 13वी, शताब्दी मे अनेकानेक सूक्ति मुक्तककार हुए जिन्होंने राधा कृष्ण की रूप माधुरी के विविध चित्र उरेहे हैं। इन सूक्तिकारो मे अभिनन्द उमापतिधर, उद्भट, धनमाली, महीधर, शतानन्द, शुभंकर केशवदेव सेन, लक्ष्मण सेन, योगेश्वर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनकी स्फुट रचनाओं में वृन्दावन लीला और युगल मूर्ति के दिव्य प्रेम के अनुपम चित्र मिलते हैं।

प्राकृत अपभ्रंश में मुख्य रूप से जैन कवियो की रचनाएँ मिलती है। कृष्ण की दिव्य लीलाओ ने उन्हें भी आकृष्ट किया और इन भाषाओ मे भी कई ग्रन्थों की सृष्टि हुई। इस दृष्टि से प्राकृत भाषा मे लिखित 'राम पाणिवाद का कंस वहो' "नामक चार सर्गों मे लिखित काव्य महत्वपूर्ण है। इसके कवि केरल के नम्बियार सम्प्रदाय से सम्बद्ध थे। वह 18 वी शताब्दी मे कई राजाओ के आश्रित रहे थे। कंस वहो की कथा वस्तु का मुख्य केन्द्र कंस का वध है। वैसे इसके प्रारम्भिक सर्गों में कृष्ण के बाल जीवन की भी झाँकी मिलती है। इसी प्रकार कृष्ण लीला शुक लिखित सिरिचिम् कव्वम् (श्री चिह्न काव्यम) का भी पता चलता है। इसमें 8 सर्ग हैं। कृष्ण लीला शुक भी केरल के निवासी थे। उनका समय तेरहवी शताब्दी बताया गया है। इसके पश्चात् केरल के ही एक अन्य कवि श्रीकण्ठ रचित "सौरिचरित्त" नाम एक अन्य प्राकृत भाषा काव्य का उल्लेख मिलता है। उसमे भी मुख्य रूप से कंसवध की कथा लिपिबद्ध है।

जैन धर्मानुयायियों के अतिरिक्त बौद्धो ने भी कृष्ण चरित्र पर काव्य रचना की है। उनके जातकों में कण्हदीपायन (कृष्ण द्वैपायन) का उल्लेख मिलता है। बौद्ध और जैन दोनो परम्पराओं में कृष्ण के जीवन को अपनी अपनी मान्यतानुसार परिवर्तित भी किया गया है। तेरहवी शताब्दी मे देवेन्द्रसूरि नामक जैन लेखक द्वारा लिखित कण्हचरिया (कृष्ण चरित) नामक ग्रन्थ मिलता है। इसमें एक हजार एक सौ तिरसठ गाथाएँ है जिनमे कृष्ण का लगभग पूरा जीवन चरित अंकित है। अर्द्धमागधी प्राकृत के नियमशास्त्र के कई अगो मे कृष्ण विषयक जानकारी मिलती है।

अपभ्रंश भाषा में राम और कृष्ण को लेकर जैन कवियों द्वारा कई काव्य लिखे गये, किन्तु जैन मान्यता के अनुसार कृष्ण न तो कोई दिव्य पुरुष थे और न ईश्वर वह असाधारण शक्ति सम्पन्न वीर पुरुष थे। जैन धर्म में तिरसठ महापुरुषों के चरित्रों का उल्लेख है। उनमें कृष्ण का भी नाम है। उनका चरित्र बाइसवें तीर्थंकर अरिष्टनेमि के साथ जुड़ा हुआ है। अरिष्टनेमि और कृष्ण को चचेरा भाई बताया गया है और कृष्ण को देवकी को सातवाँ पुत्र माना गया है जो भाद्रपद शुक्ल द्वादशी को पैदा हुए थे। उन्हें जैन धर्म का अनुयायी भी बताया गया है।

अपभ्रंश में कृष्ण काव्य लेखकों में स्वयभू, पुष्पदन्त, हरिभद्र और धवल प्रमुख थे, किन्तु इनके पूर्ववर्ती कवियों में चतुर्मुख और गोविन्द नामक कवियों का भी पता चला है। चतुर्भुज जनोत्तर कवि थे और उन्होंने महाभारत के आधार पर अपभ्रंश में एक महाकाव्य की रचना की थी। इसका उल्लेख बड़ोदा के एक जनरल में मिलता है। उसी प्रकार गोविन्द कवि के 6 छन्द मिले हैं जिनमें कृष्ण की बाल और यौवन लीलाओं का गान है।

स्वयभू नवीं शताब्दी के कवि थे। अपभ्रंश भाषा में इनके दो महाकाव्य मिलते हैं। उनके कृष्णकाव्य का नाम है– हरिवंश पुराण अथवा अरिष्टनेमि चरित्र। यह चार काण्डों में विभक्त विशालकाय ग्रन्थ है। इसकी कथा कुछ ब्राह्मण परम्परा के अनुरूप है।

पुष्पदन्त ने दसवीं शताब्दी में 'महापुराण' की रचना की थी। इसमें कृष्ण की बाल लीला को प्रमुखता दी गयी है। पुष्पदन्त के बाद अपभ्रंश परम्परा में हरिभद्र और धवल नामक कवियों का नाम आता है। हरिभद्र ने बारहवीं शताब्दी में लगभग तीन हजार छन्दों में नेमिनाहचरिउ नामक महाकाव्य की रचना की थी। इसमें भी कृष्ण के वीर रस की झाँकी मिलती है। कवि धवल की कृति का नाम है – हरिवंश पुराण यह भी लगभग उसी समय की रचना है। इसकी तीन सन्धियों में कृष्ण के जन्म से लेकर कंस वध तक की कथा दी गयी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही लिखा है "चौदहवीं शताब्दी तक आते आते जब कि भागवत सम्प्रदाय अपने नये रूप में विकसित हो रहा था राधा कृष्ण इतिहास के व्यक्ति नहीं थे। वे सम्पूर्ण भाव जगत के प्राणी हो गये थे।'

आधुनिक भारतीय भाषाओं विशेष रूप से हिन्दी में लिखित कृष्ण काव्य उपर्युक्त परम्परा का रिक्थ है। इसके अतिरिक्त उसे नया स्वरूप प्रदान करने में दक्षिण के आचार्यों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। दक्षिण में भक्ति के जिन चार सम्प्रदायों का उदय हुआ उनमें सनकादि सम्प्रदाय और रुद्र सम्प्रदाय में श्रीकृष्ण की उपासना का प्राधान्य था। इनके अतिरिक्त माध्व सम्प्रदाय से सम्बद्ध गौड़ीय चैतन्य सम्प्रदाय में भी श्री कृष्ण को परमतत्व माना गया – कृष्णात् पर परमतत्व मह न जाने" । इन आचार्यों के प्रयत्न और प्रचार से कृष्ण भक्ति सम्बन्धित कई सम्प्रदायों का गठन हुआ और उपनिषद गीता, ब्रह्मसूत्र भागवत आदि के आधार पर दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रणयन हुआ तथा कृष्ण भक्ति का प्रचार प्रसार पूरे देश में हो गया।

ब्रज मण्डल में कृष्ण भक्ति के स्वरूप विकास में निम्बार्काचार्य और विष्णु स्वामी का विशेष योग है। विष्णु स्वामी की ही परम्परा में वल्लभाचार्य हुए। ये तैलंग ब्राह्मण थे, किन्तु ब्रज में जाकर बस गए थे। वहीं पर उन्होंने संवत् 1556 में आगरा अम्बाला के सेठ पूरनमल द्वारा प्रदत्त धनराशि से श्रीनाथजी

के मंदिर का निर्माण कराया तथा "शुद्धाद्वैत दर्शन" एवं 'पुष्टिमार्ग" पर आधारित कृष्ण भक्ति का प्रचार किया। श्रीवल्लभ अत्यन्त मेधावी और प्रखर प्रतिभा सम्पन्न विद्वान् थे। उन्होंने चौरासी ग्रंथों की रचना की जिनमें तत्त्वदीप निबंध अनुभाष्य और भागवत की सुबोधिनी टीका प्रमुख हैं। उनके दार्शनिक सिद्धांत और भक्ति सम्बन्धी मान्यताएँ तत्त्वदीप निबन्ध और अणुभाष्य में लिपिबद्ध हैं।

वल्लभाचार्य द्वारा प्रवर्तित पुष्टिमार्गीय भक्ति के प्रचार-प्रसार का श्रेय अष्टछाप के कवियों को है। इसके अन्तर्गत आठ भक्त कवि आते हैं। उनके नाम हैं— कुम्भनदास, सूरदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, गोविंदस्वामी, छीतस्वामी, नन्ददास और चतुर्भुजदास। इनमें से प्रथम चार वल्लभाचार्य के शिष्य थे और शेष चार उनके पुत्र विट्ठलनाथ के शिष्य थे। "छाप" का अर्थ है— आशीर्वाद।

माधुर्य भाव का स्वरूप

माधुर्य भाव के स्वरूप और विस्तार के सम्बन्ध में विभिन्न सम्प्रदायों में कुछ अन्तर पाए जाते हैं। निंबार्क सम्प्रदाय में यद्यपि कृष्ण के ऐश्वर्य रूप की अपेक्षा उनके माधुर्य रूप का ही अधिक महत्त्व है और उसके उद्घाटन के लिए वृन्दावन की नित्य लीला में राधा तथा गोपियों के कान्ता भाव का विशद चित्रण किया गया है, परन्तु निंबार्क सम्प्रदाय का राधा या गोपीभाव स्वकीया प्रेम तक ही सीमित है तथा उसमें मर्यादा को ही महत्त्व दिया गया है।

राधावल्लभी मत की एक और विशेषता यह है कि उसमें राधा प्रेम का आलम्बन हैं और कृष्ण उसके आश्रय। ये नित्य विहार की परिकर, सहचरीगण भी बिना किसी ईर्ष्या अथवा स्पर्धा के "तत्सुखीभाव" से उनकी रासक्रीड़ा में सहायता देने के लिए परिचर्या में रत रहती हैं। इन सहचरियों में आठ विशिष्ट हैं, जिन्हें अष्टसखी कहते हैं। भक्त इन्हीं सहचरियों के सौभाग्य की कामना करता हुआ, उन्हीं के समान आचरण करने की चेष्टा करता है। चैतन्य सम्प्रदाय ने भी अष्ट सखियों की गणना की गई है तथा वल्लभ सम्प्रदाय के अष्ट सखाओं के बारे में कहा गया है कि उन्हें निकुंज लीला भी सिद्ध थी। सखी भाव से अष्ट सखाओं के नाम भी गोस्वामी हरिराय ने गिनाए हैं। चैतन्य सम्प्रदाय में सखियों के अतिरिक्त परिचारिका (मंजरियों) का भी उल्लेख है, तथा प्रत्येक सखी को यूथेश्वरी कहकर उसके अलग अलग यूथ गिनाए गए हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि निकुंज लीला की सखीभाव की भक्ति केवल राधावल्लभी मत की ऐसी विशेषता नहीं थी, जो अन्य कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों में न पाई जाती हो। अन्तर केवल विवरण और अवधान का है। कृष्ण के प्रति सखा भाव और वात्सल्य भाव की भक्ति अवश्य वल्लभ सम्प्रदाय की निजी विशेषता कही जा सकती है। प्रेमानुभूति की अनुरंजकता, विविधता तथा नित्य नवीनता के लिए भी परकीया भाव में ही स्वाभाविक परिस्थितियाँ प्राप्त हो सकती हैं। वस्तुतः माधुर्य भाव का

इसी के द्वारा इतना विस्तार हो सका है। वल्लभ सम्प्रदाय के कवियों ने भी इसी कारण माधुर्य भाव के अन्तर्गत राधा और गोपियों के प्रेम में परकीया का आदर्श सम्मिलित किया है।

यह परकीया भाव प्रेम के आदर्श का प्रतीक मात्र है। वास्तव में न तो राधा कृष्ण से भिन्न है और न अन्य गोपियाँ, वे तत्वतः अद्वय और एक ही हैं। साथ ही परकीया भाव केवल प्रेम विकास की स्थिति के लिए है प्रेम की परिपूर्णता तो उस स्थिति में है जब स्वकीया और परकीया का लौकिक भेदाभेद मिट जाता है। यदि लौकिक दृष्टि से वर्णन किया भी जाए तो उसे वास्तविक स्वकीया की स्थिति ही कहेंगे, क्योंकि माधुर्य भक्ति में वस्तुतः पति तो एक मात्र कृष्ण ही हैं उनसे भिन्न जो भी है – चाहे वे लीला हेतु स्वयम् राधा या गोपियाँ हों या माधुर्य भाव को अपनाने वाले उनके अंशरूप स्त्री पुरुष भक्तगण, वे सभी उन्हीं प्रियतम कृष्ण की प्रेमिकाएँ हैं। स्पष्ट है कि प्रेम का यह स्वरूप सर्वथा अतीन्द्रिय और अलौकिक है।

कान्ता भाव प्रेम में विरह की महिमा सभी सम्प्रदाय स्वीकार करते हैं। परकीय भाव वस्तुतः विरहानुभूति की तीव्रता के कारण ही इतना प्रशंसित रहा है। विरह, में प्रेम की अति प्रियता सहज सुलभ है। काव्य की भाँति यहाँ भी विरह पूर्वराग मान और प्रवास के रूप में होता है परन्तु राधा वल्लभी सम्प्रदाय की स्थिति इस सम्बन्ध में भी भिन्न है। उनमें न तो परकीया भाव की स्वीकृति है और न विरह भाव की। वहाँ निकुंज लीला का वृन्दावन रस नित्य मिलन के रूप में कल्पित ,किया गया है। निर्गुण निराकार और निर्विकार ब्रह्म को सगुण और साकार रूप में अवतरित करना स्वतः एक विपरीत कल्पना है। भक्ति के प्रतिपादकों ने "इस विरोध का समाधान श्री कृष्ण ब्रह्म को विरुद्ध धर्माश्रय" बनाकर किया है। चैतन्य और वल्लभ मतों के अनुसार पात्र आनंदरूप श्रीकृष्ण गोलोक के नित्य वृन्दावनधाम में गोप गोपियों के साथ नित्य विहार करते हैं तथा अवतार दशा में वही आनंद लीला ब्रज में प्रकट हो जाती है। राधावल्लभी मत में वृन्दावन को ही नित्य माना है और उसके प्रेम तथा आनन्द की क्रीड़ा को निकुंज लीला कहा गया है। हम कह सकते हैं कि भक्ति के आराध्य कृष्ण और राधा तथा आदर्श भक्त गोप गोपी आदि वस्तुतः भाव रूप में कल्पित है, ये भावों के ही मूर्त प्रतीक हैं। मानवीय मनोविकारों की यह अलौकिक रूप कल्पना एक प्रकार से उनका परिष्करण अथवा उदात्तीकरण कही जा सकती है।

हिन्दी साहित्य की कृष्ण काव्य परम्परा के मूल में महाभारत श्रीमद् भागवत और श्रीमद् भगवद् गीता आकर स्रोत ग्रन्थ में रहे हैं साथ ही लोक विख्यात कृष्ण कथा भी उसके मूल में रही है। इन ग्रन्थों में कृष्ण योद्धा, कुशल रण प्रधान दूरदर्शी राजनीतिज्ञ, योग्य सारथी महाज्ञानी और साक्षात् ब्रह्म

रूप म चित्रित हैं। हिन्दी क कवियो न कष्ण के माधुय गुण और उनकी विविध लीलाओ को अपना प्रिय विषय माना है। उनका मधुर रूप शील और सौंदय समन्वित है। हिन्दी कवियो ने कृष्ण क कस निकन्दन, दानव दल भजन भक्त-भय भजन रूप को अपनाकर यशोदा न दन गोपी वल्लभ, मुरली मनोहर लीला बिहारी रूप को भक्ति के लिये चुना और उनके रूप-सौदय हास-विलास, केलि-रति क्रीडा विनोद, रागरग, सयोग, वियोग आदि का चित्रण किया है। प्रेम, रति और भक्ति की तरग मे बहुत से हिन्दी के कवि मर्यादा के बधन को भी लाघ गये और उनका ऐसा विलासपूण चित्रण किया कि रीतिकाल म तो राधा कृष्ण आराध्य न रहकर सामान्य नायक नायिका बना दिये गये और उनका आश्रय लेकर कवि गण अपनी वासनामयी कुत्सित मनोवृत्तियो को व्यक्त करने लगे। कृष्ण के लोक रक्षक रूप के स्थान पर प्राय उनके लोक रजक रूप की अभिव्यक्ति ही हिन्दी साहित्य मे हुई है। वैष्णव भक्ति का समावेश कृष्ण काव्य परम्परा म गीत गोविन्द मे हुई था। कृष्ण की मथुरा लीला का गायन जयदेव न किया।

चन्दवरदाई के "पृथ्वीराज रासो" म 'दशम' क अन्तगत कृष्णावतार का उल्लेख है। भगवान् के धम स्वरूप को इस प्रकार विचार स्तर स उसकी ओर आकर्षित होने और आकर्षित करने की प्रवृत्ति का विकास कृष्ण भक्तो म न हो पाया। फल यह हुआ कि कृष्ण भक्त कवि अधिकतर फुटकल पदो की रचना म ही लग रहे। श्री कृष्ण का इतना चरित ही उन्होने न लिया जो खण्ड काव्य, महाकाव्य आदि क लिये पर्याप्त होता। राधा कृष्ण की प्रेम लीला ही मधन गायी।[1]

भागवत् धर्म का उदय महाभारत काल मे ही हो चुका था और अवतार भावना इस देश मे बहुत प्राचीन काल से ही चली आ रही थी पर वैष्णव धम के साम्प्रदायिक स्वरूप का सगठन दक्षिण मे ही हुआ। वैदिक परम्परा के अनुरूप अनेक सहिताएँ उपनिषद, सूत्र ग्रथ आदि बने। श्रीमद्भागवत" म श्री कृष्ण के मधुर रूप का विशेष वणन होने से भक्ति क्षेत्र मे गोपियो के प्रेम तथा माधुय भाव का रास्ता खुला। इसके प्रचार मे दक्षिण के मदिरो की देवदासी प्रथा विशेष रूप से सहायक बनी। माता पिता लडकियो को मदिरो मे चढा आते थे, वहाँ उनका विवाह भी ठाकुरजी के साथ होता था व पति रूप म मन्दिर के भगवान् की उपासना करती थी। इन देवदासियो मे कुछ प्रसिद्ध भक्तिनें हुईं ह अन्दाल इसी प्रकार की एक प्रसिद्ध भक्तिन हो गई है (जन्म सवत् 773)। उसके पद द्रविड भाषा म 'तीरुप्पावइ नामक' पुस्तक मे मिलते ह। उसने एक स्थल पर लिखा है कि — 'अब मैं पूण यौवन को प्राप्त हूँ और स्वामी कृष्ण के अति-रिक्त और किसी को अपना पति नहीं बना सकती।

1 दृष्टव्य प रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 153-154

पं. रामचन्द्र शुक्ल ने नन्ददास के इसी वक्तव्य को दृष्टि में रखकर कहा है कि "इस प्रकार की उपासना यदि कुछ दिन चले तो उसमें गुह्य और रहस्य की प्रवृत्ति हो ही जायेगी। रहस्यवादी सूफियों की उपासना भी गुह्य या माधुर्यभाव की ही थी। मुसलमानी जमाने में सूफियों का प्रभाव देश की भक्तिभावना के स्वरूप पर बहुत कुछ पड़ा। माधुर्य भाव को प्रोत्साहन मिला। माधुर्य भाव की जो उपासना चली आ रही थी उसमें सूफियों के प्रभाव से अभ्यन्तर मिलन मूर्च्छा, उन्माद, आदि की विशद व्यंजना की है। इनके लोकपक्ष का समावेश उसमें नहीं है। इन कृष्ण भक्तों के कृष्ण प्रेम में मतवाली गोपिकाओं से घिरे हुए गोकुल के कृष्ण, बड़े बड़े भूपालों के बीच लोक व्यवस्था की रक्षा करते हुए द्वारका के श्रीकृष्ण हैं, कृष्ण के जिस मधुररूप को लेकर ये भक्त कवि चले हैं वह हास विलास की तरंगों से परिपूर्ण अनंत सौन्दर्य का समुद्र है। उस सार्वभौम प्रेमालंबन के सम्मुख मनुष्य का हृदय निराले प्रेम लोक में फूला फूला फिरता है। अतः इन कृष्ण भक्त कवियों के सम्बन्ध में यह कह देना आवश्यक है कि ये अपने रंग में मस्त रहने वाले जीव थे, तुलसीदास जी के समान लोक संग्रह का भाव इनमें न था। समाज किधर जा रहा है इस बात की परवाह ये नहीं रखते थे, यहां तक कि अपने भगवतप्रेम की पुष्टि के लिए जिस शृङ्गारमयी लोकोत्तर छटा और आत्मोत्सर्ग की अभिव्यंजना से इन्होंने जनता को रसोन्मत्त किया, उस पर लौकिक स्थूल दृष्टि रखने वाले विषय वासनापूर्ण जीवों पर कैसा प्रभाव पड़ेगा इसकी ओर उन्होंने ध्यान न दिया। जिस राधा और कृष्ण के प्रेम को इन भक्तों ने अपनी गूढ़ातिगूढ़ चरम भक्ति का व्यंजक बनाया, उसको लेकर आगे के कवियों ने शृङ्गार की उन्मादकारिणी उक्तियों से हिन्दी काव्य को भर दिया।"

'कृष्ण चरित के गान में गीतकाव्य की जो धारा पूरब में जयदेव और विद्यापति ने बहाई उसी का अवलंबन ब्रज के भक्त कवियों ने किया। आगे चलकर अलंकारकाल के कवियों ने अपनी शृङ्गारमयी मुक्तक कविता के लिये राधा और कृष्ण का ही प्रेम लिया। इस प्रकार कृष्ण संबंधिनी कविता का स्फुरण मुक्तक के क्षेत्र में ही हुआ, प्रबन्ध क्षेत्र में नहीं। बहुत पीछे संवत् 1809 में ब्रजवासीदास ने रामचरित मानस के ढंग पर दोहा—चौपाइयों में प्रबन्ध काव्य के रूप में कृष्ण चरित-वर्णन किया पर ग्रंथ बहुत साधारण कोटि का हुआ और उसका वैसा प्रचार नहीं हो सका। कारण स्पष्ट है। कृष्ण भक्त कवियों ने श्रीकृष्ण भगवान् के चरित का जितना अंश लिया, वह एक अच्छे प्रबन्ध काव्य के लिए पर्याप्त न था। उसमें मानव जीवन की वह अनेकरूपता न थी, जो एक अच्छे प्रबन्ध काव्य के लिए आवश्यक है। प्रायः सभी वैष्णव सम्प्रदायों में कृष्ण के निम्नलिखित तीनों स्वरूपों का वर्णन मिलता है

(1) वृंदावन बिहारी कृष्ण,
(2) मथुरावासी कृष्ण,
और (3) द्वारकावासी कृष्ण।

वृंदावन बिहारी कृष्ण प्रेम माधुर्य के साक्षात् जीवंत विग्रह हैं। वे गोप-गोपी, नंद-यशोदा आदि के साथ लीलारत हैं। राधा के प्रियतम अथवा पति रूप में वे रस राग शृंगार को चरम उन्मेष प्रदान करते हैं। इसलिए यह मान्यता चल पड़ी कि कृष्ण का जो रूप वृंदावन में रहा वह "नित्य बिहारी" का है।

ऐसे कई सम्प्रदाय हैं जिनमें राधा कृष्ण की शत् सहस्र केलि-क्रीडाओं का वर्णन मिलता है, वहाँ कृष्ण प्रेम ही सर्वस्व है। इन सम्प्रदायों में कृष्ण को प्रेम काम, शृंगार, संयोग, संभोग और वियोग—की जीवन्त मूर्ति, प्रियतम, पति, परमेश्वर या भगवान् माना गया है। हिंदी साहित्य के आदिकाल में कृष्ण प्राय उपेक्षित ही रहे। कहीं कहीं उनका उल्लेख मात्र मिल जाता है। चंद बलदिस्य के महाकाव्य में दशावतार के अन्तर्गत कृष्ण का संक्षिप्त उल्लेख मिलता है। विद्यापति के अनन्तर 'कन्हावत' में जायसी ने कृष्ण के जन्म से लेकर मृत्यु तक की कथा का प्रबन्धात्मक रूप में वर्णन किया है इसकी सम्यक् विवेचना इसी प्रबंध में अन्यत्र की गई है।

वल्लभ और विट्ठल गोस्वामी के शिष्यों (अष्टछाप के कवियों) "सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, छीतस्वामी गोविंदस्वामी, चतुर्भुजदास और नंददास" ने श्री कृष्ण की लौकिक-अलौकिक प्रेममयी मूर्ति को ही लेकर प्रेमतत्व का मूल माना है। जयदेव, विद्यापति और चण्डीदास ने राधा को शृंगारी रूप प्रदान किया, उनकी प्रेरणा का मूल स्रोत ये विभिन्न पुराण ही हैं। हिंदी साहित्य में सूर ने राधा के शृंगारी और भक्ति रस पगी रूप की जो प्रतिष्ठा की है उसका मूल स्रोत भी श्रीमद् भागवत पुराण ही है। जयदेव ने 11 वीं शताब्दी में ही राधा का आध्यात्मिक व्यक्तित्व विलुप्त कर उसे कृष्ण की सहचरी, काम क्रीडा प्रवीण तथा मानिनी के रूप में चित्रित किया है। जयदेव की राधिका कृष्ण की एक निकट प्रेमिका है। विद्यापति की राधिका किशोरी, यौवन तथा असीम रूप-सौंदर्य से सम्पन्न है। यह भावुक नारी है। वह प्रीति में "क्षणे क्षणे नवता" का अनुभव करती है। चण्डीदास की राधा भोली, सरस, प्रेम में आकण्ठ डूबी हुई है। चण्डीदास की राधा ने कृष्ण के प्रति आत्म-समर्पण करके ही सर्वातिशायिनी का पद प्राप्त किया है। विद्यापति की राधा कला का भव्य और सुंदर रूप है, चण्डीदास की राधा रसमूर्ति है।

राधा का यही विकसित रूप भारतीय साहित्य में कृष्ण के साथ जोड़ा जाने लगा। राधा और कृष्ण भक्त कवियों के आराध्य और आराध्या, रीतिकालीन रसिक कवियों के लिए नायक-नायिका तथा आधुनिक कवियों के लिए कृष्ण

राष्ट्र नेता तथा राधा समाज सेविका के रूप में प्रतिष्ठित हुई। निम्बार्क सम्प्रदाय राधा वल्लभी सम्प्रदाय और अष्टछाप के कवियों ने राधा की रसिक मूर्ति के रूप में प्रस्थापना की है। आचार्य निम्बार्क ने सब प्रथम राधा कृष्ण की युगल मूर्ति की उपासना की। अष्टछाप के कवियों ने इसे अपनाया। इस प्रकार राधा कृष्ण युगल रूप में पूज्य बन गये।

प्राय सभी हिन्दी कृष्ण भक्त कवियों ने कृष्ण की विविध लीलाओं को ही अपने काव्य का वर्ण्य विषय बनाया। सूर तुलसी, नन्ददास, कुम्भनदास, परमानन्ददास चतुर्भुज स्वामी आदि भक्तों ने कृष्ण के नित्य लीला बिहारी रूप का ही वर्णन किया है। जायसी ने कृष्ण जीवन पर 'कन्हावत' नामक एक महाकाव्य की रचना की है। डाक्टर रामकुमार वर्मा लिखते हैं कि सोलहवीं शताब्दी में चैतन्य सम्प्रदाय की स्थापना हुई। विश्वम्भर मिश्र (श्रीकृष्ण चैतन्य) ने ईश्वरपुरी सिद्धान्तों के अनुसार भागवत पुराण की भक्ति का आदर्श स्वीकार किया। जयदेव चण्डीदास और विद्यापति के कृष्ण विषयक पदों का गाकर उन्होंने कृष्ण भक्ति का विशेष प्रचार किया। कृष्ण भक्ति में चैतन्य महाप्रभु ने राधा को विशेष स्थान दिया।[1] चैतन्य महाप्रभु का कार्यक्षेत्र बंगाल में था। उनकी भक्ति सौंदर्य और प्रेम समन्वित है। बंगाल के चण्डीदास ने भी राधा कृष्ण का अपूर्व वर्णन किया है। कृष्ण और राधा की प्रणय लीला विलास विदग्ध और नित नूतन है। इसलिए कवि इस प्रणय लीला का गायन करते समय आत्मस्फूर्ति अनुभव करता है। लेकिन इनके पदों में कामवासना की गन्ध नहीं है। अपनी संकीर्तन प्रणाली से चैतन्य महाप्रभु ने समस्त उत्तर भारत को आप्लावित कर दिया।

'विद्यापति की कृष्ण लीला गान की परम्परा के प्रचार का सबसे बड़ा कारण चैतन्य महाप्रभु हुए। बंगाल में वैष्णव सम्प्रदाय के सबसे बड़े नेता हुए। इन पर लोगों की इतनी श्रद्धा थी कि ये विष्णु के अवतार समझे जाते थे। विद्यापति के ललित और पवित्र भावनाओं से पूर्ण पदों को गाकर ये इस प्रकार भाव में निमग्न हो जाते थे कि इन्हें मूर्छा सी आ जाती थी। इनके द्वारा विद्यापति के पदों की ऐसी प्रतिष्ठा होने के कारण लोगों में विद्यापति के प्रति आदर का भाव बहुत बढ़ गया। इसलिए बंगाल में विद्यापति का आश्चर्यजनक प्रचार हुआ।

विद्यापति ने जयदेव की मधुर वाणी का सम्प्रसार किया। उन्होंने राधा कृष्ण की प्रणयलीला का चित्रांकन अत्यन्त मनोमुग्धकारी ढंग से प्रस्तुत किया। विद्यापति के पद पर स्थूल शृंगार के ही विभिन्न अंगों की विवेचना करते हैं।

---

1 डॉ रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृष्ठ 606
2 विद्यापति श्री जनार्दन मिश्र पृष्ठ 32

विद्यापति शृ गार रस के रस सिद्धवाक् कवि थे । जयदेव के "गीत गोविन्द" का अनुसरण करते हुए विद्यापति ने अपनी पदावली म अनेक मौलिक उद्भावनाएँ की हैं । अभिसार, कौतुक प्रबोधन, मिलन, मान भग विरह स्वप्न आदि का प्रसग निश्चय ही सवथा नवीन और भव्य कल्पना का प्रतीक है । कवि ने राधा को स्वकीया माना है । तथा उसे मुग्धा अभिसारिका खडिता कलहान्तरिता, विप्रल ब्धा और प्रोषितपतिका के रूप मे अकित कर साहित्य का नवीन उपलब्धि प्रदान की है, जबकि भागवत् मे राधा का नाम भी कही नही आया है ।

डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि — "विद्यापति शृ गार रस के सिद्धवाक् कवि थे । उनकी पदावली मे राधा और कृष्ण की जिस प्रेम लीला का चित्रण है वह अपूव है । इस वणन मे प्रेम के शरीर पक्ष की प्रधानता अवश्य है पर भावो की सान्द्रता और अभिव्यक्ति की प्रेषणीय गुणिता के कारण वह बहुत आकषक हो गया है ।" [1]

विद्यापति प्रेम और सौन्दर्य के कवि है । परवर्ती कवियो ने प्रेम और सौंदय को अपने साहित्य मे महत्वपूण स्थान प्रदान किया है । कवि ने विरह व्यथित मनोभावो को भी अत्य त सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है । यही विरह विदग्ध तल्लीनता अनेक भक्त कवियो मे दृष्टिगोचर होती है ।

बगाल के चैतन्य महाप्रभु पर विद्यापति के पदो का इतना प्रभाव था कि वे भाव विह्वल होकर इन पदो को गाते-गाते मूर्च्छित हो जात थे । चैतन्य महाप्रभु ने एक सम्प्रदाय का प्रारम्भ किया, जिसे चैतन्य सम्प्रदाय कहा जाता है ।

"श्री वल्लभाचायजी की आज्ञा से सूरदासजी ने "श्रीमद्भागवत" की कथा को पदो मे गाया । इनके "सूरसागर" म वास्तव मे भागवत के दशम स्कध की कथा ही ली गई है । उसी को इन्होंने विस्तार से गाया है । शष स्कधो की कथा सक्षेपत इति वृत्त के रूप मे थोडे से पदों मे कह दी गई है । "सूरसागर" मे कृष्ण जन्म से लेकर श्री कृष्ण के मथुरा जान तक की कथा अत्यन्त विस्तार से फुटकल पदों में गाई गई है । भिन्न भिन्न लीलाओ के प्रसग लेकर इस सच्चे रसमग्न कवि न अत्य त मधुर और मनोहर पदो की झडी सी बाँध दी है । इन पदो के सम्बन्ध मे सबसे पहली बात ध्यान देने की यह है कि चलती हुई व्रजभाषा म सबसे पहली साहित्यिक रचना होने पर भी यह अत्य त सु दर सुगठित और परिमार्जित है । यह रचना इतनी प्रबल आर काव्यांग पूण है कि आगे आने वाले कवियो की शृ गार और वात्सल्य की उक्तियाँ सूर की जूठी सी जान पडती है । इसी कारण प रामचन्द्र शुक्ल ने स्पष्ट लिखा है कि 'सूरसागर" किसी चली आती हुई गीत काव्य परम्परा का चाहे वह मौखिक ही रही हो पूण विकास सा प्रतीत

1 डॉ हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास पृ 106

होता है ।"[1] सूरसागर का सबसे मर्मस्पर्शी और वाग्वैदग्ध्यपूर्ण अंश 'भ्रमरगीत" है, जिसमे गोपियो की वचनवक्रता अत्यन्त मनोहारिणी है । ऐसा सुन्दर उपालम्भ काव्य और कही नही मिलता । उद्धव तो अपने निर्गुण ब्रह्मज्ञान और योग कथा द्वारा गोपियो को प्रेम से विरत करना चाहते हैं और गोपियाँ उन्हे कभी पटकर बनाती है, कभी उनसे अपनी विवशता और दीनता का निवेदन करती है ।[2]

इस भ्रमरगीत का महत्व एक बात से और बढ़ गया है । भक्त शिरोमणि सूर ने इसम सगुणोपासना का निरूपण बडे ही मार्मिक ढग से, हृदय की अनुभूति के आधार पर, तर्क पद्धति पर नही किया है । सगुण निर्गुण का यह प्रसग सूर अपनी ओर से लाए हैं । सूर के समय मे निर्गुण सत सम्प्रदाय की बातें जोर शोर से चल रही थी । इसी से उपयुक्त स्थल को देखकर सूर ने इस प्रसग का समावेश कर दिया...... ।[3]

चतन्य सम्प्रदाय

इसके प्रवतक महाप्रभु चतन्य हैं । भक्तमाल म नित्यानन्द, अद्वैताचाय रूप गोस्वामी, सनातन स्वामी और जीव गोस्वामी इनके शिष्यों का उल्लेख है । गोपाल भट्ट, ईश्वरपुरी गोस्वामी माधवेन्द्रपुरी गोस्वामी आदि शिष्यो का उल्लेख भी भक्तमाल मे है । रूप गोस्वामी ने भक्ति रसामृत सिंधु', लघुभागवतामृत' तथा 'उज्जवल नीलमणि' ग्रन्थो मे भक्ति का अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया है । सनातन गोस्वामी न श्रीमद्भागवत्" दशमस्कन्ध की टीका तथा 'वृहत भागवता" मृत नामक ग्रन्थो का रचना की है ।

वस्तुत चैतन्यमत मा वमत की ही गौडीय शाखा है परन्तु दोनो के दाश निक सिद्धान्तों मे महान् प्रायक्य है । माध्वमत' द्वैतवाद का पक्षपाती है और चैतन्यमत "अचिंतय भेदा भेद सिद्धान्त का अनुयायी है । यह वृन्दावन की सरस प्रेमल भूमि पर पल्लवित हुआ । श्री कृष्ण परमतत्त्व हैं । स्वय, तदेकात्म और आवेश उनके तीन रूप ह । जगत सत्य है । इस मत के अनुयायी प्रेम को पचम पुरुषाथ मानते हैं । भक्ति, साध्य और साधन दोनों ही है । साहित्य जगत् म गौडीय वैष्णवो के द्वारा भक्ति रस की स्थापना एक अपूर्व व्यापार है । भक्ति रस का सागोपाग विवेचन ग्रन्थ 'भक्तिरसमृतसिंधु' तथा उज्ज्वल नीलमणि" श्री रूप गोस्वामी की सवमान्य रचनाएँ हैं ।

---

1 द्रष्टव्य – प रामचन्द्र शुक्ला हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 160
2 वही / पृष्ठ 160–67
3 प रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 167

हिंदी साहित्य में चैतन्य मतानुयायी अनेक कवि हो गए हैं, परन्तु उनके ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित ही है। यही कारण है कि इस विशिष्ट मत के साहित्यिक प्रभुत्व का पूर्ण परिचय अभी तक हिंदी के आलोचको को विशेष रूप से उपलब्ध नही है। यह विषय विशेष अनुशीलन की अपेक्षा रखता है। कतिपय कवियो का यहाँ केवल सकेत किया जा रहा है।[1]

सुप्रसिद्ध वैष्णव कवि प्रियादास चैतन्य मत के अनुयायी वैष्णव थे, इसका परिचय भक्तमाल की टीका के मगलाचरण से भली भाँति मिलता है। इनके ग्रन्थो मे कृष्ण लीला का विषय बहुश वर्णित है। इनके प्रधान ग्रन्थ ये है—

(1) रसिक मोदिनी (राधाकृष्ण का वर्णन),
(2) सगीतरत्नाकर — राग रागिनियो का विवेचन,
(3) सगीतमाला सग्रह (कृष्ण लीला के विषय मे पद),
(4) भक्तमाल टीका — 1712 ई० मे रचित।

नरोत्तमदास का "नामकीतन" कृष्ण चैतन्य की प्रार्थना से आरम्भ होता है। गोविन्द प्रभु की "गीत चिन्तामणि" का काव्य की दृष्टि से बहुत ही मधुर तथा ललित रचना है।

स्वामी निम्बार्काचार्य

बारहवी शताब्दी के आसपास स्वामी निम्बार्काचार्य ने निम्बार्क सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था, उन्होंने वेदान्त, पारिजात, सौरभ, दशश्लोकी आदि ग्रन्थो की सर्जना की है। इन ग्रन्थो मे उपास्य और उपासक का रूप कृपा का फल, भक्ति रस, जीव-जगत, मोक्ष आदि का सूक्ष्म विवेचन हुआ है और इसमे उनके साधनो का भी उल्लेख किया गया है। निम्बार्काचार्य के अनुसार श्री कृष्ण ही परम ब्रह्म है। निम्बार्क सम्प्रदाय के दार्शनिक आधार का प्रतिपादन आचार्य निम्बार्क की रचनाओ मे मिलता है। इस सम्प्रदाय के अनुयायी भक्त कवि भट्टजी प्रसिद्ध केशव कश्मीरी के प्रधान शिष्य कहे जाते हैं। उनके युगल शतक के आधार पर आचार्य निम्बार्क के द्वैताद्वैत वाद का सम्यक् ज्ञान सम्भव नही है। उनके "युगल शतक" मे भक्ति भावना व लीला सिद्धान्त वाद ही मिलता है।

हरिदास स्वामी का सखी सम्प्रदाय भी अपना सम्बन्ध निम्बार्क से जोड़ता है। उनके अनुयायी भगवत रसिक अधिक सिद्धान्तवादी हैं। उन्होंने तो द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत आदि शब्दो का प्रयोग भी किया है।

1— इन कवियों के वर्णन के लिए भिन्न भिन्न वर्षों के खोज विवरण देखना चाहिए।

रूप रसिक

रूप रसिक निम्बार्क सम्प्रदाय के अत्यन्त प्रसिद्ध भक्त व श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। माधुर्य भक्ति के अन्तर्गत इन्होंने राधा कृष्ण की प्रणय लीलाओं का प्रतिपादन करते हुए राधाकृष्ण को सर्वव्यापी ब्रह्म माना है। भक्त उनकी सेवा से परम आनन्द को प्राप्त कर सकता है। उन्होंने "लीला विंशति" नामक काव्य में अपनी मान्यताओं को व्यक्त किया है। उनके अनुसार सखी भाव ही सर्वोपरि प्रेम और भक्ति राधा कृष्ण की संयोग संभोग और प्रेम लीलाओं को केवल सखी भाव से ही परखा जाता है।

संत नामदेव ने कृष्ण भक्ति प्रचार-प्रसार में दक्षिण भारत में अपार योगदान प्रदान किया। अनेक अन्य संत कवियों ने भी श्रीकृष्ण की भक्ति में छुट पुट पदों की रचना की। लालचदास हलवई ने "भागवत भाषा" का "दशम स्कन्ध" लिखकर कृष्ण काव्य विकास परम्परा को और एक कदम आगे बढ़ाया। केशव काश्मीरी हरिव्यास मुनि गदाधर भट्ट इस सम्प्रदाय के प्रसिद्ध भक्त कवि हुए हैं। इनकी रचनाओं में भी श्रीकृष्ण भक्ति का विशेष प्रचार किया। इनकी भक्ति प्रणाली चैतन्य महाप्रभु की संकीर्तन प्रधान प्रणाली के समान ही थी। निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य गदाधर भट्ट ने 'युगल शतक' ग्रन्थ का सृजन कर एक ओर राधा कृष्ण की प्रणय लीला, दूसरी ओर श्रीकृष्ण की उपासना पद्धति का सैद्धान्तिक पक्ष प्रस्तुत किया इस आदि वाणी भी सम्बोधित किया जाता है। सौ दोहों में लिखी गई इस पुस्तिका में सिद्धान्त सुख, ब्रजलीला सुख, सेवा सुख, सहज सुख और उत्साह सुख का वर्णन है। अनेक भक्तिकालीन कवियों ने इस ग्रन्थ का अनुसरण किया।

विष्णु स्वामी सम्प्रदाय का भी इस काव्य धारा पर विशिष्ट प्रभाव है। इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक विष्णुस्वामी थे। विष्णुस्वामी के सैकड़ों शिष्य थे, जिनमें से एक बिल्वमंगल भी थे। महाप्रभु वल्लभाचार्य पर बिल्वमंगल के सिद्धान्तों का अत्यन्त प्रभाव था। बिल्वमंगल संन्यासी ने कृष्ण कर्णामृत नामक कविता में राधा कृष्ण का यश गाकर इस मत का विशेष प्रचार किया। विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में यह सम्प्रदाय वल्लभ सम्प्रदाय में मिल गया क्योंकि महाप्रभु वल्लभाचार्य ने विष्णु स्वामी के सिद्धान्तों को लेकर पुष्टि मार्ग की स्थापना की थी।[1]

मध्वाचार्य ने "भक्ति रत्नावली" नामक पुस्तक लिखी जिसमें भक्ति सिद्धांतों का निरूपण किया। ईश्वरपुरी ने श्रीकृष्ण भक्ति का अत्यधिक प्रसार किया।

---

1 डॉ रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृष्ठ 606

महाराष्ट्र प्रदेश में एक अन्य सम्प्रदाय 'दत्तात्रेय' विकसित हुआ। इसके अनुयायी दत्तात्रेय को इस सम्प्रदाय का प्रवर्तक मानते हैं। दत्तात्रेय को कृष्ण का अवतार माना जाता है। "श्रीमद् भागवत गीता" को ही इस सम्प्रदाय के अनुयायी धर्म पुस्तक मानते हैं।

स्वामी हरिदास ने टट्टी सम्प्रदाय की स्थापना की थी। इस सम्प्रदाय पर चैतन्य महाप्रभु का अत्यधिक प्रभाव है, इसमें कृष्ण की उपासना सखी भाव से की जाती है। सहचरि शरण इस सम्प्रदाय में सर्वाधिक प्रसिद्ध सन्त हुए हैं। संकीर्तन का इस सम्प्रदाय में बहुत महत्त्व है।

हितहरिवंश राधावल्लभी सम्प्रदाय के प्रस्थापक थे। "राधा" इस सम्प्रदाय में अधिष्ठात्री रूप में पूज्य हैं। इसमें विधि निषेध और अनन्य दास्य भाव मिलता है हितहरिवंश ने "राधा सुधा निधि" नामक संस्कृत ग्रन्थ की रचना की। उन्होंने "हित चौरासी" नामक 84 स्फुट पदों की एक रचना भी लिखी है। इस सम्प्रदाय में राधा का स्थान कृष्ण से बहुत ऊँचा माना गया है।

रूप गोस्वामी द्वारा विरचित "उज्ज्वल नीलमणि" नामक ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें भागवत् में विवेचित गोप पत्नियों की प्रतिष्ठा एवं सम्मान दिलाने के लिए स्वकीया भाव में भक्ति का आलम्बन अंगीकार किया गया है। इन गोप-पत्नियों ने कुंजा विथियों, वनों, तालाबों आदि पर सामाजिक बन्धन से मुक्त होकर कृष्ण के साथ केलि और रास-क्रीड़ाएँ की हैं। गोपियों को कृष्ण भक्ति में जीवात्मा माना गया है।

रामानुज के सगुण साकार से सम्पूर्ण उत्तर भारत में लोग प्रभावित हुए। निम्बार्क ने रामानुज से सगुण राम के स्थान पर कृष्ण की प्रतिष्ठापना की, इसे चैतन्य महाप्रभु और वल्लभाचार्य ने उत्तर भारत में सर्वत्र प्रचारित किया। तदनन्तर कृष्ण भक्ति काव्य धारा अत्यन्त तीव्र गति से प्रवाहित होने लगी।

महाप्रभु वल्लभाचार्य

वल्लभाचार्य ने वल्लभ सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया। उन्होंने गोवर्धन पर्वत पर श्रीनाथजी की मूर्ति प्रतिष्ठित की। उन्होंने कृष्ण को ही परम् ब्रह्म माना। यही समष्टि में, अंश रूप जीवों को रचकर विभिन्न प्रकार की लीलाएँ सम्पादित करते हैं। सत्त चित्त तथा आनन्द का अविर्भाव व तिरोभाव स्वयं ब्रह्म रूप कृष्ण ही करते हैं। अतएव श्री कृष्ण लीला नित्य है, विकार शून्य है। कृष्ण लीला का वर्णन और गायन वल्लभ सम्प्रदाय के कवियों का परम धर्म माना गया है।

शंकराचार्य ने ब्रह्म का पारमार्थिक या वास्तविक रूप व्यक्त किया था। वल्लभ ने सगुण रूप को ही असली पारमार्थिक रूप बताया और निर्गुण को उसका तिरोभावरूप कहा। भक्ति की साधना के लिए वल्लभाचार्य ने उनके श्रद्धा वाले

अवयव को छोड़कर केवल प्रेम लिया अर्थात् उन्होंने 'प्रेम लक्षणा भक्ति' को स्वीकार किया। उनके यहाँ प्रेम ही मुख्य और श्रद्धा आनुषंगिक या सहायक है।

वल्लभाचार्य की प्रेमलक्षणा भक्ति की ओर जीव की प्रवृत्ति तभी होती है जब भगवान का अनुग्रह होता है। इसे वे 'पोषण' या 'पुष्टि' कहते हैं। इसी से वल्लभाचार्य ने अपने मार्ग को पुष्टिमार्ग कहा है। कृष्ण परब्रह्म हैं, दिव्य गुण सम्पन्न हैं, पुरुषोत्तम हैं लीला पुरुष हैं, इसी रूप में आनन्द का पूर्ण आविर्भाव रहता है, उनकी सब लीलाएँ नित्य हैं। व अपने भक्तों के लिए 'व्यापी बैकुण्ठ में' अनेक प्रकार की केलि और लीलाएँ नित्य हैं। गोलोक इसी व्यापी बैकुण्ठ का एक खण्ड है, जिसमें नित्य रूप में यमुना, वृन्दावन, निकुंज और कृष्ण की गोपियों के साथ रति आदि सब कुछ है। उसकी इस नित्य लीला में प्रवेश करना ही जीव की सबसे उत्तम गति है।[1]

वल्लभाचार्य ने जीव को तीन प्रकार का माना है —

(1) पुष्टि जीव, जो भगवान के अनुग्रह का ही भरोसा रखते हैं और नित्य लीला में प्रवेश पाते हैं।

(2) मर्यादा जीव, जो वेद की विधियों का अनुसरण करते हैं और स्वर्ग आदि लोक प्राप्त करते हैं और

(3) प्रवाह जीव, जो संसार के प्रवाह में पड़े सांसारिक सुखों की प्राप्ति में लगे रहते हैं।

वल्लभाचार्यजी के 1 पूर्वमीमांसा भाष्य, 2 श्रीमद् भागवत की सुबोधिनी टीका, 3 तत्वदीप निबन्ध, 4 ब्रह्मसूत्र भाष्य 5 सोलह छोटे छोटे प्रकरण ग्रन्थ। म्लेच्छाक्रान्तेषु देशेषु श्रीकृष्ण शरणं मम। मुसलमानों से आक्रान्त देश की विषम स्थिति में वल्लभ की दृष्टि में श्रीकृष्ण की शरण के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग दृष्टिगोचर नहीं हुआ। उनके सम्प्रदाय में उपासना या सेवा पद्धति ने भोग, राग तथा विलास की प्रभृति सामग्री के प्रदर्शन की प्रधानता रही। आचार्य शुक्ल ने ठीक ही लिखा है कि 'भोग विलास के आकर्षण का प्रभाव सेवक-सेविकाओं पर कहाँ तक अच्छा पड़ सकता था। जनता पर चाहे जो प्रभाव पड़ा हो, पर उस गद्दी के भक्त शिष्यों ने सुन्दर सुन्दर पदों द्वारा जो मनोहर प्रेम संगीत धारा बहाई, उसने मुर्झाते हुए हिन्दू जीवन को सरस और प्रफुल्ल बना दिया। इस संगीत धारा में दूसरे सम्प्रदायों के कृष्ण भक्तों ने भी पूरा योग दिया।'

---

1 पं रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 151

वल्लभाचार्य के दार्शनिक सिद्धान्त स्पष्ट हैं। इसमें एक ओर तो रामानुज की विशिष्टता दूर की गई है और दूसरी ओर शंकर का मायावाद अस्वीकृत किया गया है। वे शंकर के ज्ञान के बदले में भक्ति को ग्रहण करते हैं। भक्ति की साधना तथा साध्य भी बतलाई जाती है। भक्ति ज्ञान से बढकर है, क्योंकि वह ईश्वर की कृपा से मिलती है। ईश्वर की दया के लिये पुष्टि शब्द का व्यवहार किया गया है जो भागवत के आधार पर है। इसीलिये वल्लभाचार्य का भक्तिमार्ग पुष्टि कहलाता है।

पुष्टिमार्ग के अनुसार कृष्ण ही ब्रह्म हैं जो सत् चित् और आनन्द स्वरूप है। जिस प्रकार अग्नि से चिनगारियाँ निकलती हैं, उसी प्रकार ब्रह्म से जीव और जगत् निकलते हैं। ये उससे भिन्न नहीं हैं। अन्तर इतना ही है कि आनंद को खोकर केवल सत् और चित् को अंशत धारण किए रहता है मुक्त होकर जीव आनन्द स्वरूप हो जाता है और कृष्ण के साथ एकाकार रहता है।

वल्लभाचार्य जगत् को मिथ्या नहीं मानते। माया भी ब्रह्म की ही शक्ति है, अत यह मायात्मक जगत् मिथ्या नहीं है। हाँ, माया में फंसा रहने के कारण जीव अपना शुद्ध स्वरूप नहीं पहचान सकता। जब ईश्वर का अनुग्रह होता है तब जीव माया से मुक्त होकर अपना शुद्ध स्वरूप पहचानता है और तब वह भी सत्, चित् और आनंद स्वरूप हो जाता है।

यहाँ जिन दार्शनिक सिद्धान्तों का विवरण दिया गया है उनके अतिरिक्त वल्लभाचार्य ने कुछ व्यवहारिक नियम भी प्रचलित किये थे जिनका उनके सम्प्रदाय में अब तक पालन होता है। इन व्यवहारिक नियमों में सबसे अधिक उल्लेखनीय गुरु शिष्य संबंध है, जिसका आगे चलकर बड़ा अनिष्टकर परिणाम हुआ। वल्लभाचार्य की शिष्य-परम्परा में यह नियम है कि गुरु की गद्दी का उत्तराधिकारी प्रत्येक शिष्य नहीं हो सकता, गुरु का पुत्र ही हो सकता है। गोसाईं विट्ठलनाथ भी इसी नियम के अनुसार गद्दी के उत्तराधिकारी हुए थे। आगे चलकर अयोग्य व्यक्तियों को भी गद्दी का अधिकार मिलने लगा, क्योंकि पिता की सदैव योग्य संतान नहीं हुआ करती। परन्तु इन अयोग्य गुरुओं की पूजा बराबर विधिपूर्वक होती रही, इसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ। गुरु धर्मोपदेशक और साधू न बनकर धनलोलुप तथा विलास प्रिय बन बैठे। उनका वैभव इतना बढ़ा कि वे राजाओं की भाँति संपत्तिशाली हो गए और महाराज की उपाधि भी उन्होंने धारण कर ली। महाराज मंदिर के सर्वेसर्वा होते हैं। भक्तगन उनकी प्रसाद प्राप्ति के लिए बड़ी बड़ी रकमें दान करते हैं। धीरे धीरे भक्त भी वे ही होने लगे जो विशेष धनवान हो। इससे राधा कृष्ण के स्वर्गीय प्रेम को लौकिक विलास वासना का रूप मिला और सम्प्रदाय अध पतित हो गया।

वल्लभाचार्य के सम्प्रदाय का तत्कालीन उत्तर भारत पर अभूतपूर्व प्रभाव पड़ा। कृष्ण भक्ति के अनेक छोटे-बड़े सम्प्रदाय इसके वेग में विलीन हो गये। ब्रज भाषा के अधिकांश कवि इसके अनुयायी थे और कवियों ने इससे अलग रहकर रचना की है उन पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव दीख पड़ता है। निम्बार्क और विष्णु स्वामी आदि के सम्प्रदाय वल्लभ सम्प्रदाय के आगे दब गये। उत्तर भारत में वल्लभ सम्प्रदाय और बंगाल में चैतन्य सम्प्रदाय के कवियों की ही धूम रही। अन्य सभी मत या सम्प्रदाय फीके पड़ गये। राधा और कृष्ण की उपासना वाणी सारे उत्तर भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक गूंज उठी। जनता उस सरस वाणी में सब कुछ भूलकर बह चली। वल्लभाचार्य की दृष्टि में भगवद् अनुग्रह ही जीव का असली पोषण या पुष्टि है, 'पोषण तदनुग्रह" अर्थात् पोषण ही उसका अनुग्रह है इसी से हृदय में भक्ति का संचार होता है। पुष्टिमार्ग स्त्री, पुरुष, द्विज और शूद्र सबके लिये खुला है, मनुष्यमात्र इसका अधिकारी है। बिना प्रेम की जो आराधना होगी वह सेवा न होगी। स्वयं को भगवद् चरणों में अर्पित कर देना आवश्यक है। इसी समर्पण से यह मार्ग प्रारम्भ होता है। और पुरुषोत्तम के स्वरूप का अनुभव तथा लीला सृष्टि में प्रवेश हो जाने पर भगवान् के स्वरूप अनुभव की क्षमता प्राप्त होती है।

पुष्टिमार्ग के उपास्य लीला पुरुषोत्तम भगवान कृष्ण हैं। भक्तों ने इसमें प्रकट लीला का गान ही किया है और इसी माध्यम से नित्य गोलोक प्राप्ति की कामना की है। ऐश्वर्य क्रीड़ा, वंशी विरह की चारों माधुरियों के रसास्वादन में भक्त मस्त रहता है। इस भक्ति में प्रेम ही प्रेम है। जीव गोस्वामी ने गोपियों की रति को मधुरा रति कहा है।

कृष्ण भक्ति के अन्तर्गत मधुर भाव से उपासना करने वाले भक्तों पर कालान्तर में सूफियों के मादन भाव का प्रभाव पड़ा। मादना रति की भक्ति की पराकाष्ठा भी प्रदर्शित होने लगी। मिलन के लिए भांति भांति के शृङ्गार अष्टयाम साधना, मूर्च्छा आदि का भी आगमन हुआ। चैतन्य महाप्रभु तो इस प्रेम में चरम मूर्च्छा प्राप्त किया करते थे।

वल्लभाचार्यजी के ज्येष्ठ पुत्र गोपीनाथ थे। उनके तिरोधाम के पश्चात् गोपीनाथ ही उत्तराधिकारी हुए। 'साधन दीपिका" नामक इनका एक ग्रन्थ प्रसिद्ध है।

गोस्वामी विट्ठलनाथ द्वारा लिखित अनेक ग्रन्थों निरन्ध प्रकाश टीका अणुभाष्य का अंतिम अध्याय, भक्तिहंस भक्त हेतु भक्त निर्णय, शृंगार रस मंडन टीका आदि का उल्लेख मिलता है। इनकी भक्ति की परम्परा के अनेक शिष्यों में दो सौ बावन प्रख्यात हैं। इन्होंने ही अष्टछाप की स्थापना की थी जिसमें आठ कवि हैं — महाप्रभु वल्लभाचार्य के चार शिष्य कुम्भनदास, सूरदास

परमानन्ददास और कृष्णदास थे, तथा गोविन्द स्वामी नन्ददास, छीत् स्वामी चतुर्भुज स्वय इनके शिष्य थे।

वल्लभ सम्प्रदाय मे श्रीकृष्ण, श्रीनाथ, नवनीत प्रिय, मथुरानाथ, विट्ठलनाथ द्वारकाधीश, गोकुलनाथ और मदनमोहन आठ रूपो मे प्रतिष्ठित है। अष्टयामी पूजन विधान में विटठलनाथ ने कीर्तन को भी सम्मिलित कर दिया।

गोस्वामी विट्ठलनाथ के चतुर्थ पुत्र गोकुलनाथ थे। उन्होंने पुष्टिमार्ग का प्रचार किया। उनके पहले विट्ठलनाथ के ज्येष्ठ पुत्र गिरधरजी उत्तराधिकारी हुए थे। वार्ता साहित्य का प्रवर्तन सर्वप्रथम इन्होने ही किया। कल्याणराय और हरिराय न इस सम्प्रदाय के प्रवर्तन मे बडा योग दिया। वल्लभाचार्य ने मधुर और सख्यभाव भक्ति-पद्धति की अवतारणा की। सूरदास ने इस भक्ति-पद्धति म भक्ति रस की पावन मदाकिनी प्रवाहित की। कृष्ण भक्तो मे सूर ही सिरमौर हैं। सूर सागर मे उनकी अद्भुत कवित्व प्रतिभा और भक्ति की पावन धारा के दर्शन होते हैं। सूर सागर के राधा और कृष्ण की लीलाएँ अप्रतिम हैं। सूर सागर के श्री कृष्ण निखिलानन्द, सदोह, सर्व वेदोपरि पूर्ण सौन्दर्य विग्रह और भक्तो क प्रेमास्पद विग्रह लीला प्रभु हैं।

भक्त शिरोमणि सूरदास

ब्रज साहित्य के कवियो मे महात्मा सूरदास सर्वश्रेष्ठ ह। विद्वानो की राय म उन्होंने अनेक ग्रन्थो की रचना की, किन्तु उनके तीन ग्रन्थ ही उपलब्ध है। सूरसागर, सूर-सरावली, साहित्यलहरी।

सूर सागर उनकी अक्षय कीर्ति का भण्डार है। उनका सूर सागर वात्सल्य और शृंगार रस का रत्नाकर है। वे इन दोनो का कोना-कोना झाक आये ह। इस क्षेत्र मे उनका काव्य बेजोड है। कृष्ण के मथुरा प्रस्थान करने पर विधुरा राधा और गोपियो की दशा का मार्मिक और विशद् वर्णन उनके अनुभूति प्रवण हृदय ने ही किया है। विरहानुभूति का विश्लेषण उन्होंने अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढग से चित्रित किया है। उनके कृष्ण का व्यक्तित्व प्रेम प्लावित है। उन्होंने चित्तवृत्तियो का चातुर्य पूर्ण चित्रण, काव्यानन्द की माधुरी, निर्मल भावो की अनवरत धारा का अपूर्व रसमय प्रवाह उपस्थित किया है। उनकी ब्रज भाषा अलकार सौन्दर्य सम्पन्न, सगीतात्मक और रसात्मक है। उन्होंने हिन्दी साहित्य को अनूठी काव्यात्मक सयोजन, कलात्मक वृत्ति, व्यजना की प्रौढ प्रेषणीयता और अभिव्यक्ति की ललित तरगमयता प्रदान कर अमर बना दिया। सूरदास महान् कलाकार हैं, सयोजन, सगठन और शब्द निर्माण के शिल्पी हैं।

सूरदास न केवल ब्रज भाषा के प्रथम कवि हैं वे गीतिकाव्य के भी अप्रतिम आख्याता हैं। उनके पदों की स्वर लहरियाँ सदियो से मानव हृदय को उद्वेलित कर रही हैं।

"कृष्ण चरित के गान म गीतिकाव्य की जो धारा पूरब म जयदेव और विद्यापति न बहाई, उसी का अवलम्बन ब्रज के भक्त कवियों ने किया ।" इसमे किंचित् मात्र भी स देह नही है, कि तु यह भी निर्विवाद है कि गीतकाव्य न सूरदास के हाथो का सहारा पाकर परम उत्कष प्राप्त कर लिया ।[1]

गीतकाव्य और ब्रजभाषा दोनों ही सूरदास क आश्रय से उन्नति के अन्तिम शिखर पर जा पहुचे । स्वानुभूतिपरक गीत हो चाहे परानुभूतिपरक, दोनो ही क्षेत्रों म सूरदास के समक्ष खड़ा करने योग्य तुलसीदास क अतिरिक्त दूसरा कोई भी कवि नही हुआ । स्वानुभूतिपरक गीतकारो मे गोस्वामी तुलसीदास अपनी "विनय पत्रिका' के कारण अवश्य सूरदास से बीस पडते हैं, किन्तु परोक्षानुभूति परक गीतियो म सूरदास अप्रतिम हैं ।[2]

सूरदास मे पुष्टिमाग की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग नही मिलता। व शकर अद्वैत क विरोधी थे । कृष्ण के लीलावणन मे उन्होंने पुष्टि माग सम्मत् बाल लीलाओ का वात्सल्य और सख्य परक जो चित्रण किया है वह "न भूतो न भविष्यति" कहा जा सकता है । इन लीलाओ मे स्वकीयाभाव, परकीयाभाव, निकुज, केलि, राधा और गोपियो के साथ रति क्रीडा, नित्य विहार, सखीभाव, युगल उपासना आदि कृष्ण भक्ति के वे सभी पक्ष स्वाभाविक रूप मे समन्वित मिलत हैं जिन पर निम्बाक, चैतन्य, हरिवश और हरिदास के सम्प्रदायो में जोर दिया गया है ।

नन्ददास

दो सौ बावन वष्णवो की वार्ता मे नन्ददासजी तुलसीदास के भाई कह गये हैं और कहा गया है कि तुलसी ने जो कृष्ण काव्य लिखा है वह अपने भाई नन्ददास के ही प्रभाव से किन्तु यह सम्ब ध सम्भव नही है और यह बात सिद्ध हो चुकी है रूपवती क्षत्राणी की आसक्ति ही कृष्ण भक्ति म परिणत हो गई और विट्ठलनाथजी से दीक्षा प्राप्त करके यह कृष्ण के अनन्य भक्त हो गये । रोला छन्द मे लिखित इनकी रासप चाध्यायी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक है । इसम कृष्ण की रासलीला का अत्यन्त सरस और मधुर आख्यान है । भागवत दशमस्कन्ध रुक्मिणी मगल, सिद्धा त पचाध्यायी रस मजरी विरह मजरी, नाम चिन्तामणि माला अनेका थमाला, दानलीला, मानलीला, अनेकाथ मजरी, मान मजरी, श्याम सगाई, भ्रमरगीत और सुदामा चरित इनके ग्रन्थ हैं । इनके दो सौ से अधिक फुटकल पद भी मिले है । इन्होने अपने भवरगीत म योग के ऊपर प्रेम की प्रतिष्ठापना

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास पं रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ 199
2. रामधर त्रिपाठी 'प्रवासी' गीतिकाव्य का विकास पृष्ठ 429

की है और बड़ी ही सुन्दर सरस और तार्किक पद्धति पर इनका निरूपण किया हैं। इनकी गोपिकाएँ दर्शन शास्त्र में निष्णात और तर्कप्रवण हैं।

कुम्भनदास

वल्लभाचार्य के शिष्य थे, शूद्र होने पर भी आचार्य के शिष्य थे शूद्र होने पर भी आचार्यजी की कृपा से ये मंदिर के मुखिया हो गये थे। ये बड़े दुर्दान्त एवं कूट बुद्धि वाले थे। इन्होंने अन्य कृष्ण भक्तों के समान राधा कृष्ण के प्रेम को लेकर श्रृंगार रस के पद गाये हैं। जुगलमान चरित्र, भ्रमरगीत, प्रेमतत्व निरूपण नामक ग्रन्थों के साथ ही इनके प्रेमलीला एवं बाल लीला के पद भी मिलते हैं।

परमानन्द दास

ये वल्लभाचार्य के शिष्य थे। इनके फुटकल पद मिलते हैं परमानन्द सागर में इनके आठ सौ पचीस पद हैं।

चतुर्भुजदास

ये कुम्भनदासजी के पुत्र और विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। द्वादशयश, भक्तिप्रताप तथा हितजूबोमंगल इनके तीन ग्रन्थ हैं। इनके फुटकल पदों के संग्रह भी मिले हैं। इनका विषय कृष्ण की बाल लीला एवं प्रेमलीला है।

छीतस्वामी

ये विट्ठलनाथजी के शिष्य थे, मथुरा के पण्डा होने के कारण पहले व बड़े अक्खड़ थे। गोस्वामी से दीक्षित होने पर शान्त, विनम्र और भक्त हो गये। इनके स्फुटपद ही मिलते हैं। कृष्ण की बाल लीला, प्रेमलीला का गायन इन्होंने बड़े सरस, मधुर और ललित रूप में किया है। ब्रजपति और ब्रजभूमि के प्रति इनके हृदय में अपार अनुराग था 'हूं विधना तो सों अचरा पसारि मांगो, जनम जनम दीजो याही ब्रजबसिबो"।

गोविन्ददास

ये विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। कहा जाता है कि प्रख्यात कृष्ण भक्त कवि होने के साथ ही वे एक श्रेष्ठ गायक भी थे। तानसेन कभी कभी इनका गीत सुनने के लिये आया करता था। इनके कुछ स्फुट पद मिलते हैं जिससे ज्ञात होता है कि ये पद किसी बड़े ग्रन्थ के अंग हैं।

सूरदास को छोड़कर अन्य अष्टछापीय कवियों में साम्प्रदायिक सजगता अधिक थी और उन्होंने पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त सम्मत कथन भी यत्र तत्र किये हैं। उन्होंने वल्लभ विट्ठल और उनके पुत्रों का नामोल्लेख भी किया है, उनकी

प्रशस्तियाँ और बधाइयाँ भी गाई है। इसी कारण उनके काव्य मे आनुपातिक रूप मे कवित्व कम हो गया है। नन्ददास ने भँवरगीत मे शुद्धाद्वैत परक दार्शनिक शब्दावली का भी प्रयोग किया है। अष्टछाप के सभी कवियो का वर्ण्य विषय श्री कृष्ण की रूप माधुरी और प्रेम लीलाओं का आख्यान ही है। यही इन कवियों की सीमा है। अष्टछापीय कवियों के पदों मे अत्यन्त प्रौढ़ और परिमार्जित ब्रज भाषा के दर्शन होते हैं। "इन भक्ति भावों की रचनाओ म प्रचार के बाद लौकिक रूप की परम्परा फीकी पडकर निर्जीव हो गई। इन कवियों ने उसमें नया प्राण सचारित किया और नया तेज भर दिया। परवर्ती काल की ब्रजभाषा को लीला निकेतन भगवान श्री कृष्ण के गुणगान के साथ एकात भाव से बाँध देने का श्रेय इन्ही कवियो को प्राप्त है।[1]

इन कवियो ने ब्रजभाषा काव्य को गीत काव्य की अन्यतम निधि दी है। उसे अनेक बिंब व्यजनाओ और अलङ्कृतियो से सम्वलित किया है, उनका काव्य कृष्ण भक्ति परम्परा का अमरकोष है। हिन्दी की परवर्ती कृष्ण काव्य परम्परा पर उनकी अमिट छाप द्रष्टव्य है। वात्सल्य, सख्य सयोग वियोग एव भक्ति रसों की दृष्टि से अष्टछापीय कवियो का काव्य सही अर्थों मे रत्नाकर हैं।

वस्तुत अष्टछाप की रचनाओ का निर्माण कीर्तन के लिये हुआ था। सूर आदि कवि कीर्तनियाँ भी थे। इसी कारण उनके पदों मे राग, ताल, लय, मात्रा आदि का ध्यान रखकर सगीतात्मकता के गुणो का पूर्णरूप से समन्वय हुआ है।"

अष्टछापीय कवियो का काव्य ब्रज भाषा मे ही रचा गया है। शुक्लजी ने सूर को ब्रज भाषा का प्रथम कवि मानकर सर्वश्रेष्ठ कवि की सज्ञा दी है। परमानन्द दास की भाषा मे भावात्मकता आलकारिकता, सजीवता प्रवाहमयता, सरसता आदि उत्कृष्ट गुण उपलब्ध है। नन्ददास का शब्द चयन भी अत्यन्त सुन्दर है, उसम लय प्रवणता, भावानुकूल शब्दयोजना, चित्रोपमता आदि उपलब्ध है। इन कवियो ने कृष्ण चरित पर कोई प्रबन्ध काव्य नही लिखा। ये मुक्तक काव्य के गुलदस्ते मे ही पद पुष्पो को सजाते रहे। "शक्ति शील और सौन्दर्य लोकपक्ष के तीन अवयव है। कृष्णाश्रयी शाखा के कवियों ने कृष्ण के सौन्दर्य को ही अपनाया। इसी पक्ष को को उन्होंने काव्य म स्थान दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि वे भोग माधुर्य पक्ष से ओत प्रोत मुक्तक रचना ही लिख सके। यदि वे चाहते तो श्रीकृष्ण के लोक पक्ष को जो शक्ति शील और सौन्दर्य से ओत प्रोत एव अति पुष्ट और उदात्त था तथा महाकाव्य के लिये उपयुक्त भी था, ग्रहण कर सकते थे किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने उनके लावण्य स्वरूप को स्वीकार किया। इस

---

1 हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास प हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ 192।

प्रकार सूर, नन्ददास आदि अष्टछाप के कवि मुक्तक रचना करने मे ही समर्थ हो सके। कोई महाकाव्य को न प्रदान कर सके।'[1]

वल्लभ सम्प्रदाय के दूसरे कवियो मे ब्रजवासीदास महत्वपूर्ण है, उनके द्वारा रचित ब्रज विलास (स 1770 ई) कृष्ण भक्ति की एक महत्वपूर्ण रचना है। इस काव्य म प्रबन्धात्मक रूप मे दोहा चौपाई छन्दो मे राधाकृष्ण की लीलाओ का आख्यान किया गया है। कृष्ण जन्म से लेकर गोपियो के प्रेम और विरह तक के वर्णन अत्यन्त भावप्रवण हैं। वस्तुत इस प्रबन्ध काव्य का आधार सूरसागर है। उद्धव के मथुरा गमन तक की लीलाएँ इसमे वर्णित ह।

गौडीय सम्प्रदाय के गदाधर भट्ट ने "युगल शतक" की रचना की इस ग्रन्थ मे "वृन्दाविपिन विलासी" राधा और कृष्ण की प्रणय लीला का वर्णन किया गया है। उनके कृष्ण व्रजराज, भक्त रक्षक, मोहनि मूरत देवताओ द्वारा वन्दित हैं। वृन्दावन कृष्ण की विहार स्थली होने क कारण उन्हे प्रिय है।[2]

गौडीय सम्प्रदाय के दूसरे कवि श्री वल्लभ रसिक ह। ये गदाधर भट्ट के द्वितीय पुत्र थे वल्लभरसिक ने संसार के सारे नाते झूठ माने। केवल श्री कृष्ण का युगलरूप ही अपना आराध्य माना। उन्होने घोषित किया।

"हम तो युगल रूप रसमाते, नाते ही के नाते।"

राधा कृष्ण की विविध लीलाओ का वर्णन उन्होने कवित्त सवैया, दोहा, पद आदि स्फुट रूप म किया है।

माधुरीदास गौडीय सम्प्रदाय के उत्कृष्ट कवि माने जाते हैं। बाबा कृष्णदास ने इनके दोहो का सम्पादन किया है। माधुरीदास ने राधा कृष्ण लीला विषयक पदो का सकलन "माधुरी वाणी" म किया है। इनके पद सात माधुरियो म विभक्त किये गये हैं—उत्कंठा, वंशीवट, केलि वृन्दावनदान, मानल तथा होली। माधुर्य भक्ति के सिद्धान्त पक्ष की दृष्टि से इनकी वाणी महत्वपूर्ण हैं।

इनके उपास्य राधा और कृष्ण समवयस्क है और इनम प्रगाढ प्रेम है कृष्ण रतिनिधि, रसनिधि, प्रेमनिधि तथा उल्लासनिधि है राधा कुंजा विपिनेश्वरी, नवल, किशोरी एवम् मगनमयी है। दोनो की आराधना से व्यक्ति भवसागर पार हो जाता है। सयोग वियोग पक्षो का वर्णन उत्तम हुआ है। ये भक्त कवि नहीं रससिद्ध कवि भी ह।

1 डॉ प्रतिपालसिंह बीसवी शताब्दी (पूर्वार्द्ध) के महाकाव्य पृष्ठ 33।
2 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास, प 199

"महावाणी" के रचयिता हरिदेव व्यास है। [1] जिसका उल्लेख वियोगी हरि ने 'ब्रज माधुरी सार' मे किया है। महावाणी ग्रन्थ मे उत्साह, सेवा सुरत सहज तथा सिद्धान्त सुखो का वर्णन है।

महावाणीकार के आराध्य सदैव प्रणयलीला मे संलग्न रहते हैं। दोनों एक प्राण हैं केवल लीला के लिए विग्रह धारण किए हैं। आनन्ददायिनी शक्ति स्वरूपा राधा का स्थान कृष्ण से भी विशिष्ट माना गया है। महावाणी भाव, भाषा और शैली का सौन्दर्य स्थल है। कवि ने रस सिद्ध काव्य का सृजन किया है।

सूरदास मदनमोहन का वास्तविक नाम 'सूरध्वज' था। वल्लभ सम्प्रदाय के सूरदास से इनके पदो को विलग करना बडी टेढी खीर है, फिर भी जहाँ मदन मोहन नाम की छाप मिलती है वहाँ पद पहचाने जा सकते हैं।

गोस्वामी हितहरिवंश राधा वल्लभ सम्प्रदाय" के प्रतिष्ठापक थे। इस" सम्प्रदाय वालो ने राधा कृष्ण की युगल जोडी की भक्ति करते हुए भी राधा को प्रमुखता प्रदान की है।

हित हरिवंशजी विरचित चार ग्रन्थ राधा सुधा निधि, यमुनाष्टक हित चौरासी तथा स्फुट वाणी उपलब्ध है। "राधा सुधानिधि" संस्कृत भाषा में रचा गया है। ग्रन्थ मे रचयिता ने राधा वन्दना, उपासना, प्रशस्ति, शक्ति सौन्दर्य आदि का वर्णन किया है। "हित चौरासी में चौरासी पद रचे गये हैं। स्फुटवाणी मे फुटकर पद संकलित किये गये हैं। [2]

स्वामी हितहरिवंश पहले मध्वानुयायी थे, बाद मे इन्हें स्वप्न मे राधिकाजी ने मन्त्र दिया और उन्होने अपना अलग सम्प्रदाय चलाया। इसलिए आचार्य शुक्ल ने हितहरिवंश द्वारा प्रवर्तित राधा वल्लभीय सम्प्रदाय को माध्व सम्प्रदाय के अन्तर्गत माना है। [3]

'हित चौरासी' नाम से इनके ब्रजभाषा पदो का संग्रह मिलता है। यह कृति अत्यन्त सरस और हृदयग्राहिणी है। इन्होने ब्रजभाषा काव्य श्री के प्रसार में बडा योग दिया है। इनके अनेक शिष्य अच्छे कवि हुए हैं। हितहरिवंशजी की रचना इतनी रसमयी रही है कि उन्हें वंशी का अवतार तक कहा जाता है। उनकी कुछ फुटकर वाणी भी मिलती है।

इसी सम्प्रदाय का एक अंग सखी सम्प्रदाय भी है। इस सम्प्रदाय के कतिपय प्रमुख वैशिष्ट्य इस प्रकार है

---

1 वियोगी हरि ब्रज माधुरी सार, पृष्ठ 75
2 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 180 181
3 प रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 174।

1– श्री राधा चरण की प्रधानता, 2– कुंज के लिए दम्पत्ति का सखी भाव, 3– महाप्रसाद में निष्ठा, 4– विधि निषेध का सर्वथा त्याग, 5– अनन्य दास भाव से भक्ति।

हितहरिवंश का स्थान भक्तिकाल के आचार्य कवियों में महत्वपूर्ण है। वस्तुतः इस सम्प्रदाय में राधा ही परम इष्ट है, कृष्ण प्रियतम हैं, अतः मान्य हैं परन्तु इष्ट नहीं हैं। कृष्णजी राधा की दासियों से चाटुकारिता करते रहते हैं।

दामोदर दास सेवक कृत सेवक वाणी' ग्रन्थ में प्रारम्भ से अन्त तक श्री कृष्ण भक्ति विषयक पद मिलते हैं, इनके गुरु हित हरिवंशदास थे। हरिराम व्यास कृत "व्यासवाणी" में राधा कृष्ण की निकुंज लीला का वर्णन माधुर्य भक्ति के रूप में मिलता है। ध्रुवदास ने हित हरिवंशदास को अपना गुरु माना था। इन्होंने वृन्दावन में रहकर राधा कृष्ण प्रणय लीला सम्बन्धी पदों की रचना की इनके काव्यों में सुव्यवस्थित कला पक्ष का सौन्दर्य दृष्टव्य है।

नागरीदास ने इस पदावली में कृष्ण भक्ति विषयक पद रचे हैं। इनके काव्य में भाषा का परिष्कृत, अलंकृत रूप मिलता है।

भगवानदास अनन्य अली – कहते हैं कि उन्होंने राधा के दर्शन के पश्चात् अपना नाम अनन्यअली रख लिया।

गोविन्द स्वामी – इनके रचे हुए किसी बड़े ग्रन्थ के कुछ फुटकल पद मिलते हैं। ये भक्त कवि होने के साथ साथ उत्तम कोटि के गायक भी थे। कहते हैं, इनके सुष्ठु गायन और स्वर लहरी से प्रभावित होकर कई बार तानसेन इनके गीत सुनने आया था।

नरोत्तमदास

नरोत्तमदास द्वारा विरचित "सुदामा चरित" में सुदामा के घर की दरिद्रता का बड़ा ही सुन्दर और रसमय वर्णन है। सुदामा उनकी पत्नी और श्री कृष्ण रुक्मिणी के सन्दर्भ अत्यन्त संवेदन प्लावित बन पड़े हैं। इसकी वस्तु और भाषा अत्यन्त सरस और हृदयग्राहिणी हैं। संवेदन शील कथा में कवि की भावुकता ने सोने में सुहागे का काम किया है। उसकी भाषा परिमार्जित, व्यवस्थित और भाव-प्रवण है। इनका लिखा हुआ "ध्रुव चरित' नामक एक काव्य भी कहा जाता है, पर अभी तक वह शोध के आलोक में नहीं आ सका। इनका एक तीसरा ग्रन्थ 'विचार माला" उपलब्ध है। कवि की अक्षय अमर कीर्ति का स्थायी आलोक स्तम्भ "सुदामा चरित" ही है। सुदामा चरित" की सैकड़ों पंक्तियाँ सहृदयों को कंठस्थ है। यह ग्रन्थ अपनी निर्मलता, सहजता और हृदय की मार्मिकभाव प्रवण अनुभूतियों की सच्चाई, गहराई, भाव शबलता और लाक्षणिक अभिव्यंजना

के लिये प्रख्यात है। इसमें कृष्ण सुदामा की मित्रता की कहानी का वर्णन अत्यन्त रोचक, मनोवैज्ञानिक और प्रभविष्णु रूप में उपलब्ध है। इसमें नाटकीयता, करुणा, हर्ष, विस्मय आदि भावों की अभिव्यंजना अत्यन्त सहज रूप में मिलती है। सहज सरल कवित्त और गेयता ने इस काव्य की प्रसिद्धि में चार चाँद लगा दिये हैं। भक्तिकाल के स्वर्णिम युग में इस काव्य को एक हीरक नग माना गया है।

सखी सम्प्रदाय

स्वामी हरिदास इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। (शृंगार रस के उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत "सखी" अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है)। यह सम्प्रदाय निम्बार्क मत की एक अवान्तर शाखा है। हरिदासजी प्रारम्भ में निम्बार्क मत के अनुयायी थे, परन्तु कालान्तर में गोपी भाव को उपयुक्त मानकर उन्होंने इस स्वतन्त्र शाखा की स्थापना की। हरिदास का जन्म भाद्रशुक्ल अष्टमी 1441 है।

नाभादास जी ने "भक्तमाल" में लिखा कि सखी सम्प्रदाय में राधा कृष्ण की उपासना और आराधनाओं की लीलाओं का अवलोकन साधक सखी भाव से करता है। इस सम्प्रदाय में प्रेम की गम्भीरता और निर्मलता के दर्शन होते हैं। प्रेम इस सम्प्रदाय का प्रमुख तत्त्व है। हरिदास के पदों में प्रेम को ही प्रधानता दी गई है। कृष्ण की प्रेमानुगा भक्ति में दिव्य शक्ति है। भक्त सखी रूप में कृष्ण के चरणों में अपने को न्योछावर कर देना अपनी सार्थकता मानता है। मधुर रस और प्रेम की गम्भीरता सखी सम्प्रदाय की विशेषताएँ हैं।

हरिदास के प्रमुख कवि विट्ठल, विपुल सरसदेव नर हरिदेव, रसिकदेव ललित किशोरी, ललित मोहिनी चतुरदास, ठाकुरदास, राधिकादास राधाप्रसाद, भगवान दास आदि हैं। ये सभी प्रायः अच्छे कवि हुए हैं। इनकी रचनाओं में ब्रजभाषा का सुन्दर और परिमार्जित रूप मिलता है।

हरिदास की विहार विषयक पदावली 'केलिमाला' के नाम से प्रसिद्ध है। इनकी रस प्लावित वाणी में माधुर्य और हृदय में भाव और प्रेम का सामंजस्य दर्शनीय है।

"भगवत् रसिक की वानी" नाम से भगवतरसिक का काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ है। सहचरि शरण और गलोकरण की स्फुट रचनाएँ और दो अन्य पुस्तकें भी मिलती हैं—ललित प्रकाश और सरस भजनावली में सम्प्रदाय के इतिहास और साधना पद्धति पर अच्छा प्रकाश मिलता है। राधा कृष्ण की युगल उपासना में सखी भाव को प्रधानता दी गई है। हरिदास स्वयं संगीत में निष्णात थे और रससिद्ध भक्त कवि थे।

भक्ति काव्य में कृष्ण काव्य परम्परा के अनेक भक्त कवियों ने इस काव्य-धारा के उत्तरोत्तर विकास में अमूल्य योगदान दिया है। इन सभी कवियों के यहाँ कृष्ण परम ब्रह्म हैं। उपनिषद महाभारत और पुराणों में किसी न किसी रूप में कृष्ण कथा के सूत्र उपलब्ध होते हैं। संस्कृत में जयदेव ने शृंगारित कृष्ण काव्य परम्परा का प्रवर्तन किया। हिन्दी में विद्यापति ने उसे आगे बढ़ाया। लालदास, गोविन्ददास, तिपट निरंजन, लक्ष्मीनारायण, बलभद्र मिश्र, मोहन भीष्म अन्तर्वेदी चतुरदास, धमदास, सुखदेव मिश्र आदि कवियों ने भी परम्परा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। "रुद्राणीय सम्प्रदाय", "माधव सम्प्रदाय", "विष्णु स्वामी सम्प्रदाय" "हरिदासी सम्प्रदाय", निम्बार्क सम्प्रदाय, वल्लभ सम्प्रदाय, राधा वल्लभ और चैतन्य सम्प्रदाय का मूल स्वर कृष्ण की भक्ति ही रहा है।[1]

पन्द्रहवीं शताब्दी में जिस प्रेमाभक्ति का उदय हुआ उसने सैकड़ो वर्ष तक भक्तों को काव्यरचना की प्रेरणा दी और अपने प्रेमभक्ति के गीत अमृत से कोटि-कोटि जन के मन को मुग्ध किया। 16वीं शताब्दी के पश्चात् कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव की साधना की प्रधानता हो गई। महाप्रभु चैतन्य के शिष्यों द्वारा प्रवर्तित "गौडीय वैष्णव सम्प्रदाय, गोस्वामी हित हरिवंश द्वारा संस्थापित राधा वल्लभीय सम्प्रदाय और स्वामी हरिदास द्वारा घोषित टट्टी सम्प्रदाय इन सम्प्रदायों के भक्ति सिद्धान्तों में आत्म समर्पण" का प्रबल वेग है और यह आत्म-समर्पण स्त्री रूप में सबसे अधिक अभिव्यक्त होता है। "वृन्दावन' की भाँति "अयोध्या" भी सखी सम्प्रदाय में भक्तों का केन्द्र बन गया।

बाबा तुलसीदास

बाबा तुलसी ने भी कृष्ण भक्ति परम्परा के अन्तर्गत 'कृष्ण गीतावली" नामक एक ग्रन्थ रचा है। इसमें कुल 61 पद रचे गये हैं। 'कृष्ण गीतावली" में भ्रमरगीत से सम्बद्ध गोपी और उद्धव संवाद के भी 26 पद पाये जाते हैं। तुलसी की गोपिकाएँ सूर की भाँति मुखर नहीं हैं परन्तु संवेदनशील विरह दग्धा और कुल मर्यादा से दबी ढकी सकोचशील हैं। 'कृष्ण गीतावली" के पद गेयता और मधुर शब्दावली से सम्पृक्त हैं। कवि ने अपने स्वभावानुसार दास्य मधुर और वात्सल्य भाव से आप्लावित इस ग्रन्थ का उपस्थापन किया है।

श्रीकृष्ण भक्ति का साहित्य मनुष्य की सबसे प्रबल भूख का समाधान करता है। यह मनुष्य को बाह्य विषयों की आसक्ति से तो अलग कर देता है, लेकिन उसे शुष्क तत्त्ववादों और प्रेमहीन कथनी का उपासक नहीं बनाता। वह मनुष्य की सरसता को उद्बुद्ध करता है उसकी अन्तर्निहित रससिक्त अनुराग लालसा को ऊर्ध्वमुखी करता है और उसे निरन्तर रससिक्त बनाता रहता है।

---

1 डॉ प्रताप नारायण टण्डन हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिमय इतिहास, पृ 201

भक्तिकालीन कृष्ण काव्य का एक महत् वशिष्ट्य यह है कि कृष्ण की वात्सल्य और प्रेम लीलाओं का ऐसा उत्तम कोटि का सरस, मनोहर साहित्य अन्यत्र दुर्लभ है। वात्सल्य और प्रेम के इतने सूक्ष्म चित्रण सम्पूर्ण हिंदी साहित्य में अन्यत्र नहीं मिलते। ब्रज को एक श्रेष्ठ कोटि की काव्य भाषा बनाने में इन कृष्ण भक्त कवियों का अनुपम योग है। इन कवियों में ही वस्तुत गीति काव्य का उत्तम विकास और परिपाक मिलता है। इन भक्तों के एकान्तिक आत्म समर्पण ने मधुर रस की पावन मदाकिनी कोटि-कोटि जन के लिए सुलभ कर दी है। भाव, भाषा अलंकार आदि दृष्टियों से इस काल का साहित्य अनूठा है। राधा कृष्ण की पावन लीला को इन कवियों ने उत्तर भारतीय जनता के लिये सहज ही उपस्थित कर दिया है। लोकभाषा के साहित्यिक उत्थान की दृष्टि से भी कृष्ण भक्त कवियों का योगदान महान् हैं, लोक प्रचलित काव्य रूपों के साथ जीवन के महत् लक्ष्य और आदर्श का योग हो जाने के कारण इस साहित्य में एक अपूर्व तेजस्विता आ गई है। इनके छंदों, गीतों, पदों में कृत्रिमता नहीं है। भाषा और भाव के आडम्बर का वहन करने में वह पूर्ण रूप से समर्थ है। शुद्ध सात्विक जीवन भगवत् भक्ति, भगवान् के निर्मल पावन चरित्र का गान और भक्ति इस साहित्य को प्रेरणा देने वाले अंग हैं। कृष्ण भक्ति के अनेक सम्प्रदायों ने तत्कालीन जनता के मन में एक महान् लक्ष्य और महान् आदर्श का सम्बल दिया।

अपभ्रंश काव्य से विकसित होती हुई कृष्ण काव्य परम्परा प्रवाहित होती रही। इस काव्य का उपजीव्य प्राकृत की गाथा सप्तशती", 'सिद्ध हेम प्राकृत शब्दानुशासन' आदि थे। इस युग में आकर यह धारा लोक तत्वों से विमुक्त होकर अभिजात तत्वों से सम्पृक्त हो गई। यह धारा जिसमें काव्य को लक्षण ग्रंथों से सम्पृक्त रखा गया, रीतिबद्ध काव्य धारा कहा गया, इसमें नायिका के सौन्दर्य नायक-नायिका के लक्षण आदि का विवेचन किया गया। हिन्दी रीतिकाल में रीति बद्ध धारा के अतिरिक्त रीति मुक्त स्वच्छन्द काव्य धारा भी प्रभावित हुई। इस धारा का प्रतिपाद्य भी कृष्ण प्रेम ही है। इनके काव्य का मूल स्वर प्रेम-विरह ही है इन कवियों ने सूफियों की प्रेम व्यंजना की तरह निराकार ब्रह्म की आराधना न करके सगुण साकार कृष्ण को ही आराध्य माना। घनानन्द स्वच्छन्द काव्य धारा के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं, इन्होंने परम्परा से आते हुए शृंगार के विलास का चित्रांकन किया है, परन्तु यहाँ शारीरिक व्यापार वर्णन का स्थान सूक्ष्म भाव चित्रों ने ग्रहण कर लिया है। केवल घनानन्द ही नहीं, वरन् सभी रीति मुक्त धारा के कवियों में संयोग की अपेक्षा वियोग भावना की प्रमुखता पायी जाती है। ठाकुर आलम, बोधा, रसनिधि सभी कवि विरह के गायक हैं। रीतिबद्ध कवियों की भक्ति भावना संकीर्ण साम्प्रदायिक थी, परन्तु रीति मुक्त कृष्ण भक्ति काव्य परम्परा में उन्मुक्तता, व्यापकता एवम् औदार्य के दर्शन होते हैं।

रीतिबद्ध और रीतिमुक्त दानों धाराओ के कवियो ने कृष्ण भक्ति प्रेम को उपजीव्य बनाया, लेकिन दोनो के रास्ते पृथक् थे। रीति बद्ध कवियों का लक्ष्य कवित्व प्रदर्शन था, इसलिये वे काव्य प्रसाधन पर बल देकर अपने आश्रयदाता को प्रसन्न करने मे जुटे थे। शृंगार का नग्नतम रूप सकीर्ण नायिका भेद, नख शिख-सौन्दर्य चित्रण करना मे उनकी तथा उनके आश्रयदाता की सन्तुष्टि थी परन्तु रीति मुक्त कवियो ने राधा कृष्ण को दूसरे रूप मे प्रस्तुत किया। इन कवियों ने अपनी आत्मा का सम्पूर्ण एकनिष्ठ प्रेम कृष्ण को समर्पित किया, परन्तु वे भक्ति से वंचित रहे। अत इनकी मूल प्रेरणा "प्रेम लक्षणा" भक्ति ही है।

इस प्रकार रीतिकालीन कृष्ण काव्य धारा एक विस्तृत धरातल पर उतर कर भक्तियुगीन दार्शनिकता से ऊबे हुए जनमानस के हास विलास एव अनुरंजन को सहज ही उत्तेजित करने लगी[1]

यद्यपि भक्तिकाल की तुलना मे रीतिकाव्य स्वानुभूति परक काव्य नही कहा जा सकता, किन्तु लोक-जीवन के मार्मिक स्वरूप की व्यजना मे इसका महत्व अप्रतिम है। संस्कृत के विद्वान् हाल कृत "गाथा सतशती" के सौन्दर्य की श्लाघा करते अघाते नही, उसमे लोक जीवन की सहज रमणीयता नहीं आ सकी है। इसे प्राकृत के अर्थ मे लोक साहित्य (फोक लिटरेचर) नही कहा जा सकता। इस तथ्य को डाक्टर एस के डे ने भी स्वीकार किया है। अत लोक तत्व की दृष्टि से रीतिकाव्य में एक विशिष्ट सीमा मे ही सही ऐसा वैविध्य है और पारिवारिक जीवन के ऐसे अनुरंजक चित्र हैं जो रीतिकाल की पूर्ववर्ती काव्य धाराओं मे हमे कम मिल पाते हैं। जो मिलते हैं वे कलात्मकता व सौष्ठव से रहित और व्यंजना के अनूठे विधान से अलग भक्ति काव्य स्वात्मवैशिष्ट्य निरूपण की दृष्टि से भले ही उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित किया जा सके, लेकिन उसके स्वर मे ऐसी तीव्रता नही है, जो हमारे व्यवहारिक जीवन की शिराओ मे शक्तिमत्ता का रक्त सचार कर सके।[2]

रीतिकाल मे शुद्ध कृष्ण भक्ति काव्य भी रचे गये हैं। पुष्कर निवासी हित वृन्दावनदास ने कृष्ण भक्ति के सवा लाख पद रचे थे परन्तु प्राप्त पदों की संख्या 20,000 है। अनुभूति प्रवणता इनके काव्य का विशिष्ट गुण है, जिसमे शिथिलता का नाम नही। भाषा पर इनका अपूर्व अधिकार था।

भगवत रसिक कृष्ण भक्ति मे लीन परम योगी कवि थे। इनका और गुमान मिश्र का नाम भक्त कवियों मे सम्मान पूर्वक लिया जाता है। इसी युग मे ब्रज-वासी दास ने 'विलास' नामक महाकाव्य लिखा, इसे बडी प्रख्याति मिली।

---

1 डॉ किशोरीलाल रीति कवियो की मौलिक देन, पृ 252।

2 देव सपादक प बालदत्त मिश्र सुखसागर तरग पृ 1 सन् 1898।

गोकुलदेव, गोपीनाथ और मणिदेव ने "महाभारत" और हिवहरिवंश का अनुवाद अत्यन्त भावपूर्ण और मनोहर रूप मे किया है। इसमे लगभग 2000 पृष्ठ हैं। इस ग्रन्थ के निर्माण मे पूरे पचास वर्ष लगे थे।

रीतिकाल म "महाभारत" के कथानक को उपजीव्य बनाकर अनेक महाकाव्य लिखे गये। "महाभारत" मे कृष्ण महान "राजनीतिज्ञ", 'योगेश्वर' और उस युद्ध क प्रमुख सूत्रधार थे।

1711 विक्रमी म शाहजहाँ के शासन काल मे छत्रधारा ने महाभारत नामक महाकाव्य की रचना की। 1719 ई "श्रीपति" ने "कर्णपर्व" की रचना की। सन् 1718 से 21 मे सबलसिंह न "महाभारत" नामक प्रख्यात काव्य की रचना की। 1737 मे कुलपति मिश्र ने "संग्राम सार महाभारत" के द्रोणपर्व को आधार बनाकर लिखा। संवत् 1757 को 'विजय मुक्तावली' महाभारत सम्बन्धी एक विशिष्ट ग्रन्थ है। इसके रचयिता छत्रसिंह कायस्थ हैं। संवत् 1760 म "पाण्डव यशेन्दु चन्द्रिका" नामक सुन्दर ग्रन्थ की रचना भी केशवराय मिश्र ने की।

संवत् 1766 मे निगाज कवि न 'भारत विलास' और हेमराज ने संवत् 1789 में महाभारत की रचना की। संवत् 1814 मे श्री मुरलीधर मिश्र ने "नलोपाख्यान" नामक काव्य का प्रणयन किया, जिसमे 16 सर्गों म कथानक को सुगुम्फित किया गया है। संवत् 1827 मे लक्ष्मीधर लाल ने भारत सार तथा 1830 मे मण्डन भट्ट ने 'भारत चरित्र' की सर्जना की। संवत् 1842 का देवीदास कृत पाण्डव 'चरितार्णव' नामक अपूर्ण ग्रन्थ मिला है। शिवदास और लक्षन सेन ने संवत् 1857 और 1870 मे 'महाभारत' की रचना की। नारायणसिंह कायस्थ ने 'पाण्डवाश्वमेध" काव्य की रचना की। स्वरूपदास ने संवत् 1892 मे 'पाण्डव यशेन्दु चन्द्रिका" नामक काव्य ग्रन्थ रचा। 1830–84 म गोकुलनाथ गोपीनाथ और मणिदेव ने महाभारत का अनुवाद किया। संवत् 1898 मे राम कवि ने 'नल चरित' नामक महाकाव्य की रचना की। यह 22 सर्गों का उत्कृष्ट कोटि का महाकाव्य है। यह अवश्य है कि कृष्ण भक्ति की पावन मन्दाकिनी रीतिकालीन कवियों के निकट आकर 'राधा-कन्हाई-सुमिरन का बहाना" बन गई और तत्कालीन कवियो ने भगवान् प्रीतम के स्थान पर आश्रयदाता प्रीतम भाव्य-सजना करके उसम रजस् तथा तमस का सन्निवेश कर दिया।

इस प्रकार कृष्ण भक्त कवियो का विषय अत्यन्त संक्षिप्त (राधा कृष्ण की प्रेम लीला) था, फिर भी उसम इतनी अधिक गहराई रही कि परवर्ती काल म कोई कवि उस गहराई का स्पर्श नहीं कर सका।

विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म से-सूक्ष्म भावो, रागो, रागिनियों, पदो सवैयों की बाढ़ सी मिलती है। भक्तिकाल के कृष्ण भक्त कवि राधा-कृष्ण के ही आराधक थे, किन्तु व अनेक सम्प्रदायों के थे। धीरे धीरे कालान्तर मे विलास-वासना और

रस केलि के आवरण में राधा और कृष्ण की भक्ति को समेट लिया गया। भक्ति-काल के कवियों ने अपने को केवल रति (वात्सल्य और दाम्पत्य) तक ही सीमित रखा। इस कारण मानव जीवन के अन्य क्षेत्र उनकी परिधि से बाहर रह गये।

भक्तिकाल में ऐसे भी कवि हुए हैं जो लौकिक रस की कविता के लिए प्रसिद्ध हैं। उनमें भी कहीं-कहीं भक्ति की प्रवस धारा मिलती है। हरि चरित्र और श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध भाषा के लेखक लालचदास (सन् 1528 ई) ने दोहा चौपाई शैली और अवधी भाषा में कृष्ण विषयक लौकिक रस की कविताएँ लिखी हैं।

"युगल शतक" के तन्मयीभाव की कविता के कवि श्री भट्ट के लिए नाभादासजी ने लिखा है कि व मधुरभाव सम्बन्धित ललित लीला का "निरतन हार" हैं। कवि व्यासजी (16वीं शताब्दी) वृन्दावन आकर "राधा-वल्लभी सम्प्रदाय" में दीक्षित हुए थे, व पहले ओरछा नरेश महाराज मधुकर के राज गुरु थे और बाद में हित हरिवंश के शिष्य हो गये। उनकी राधा भाव की कविताएँ मधुर और प्रभावशालिनी हैं। उनके द्वारा रचित "रास पचाध्यायी को गलती से लोगों ने "सूर सागर" में मिला दिया है।

ध्रुवदासजी ने पद, दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त आदि छन्दों में लगभग चालिस ग्रन्थ लिखे हैं। उनकी 'भक्त नामावली", 'भक्तमाल" के अनुकरण पर लिखी गयी महत्वपूर्ण कृति है। लक्ष्मीनारायण (प्रेम तरंगिणी के लेखक), हनुमन् नाटक, गोवर्धन सतसई की टीका, भूषण विचार और 'नख शिख" के लेखक केशवदास के बड़े भाई बलभद्र मिश्र, "कलि कल्लोल' के कवि मोहन (जन्म 1617 ई) मुबारक (अलकशतक, तिलक शतक के यशस्वी लेखक), जौनपुर निवासी बनारसीदास (जन्म सन् 1586 ई) – "अर्द्ध कथा" के लेखक के साथ ही सुन्दरदास, चतुरदास, गुपाल धर्मदास, शुकदेव मिश्र, रसिकदास आदि कृष्ण भक्त कवि हुए ह।

भारतीय साहित्य म श्रीकृष्ण षोडश कला अवतार या पूर्णावतार ब्रह्म माने गये हैं। उन्हें निष्काम कर्मयोग का प्रतीक माना गया है। वे साक्षात् योगेश्वर महाभारत युद्ध के सूत्रधार महान् कर्मयोगी महान् पराक्रमी महान् राजनीतिज्ञ पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपों म महान् हैं। कृष्ण का महिमा मण्डित और वैभिन्य वैचित्र्यों से समन्वित विराट व्यक्तित्व भारतीय मनीषा को एक महान् उपलब्धि है – गोपी जनवल्लभ, राधा माधव, राजा, नेता, कर्मयोगी, भोगी - सभी रूपों म वे महत् और दिव्य हैं।

वे रसज्ञ, रसिक और रसस्वरूप हैं। राधा उनकी आदि शक्ति है। वे उनकी जीवन संगिनी रूप में प्रतिष्ठित हैं। कृष्ण बाल लीला, रासलीला, प्रेमलीला दक्ष हैं।

रीतिकाल में कृष्ण का महाभारत एवं श्रीमद् भगवत गीता का योगेश्वर रूप प्राय समाप्त ही हो गया है कृष्ण रसिक शिरोमणि, राधा रमण, गोपी रमण भोगविलास-वृत्ति के प्रधान देवत नायक, रसिया, आनन्द मूर्ति और छैला ही रहे। वे श्रृंगार रस के प्रधान नायक बने और रीतिकाल के कवि राधा कृष्ण की भक्ति के नाम की सुर सरिता में अपनी श्रृंगारिक प्रवृत्ति का दिग्दर्शन कराते रहे। य कविगण राजा और सामन्तो को रिझाने के लिए उनकी वासना-तृप्ति के लिए कविता का सृजन करते थे। राधा और कृष्ण का स्मरण तो केवल मात्र बहाना था। कवि भिखारीदास ने स्पष्ट स्वीकार किया और इसे की चोट घोषित किया।

"आगे के सुकवि रीझि है तो ता कविताई
न तु राधिका कन्हाई, सुमिरन को बहानों हैं।[1]

रीति युगीन कृष्ण भक्ति-काव्य धारा की सर्वोच्च विशेषता है श्रृंगारिकता और रसिकता, जो इस काल की प्रधान प्रवृत्ति कही जा सकती है।

डॉ भागीरथ मिश्र का कथन है कि इस युग के भक्तिकाव्य मे भी श्रृंगारिक भावना का ही प्राधान्य है। इसलिये इस माधुर्य भाव की अभिव्यक्ति के लिए अनेक सम्प्रदाय निर्मित हुए जो कृष्ण लीला और विलास को अनेक रूपो मे सम्पादित करते थे। अनेक पुरुष कवि स्वय को राधा और सखी मानकर आचरण करने लगे। उन्होंने अपने नामकरण मे भी स्त्री वाचक परिवर्तन किया अलबेली, अलि ललित किशोरी आदि।

भगवान कृष्ण के लीला स्वरूप का वर्णन करने के लिए कवियो ने काव्य को सगीतात्मकता और नारी सौंदर्य से अलकृत किया। राधा-कृष्ण और गोपियो के प्रतीको के माध्यम से उन्होंने शब्दो मे मूर्तिकला और नत्यकला के चित्र अकित किये है। कृष्ण चरित का प्रभाव सवत्र व्याप्त था। इस युग की शायद ही ऐसी कोई कृति हो जहा राधा कृष्ण का उल्लेख न हुआ हो।

जहा तक श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति का प्रश्न है, वहाँ तक तो ठीक है लेकिन रीतियुग मे यह श्रृंगारिकता, अश्लीलता और नग्नता म भी परिणत हो गई। राधा कृष्ण का वह ईश्वरावतार और शक्ति रूप समाप्त हो गया और राधा-कृष्ण इसी लोक-जीवन के साधारण नायक नायिका बनकर वनों मे, वीथियों मे, महलो और गौशाला मे अपनी जल-क्रीडा, वन विहार, मानलीला, झूलालीला दर्शाने लगे।

रीतिकाल मे राधा को रूपसागर, तन्वगी, रति, अप्सरा तो बताया गया, कविगण उसके नारी रूप के नित नूतन सौंदर्य को अभिव्यक्त करने के लिए

---

[1] आचार्य भिखारीदास काव्य निर्णय, पृ 5

कल्पना लोक में विचरण करने लगे। राधा विलास मूर्ति बना दी गई। कवियों की सारी प्रतिभा का केन्द्रीकरण नारी सौंदर्य को चित्रित करने में होने लगा। वह कोमलता, ममता, वात्सल्य, लज्जा की पुंजीभूत मूर्त रूप न रहकर विलास का उपकरण मात्र बन गई। युगों से संचित उसका गरिमामय रूप क्षण में नष्ट हो गया और वह रह गई केवल रंगरेलियाँ और अठखेलियाँ करने वाली इसलिए अनेक विद्वान आलोचकों का कथन है कि इस युग की रचनाएँ जीवन में उन्नत भावनाएँ प्रदीप्त नहीं करती, वरन् विकार उत्पन्न करती हैं।

रीतियुगीन कवियों ने जीवन में अपूर्व उल्लास, आनन्द, सरसता और मनोविनोद का संचार किया है। मिलन और विरह शृंगार के हृदय चित्रांकन करने में इन कवियों ने अपनी असाधारण कल्पना और प्रतिभा का परिचय दिया है। रूप सुषमा, यौवन और चपलता की देवी राधा और रूप माधुर्य सौंदर्य सम्पन्न कृष्ण के मिलन-संयोग के उत्साह वर्धक एवं आनन्द वर्धक चित्र कवियों ने प्रस्तुत किये हैं राधा कृष्ण के संयोग सभोग के एक से एक मनोमुग्धकारी चित्र रीतिकालीन कवियों ने उरेहे हैं, कवि बिहारीलाल का एक ऐसा ही चित्र द्रष्टव्य है

"बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाइ।
सौह करै भौंहनि हँसै, दैन कहै नटि जाइ॥

कितना आनन्दकारी और रोमांचकारी दृश्य है यह।

राधा साधारण नायिका की तरह विलासप्रिय, विनोदी, रति अवतार के रूप में चित्रित की गई है। इतना ही नहीं, वह "विपरीत रति" में अत्यन्त पटु है। 'विपरीत-रति" करके भी वह कृष्ण को नहीं छोड़ती, आलिंगन में बाँधे रखती है।

राधा और कृष्ण का सम अनुराग चित्रण विवेच्य काव्य का प्रतिपाद्य है। राधा और गोपियों की अनन्य भक्ति कृष्ण के प्रेम में घनीभूत हो उठी हैं।

कृष्ण भी राधा के प्रेम निरन्तर निमग्न रहते हैं। नायक और नायिका प्रेमांकुर रूप में दर्शाये गये हैं। उनमें समान तन्मयता, लीनता, रस मग्नता, मुग्धता और आत्म विस्मृति पाई जाती है, यद्यपि इस प्रेम में "काम प्राधान्य है, तथापि प्रेम का अत्यन्त, निश्चल उत्कट, मांसल रूप भी इस में मिलता है। राधा कृष्ण का यह प्रेम प्रवण रूप बिहारी, मतिराम देव, पद्माकर ठाकुर आदि कवियों के काव्यों में द्रष्टव्य है।

"जिस प्रकार भक्तिकालीन कवियों ने राधा कृष्ण के मधुर व्यक्तित्व का आधार लेकर उसे अपनी निगूढ़तम भक्ति भावना का व्यंजक बनाया था, उसी प्रकार शृंगार काल के कवि उसे ऐसा सुन्दर और पवित्र रूप नहीं दे सके।

---

1 बिहारी सतसई, पृष्ठ 472

उनसे राधा कृष्ण के मधुरतम व्यक्तित्व में निहित सूक्ष्म भक्ति भावना का निर्वाह न हो सका। शृंगार काल के कवियों ने राधा कृष्ण की अलौकिक प्रेम लीलाओं को स्थूल रूप में ग्रहण किया, जिसके परिणाम स्वरूप राधा और कृष्ण जो अलौकिक प्रेम की साक्षात मूर्ति समझे जाते थे, साधारण लौकिक प्रेमी प्रेमिका के रूप में प्रदर्शित किये जाने लगे।" [1]

अतएव रीतिकालीन कवियों ने राधाकृष्ण का आलम्बन ग्रहण कर अश्लील भाव भंगिमा पूर्ण साहित्य का सृजन कर उन्मादित करने वाली उक्तियों से भर दिया। 18 वीं शताब्दी के अन्त तक इस प्रवृत्ति में काव्य सृजन होता रहा। परन्तु 19 वीं शती के प्रारम्भ से ही राधा-कृष्ण के रीतिकालीन परिवेश में परिवर्तन प्रारम्भ हो गया। राधा बुद्धिशीला, मुखरा, समाज सेविका, और कृष्ण लोकनायक, प्रजारक्षक और गीता उद्घोषक रूप में भारतीय साहित्य में प्रतिष्ठित हुए। पूर्व में कहा जा चुका है कि रीतिकालीन कवि कलापक्ष को सुन्दरतम बनाने में सचेतक का काम करते रहे।

मन-मोहन, मुरली मनोहर, रसिकराज, वणुवादक पीयूषवर्षी कृष्ण ब्रजभूमि को निर्जन बनाकर मथुरा प्रस्थान करते हैं। उनकी रासक्रीड़ा और गोप गोपियों के पायल की झंकार बन्द हो गयी, उनके विलास आनन्द और रस वर्षा के दिन तिरोहित हो गये। राधा पर टूट पड़ा विरह का पहाड़, गोपियाँ उन्मत्त रहने लगीं कृष्ण विरह में विधाता भी निष्ठुर और कठोर हो गया, कृष्ण मथुरा गये, राधा और गोपियां कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा में पलक पांवड़े बिछाने लगीं।

वनमाली विश्वासघात कर गया। क्षण भर को भी चैन नहीं आता। मन विक्षिप्तों की भांति इधर उधर दौड़ा फिरता है, कहीं तो विलासी प्रियतम के दर्शन मिल जाय —

"मेरे मन आली वा विलासी वनमाली बिन,
बावरे लौं दौरि दौरि परै सब ओर को।' [2]

राधिका जब-जब यमुना तट की ओर निहारती है उसे बीते जीवन की सुखद स्मृति झकझोर देती है। अश्रुधारा उसके नेत्रों से अविरल बह निकलती है—

'स्याम सुरति करि राधिका तकति तरनिजा तीरु।
असुवनु करति तरोस कौ खिनुक खरौंहा नीरु।' [3]

---

1 डॉ॰ जयकिशन प्रसाद एम॰ ए॰ हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ पृष्ठ 109 210
2 घनानंद ग्रन्थावली पृ॰ 126 प॰ 144 सुजान सागर से उद्धृत
3 बिहारी सतसई दोहा – 282

इस युग के कृष्ण चरित विषयक काव्यो की लम्बी सूची है

(1)	बलीराम	सुदामा-चरित	विक्रम संवत्	1731
(2)	देवीदास	अनूप कृष्ण चन्द्रिका	"	1731
(3)	राजसिंह	बाहुविलास	"	1763
(4)	क्षेमकरण मिश्र	कृष्ण चरितामृत	"	1777
(5)	वीरवर कायस्थ	कृष्ण चन्द्रिका	"	1777
(6)	रामप्रसाद	कृष्ण चन्द्रिका	"	1779
(7)	जगदीश	शिशुपाल वध	"	1780
(8)	मेदिनीमल्ल	श्रीकृष्ण प्रकाश काव्य	"	1790
(9)	मण्डन कायस्थ	सुदामा चरित	"	1790
(10)	सूरति मिश्र	कृष्ण चरित	"	1794
(11)	चन्द्रहास	कृष्ण विनोद	"	1807
(12)	माहवसिंह	कृष्ण विलास	"	1808
(13)	अखैराम	कृष्ण चन्द्रिका	"	1811
(14)	विक्रमादित्य	हरिभक्ति विलास	"	1828
(15)	गणेशदास	सुदामा चरित	"	1827
(16)	मण्डन द्विज	कृष्णायन	"	1828
(17)	देवदत्त	वीरविलास	"	1818
(18)	गुमान मिश्र	कृष्ण चन्द्रिका	"	
(19)	मोहनदास	कृष्ण चन्द्रिका	"	1839-62
(20)	जगन्नाथ	कृष्णायन	"	1845
(21)	अमरसिंह कायस्थ	सुदामा चरित	"	1845
(22)	राधा कृष्ण	कृष्ण चन्द्रिका	"	1850
(23)	गोपालराम	सुदामा चरित	"	1853
(24)	प्राणनाथ	सुदामा चरित	"	1858
(25)	देवीदास	सुदामा चरित	"	1865
(26)	जयसिंह	कृष्ण तरंगिणी	"	1873
(27)	राम विनोदीलाल	कृष्ण विनोद	"	1879
(28)	रघुनाथ दास	कृष्ण चरितामृत गीता	"	1890
(29)	हलधर दास	सुदामा चरित	"	
(30)	गगकवि	सुदामा चरित	"	

इन रीतियुगीन कवियों ने कृष्ण की रूप माधुरी का वर्णन और कृष्ण चरित का आख्यान ब्रज भाषा में ही किया है। ब्रज भाषा का पूर्ण सौन्दर्य इसी युग में निखरकर चरम उत्कर्ष पर पहुंचा। कवियों ने जड़ाई, पच्चीकारी, अलङ्कृति, शब्द शक्ति आदि का बड़ा सुन्दर और मोहक दृश्य प्रस्तुत किया है। शब्दों

को काव्य मे नगों की तरह जड़कर अद्भुत कलात्मकता का परिचय दिया है। इसमें सन्देह नहीं कि भाव सौन्दर्य की अपेक्षा भाषा सौन्दर्य पर ही कवियों की रुचि केन्द्रित रही। भाषा स्निग्ध और स्वाभाविक है, संगीतात्मकता और ध्वन्यात्मकता के गुणों से ओत प्रोत है, उसमें चित्रमयता भी है। बिहारी में नाद सौन्दर्य और चित्रमयता की प्रधानता है, तो घनानन्द मे नाद व्यंजना, प्रयोग विचित्रता है। नागरीदास सरसता की मूर्ति हैं तो हसराज सरसता और स्वाभाविकता की। बाबा दीनदयाल गिरि अपनी मधुर और रसीली भाषा के लिए प्रसिद्ध हैं। दरबारी सभ्यता के कारण शालीनता और वाक्पटुता ने भाषा सौन्दर्य में चार चाँद लगा दिये है। यमक अनुप्रास उपमा, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति प्रभृति अलकारों ने भाषा सौन्दर्य को प्रभविष्णु बनाया है। छन्दों की विविधता इस युग के इन कवियों की एक अन्य विशिष्टता है। दोहा चौपाई, सवैया कवित्त घनाक्षरी रूपमाला आदि का प्रयोग बड़े सुन्दर और सुरुचि पूर्ण रूप में हुआ है।

हिन्दी के समीक्षकों ने रीति युगीन इन काव्यों में जीवन की विविधता का अभाव देखा है और कहा है कि इन कवियों में वर्णन की नवीनता नहीं है, उन्होंने केवल काव्यांगों के प्रदर्शन में ही कमाल उपस्थित करने का प्रयत्न किया है। ये कवि यथार्थ से दूर और कल्पनाओं में विचरण करने वाले प्राणी हैं। इनके काव्य में लोक मंगल की भावना का अभाव है। इनमें विश्व जनीन भावनाओं का स्पर्श नहीं मिलता। ये कवि सामाजिक व राजनीतिक परिस्थितियों और समस्याओं से दूर होकर राजा, महाराजा अथवा आश्रयदाताओं को राधा कृष्ण गोपी के माध्यम से उभाड़ने में अपने कर्तव्य की इतिश्री मानते थे।

रीति युगीन अधिकांश कवियों ने भक्ति सम्बन्धी पदों की रचना की है, किन्तु इन्हें भी भक्तिकालीन आत्म सौन्दर्य, आध्यात्मिकता, धार्मिकता और कृष्ण भक्ति का उत्तराधिकार नहीं मिला। इसी कारण यह काव्य मनोविलास और मनोरंजन की वस्तु बनकर रह गया।

रीतिकाल का कृष्ण भक्ति काव्य हमारी सांस्कृतिक विरासत की महामूल्यवान साहित्यिक निधि है। बिहारी के दोहों का, देव के छन्दों का, मतिराम की ललित रचनाओं का, भूषण के कवित्तों का, घनानन्द के कवित्त और सवैयों का सम्मान केवल इसलिए नहीं है, कि वह हमारी वैभवशाली निधि है वरन् इसलिये है कि उसमें जीवन का शृंगार मूलक मनोरंजक और ललित रूप प्रस्तुत किया गया है यह कहना भी सही है कि यदि हम ढूँढें तो उसमें सामाजिकता का नितांत अभाव नहीं मिलेगा।

वस्तुतः कृष्ण काव्य के अभाव में रीतिकाव्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती। पूर्ववर्ती युगों की पारलौकिकता और परवर्ती युगों की स्वलौकिकता

सांस्कृतिक चेतना के बीच मे सेतु की तरह कृष्ण काव्य हमारे सामने आता है, उसमे हमारी इन्द्रिय गति चेतना को अध्यात्म उ मुख बनाया गया है। सूफियो के प्रेम की पीर की मारस्वता को कृष्ण काव्य म अपने सन्दर्भों म आत्मसात किया है। इस युग म अनेक मुसलमान कवि भी कृष्ण भक्ति की ओर आकर्षित हुए। इन कृष्ण प्रेमी मुसलमान भक्तो या कवियो ने सौन्दर्य, शृगार, माधुर्य और प्रेम की अत्यन्त भाव-प्रवण, मन मोहक, आनन्दक और ललित अभिव्यक्तियो स हमे आन्तरिक स्वास्थ्य प्रदान किया है। उसम नैतिक और लोकमगल विधायक आदर्शों का समारम्भ भले ही नही हा, किन्तु सौन्दर्य के भीतर स एक नये प्रकार की सकल्प दृढता – जो राम काव्य की मर्यादा वाली सकल्प दृढता की पूरक है हमे स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वस्तुत मध्ययुग मे सान्दय तथा कलात्मक चेतनाओ के पीछे कृष्ण काव्य का अस्तित्व महान है।

"वैष्णव संस्कृति का भीतरी माधुरी एवम् अन्त सौन्दर्य म सम्वर्धित कर काव्य चेतना को नई मार्मिकता देने वाला कृष्ण काव्य मध्ययुगीन राम काव्य की देन का पूरक है।" [1]

इस परम्परा का पालन भारतेन्दु युग के कवियो ने किया है। इस युग म रची गई कुछ प्रसिद्ध रचनाए इस प्रकार हैं – दीनदयाल गिरि द्वारा विरचित – "अनुराग रग", घनश्याम दास द्वारा लिखित–"श्री गौरी रागेसौभी बिहारण्यतीय कृत "युगलसुधा", महन्त शीतलदास रचित "गुलआरचमन" 'आनन्द चमन", 'बिहारचमन" आदि। कुछ कवियो ने कृष्ण स्तुति पद रचे। इन कवियो ने भारतेन्दु की भूमिका की पृष्ठभूमि तैयार की।

इस काल मे बहुत स ऐसे कवि हुए जिनका सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय विशेष स नही था और इस प्रकार के कवियो ने सामान्य वैष्णव होने के नाते राधा-कृष्ण विषयक रचनाएँ की है, मुक्तक या प्रबन्ध के रूप मे कृष्ण की प्रख्यात कथा का सक्षेप मे वर्णन किया है।

सुन्दर कुवरिबाई रसिक गोविन्दलाल पद्माकर, दीनदयाल गिरि व्रजनिधि कृष्णदास गिरधरदास आदि कवियों की रचनाएँ इसी प्रकार की हैं। इन कवियो ने प्राय परम्परा का ही पालन किया है।

बीबी रत्न कुवरि के काव्य "प्रेमरतन" म रीतिकालीन कविया की शृगारिक पद्धति का प्रभाव मिलता है। गिरधरदास के "दशकथामृत" म भी यह प्रभाव देखा जा सकता है।

बाबा दीनदयाल गिरि कृत 'अनुराग बाग" (1831 ई) मे कृष्ण जन्म से लेकर मथुरागमन तक की कथा वर्णित है। कृष्ण की लीलाओं का वर्णन इसमे

1 डॉ रामरतन भटनागर हिन्दी साहित्य का सक्षिप्त इतिहास पृ 205

अत्यन्त ललित कवित्तों में हुआ है। इसमें मालिनी छन्द का बड़ा मधुर प्रयोग हुआ है। 'बाबाजी को भाषा पर बड़ा ही अच्छा अधिकार था। इनकी सी परिष्कृत स्वच्छ व सुव्यवस्थित भाषा थोड़े कवियों की है।" अनुप्रास और कोमल पदावली का व्यवहार बराबर हुआ है।"

महाराज प्रतापसिंह ब्रजनिधि की रचनाएँ "आनन्दाम्बु निधि (1853 ई०) और रुक्मिणी परिणय' श्रीमद्भागवत पर आधारित हैं। बाबा रघुनाथदास रामसनेही कृत 'विश्राम सागर' में भी कृष्ण कथा का ही वर्णन है। कुन्दनलाल शाह कृत 'अष्टयाम' और 'रसकलिका" में राधा कृष्ण के प्रतिदिन के काम कलापों और लीलाओं के सविस्तार वर्णन मिलते हैं। राधावल्लभी सम्प्रदाय के कवियों के काव्यों में वृन्दावन हितहरिवंश राधाकृष्ण और उनकी लीलाओं के वर्णन मिलते हैं। इनकी कृतियों में राधा को प्राधान्य दिया गया है, श्री हठीजी कृत राधा-सुधा शतक (1880 ई०) में रीतिकालीन कवियों की शृंगारमूलक कविताओं का प्रभाव मिलता है। वृन्दावन दास के सग्रह कृष्ण काव्य मिलते हैं। जो इनके द्वारा रचित बयालिस ग्रन्थ कहे जाते हैं, कृष्ण काव्य की इन रचनाओं का आधार प्रायः श्रीमद्भागवत है। इन कवियों ने अपने काव्यों में भागवत, सूर-सागर तथा अन्य अष्टछापीय ग्रन्थों में वर्णित प्रमुख लीलाओं का ही वर्णन किया है। इन कवियों ने उपर्युक्त लीलाओं के साथ ही अपनी भक्ति की अभिव्यक्ति के लिए अनेक काल्पनिक लीलाओं का भी वर्णन किया है। जैसे चितेरिन लीला, सुनारिन लीला, चुड़िहारिन लीला, मालिनी लीला, बिसातिन लीला, रंगरेजिन लीला, तम्बोलिन लीला, पनवारीलीला, जोगिन लीला, कौतुक लीला आदि। हित वृन्दावन दास के 'छद्म षोडशी" और 'छद्म अष्टपदी' तथा प्रियादास कृत 'पचरत्न गेंदीलान' (1858) आदि काव्यों में ऐसी ही लीलाओं का वर्णन मिलता है।

कृष्ण इन लीलाओं में प्रायः छद्म वेश धारण कर राधा के निकट पहुँचते हैं और अन्ततः राधा उन्हें पहचान ही जाती है। कृष्ण का रहस्य खुल जाता है, दोनों मिल जाते हैं और राधा का स्थान ऊँचा ही बना रहता है।

आसक्ति की भावना के कारण राधा कृष्ण आराध्य रूप में भी उरेहे गये हैं। राष्ट्र प्रेम भी उसमें प्रस्फुटित है। रघुनाथदास सनेही कृत "विश्राम सागर" में हिन्दू मुस्लिम संघर्षों का विरोध मिलता है। महाराज रघुराजसिंह ललित किशोरी नवनीत चौबे जैसे अनेक कवियों ने पुरानी परम्परा की कृष्ण भक्ति विषयक रचनाएँ की हैं, किन्तु इन रचनाओं का प्रभाव भारतीय जनमानस पर बहुत कम पड़ा। आंग्ल सत्ता के अधीन पराभूत जनता पर कवियों की 'मधुर्वेष्टित वाणी' का प्रभाव बड़ा सीमित रहा। रीतिकालीन काम, वासना, सुरा और सुन्दरी का युग प्रायः समाप्त हो चुका था। रीतिकाल की इस अति के कारण

जनमानस में ऐसी कविताओं के प्रति अरुचि भर उठी थी। इसी पीठिका पर भारतेन्दु का आविर्भाव हुआ। उन्होंने भक्तिकाल से प्रेरणा ग्रहण की स्वयं को "सखा प्यारे कृष्ण के और गुलाम राधा रानी के" घोषित किया। उनके कृष्ण काव्य में एक प्रेमी सहृदय और निश्चल भक्त हृदय के दर्शन होते हैं।

कृष्ण काव्य परम्परा में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र एक महान कवि हैं उनके काव्य में प्राचीन और नवीन का पावन गंगा जमुनी संगम मिलता है। प्रेम माधुरी प्रेम तरंग, प्रेम फुलवारी, जयदेव, वल्लभाचार्य, सूरदास वल्लभीय सर्वस्व प्रेम जोगिनी, चन्द्रावली, प्रेममालिका, गीत गोविन्दानन्द, वर्षा विनोद, विनय प्रेम पचासा, कृष्ण चरित, उरहना तन्मय लीला, दानलीला वेणुगीत, श्रीनाथ स्तुति, मानलीला फलबूक भजले, प्रभृति ग्रन्थो पन्नो मे उन्होंने अपने अन्तस की श्रीकृष्ण विषयक प्रेम भक्ति भावना की अभिव्यक्ति की है। भारतेन्दु ने कृष्ण विषयक कई सहस्र पदो की रचना की हैं नाटको की रचनाएं की हैं निबन्ध लिखे हैं आदि। इनमे कृष्ण की लीलाओ को अत्यन्त प्रभविष्णु रूप में अभिव्यक्ति दी गई है।

भारतेन्दु को हम आधुनिक कृष्ण काव्य का सर्वश्रेष्ठ कवि कह सकते हैं। उनके राधा कृष्ण प्रेम भक्ति विषयक पद आदि अत्यन्त रसीले 'मधुर' प्रवाहपूर्ण और व्यंजनात्मक बन पड़े हैं। उनके पन्नो की कुछ पंक्तियाँ तो "बिसराई" ही नहीं जा सकती यथा

"जुगल छबि नैनह सो लख लहु'
हरि भारि काहू सुधि बिसराई
मेरो हठ राखो हठिले लाल
प्यारी छबि कि रासीबनी
अहो प्रिया पलक पै धरि पाँव
सखी री देखहु बाल बिनोद
नैन भरि देखो – गोकुल नद
नन भरि देखो श्री राधा बाल
■ मिली जा मेरे प्यारे
छाडो मोरि बइयाँ लाल
अहो हरि ऐसी तो नहि कीजै
सुन्दर श्याम कमलदल लोचन
नैना वह छबि नाहिन भूल
उधव जो उनेक मन होते
सखि ए नैना बहुत बुरे।
नाथ तुम प्रीति निबाहत साँची
जमुना तट ठाडे नन्दन, कोऊ कहानन पावें

हम तो मदिरा प्रेम पिऐ ।
सखो मन मोहन मेरे मीत,
बोले भाई गोवधन पर मारे"

प्रेम माधुरी के एक से एक अच्छे पद एक से एक अच्छे कवित्त और सवैया "उतराद्ध भक्तमाल" के पद अरि सखि मोहि मिलाऊ मुरारी', इत मोहन प्यारे उत राधा प्यारी अखियाँ मद सी भरी", "लाल मेरो अँचरा खोले री", "आजु हरि बिहरत जमना तीर", जयजय श्री वृदावन देवी', 'प्रेम मे मीन-मेष कछु नाही", "राध भई आपुघनश्याम" 'राज राध कबहो कबहों तुम काहे काहे मुहरावति हो' बँसुरिआ मेरे बैर परी'–प्रभुति पदो मे भारतेन्दु की राधा कृष्ण विषयक भक्ति प्रेम ने एक से एक अनमोल महाघ रत्न भारतेन्दु ग्रन्थावली मे भरे पडे है, इनम उनका कृष्ण भक्त हृदय पूण रूप से प्रस्नवित हो उठा है ।

पिय प्यारे तिहार-निहार बिना, दुखिया अँखिया नही मानती हैं' जसी उनके सवयो की पक्तियाँ सहृदयो के हृदय को मोह लेती है, इनसे स्पष्ट है कि हिन्दी काव्य म नवयुग के क्रातिदूत भारतेन्दु बाबू महान् कवि के साथ ही महान् कृष्णभक्त भी थे । सखा प्यार कृष्ण के गुलाम राधा रानी के" कहने वाले भारतेन्दु बाबू की भक्ति असीमित थी। उनके पद और सवये वरुणव कवियो की शली पर रचे गये ह और वैसे ही अत्यन्त भाव प्रवण और रसमय है । सच्ची अनुभूति भावावेश भारतेन्दु का प्रेमी और भक्त हृदय इनमे दृष्टव्य हैं ।

भारतेन्दु युग मे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने तो अत्यन्त सरस मधुर भक्ति प्रम प्रवण रचनाएँ लिखी साथ ही भारतेन्दु मण्डल के अन्य कवियो ने भी कृष्ण भक्ति की पावन गगा स जनमानस को अभिसिक्त किया।

ठाकुर जगमोहनसिह कृत 'श्यामा स्वप्न' और 'श्याम सरोजिनी' मे भी कृष्ण प्रेम से सम्बद्ध सवये मिलते हैं । भारतेन्दु मण्डल के अनेक लेखक और कवियो ने कृष्ण भक्ति विषयक एक स एक अनठे पद लिखे हैं ।

आधुनिक युग म 1850 ई के पश्चात् हिन्दी काव्य मे भारतेन्दु युग में राधा-कृष्ण विषयक पर्याप्त रचनाएँ हुई है । इनमे गोविन्द गिल्लाभाई द्विज बेनी असनी क लाल कवि, शाह कुन्दनलाल, ललित किशोरी गोकुलनाथ और जग न्नाथदास रत्नाकर आदि उल्लेखनीय हैं। इन कवियो ने पुरानी परिपाटी की राधा-कृष्ण मूलक शृङ्गार रचनाएँ की हैं । बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' कृत 2 उद्धवशतक आधुनिक कृष्ण काव्य परम्परा की पुरानी परम्परा की (ब्रजभाषा) भक्ति एव रीतिकालीन भावनाओ मे समन्वित सशक्त कडी है ।

शृ गारिक कवियों न शृ गार भावनाओं को प्रधानता दी । भक्त कवियों ने राधा कृष्ण के स्वरूप का वणन पौराणिक कथाओं को लेकर मथुरा और वृन्दावन

के मन्दिरो मे अभिनीत लीलाओ के अनुकरण पर किया है। कृष्ण भक्ति के रूप का इतना प्रचार था कि अनेक कवियो ने राम को कन्हैया बनाकर अयोध्या की गलियो मे घुमा दिया, गोपियो का स्थान सीता तथा अन्य राज वधुओं और उनकी सखी सहेलियो ने ले लिया है। उदाहरणार्थ महाराज रघुराज सिंह कृत "रघुविलास" ग्रन्थ मे राम और कृष्ण मे कोई भेद नही रखा गया है। उसमे झूलना, हिंडोला, बाललीला, नख सिख आदि विषय प्रमुख हैं। उनका भ्रमरगीत भागवत् के दशम स्कन्ध के अनुवाद 'आनन्दाम्बुनिधी' का एक भाग है।

ऐसी लीलाओ का वर्णन चाहे कितना भी सुन्दर क्यो न हो, उसमे आध्यात्मिकता और उदात्त भावनाओं का निश्चित रूप से अभाव मिलता है। अनेक रचनाओ मे तो काव्य और भी निकृष्ट कोटि का है। इस प्रकार की काल्पनिक लीलाओं का उल्लेख भागवत मे नही मिलता, हाँ, एक दृष्टि से इन लीलाओ का महत्व अवश्य माना जा सकता है, और वह यह है कि हमे उनसे आलोच्य कालीन सामाजिक व्यवस्था के विभिन्न व्यावसायिक वर्गों का परिचय प्राप्त होता है।'[1]

कृष्ण काव्य से सम्बन्धित प्रबन्ध काव्यात्मक रचनाओ मे महाराज रघुराजसिंह कृत 'रुक्मिणी परिणय' (1850) महत्वपूर्ण है। महाराज रघुराजसिंह ने इसकी रचना महाकाव्य के रूप मे की। इसकी कथा का आधार श्रीमद् भागवत पुराण है। इस महाकाव्य का प्रतिपाद्य श्रीकृष्ण जन्म से लेकर रुक्मणी परिणय तक की कथा है। इसमे राधा कृष्ण के विविध विलासो, लीलाओ विहारो आदि के साथ नख सिख, होली, शरदऋतु विरह आदि का भी वर्णन किया गया है। इसमे रौद्र, भयानक, शृगार, शान्त, और वीर रसो का सुन्दर परिपाक हुआ है।

इस काल मे भक्ति के प्राचीन रूप का माधुर्य और प्रावल्य न रह गया था। मुस्लिम संस्कृति और शिष्टाचार के नियम भी इस काल के काव्यो मे मिलते हैं। रुक्मिणी परिणय के कृष्ण रुक्मिणी विलास के सन्दर्भ मे कमरे की सजावट बादशाही शयनागारो जैसी है। प्राय कृष्ण भक्त कवियो ने कृष्ण की सरस लीलाओ का मुक्त-काम वर्णन ही अधिक किया है।

इस काल मे कृष्ण भक्ति काव्य के अधिकांश कवि ऐसे हैं जिनका किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बन्ध नही था। जिन्होने सामान्य वैष्णव मत के अन्तर्गत राधा कृष्ण के प्रति अपना प्रेम प्रकट किया है। इनके काव्यो म कृष्ण की लीलाओ म अष्टयाम आदि का वर्णन मिलता है। यह सही है कि इस काल के पहले भी इस प्रकार की रचनाएँ हुई थी किन्तु इस काल के कवियो मे पहले के कवियो के सदृश भक्ति भाव और काव्यात्मकता नही है। इनके स्थान पर इनमे वर्णनात्मकता का प्राधान्य मिलता है। हम कह सकते हैं कि इनके यहाँ साहित्यिक पक्ष गौण है।

---

1 डॉ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका पृष्ठ 211–212

इन रचनाओ पर वैष्णवो के कर्मकाण्ड का प्रभाव पडा। धार्मिक समुदायो की अपनी स्थितियाँ थी। इस काल मे यह प्रभाव अति के रूप मे परिणत हो जाता है।[1]

इस युग मे कुछ ऐसे काव्य भी लिखे गये, जिनका उद्देश्य सेवा का वर्णन करना था। राधा की लीलाओ के अतिरिक्त इस काल के कृष्ण भक्त कवियो ने स्तुतियाँ भजनो आदि की भी रचना की। इन कवियो के विचार से कलियुग की बहुत सी बुराइयाँ राधा कृष्ण के प्रति भक्ति भाव के अभाव के कारण हैं।

डॉ वार्ष्णेय लिखते हैं — भारतेन्दु कालीन कृष्ण भक्त कवियो ने छद्मवेषी तथा अन्य लीलाओ का अनुसरण करके दानलीला मानलीला, पनिहारिन मनिहारिन आदि लीलाओ की भक्ति रस सम्बन्धित रचनाएँ की। इन्हीं रचनाओ मे मंदिर की पूजा विधि, अभिषेक भोज एवम् वस्त्र आदि के पद भी मिलते हैं। रीवा के महाराज रघुराजसिंह के द्वारा विरचित "आनन्दाम्बुनिधि" में भागवत के दशम स्कन्ध की कथा मिलती है तथा उन्ही का 'रुक्मिणी परिणय' भी भागवत पर ही आधारित ग्रन्थ है। राजा लक्ष्मीनारायसिंह जू के "लक्ष्मी विलास" काव्य ग्रन्थ मे रीतिकालीन नायिका भेद और छन्दों का बाहुल्य है। भारतेन्दु युग के सभी कवि प्राय पुष्टिमार्ग के अनुयायी थे। उनकी प्रेरणा भक्ति कालीन कृष्ण भक्त कवियो से प्रस्फुटित हुई थी। उनकी भक्ति की उच्चता और हृदयग्राहिता उसमे मिलती है। भारतेन्दुकाल के कृष्ण भक्त कवियो ने प्रणयलीला के सहस्रो पद लिखे हैं जिनमे श्रृंगारिकता ने भक्ति को दैन्य लिया है, उनका नायिका भेद अष्टयाम नख शिख वर्णन रीति परम्परा से प्रभावित है। यह सही है कि उनकी रचनाएँ सरस एवम् हृदयग्राही हैं।

द्विवेदी युग (प्रारम्भ 1900 ई से) मूलत सास्कृतिक पुनरुत्थान का युग है। आधुनिक युग म आकर रामकृष्ण मे ईश्वरावतार की प्रतिष्ठापना का बनाये रखते हुए कवियो ने उनकी कथाओं के अन्धविश्वासो को ध्वस्त किया। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और रामचरित उपाध्याय ने रामकृष्ण को ब्रह्म अवतार न मानकर महामानव और इतिहास पुरुष माना। उपाध्यायजी ने प्रिय प्रवास म कृष्ण को आदर्श महामानव, समाजसेवक और प्रजापालक के रूप में चित्रित किया — मैंने श्रीकृष्णचन्द्र को इस ग्रन्थ (प्रिय प्रवास) में पुरुष की भाँति अंकित किया है।[2]

द्विवेदी युगीन कृष्ण काव्य मे मौलिकता का आभाव है। प्राचीन का पिष्ट पेषण शुरू हुआ है—हाँ कृष्ण ईश्वर या ब्रह्म नही रह गये, वे महावीर व कर्मयोगी

---

1 डा लक्ष्मीकान्त वार्ष्णेय आधुनिक साहित्य की भूमिका, पृ 212

2 प्रिय प्रवास भूमिका

रूप मे चित्रित हुए, इसलिए कवियो ने उन्हे महायोगी व तत्व ज्ञानी रूप मे प्रस्तुत किया। "प्रियप्रवास" के कवि ने कृष्ण के देवत्व को मनुष्यत्व मे परिणत करके दिखाया है। मैथिलीशरण गुप्त के 'जयद्रथ वध" मे आधुनिक बुद्धिवाद का प्रभाव कम है। उन्होने राम को ईश्वर तो माना है परन्तु कृष्ण के अतिमानुषिक और अलौकिक चरित्र का चित्रण नहीं किया।[1]

हरिऔध और गुप्तजी ने अपने कृष्ण काव्यो मे खडी बोली का प्रयोग किया। छन्दों मे दोहा, कवित्त, सवैया के स्थान पर गीतिका हरिगीतिका सार, राधिका रूपमाला आदि का प्रयोग किया गया।

द्विवेदी युगीन कृष्ण काव्यो की एक संक्षिप्त तालिका इस प्रकार है

काव्य	कवि	सन्
(1) कृष्णायन	विसाहूराम	1903
(2) सग्रामसार	कुलपति मिश्र	1905
(3) वीर विनोद	पद्मसिंह	1907
(4) प्रेम शतक प्रेमाजलि प्रेम पथिक	वियोगी हरि	1909
(5) जयद्रथ वध	मैथिलीशरण गुप्त	1910
(6) हिमतरगिनी	माखनलाल चतुर्वेदी	1911
(7) द्रौपदी चीरहरण	लोकेश्वर त्रिपाठी	1914
(8) प्रिय प्रवास	अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध"	1914
(9) भ्रमरदूत	सत्यनारायण 'कविरत्न'	1916
(10) उद्धव शतक	जगन्नाथ दास 'रत्नाकर"	1920

विसाहूदास का 'कृष्णायन' श्रीमद् भागवत से प्रभावित भक्ति परक काव्य है। कुलपति मिश्र के 'सग्रामसार" को मूलत 'द्रोण पर्व" का सक्षिप्त रूपान्तर कहा जा सकता है। यह वीर रस पूर्ण रचना है। पद्मसिंह कृत वीर विनोद" मे महाभारत के एक पर्व की कथा वर्णित है। इसमे कर्ण की स्वामी भक्ति, भ्रमी वीरता, उदारता आदि का अकन सरस एव सुन्दर रूप म किया गया है। आधुनिक युग के भक्त कवियो म वियोगी हरि ख्यात हैं। उनकी प्रेम शतक' 'प्रेम-पथिक" और 'प्रमाजलि" नामक रचनाएँ हैं। वे ब्रजभाषा और ब्रजपति के अनन्य उपासक हैं। ऐसे प्रेमी, रसिक जीव, इस रूखे जमाने मे कम ही दिखाई पड़ते है। इन्होंने पुराने कृष्ण भक्त कवियो की पद्धति पर बहुत रसीले तथा भक्ति भाव पूर्ण पदो की रचना की है, जिन्हे सुनकर आजकल के रसिक भक्त भी बलिहारी हैं। बिना कहे नहीं रह सकते।[2]

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास प रामचन्द्र शुक्ल, पृ 561
2 डॉ हरदेव बाहरी हिन्दी की काव्य शैलियों का विकास पृ 118-119

मैथिलीशरण गुप्त कृत "जयद्रथवध" की कथा का मूल स्रोत महाभारत का द्रोण पर्व है। इसमें सात सर्गों में क्रमश अभिमन्युवध, पाण्डवों का शोक कृष्ण द्वारा अर्जुन व पाण्डवों को सांत्वना प्रदान करना, पाशुपत अस्त्र प्राप्ति, कौरवों-पाण्डवों का भयकर युद्ध, जयद्रथ वध की घटना और विजयी पाण्डवों का शिविर की ओर लौटने की कथा वर्णित है। गुप्तजी ने जयद्रथ वध में परम्परागत प्रचलित काव्य रूप में अपनी मौलिक प्रतिभा का सम्मिश्रण कर एक अपूर्व काव्य की रचना की है।[1] काव्य रूप की दृष्टि से यह एक खण्डकाव्य है। इसे वीर रस पूर्ण करुणा प्रधान काव्य कहना उपयुक्त है।

तुलसीराम शर्मा 'दिनेश" का 'पुरुषोत्तम" महाकाव्य रूप में रचित है। यशोदा के लक्ष्य की ममता, देवकी के हृदय की पीड़ा, वसुदेव की व्यथा, कंस वध, उद्धव गोपी संवाद आदि बड़े सरल सरस और प्रवाह सिक्त रूप में अभिव्यक्त हैं। यह सामान्य कोटि का काव्य है, क्योंकि भाषा प्रौढ चलती और आकर्षक नहीं है।[2]

माखनलाल चतुर्वेदी कृत 'हिमतरंगिनी' (1911 ई) में वैष्णवों की माधुर्य भावना का परिचय मिलता है उनकी रचनाएँ भक्त कवियों की सी मधुर और सरस हैं।

श्याम लोचन मन बस गये री
'मधुर बैन कर सैन नैन सों छीन लीन मन चपल ऐन सों
कछु न सोहावत, सुधि न रैन सा जब हरि हँस गये री।'

माखनलालजी का भक्त इस उपवन का श्रद्धापूर्वक पालन करते हुए अपनी भावना के फूलों को कृष्णार्पण कर देता है।

'नाचूँ जरा सनेह नदी में, मिलूँ महासागर के जी में
पागलपनी के पागलपन में, तुहा सुख दूँ कृष्णार्पण में।

सच्चे भक्त की भाँति कवि अपने इष्टदेव की सांवली सूरत को अपने प्राणों की कीमत पर भी नहीं भूलना चाहता।[3]

इस प्रकार माखनलालजी का कृष्ण के प्रति अटूट प्रेम दृष्टिगोचर होता है।

सत्यदेव त्रिपाठी का 'द्रौपदी चीरहरण' (1914 ई) में आल्हा शैली में तद् विषयक कथा वर्णित है। यह खण्ड काव्य गेय सरस और प्रवाहमय है।

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास" (1914 ई) आधुनिक युग का खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य कहा जाता है। भाव, भाषा शैली

1 डॉ श्रीकृष्णलाल आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास पृष्ठ 102 103
2 प रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 667
3 डॉ रामविलास त्रिवेदी माखनलाल चतुर्वेदी व्यक्ति और काव्य पृष्ठ 256

निष्ठता, कथावस्तु आदि दृष्टियो से यह एक अनूठा काव्य है। इसमे भक्तिकाल की भाव विह्लता और रीतिकालीन अश्लीलता के स्थान पर आधुनिक युगीन बौद्धिकता के दर्शन होते हैं। 'प्रिय प्रवास' मे कृष्ण जन नायक, लोक नायक, समाजसेवी एव प्रजापालक रूपो मे प्रस्तुत किये गये हैं। इसमे राधा और गोपियाँ लोक सेविकाएँ बन गयी हैं। राधा विरह मे अपने आँसुओ को रोककर समाज का नवनिर्माण करती है, दुखी समाज की सेवा मे स्वय के दुख की चिन्ता नही करती। इसकी कथा का मूल स्रोत भी यह महाभारत है। इसमे कृष्ण उद्धव सवाद, उद्धव का गोकुल प्रस्थान व्रज वासियो को सान्त्वना प्रदान करना, मथुरा लौटना और अन्त मे कृष्ण का मथुरा से द्वारका गमन और वही रहने का निश्चय और इधर राधा का विश्व प्राणियो की सेवा करके प्रेम योगिनी रूप धारण करने की कथा वर्णित है।

महाभारत पर आधारित होने के बावजूद इस काव्य मे कवि ने अपनी विराट् प्रतिभा द्वारा अनेक मौलिक उद्भावनाएँ की हैं गोपी-उद्धव-सवाद की अभिनवता अत्यन्त भाव प्रवण बन पड़ी है। महाभारत के अलौकिक शक्ति सम्पन्न कृष्ण को कवि ने लौकिक महापुरुष के रूप मे चित्रित किया है। कृष्ण दवानल का पान नही करते बल्कि दावानल से ग्वाल बालो की रक्षा करते हैं। गोवर्धन धारण करने की घटना को पूर्णत लौकिक बनाने का कवि ने सराहनीय प्रयास किया।

व्रज– "लख अपार प्रसार गिरीन्द्र मे,
व्रज धराधिप के प्रिय पुत्र का।
सकल लोग लगे कहने उन्हे,
रख लिया ऊँगली पर श्याम ने।।"

कवि ने अपने युग की ज्वलन्त आवश्यकताओ का समन्वय करने वाला कथानक चुना है। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध सघर्षरत जन मानस और जन नेताओ ने भारत माता की मुक्ति के लिए अनेक त्याग और बलिदान देकर अपनी कर्तव्य परायणता का परिचय दिया। इसी त्याग और तपस्या से भारत आजाद हुआ, राधा कृष्ण ने भी त्याग और तपस्या का परिचय दिया। चरित्राकन म कवि ने अद्भुत सफलता प्राप्त की है। नायक श्री कृष्ण मे कवि ने शील शक्ति और सौन्दर्य का समन्वय किया है, प्रिय प्रवास के श्री कृष्ण ललित कला प्रिय करूणासागर वीर, पराक्रमी लोक सेवा निरत महापुरुष हैं। वे देवता नहीं, महामानव हैं। विश्व से प्रेम करके राष्ट्रहित को ही जीवन का उद्देश्य मानते हैं।

राधा प्रिय प्रवास की अमर सृष्टि है वह सौन्दर्य सम्पन्न, बुद्धि शीला, प्रेम समर्पण शीला नारी और प्रेमयोगिनी है। विरह व्याकुल राधा उद्विग्न, उदास मौन और अश्रुगर्भा है परन्तु वह सच्ची प्रणयिनी की भाँति अपने उदात्त और

महान प्रेमी कृष्ण के सेवा और सृजन कार्यों को आगे बढ़ाने में योगदान देकर शिष्टता, शालीनता और संयत पवित्र प्रेम का परिचय देकर हिन्दी साहित्य की अमर निधि बन जाती है—

वे छाया थी सुजन शिर की, शासिका थी खलों की
कंगालों की परम निधि थी, औषधि थी पीड़ितों की।
दीनों की थी बहिन, जननी थी अनाथाश्रितों की,
आराध्या थी ब्रज-अवनि की प्रेमिका विश्व की थी ॥ [1]

भाषा सौन्दर्य की दृष्टि से प्रिय प्रवास अपने युग की अभिनव कृति है। प्रिय प्रवास की सर्जना संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली में की गई है। कवि ने एक ओर सरल और बोधगम्य खड़ी बोली को अपनाया है तो दूसरी ओर संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया है। संस्कृत वर्ण वृत्तों को रचने के लिए कवि ने द्रुतविलम्बित, मालिनी, वसन्त तिलका वंशस्थ मन्दाक्रान्ता आदि छन्दों का सहारा लिया है। इसी संस्कृतमयी शैली के कारण इस काव्य में कहीं कहीं अस्पष्टता, दुरूहता और जटिलता का समावेश हो गया है—काव्य की स्वाभाविकता को आघात पहुंचा है—

"सद्वस्त्रा-सदलंकृता गुणयुता सर्वत्र सम्मानिता,
रोगी वृद्धजनोपकारनिरता सच्छास्त्र चिन्तापरा
सद्भावातिरता अनन्यहृदया सत्प्रेम, सम्पोषिका
राधा थी सुमना प्रसन्नवदना स्त्री जाति रत्नोपमा ॥"

इस काव्य में ऐसे स्थलों की भी बहुलता है जहाँ सरसता और स्वाभाविकता की मनोरम झाँकियां मिलती हैं। इस काव्य की भाषा परिष्कृत प्रौढ़ प्राञ्जल और भावानुगामिनी है। उद्धव संवाद में भक्ति मानव सेवा के रूप में चित्रित है। यशोदा और राधा के वियोग विलाप सहृदयों को भी रुलाने वाले हैं। वस्तुत इस काव्य में ईश्वरवाद नहीं, अपितु मानववाद की प्रतिष्ठा मिलती है।

सत्यनारायण 'कविरत्न' कृत 'भ्रमरदूत' काव्य ग्रन्थ का अनुमानित रचना-काल सन् 1910 से 1916 ई० तक का होना चाहिए। कवि की उत्कृष्ट पक्ष प्रवणता का नमूना 'भ्रमरदूत' है। हृदय पक्ष की प्रधानता के कारण कला भाव गौण हो गया है। इस ग्रन्थ में कवि ने पूर्व प्रचलित भ्रमरदूत काव्य परम्परा से भिन्न रूप में कल्पना की है। इस काव्य में यशोदा भ्रमर को दूत बनाकर कृष्ण के पास सन्देश भेजती है। माँ का सन्देश कृष्ण के पास अत्यन्त सुरीली और मार्मिक वाणी में प्रस्तुत किया गया है। कोमल कान्त पदावली अत्यन्त मधुर बन पड़ी है। ब्रजभाषा के शब्दों का संग्रह काव्य में किया गया है। भ्रमरदूत पर मेघ दूत का प्रभाव लक्षित होता है, क्योंकि कवि ने प्रकृति के भिन्न उपादानों को

1 अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' प्रियप्रवास, पृष्ठ 17-49

सन्देश वाहक का काम सौंपा है। भ्रमरदूत काव्य में युगीन परिस्थितियों की झाँकी दर्शनीय है। यशोदा स्वयं के अनपढ़ होने पर दुःख प्रकट करती है इसलिए वह समाज की अन्य नारियों के लिए शिक्षा आवश्यक समझती है। उस समय समाज सुधार की लहर देशव्यापी थी, नैतिकता का आग्रह, विधवा, पुन-विवाह, स्त्री शिक्षा उस युग में अपेक्षित थी, अतः यशोदा के मुह से निःसृतवाणी का अवलोकन कीजिए

'नारी शिक्षा अनादर जे लोग अनारी
ते स्वदेश अवनति प्रचण्ड पातक अधिकारी
निरखी हाल मेरा प्रथम समझि सब कोई
विचारत लहि मति परम् अबला होई॥
लखी अजमाई के।" [1]

सम्पूर्ण काव्य में उद्धव अदृश्य हैं, केवल भ्रमर को ही गोपियों द्वारा उपालम्भ दिलाया गया है। खड़ी बोली के युग में ब्रजभाषा के प्रति उनका प्रेम अनुकरणीय था। उन्होंने ब्रजभाषा को युगानुकूल बनाने का स्तुत्य प्रयास किया। भ्रमरदूत वात्सल्य रस की कृति है, विप्रलम्भ की नहीं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भ्रमरदूत काव्य भव्य राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत, भाव प्रवण, नवीन उद्भावनाओं से सम्वलित और कला व्यंजना का सुन्दर उदाहरण है।

पं रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि— 'सत्यनारायणजी की बड़ी कविताओं में प्रेमकली' और 'भ्रमरदूत' विशेष उल्लेखनीय हैं। यशोदा ने द्वारका में जा बसे हुए कृष्ण के पास सन्देश भेजा है। उनकी रचना नन्ददास के भ्रमरगीत के ढंग पर की गई है। पर अन्त में देश में वर्तमान दशा का भी हल्का सा आभास कवि ने दिया है। [2] कविरत्न' ने कृष्ण को आराध्य माना है प्रेमकली' काव्य में कृष्ण के प्रति उनके प्रेम और उनकी आराधना के गीत हैं। उनकी भक्ति भावना में उनके अन्तः का देशप्रेम भरा हुआ है। भक्ति भाव की अभिव्यक्ति में भी वे आधुनिकता और मानवता को नहीं भूलते

माधव तुमहु भये वे सात,
वही ढाक के तीन पात है करो न कोई लाख॥
जैसे खीर खवायें तुमको वैसे सीग दिखाये।
वे पेंदी के लोटा के सम तब मति गति बरसावें॥
यह कछु को कछु काज काज में तुमहि लाज नहिं आव।[3]

स्पष्ट ही वे लोग मंगल की भावना को ध्यान में रखते है॥

1 सत्यनारायण कविरत्न, भ्रमरदूत
2 पं रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 637
3 सत्यनारायण कविरत्न प्रेमकली पृ

जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का "उद्धव शतक" (1919 20) भाव एवं कला की दृष्टि से अत्यन्त मोहक हृदयग्राही और सुसगठित बन पड़ा है। उसके एक सौ अठारह कवित्तो मे प्रवाह रूप मे कृष्ण कथा सग्रहित है। उद्धव का मथुरा से ब्रज जाना, उद्धव की ब्रज यात्रा, ब्रज पहुचना उद्धव का ब्रजागनाओ को उद्बोधन, गोपियो का उद्धव से तर्क विश्लेषण, उद्धव का मथुरा प्रस्थान, और उद्धव का श्रीकृष्ण को गोपियो का स्मृति सन्देश देना इसके कथा सूत्र हैं। 'रत्नाकर' जी का मूल प्रतिपाद्य निर्गुण पर प्रेम प्रवण सगुण भक्ति की विजय है।

इस काव्य मे करुण विप्रलम्भ शृगार का बडा उन्नत और भव्य चित्रण किया गया है। भावात्मकता, मनोवैज्ञानिकता एव कलादक्षता का इस काव्य में उत्तम सगम द्रष्टव्य है। भाव व्यजना, वाकचातुर्य, आलकारिकता, चमत्कारिकता आदि स समन्वित 'उद्धव शतक" का रचना शिल्प ब्रजभाषा काव्य की आज तक की अन्तिम श्रेष्ठ उपलब्धि है। घनाक्षरी छन्दो का प्रयोग बडे चमत्कार और कौशल के साथ कवि ने किया है।

वस्तुत द्विवेदी युग सास्कृतिक पुनरुत्थान का काल है। इस युग के कृष्ण काव्यो का यह वैशिष्ट्य ही माना जायेगा कि इन काव्यो मे रीतिकालीन राधा कृष्ण वाली शृगार परम्परा से हिन्दी को छुटकारा दिलाया और राधा कृष्ण कथा को आधुनिक युगानुरूप राष्ट्रीय चेतना धारा से जोड लिया।

छायावाद युग मे छायावादी शिल्प मे नवचेतना स्फूर्ति और प्रेरणा प्रदान करने वाले कृष्ण काव्य लिखे गये। इन काव्यो मे छायावादी प्रवृत्तियो और विशेषताओं का प्रभाव मिलता है। छायावाद युग मे रचित कतिपय कृष्ण काव्य निम्नलिखित है

क्र	काव्य	लेखक	सन्
1	अभिमन्यु का आत्म बलिदान	कमला प्रसाद वर्मा	1918
2	बक सहार	मैथिलीशरण गुप्त	1921
3	कस वध	श्यामलाल पाठक	1921
4	कृष्ण जन्मोत्सव	देवीप्रसाद प्रीतम	1922
5	सगीत महाभारत	नत्थाराम शर्मा गौड	1924
6	अभिमन्यु वध	रघुनन्दनलाल मिश्र	1925
7	दुर्योधन वध	जगदीश नारायण तिवारी	1926
8	वन वैभव	मैथिलीशरण गुप्त	1927
9	सैरन्ध्री	"	1927
10	पाडव जन्म	रामनारायण पाठक	1928
11	पांडवो का बाल्यकाल	" "	1933

12	अभिमन्यु वध	रामचन्द्र शुक्ल 'सरस'	1932
13	श्रीकृष्ण वचनामृत	जगन्नाथ शर्मा	1933
14	विरहिणी व्रजागना	माइकेल मधुसूदन दत्त	1933
15	पांडव यशेन्द्र चन्द्रिका	स्वरूप दास	1933
16	व्रजरज	रायकृष्णदास	1936
17	मधुवन	आनन्दकुमार	1936

कमलाप्रसाद कृत "अभिमन्यु का आत्म बलिदान' काव्य में वीर एवं करुण रस की सुन्दर झाँकियाँ मिलती हैं। यह सामान्य कोटि का काव्य है। भाषा सहज, सरस और प्रसाद गुण युक्त है। मैथिलीशरण गुप्त कृत 'वक संहार" में राक्षस वक के संहार की कथा वर्णित है। भीमसेन की वीरता का आख्यान ओजस्वी रूप में अंकित है। यह एक सरस और श्रेष्ठ काव्य कृति है। श्यामलाल पाठक कृत "कंस वध" एक सामान्य कोटि का खण्डकाव्य है। इसमें कृष्ण के जन्म से कंस के वध तक की कथा सहज सरल भाषा में वर्णित है। 'कृष्ण जन्मोत्सव" नामक लघु काव्य में देवी प्रसाद प्रीतम के अन्तर की अगाध कृष्ण भक्ति के दर्शन होते हैं। कवि ने स्वयं लिखा है कि इस काव्य की रचना उन्होंने अपनी व्रजयात्रा में की थी

> है धन्य जन जो "प्रीतम" जिन दिव्य दृष्टि दिखाई।
> लीला ललित ये लखकर औरों को फिर दिखाई।
> उन्नीस सौ तिरेसठ सम्वत प्रभावशाली।
> व्रज यात्रा समय में विरची कथा निराली।
> ये कृष्ण जन्म उत्सव जो सुने सुनावे।
> भगवत कृपालुता से चारों पदार्थ पावें॥ [1]

इस काव्य में कवि ने कृष्ण को पूर्ण ब्रह्म माना है और उनके जन्म के समय से लेकर नन्दगृह में पहुँचने और उत्सव आदि का भक्तिभाव पूर्ण चित्रण किया है। इसकी कथावस्तु सुगठित और शैली व्यंजक है। इसमें कृष्ण कथा के अनेक सजीव चित्र अंकित हैं।

गीतशैली में नत्थाराम शर्मा गौड़ ने सगीत महाभारत की रचना की है। इसमें सम्पूर्ण महाभारत को लोकगीतों में उपस्थित करने का सुन्दर प्रयास किया गया है। लाला रघुनन्दन मिश्र कृत 'अभिमन्यु वध' नामक काव्य में अभिमन्यु वध की कथा का वर्णन है। इसमें वीर और करुण रस का परिपाक मिलता है। जगदीशनारायण तिवारी कृत "दुर्योधन-वध" एक सामान्य कोटि की कृति है। मैथिलीशरण गुप्त कृत "सैरंध्री' में द्यूत-क्रीड़ा में हारने के पश्चात् द्रौपदी के,

1 कृष्ण जन्मोत्सव प्रीतम पृष्ठ 143-44

राजा विराट् के यहाँ सैरन्ध्री छद्म नाम से रहने और कीचक वध की कथा का आख्यान किया गया है। गुप्तजी का उपदेशात्मक रूप इसमें स्थान-स्थान पर मुखर हुआ है और अन्त में कवि ने सत्य की विजय और असत्य की पराजय का उद्देश्य रखा है। इस काव्य की भाषा खड़ी बोली है, कीचक के सन्दर्भ में किंचित वीर रस के वर्णन भी मिलते हैं। पं रामनारायण पाठक कृत "पाण्डव जन्म" और पाण्डवों का बाल्यकाल" शीर्षक काव्यों में एतद् विषयक कथाएँ वर्णित हैं।

रामचन्द्र शुक्ल सरस कृत "अभिमन्यु वध" में एतद् विषयक घटना का मार्मिक अंकन मिलता है। अभिमन्यु के शौर्य और अभिमन्यु के प्रति द्रोणाचार्य के अन्तर्द्वन्द्व के चित्रण इसमें अत्यन्त भाव प्रवण बन पड़े हैं।

जगन्नाथ वर्मा कृत 'श्रीकृष्ण वचनामृत" में गीता का सरल पद्यानुवाद है। बाबू मैथिलीशरण गुप्त ने "मधुप" उपनाम से बंगला कवि माइकेल मधुसूदन दत्त कृत 'विरहिणी व्रजांगना का सुन्दर अनुवाद किया है। यह एक सफल सरस और अच्छा पद्यानुवाद है। 'पाण्डवयशेन्दु चन्द्रिका (स्वरूपदास कृत) मूलतः अलंकार और पिंगल ग्रन्थ है। "व्रजरज" (राय कृष्णदास कृत) में कवि के समय समय पर रचे गये व्रजभाषा के पदों का संग्रह मिलता है। इसमें पद दोहे, भजन, कवित्त आदि छन्दों का प्रयोग मिलता है। यह एक अलंकृत और सुन्दर भक्ति परक काव्य है इस युग में रचे गये काव्यों में कुछ काव्य उत्कृष्ट कोटि के हैं और कुछ काव्य सामान्य कोटि के हैं। 'अभिमन्यु का आत्म बलिदान", 'बकसंहार' "विरहिणी व्रजांगना" श्रीकृष्ण वचनामृत और मधुवन" इस युग के श्रेष्ठ कृष्ण काव्य हैं। मधुवन काव्य में कृष्ण से सम्बन्धित केवल पाँच कविताएँ हैं यह काव्य हमें रसखान का स्मरण करा देता है। हिन्दी का प्रगतिवादी आंदोलन द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद अथवा मार्क्सवाद दर्शन से प्रभावित है। छायावादोत्तर युग में अनेक कृष्ण काव्य लिखे गये। इनमें प्रगतिवादी काव्य के अनेक तत्व मिलते हैं भक्तिकालीन परिवेश प्रगतिशील भूमिका पर प्रतिष्ठित हुआ। कृष्ण अवतार नहीं रहे, उन्हें कवियों ने राष्ट्रनायक, प्रजापालक और धर्मरक्षक बनाया। राधा कृष्ण की ऐकान्तिक प्रेमिका होते हुए भी आधुनिक युगीन नारी का रूप प्राप्त कर लेती है। दिनकर का कुरुक्षेत्र शुद्ध प्रगतिवादी काव्यधारा की सशक्त कृति है। उसमें कवि की मान्यता है कि समाज की सुख एवं शांति, न्याय और धन के समान वितरण से ही सम्भव है। कृष्ण चरित मानस" में कृष्ण राष्ट्र नायक राष्ट्र उद्धारक नेता के रूप में अवतरित हुए हैं। 'कृष्णायन' में कृष्ण का व्यक्तित्व विराट रूप में व्यक्त हुआ है। उन्हें राष्ट्रनायक एवं गोपी वल्लभ दोनों ही बताया गया है।

काव्य की आत्म सल्पात्मक गति नाटय टोली अत्यन्त मनोमय बन पडी है। दुर्गा प्रद्युम्न रचित "कृष्ण चरित मानस" (1941 ई) महाकाव्य सात काण्डों में विभक्त अवधी भाषा का एक महाकाव्य है। इसमे और कृष्णायन मे दोहा चौपाई व सोरठा छन्दो को गृहीत किया गया है। श्रीमद् भागवत, महाभारत, सूर-सागर आदि के सूत्रो को लेकर इस महाकाव्य म कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन वृत्त का उपस्थापन किया गया है और कृष्ण को आदर्श महापुरुष असुर निकन्दन, गोपीजन वल्लभ, प्रजारंजक, वीर योद्धा, युद्ध सचालक सुन्दर नेता, आदि रूपो मे चित्रित किया गया है। कवि की इतिवृत्तात्मक और वस्तु परिगणनात्मक शैली के कारण इस काव्य मे पर्याप्त शुष्कता और रूक्षता आ गई। भाषा भी प्रौढ और परिमार्जित नही है। अवधी के इस काव्य मे स्थल स्थल पर ब्रज और खडी बोली के प्रयोग भी खूब मिलते हैं।

प द्वारका प्रसाद मिश्र द्वारा रचित 'कृष्णायन" (1945 ई) आधुनिक युगीन कृष्ण काव्य परम्परा का सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। सूर आदि कवियो ने कृष्ण के जीवन के सभी पक्षो को नही लिया था। कृष्णायन' मे मिश्रजी ने कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन की महनीय और भव्य झाँकी प्रस्तुत की है। गरिमामयी, भाषा उदात्त भाव अभिव्यजना उदात्त चरित्राकन और अनुपम कथा शिल्प आदि से सम्बधित यह महाकाव्य हिन्दी की एक वैभववन्त कृति है। मिश्रजी ने तुलसी के मानस के आदर्श पर इस महाकाव्य की कथा को सप्त काण्डो म विभक्त किया है। मानस की ही भाति इसमे दोहा-चौपाई (कही सोरठा भी) का विन्यास किया गया है। इसकी भी भाषा अवधी है। सामग्री के चयन सन्निवेश, विभिन्न काण्डो के भीतर का कथा भाग आदि से पाठक को तुरन्त मानस और उसके रचयिता की याद आ जाती है। प्रथम (अवतरण) काण्ड मे कृष्ण के पूर्व की मथुरा की स्थितियां, असुरो के अत्याचारो के साथ ही अत्याचार निवारणार्थ कृष्ण जन्म उनकी बाललीलाओ और अलौकिक कार्यो के वर्णन मे सूरदास का प्रभाव द्रष्टव्य है। द्वितीय (मथुरा) काण्ड का मुख्य विषय से सम्बन्ध वसुदेव देवकी और यदुवशियो का उद्धार है। द्वारिका के सौन्दर्य का भी बडा सुन्दर वर्णन किया गया है। युवा कृष्ण के 'रुक्मणी-परिणय' जामवन्त कन्या का परिणय' स्यमतक मणि की कथा' कालिन्दी कृष्ण विवाह, सुभद्राहरण' आदि कितने ही कथानक इस काण्ड को माला मे मोतियो की भाँति पिरोये मिलते है।

चतुर्थ (पूजा) काण्ड की कथा पाण्डवो से सम्बद्ध है। पाण्डवो के राजसूय यज्ञ म सर्वपूज्य होने के कारण कृष्ण की प्रथम पूजा की गई है। शिशुपाल की आपत्ति पर कृष्ण ने उसका वध किया, जरासध वध भी हुआ कृष्ण द्वारका लौट आये इसी कारण इस काण्ड का नाम पूजा काण्ड रखा गया है। इसी काण्ड म युधिष्ठिर और दुर्योधन की द्यूतक्रीडा, शकुनि की कुटिलता, पाण्डवो का सब कुछ

गँवाना, द्रोपदी चीरहरण व उसकी लाज की रक्षा का वर्णन भी अत्यन्त चित्ताकर्षक है। पंचम (गीता) काण्ड में दुर्योधन और अर्जुन का एक साथ कृष्ण से युद्ध में सहायता के लिये प्रार्थना करने, कृष्ण के दूतकर्म कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण का मेला पाण्डव कौरव दोनों पक्षों का कुरुक्षेत्र में आने की कथा और गीता के सम्पूर्ण सुन्दर अनुवाद इस काण्ड के आकर्षण के केन्द्र हैं। षष्ठ (जय) काण्ड में महाभारत के सम्पूर्ण युद्ध का वर्णन है। इसमें भी आदि से अन्त तक कृष्ण का महाकाव्यत्व ही व्याप्त है। सप्तम (आरोहण) काण्ड में युधिष्ठिर का विजयी होकर नगर में प्रवेश, युधिष्ठिर को आत्म ग्लानि, कृष्ण का हस्तिनापुर से द्वारिका जाना व० के लोगों की विलास प्रियता और कलह देखकर स्वर्गारोहण का निश्चय युधिष्ठिर के 'अश्वमेध" का वर्णन मैत्रेय को उपदेश करते करते कृष्ण का योग द्वारा सदा के लिये आँखें मूंद लेना प्रमुख कथा सूत्र है।

'कृष्णायन" का कथा फलक अत्यन्त विस्तृत है। कवि ने इसमें कथा के सूत्रों का अत्यन्त कौशल के साथ सुनियोजन किया है। कवि ने कृष्ण के बालगोपाल मथुराधिपति, द्वारकाधीश और महाभारतीय चरित्रों का अपूर्व सामंजस्य प्रस्तुत किया है जो सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में अलभ्य है। कृष्ण द्वारा भारत में सुदृढ़ केन्द्रीय शासन की स्थापना की परिकल्पना, भीष्म का राजनीतिक उपदेश, मैत्रेय वाला जीवन दर्शन, विजयश्री के पश्चात् युधिष्ठिर में आत्मग्लानि व वैराग्य उत्पन्न होना राजसूय यज्ञ में कृष्ण की पूजा आदि प्रसंगों में कवि ने अपनी भव्य कल्पना शक्ति द्वारा मौलिक उद्भावनाएँ उपस्थित की हैं।

कृष्णायन के प्राक्कथन में देशरत्न डॉ राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा है कि श्री कृष्णचन्द्र की जीवन कथा इस प्रकार एकत्र कहीं नहीं मिलती। वह आंशिक रूप में संस्कृत साहित्य में बिखरी पड़ी है। महाभारत और श्रीमद् भागवत दो मुख्य ग्रंथ हैं, जिनमें कृष्ण चरित का अधिक से अधिक मसाला मिलता है। पर इन दोनों में भी इसके हर पहलु पर न तो समान प्रकाश ही डाला गया है और न दोनों एक उद्देश्य अथवा दृष्टि से लिखे गये हैं। जब संस्कृत साहित्य में ही इस पूर्णवतार की पूर्ण कथा एकत्र नहीं मिलती तो हिन्दी साहित्य में उसका अभाव आश्चर्य जनक नहीं है। प्रस्तुत ग्रन्थ में श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र ने हिन्दी साहित्य की इस कमी को दूर करने का अत्यन्त विशाद और सफल प्रयत्न किया है। कृष्णायन में जन्म से स्वर्गारोहण तक की सभी घटनाओं का क्रमबद्ध करके दर्शाया गया है। यह स्तुत्य प्रयत्न प्रबंध काव्य द्वारा ही सफल हो सकता था। मिश्रजी ने शील सौन्दर्य और शक्ति तत्वों के चित्रण में असाधारण प्रतिभा प्रदर्शित की है, यदि बच्चे के प्रति माता और मातृ सदृश्य गोपियों के मृदुल प्रेम के स्निग्ध स्पर्श का हम एक स्थान पर अनुभव कर सकते हैं तो दूसरे स्थान पर निकट विकराल युद्ध का भयावह प्रदर्शन भी देखने को मिलता है, यदि वसंत का सुन्दर सुखद और मनोरंजक वर्णन मिलता है, तो अत्यन्त भयानक जंगल से होकर भी

हमे गुजरना पडता है, गीता के ज्ञान के साथ-साथ चर्वाक की चटपटी फिलासफी और उस मिस्र के आधुनिक प्रचलित भौतिकवाद का भी दिग्दर्शन हो जाता है। पर सर्वोपरि कृष्णायन कृष्ण चरित्र को आज के जीवन और आज की समस्याओ को सामने रखकर चित्रित करता है। उसमे हम पीडित प्रथा द्वारा विप्लव का चित्र मिलता है। युद्ध से बचने के असफल प्रयत्न और बाध्य होकर धर्म स्थापन के लिए उसम प्रवृत्त होने की मजबूरी और उसके अन्त म जीवन की समस्याओ को हल करने म युद्ध की असफलता और असमर्थता का प्रमाण मिलता है। भगवत भक्तो को श्रीकृष्ण चन्द्र की अनेक झाकियाँ मिलती हैं और देशभक्तो को अखण्ड भारत का दर्शन मिलता है। हमारी सभ्यता और संस्कृति मे आस्था रखने वाले को प्रोत्साहन मिलता है और कविता प्रेमियो को रसास्वादन। यह ग्रन्थ प्रवर्तक होने वाला राम चरित मानस की भाँति घर घर मे प्रवेश करने की शक्ति रखता है।[1]

नारी पात्रो मे राधा की प्रणयाभिव्यक्ति का अत्यन्त सात्त्विक रूप, प्रेम निष्ठा तथा यशोदा का वात्सल्यमयी माँ का रूप दर्शाने मे कवि की लेखनी ने अपने अभिव्यक्ति कौशल का परिचय दिया है किन्तु कृष्णायन की प्रमुख विशेषता है कि इसमे कृष्ण चरित्र की समग्रता और उसकी सम्पूर्ण विशेषताओ की इसमे सूक्ष्म अभिव्यक्ति मिली है। हिन्दी का कोई भी कवि कृष्ण चरित के जन्म से मृत्यु तक के आख्यान और उनके शील, शक्ति और सौन्दर्य की पूर्णाभिव्यक्ति नही कर सका था। कृष्णायन म पहली बार सम्पूर्ण कृष्णचरित्र का सविस्तार आख्यान मिलता है। बालकृष्ण की लीलाओ गोपीजन वल्लभ की रति-केलियो कर्मयोगी कृष्ण का विराट रूप भी इसम अकित है। कथा, शिल्प, महनियता चरित्राकन का औदात्य विचार वैभव का विशाल आधार फलक, अनूठा काव्य सौन्दर्य भाषागत भगिमा उत्तम अलकृति रसप्रवणता तुलसीदास की अवधि का उत्तम आदर्श उसका माधुर्य प्रसाद और ओज राधाकृष्ण प्रसग की माधुरी, उसके काव्य म मुहावरे व कहावतो के सुष्ठ प्रयोग आदि कृष्णायन के वैभवयन्त्र आकर्षण के द्र है। मिश्रजी की भाषा सुसस्कृत प्रौढ और साहित्यिक बोधगम्य व सरल है मिश्रजी का अवधि भाषा पर असाधारण अधिकार है।

कृष्णायन की शैली समास प्रधान है, इसम शृगार वीर शात भयानक और रौद्र रस का अत्यन्त सुन्दर परिपाक मिलता है। इस काव्य मे वीर रस की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति मिलती है और इसी का कारण विभत्स, रौद्र और भयानक रसो की भी सुन्दर व्यजना हुई है। हिन्दी साहित्य का यह एक उत्तम कोटि का महाकाव्य है।

---

1 डॉ राजेन्द्र प्रसाद कृष्णायन, प्राक्कथन पृष्ठ 3

रामधारीसिंह दिनकर कृत कुरुक्षेत्र (1946) विचार प्रधान ओजपूर्ण काव्य है। इसमें कवि ने भारत के कथानक को प्रतिपाद्य बनाते हुए आधुनिक युग की एक ज्वलन्त समस्या युद्ध और शान्ति पर विचार किया है। युद्ध के ही संदर्भ में कवि ने अधिकार, कर्तव्य, शान्ति, क्रान्ति मानवता आदि पर भी विचार किया है। इस काव्य में कवि ने श्रीमद् भगवद् गीता के कर्मवाद को दृष्टिपथ में रख कर कठिन कर्म को अपरिहार्य माना है और उसका महत्व अंकित किया है। युधिष्ठिर को उसने अकर्मण्य और शिथिल चरित्र वाला कहा है। कवि का मूल उद्देश्य ही उसमें कौरवों का सात्त्विक और पाण्डवों का अधम और विकृत रूप में चित्रित करने का है। यह पूरा काव्य इतिवृत्तात्मक शैली में लिखा गया है।

कवि ने भीष्म पितामह द्वारा यह कहलवाया है कि जब अत्याचार अनाचार और जन उत्पीड़न बढ़ जाता है, जनता गरीबी व अभावों में जीवन व्यतीत करती है तब संघर्ष प्रबल होता है और युद्ध अनिवार्य हो जाता है। अन्य सामाजिक समस्याओं पर विचार अभिव्यक्त करते हुए भी युद्ध समस्या ही उसका मुख्य प्रतिपाद्य है। "कुरुक्षेत्र के कवि ने युद्ध के सामयिक रूप को न लेकर उसके चिरन्तन रूप को ही अपनाया है, युद्ध को उन्होंने मानवतावादी दृष्टि से देखा है, राजनैतिक या सैद्धान्तिक दृष्टि से नहीं। युद्ध जैसी एक विश्वजनीन समस्या को कुरुक्षेत्र में एक सुन्दर प्रबंध काव्य का रूप दिया है। इसकी रचना प्राचीन पृष्ठभूमि पर आधारित अवश्य है, पर साथ ही इसमें नवयुग के प्रश्नों और जीवन दर्शन को पर्याप्त स्थान मिला है। महाभारत के युधिष्ठिर और भीष्म जैसे पात्रों को कवि ने आज के युग की नवदृष्टि से देखा है।[1]

कवि का मानवीय दृष्टिकोण इस काव्य में चरम उत्कर्ष के साथ प्रस्फुटित हुआ है

"मानवता की राह रोककर पर्वत अड़े हुए हैं।
न्यायोचित सुख सुलभ नहीं जब तक मानव मानव को।
चैन कहाँ धरती पर तब तक, शांति कहाँ इस भव को॥[2]

'कुरुक्षेत्र में साहित्यिक खड़ी बोली का प्रयोग किया गया है। उसकी भाषा के स्वरूप निर्माण में सुन्दर शब्द चयन लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग, चित्रोपमता, लाक्षणिकता प्रसंगानुकूल कोमल एवं कठोर शब्दावली आदि का विशेष योगदान रहा है।'[3]

---

1 गोविन्दराम शर्मा हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, कुरुक्षेत्र, पृष्ठ
2 कुरुक्षेत्र दिनकर, पृ 103 (सप्तम सर्ग)
3 डा द्वारिकाप्रसाद गुप्त आधुनिक प्रतिनिधि हिन्दी महाकाव्य पृ 257

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि काव्य की विचार पृष्ठभूमि युद्ध के परिणाम से उत्पन्न भयंकर समस्याओं की ओर इंगित करती है और शांति स्थापना के प्रयास दूंढती है यह काव्य युद्ध समस्या का हल ढूंढने का प्रयत्न कर आधुनिक राजनीतिज्ञों की चेतना जागृत करने का प्रयास है। अतः इसे विचार प्रधान काव्य ही कहा जा सकता है।

"यह काव्य रामधारीसिंह दिनकर रचित सात सर्गों में विभाजित है। इसमें युधिष्ठिर की आत्मग्लानि, भीष्म का प्रबोध, अंतर्व्यथा का काव्योचित आकलन, राजनीति में शांति अशांति का उपयोग, ज्ञान वैराग्य कर्म का योग, मानवीय सिद्धान्त की नूतनता का आनन्द और प्रयोग एवं कोमल मानवीय भावों का सुन्दर चित्रण हुआ है। इसमें ओजपूर्ण भाषा और तीव्र संवेदना जगाने वाली शक्ति के दर्शन होते हैं किन्तु पारिभाषिक अर्थ में महाकाव्य का प्रबन्धात्मक कथानक के आधार पर अव्यवस्थित होना अनिवार्य है। इसमें न तो इस प्रकार का कोई कथानक है न नायक नायिका और सर्ग। केवल युद्ध दर्शन को सगबद्ध देखकर महाकाव्य कहना अनुचित ही होगा, इसे उच्च कोटि का खण्ड काव्य कह सकते हैं मुख्यतः विचार काव्य कहना ही उचित है।" [1]

हिन्दी में सन 1934-36 के आसपास से प्रगतिशील काव्यधारा का प्रारम्भ होने लगा है। मानव के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को दृष्टिपथ में रखते हुए प्रगतिवादियों ने नये समाज के निर्माण के लिए शोषित, दलितों और सर्वहारा लोगों को क्रांति के लिए आह्वाहित किया और वर्ग जाति तथा धर्म रहित समाज रचना के आधार की आवश्यकता पर बल दिया है। फलतः कवियों की संवेदना शोषित वर्गों के स्वर को मुखर करने में संलग्न हुई। उन्होंने कल्पना लोक से वास्तविक संसार की संघर्ष भूमि पर अपने काव्य का भव्य इमारत खड़ी की वह कविता शापितों का उद्धारक बना।

आधुनिक कृष्णकाव्य 1947–1970

क्र	कृति	कृतिकार	सन्
1	रुक्मिणी जन्म	मदनमोहन लाल शर्मा	1949
2	रुक्मिणी का कृष्णप्रेम	— —	1950
3	रुक्मिणी की सगाई	—„—	1950
4	रुक्मिणी का पत्रलेखन	—„—	1951
5	रुक्मिणी का गिरजापूजन	— ,—	1950
6	रुक्मिणी का मातृ स्नेह	—„—	1950

1 प्रतिपालसिंह बीसवीं शताब्दी पूर्वार्द्ध के महाकाव्य, पृ 56

7	रुक्मिणी का विवाह	—,,—	1958
8	स्याम सन्देसो	अमृतलाल चतुर्वेदी	1950
9	हिडिम्बा (हिडम्बा)	मैथिलीशरण गुप्त	1950
10	द्रोण	श्यामगोपाल रुद्र	1950
11	अगराज	आनन्दकुमार	1950
12	कर्ण	केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'	1951
13	युद्ध	मैथिलीशरण गुप्त	1952
14	जयभारत	—,—	1952
15	रश्मिरथी	रामधारीसिंह दिनकर'	1952
16	सावित्री	गौरीशंकर मिश्र	1953
17	शल्यवध	उग्रनारायण मिश्र	1954
18	शकुन्तला	भगवानदास शास्त्री	1954
19	पाञ्चाली	डॉ रागेय राघव	1955
20	अंधायुग	डॉ धर्मवीर भारती	1955
21	प्रयाण	गिरिजाशंकर गिरीश	1955
22	विदुलोपाख्यान	भगवतशरण चतुर्वेदी	1956
23	वीरांगना	माइकेल मधुसूदन दत्त (अनुवादक 'मधुप')	1956
24	चक्रव्यूह	कुवर नारायण	1956
25	मीरा	परमेश्वर द्विरेफ	1956
26	दमयन्ती	ताराचन्द्र हारीत	1957
27	सती सावित्री	श्री गोपाल क्षेत्रीय	1957
28	सेनापति कर्ण	लक्ष्मीनारायण मिश्र	1958
29	कच देवयानी	रामचन्द्र	1958
30	एकलव्य	डॉ रामकुमार वर्मा	1958
31	दानवीर कर्ण	गुरुपद्म समवाल	1959
32,	कनुप्रिया	धर्मवीर भारती	1959
33	देवयानी	वासुदेव	1960
34	अभियान	शशि भूषण	1960
35	सन्धि सन्देश	किंकर	1960
36	द्रौपदी	प नरेन्द्र शर्मा	1960
37	व्रजचन्द्र विनोद	किशोरचन्द्र कपूर किशोर	1962
38	गोपिका	सियाराम शरण गुप्त	1962
39	गुरु दक्षिणा	विनोदचन्द्र पाण्डेय	1962
40	पार्थेय कथा	उदयशंकर भट्ट	1[illegible]

41	प्रिय मिलन	नन्दकिशोर झा	1964
42	प्रवासी पाथ	नटवरलाल शाही	1964
43	कुबरी	रामनारायण अग्रवाल	1965
44	अज्ञातवास	सरयूप्रसाद त्रिपाठी	1965
45	जनगीता एवं नागरगीता	हरिवंशराय 'बच्चन'	1966
46	योगनिद्रा	कृष्णान दन पीयूष	1967
47	प्राचीना	उमाशंकर जोशी	1968
	(अनुवादक भालाभाई पटेल, और रघुवीर चौधरी)		
48	दवकी	उमाकांत मालवीय	1970

प मदनमोहन शर्मा कृत "रुक्मिणी जन्म" (1949 ई) रुक्मिणी का कृष्ण प्रेम (1950 ई) रुक्मिणी की सगाई (1950 ई) रुक्मणी का पत्रलेखन (1951 ई) रुक्मिणी का गिरजा पूजन 1950 रुक्मिणी का मातृ प्रेम (1950 ई) रुक्मिणी विवाह (1958ई) काव्यो म रुक्मिणी क जन्म स लेकर श्रीकृष्ण क साथ विवाह तक की सम्पूर्ण कथा को प्रस्तुत किया गया है ये काव्य मूलत इतिवृत्त प्रधान और कथात्मक है। इनम रुक्मिणी और कृष्ण के माध्यम स कृष्ण भक्ति का ही प्रतिपादन किया गया है। इन काव्यो म शृगार रस की सहज सुदर व्यजना मिलती है। युद्ध प्रसग मे रस भी मिलता है और इन काव्यो का पयवसान शात रस म हुआ है।

'श्याम सदेश' (1950 ई) रचयिता अमृतलाल चतुर्वेदी यशोदा की मार्मिक वदना का वणन बडा मार्मिक बन पडा है। कृष्ण की सुधी मात्र स यशोदा क आचल से दूध चून लगता है।

मथिलीशरण गुप्त न 'जयभारत' (1952 ई) म महाभारत के आदि पर्व स महाप्रस्थान पर्व की वृहद् कथा को सतालिस खण्डो में प्रस्तुत किया है। वस्तुत गुप्तजी का उद्देश्य महाभारत की सम्पूर्ण कथा को नवीन रूप मे खडी बोली म उपस्थित करना प्रधान होता है। हम कह सकत है कि यह प्रबध काव्य के रूप म सुविन्यस्त न होकर भी आख्यानो और कथा प्रसगो के रूप म सकलित है इसके सतालिस शीर्षक घटनाओ द्वारा व्यक्तियो और स्थानो के नाम पर है। इसम युधिष्ठिर नायक है, कवि न भारतीय सस्कृति का यशोगान और अनेक महाभारतीय पात्रो क उदात्त चरित्र अकन को दृष्टिपथ म रखा है। धर्म सस्थापना की बात इस का केन्द्रीय बिन्दु है। महाभारत की विशाल कथा को जयभारत मे गुप्तजी न महाकाव्योचित गरिमा के साथ उपस्थित करके अपनी प्रबध क्षमता का परिचय दिया है। यह सही है कि इसमे गुप्तजी की शली का दोष, इतिवृत्तात्मकता प्राय विद्यमान है। कथा वस्तु भी शिथिल है। महाभारत के पौराणिक और अति मानवीय आख्यानों को कवि ने अपनी कल्पना, कला और आधुनिक युग की भावना के अधीन ग्राह्य बनाकर प्रस्तुत किया है।

"रश्मिरथी' (1952 ई) कर्ण को केन्द्र मे रखकर दिनकरजी का श्रेष्ठ काव्य है। सात सर्गों की इस कथा म कर्ण के दया दानधर्म पालन, वीरता ओज विश्वास, अटूट मैत्री, त्याग बलिदान को आकर्षण का केन्द्र बनाया गया है, सामाजिक जीवन की अनेक दुर्बलताओ और व्यक्तिक जीवन की अनेक विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है, इसमे कर्ण और कुन्ती सवाद अत्यन्त करुणा प्लावित बन पड़े है सवादो की मनोवैज्ञानिकता, दलितो और उपक्षितो के उद्धार आरम्भ्यन्त, सघप, दान, त्याग, बलिदान आदि की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट काव्य बन पड़ा है। दलितो, और उपेक्षितो की समस्या जाति पाति की समस्या विश्व बन्धुत्व और मैत्री की समस्या, रूढिवादी समाज के प्रति विद्रोह, युद्ध, शान्ति और मानवतावादी दृष्टिकोण इस काव्य के आकर्षण बिन्दु हैं।

रागेयराघव कृत "पांचाली" (1955 ई) द्रोपदी के जीवन पर आधारित काव्य है। जयद्रथ की द्रौपदी से प्रणय याचना, द्रौपदी की प्रताडना द्रौपदीहरण, आदि सूत्रो के द्वारा कथा वस्तु का सघटन किया गया है। रागेय राघव की प्रगतिशील दृष्टि चेतना का यह ज्वलन्त उदाहरण है।

धर्मवीर भारती कृत "अन्धायुग" (1955 ई) भी महाभारत के अन्तिम अध्याय से सम्बद्ध काव्य नाटक है। पाँच अकों मे विभाजित यह दृश्य काव्य सर्वथा अभिनेय है। कवि ने इसम महाभारत युद्धोपरान्त कि विषमताओ का आधुनिक युग के परिपक्ष्य मे बड़े सुन्दर रूप मे उपस्थित किया है। इसमे प्राचीन नाट्य-परम्परा, लोक नाट्य परम्परा, काव्य आदि का उत्तम समन्वित रूप प्रस्तुत किया है। महाभारत की परिस्थितियो पात्रो और घटनाओ के प्रतीक से कवि ने वर्तमान युग की कुण्ठा, अनास्था, त्रासदी, घुटन, मर्यादा हीनता और शकाओ पर गहन प्रहा किया है। युद्ध के बाद की स्थितियो का भारती ने बड़ा जीवन्त चित्रण किया है। हिन्दी साहित्य मे यह एक अभिनव प्रयोग है। काव्य और नाटक का इसमे अद्भुत समन्वय मिलता है।

"प्रयाण" मे (1955 ई गिरिजाशकर गिरीश कृत) सुदामा और कृष्ण का आख्यान वर्णित है। कुवर नारायण द्वारा रचित "चक्रव्यूह" (1956 ई) म आधुनिक युग की समस्याओ क फलक पर महाभारत की चक्रव्यूह विषयक कथा वर्णित है।

डॉ धर्मवीर भारती द्वारा रचित कनुप्रिया (1959 ई) म राधा के ऐकान्तिक प्रेम का आधुनिक युगीन मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया गया है। राधा के जीवन म प्रेम और युद्ध का द्वन्द्व प्रस्तुत कर उस एक अभिनय रूप मे उपस्थित किया गया है। पूर्वानुराग मञ्जरी, परिणय दृष्टि सकल्प, इतिहास और समापन शीर्षको म कृष्ण की जन्म-जन्म की लीला सहचरी राधा की अन्तर्व्यथा की अभिव्यक्ति दी गई है। वह कृष्ण की महा शक्ति है।

राधा के हृदयोद्गारों को कवि ने आधुनिक और आध्यात्मिक धरातलों पर सप्रेषित कर उसे उदात्त रूप प्रदान किया है। शृंगार की अनूठी भंगिमाएँ इसमें पदे पदे मिलती हैं।

नरेन्द्रशर्मा की "द्रौपदी" (1960 ई०) उच्च कोटि का प्रतीकात्मक और विचारपूर्ण खण्डकाव्य है। महाभारत की कथा में ज्योति शिखा-सी जलती होमकुमारी द्रौपदी को केन्द्र बनाकर कवि ने आधुनिक देशकाल और मनःस्थिति के अनुरूप इस काव्य की सर्जना की है। इसमें द्रौपदी जीवन शक्ति की प्रतीक है। पाँचों पाण्डवों पाँच महातत्त्व के प्रतीक और द्रौपदी प्रज्ञा और चैतन्य ज्वाला है। पुरातन होने पर भी इसकी भूमि और पात्र सनातन है। स्रष्टा कवि की प्रतिभा से मंडित होकर इसके सभी पात्र सर्वथा नूतन तेज से दीप्त हैं। द्रौपदी रूपी जीवन शक्ति पाँच महातत्त्वों से संश्लिष्ट करती है उनमें चैतन्य की ज्वाला भरती है। शत् शत् कामना रूप दुर्योधन और दुःशासन के पशुबल से संत्रस्त है। नग्न वासना की प्रेरणा से वह निर्वसना की जाती है शूरवीर पाण्डव देखते रह जाते हैं उसके अपमान के फलस्वरूप कुरुक्षेत्र का धर्मयुद्ध होता है उसके परिणामस्वरूप विश्व कल्याण पशुबलि की आहुति दी जाती है। नरेन्द्र शर्मा ने प्रतीक पद्धति, नूतन विचारणाओं और सशक्त अभिव्यक्ति के द्वारा इसे आधुनिक युग के एक श्रेष्ठ काव्य के रूप में प्रस्तुत किया है।

किशोर चन्द कपूर द्वारा विरचित "कृष्ण चन्द विनोद" (1962 ई०) कृष्ण जीवन के विस्तृत आधार पर सम्स्थित है। सियारामशरण कृत 'गोपिका" (1962 ई०) में गोकुल से द्वारावती जाने वाले श्रीकृष्ण के विरह में गोपियाँ विशेष रूप से इन्दुमती की कथा कही गई है। सत्रह सर्गों वाली इस कथा में कृष्ण विषयक अनेक आख्यानों का गुम्फन किया गया है। नन्द किशोर झा कृत "प्रियमिलन" (1964 ई०) इक्कीस सर्गों वाला महाकाव्य है।

नव सर्गों वाले कुबरी (1956 रामनारायण अग्रवाल कृत) काव्य में कुबरी के सम्पूर्ण चरित्र को बड़े ही मनोवैज्ञानिक और भव्य रूप में उपस्थित किया गया है। कृष्णानन्द पीयूष के काव्य 'योगनिद्रा' (1967 ई०) में द्वापर युग की विदाई और कृष्ण के अवसान की कथा मुक्त छन्द में बड़े बौद्धिक धरातल पर उपस्थित की गई है।

उमाकान्त मालवीय कृत देवकी (1970 ई०) में कृष्ण माता देवकी की कथा कही गयी है। कृष्ण चरित सम्बद्ध पात्रों में देवकी का चरित्र प्रायः उपेक्षित ही रह गया है। उमाकान्त मालवीय ने इसमें काव्य की इस उपेक्षिता भाग्य महान माता के वात्सल्य और त्याग की करुण गाथा का वर्णन किया है। देवकी यशोदा के भाग्य की सराहती है कि उसे वात्सल्य के आश्रय आलम्बन रूप में श्री कृष्ण मिले, किन्तु उसे दुःख है कि उसके वात्सल्य और आँचल के दूध का स्रोत ही नहीं रहा।

कंस के अत्याचार, अनेक पुत्रों के वध और कृष्ण के यशोदा के यहाँ चले जाने आदि को दृष्टिपथ में रखकर उमाकान्त मालवीय ने 'देवकी" की इस करुणा कलित कथा का सम्प्रथन किया है।

बीसवीं शताब्दी में (1900 से लेकर आज तक) हिन्दी में कृष्ण विषयक दो सौ से अधिक काव्य लिखे गये हैं, इनमें अधिकांश सामान्य कोटि के काव्य हैं, साथ ही अनेक सुसंगठित काव्यों की भी सर्जना हुई है। इनमें जयद्रथ वध, प्रियप्रवास, भ्रमर दूत, उद्धव शतक कंस वध, विरहिणी व्रजांगना, द्वापर, कृष्णायन, कुरुक्षेत्र, रुक्मिणी मंगल (सात खण्ड) जयभारत, अन्धायुग, मीरा, कनुप्रिया, द्रोपदी, गोपिका, देवकी जैसे श्रेष्ठ काव्य उल्लेखनीय हैं। 1900 ई० के पूर्व के कृष्ण काव्यों में रीतिकालिन कवियों ने श्री कृष्ण को प्राय उद्दाम शृंगारी रूप में चित्रित किया था। आधुनिक युग में कृष्ण केवल गोपी जन वल्लभ न रहकर राष्ट्रीय नेता और लोक नायक रूप में प्रतिष्ठित हुए। राधा आधुनिक युग चेतना की संवाहिका नारी बन गयी। प्राचीन कृष्ण काव्यों की अलौकिक घटनाओं को विज्ञान के प्रभाव से बुद्धि और तर्क के परिप्रेक्ष्य में युगीन कसौटी पर कसा गया। कृष्ण ईश्वरावतार और परमब्रह्म नहीं वरन् महान शक्तिशाली और अद्भुत बुद्धि सम्पन्न महामानव के रूप में प्रतिष्ठित किये गये। कृष्ण जीवन की अलौकिकता को बौद्धिक रूप में लौकिक बताकर लोक मंगलकारी रूप में प्रस्तुत किया गया। इन काव्यों की भाषा ब्रजी के स्थानपर खड़ी बोली बनी। अनेक काव्यों में दोहा, चौपाई, कवित्त और संस्कृत के वर्णित वृत्तों का प्रयोग किया गया, साथ ही आधुनिक कृष्ण काव्यों में भाषा को छन्दों के बन्धन से मुक्त भी किया गया। अनेक कृष्ण काव्य प्रगीत शैली में भी लिखे गये। राष्ट्रीय चेतना का स्वर भी आधुनिक कृष्ण काव्य में मुखरित हुआ है।

1900 ई० के बाद की कृष्ण काव्य परम्परा गुप्तजी के जयद्रथ वध से प्रारम्भ होती है। गुप्तजी ने कृष्ण को भगवान, हरि विष्णु, अच्युत, रमापति भी माना है। साथ ही परम आख्यान में तर्क एवं बुद्धि तत्वों के संयोग से नये युग का श्री गणेश भी किया है।

बाबू जगन्नाथ दास 'रत्नाकर" आधुनिक युगीन कृष्ण काव्य परम्परा की महार्घ मणि है। इसमें प्राचीन परम्परा का ग्रन्थ होने पर भी कवि ने इसमें युगीन चेतना को दृष्टिपथ में रखा है, भक्तिकालिन सरसता आत्मलिनता रीतिकालीन शृंगारिकता और आधुनिक युगीन तर्कशीलता के साथ ही उत्कृष्ट भाषा अलकृत पदावली और वैचित्र्य प्रभृति आकर्षण सूत्रों के कारण ब्रज भाषा काव्यों में उद्धव-शतक का अप्रतिम स्थान है। सत्यनारायण कविरत्न" का भ्रमरदूत भी इसी कड़ी का सशक्त मधुवेष्ठित और श्रेष्ठ कृति है। इसमें आधुनिक युगानुरूप राधा को लोक सेविका और यशोदा को राष्ट्रमाता रूप में अंकित किया गया है।

प द्वारिकाप्रसाद मिश्र कृत "कृष्णायन" आधुनिक युग व तुलसी की परम्परा का श्रेष्ठ कार्थि का महाकाव्य है। इसम कृष्ण क ब्रज, मथुरा, द्वारका, महाभारत आदि स सम्बद्ध सम्पूण जीवन चरित को अत्यन्त विषद और भव्य रूप मे अंकित किया गया है। भागवत पुराण, महाभारत, सूर आदि न कृष्ण को कृष्णायन ने धर्म सस्थापक, असुर सहारक, राष्ट्रनायक असाधारण बुद्धि सम्पन्न आदि रूपो मे चित्रित किया गया है। भाषा शली भाव, अभिव्यजना आदि की गरिमा उदात्त विचार अभिव्य जना कौशल आदि दृष्टियो स यह हिन्दी साहित्य का एक श्रेष्ठ महाकाव्य बन पडा है।

धमवीर भारती की 'कनुप्रिया' अपन सूक्ष्म भाव बोध और आधुनिकता के के लिय ख्यात है।

सक्षेप म हम कह सकते हैं कि हिन्दी कृष्णकाव्य अत्य न समृद्ध है इसकी समृद्धि म वैष्णव भक्तो से लेकर आज तक के कवियो ने अपने अन्त क सर्वोत्तम को देकर समृद्ध बनाया है। यह सहज धारा विभिन्न रूप धारण कर हिन्दी साहित्य म निरन्तर प्रवाहमान रही है। हिन्दू भक्त कवियो क साथ ही अनेक मुसलमान कवियो ने भी इस धारा का अपने अन्त की उदारता का परिचय देते हुए समृद्ध बनान म अपना महत्व योगदान दिया है।

बडे प्राचीनकाल से आज तक भारतीय जन-जीवन और साहित्य म कृष्ण के लौकिक तथा अलौकिक दोनो रूप समानान्तर स्थिति म विद्यमान रहे हैं। महाभारत, जातक कथाओ, जन आगम ग्रथो गाथा सप्तशती प्रभृति सस्कृत प्राकृत के प्राचीन ग्र थो मे श्रीकृष्ण का लोक चरित और लौकिक श्रृ गारी रूप ही अभिव्यक्त हुआ। श्रीमद् भगवद्गीता हरिवश, भागवत, पद्म, वामन वायु कूर्म ब्रह्मवैवर्त, शिव, विष्णु पुराणो म कृष्ण के अवतारी रूप का बार-बार उल्लेख मिलता है। कृष्ण की अलौकिक लोक लीलाओ का इनमे बडा ही मनोमय रूप उपलब्ध है।

नारद पाचरात्र जैसे सस्कृत ग्र थो म भी उनके अवतारी रूप और अलौकिक लीलाओ का वणन हुआ है। भास के नाटको और शिशुपाल वध, वेणीसहार, कवीन्द्र वचन समुच्चय, गीतगोवि द, सदुक्तिकर्णामृत आदि म कृष्ण जीवन के कार्यों के बडे प्रभविष्णु वणन मिलते ह। माधुय विग्रह भक्त रक्षक-रजक, ब्रज रजक, असुर निकन्दन बाल गोपाल आदि रूपो मे उनकी लौकिक अलौकिक लीलाओ के सैकडो आख्यान मिलते हैं।

श्री कृष्ण चरित को लोकव्यापी बनाने मे कृष्ण भक्ति के विविध सम्प्रदायों का सर्वाधिक योग है। सभवत सोलहवी शताब्दी म ही उत्तर भारत म कृष्ण भक्ति का प्रचार करने वाले सम्प्रदायो का सगठन हो चुका, उसका केन्द्र मथुरा, वृन्दावन हुआ। इन भक्त सम्प्रदायो का सम्बन्ध निम्बार्क मध्व, विष्णु स्वामी से जाता है। वल्लभाचाय का पुष्टिमाग चैतन्य का गौडीय, हितहरीवश का

राधावल्लभी तथा हरिदास का सखी या टट्टी सम्प्रदाय सोलहवीं शताब्दी के प्रमुख कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय हैं। भक्ति और दर्शन की इसी पावन पीठिका पर हिंदी में कृष्ण भक्ति साहित्य का अविर्भाव हुआ। भक्तों ने सम्पूर्ण देश को कृष्ण भक्ति सुधा से आप्यायित और अभिषिक्त किया। भक्ति युगीन हिंदी कृष्ण काव्य भक्ति भाव की पवित्रता और उदात्तता से परिपूर्ण है।

रीतिकाल में कवियों ने अपनी कविताओं के बहाने से "राधा-कन्हाई" का 'सुमिरन' किया। रीतिकाल के बहुत से कवियों ने इसी बहाने से अपने अन्त के शृंगारी भावों को खुलकर अभिव्यक्त भी किया। उन्होंने अपने आश्रयदाताओं की काम वासना को सतृप्त करने के लिए इसी राधा-कन्हाई के माध्यम से भांति भांति की शृंगारी कविताओं की रचना की।

भारतेन्दु युग में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने अपने अन्त की भक्ति प्रेम-भावना को अत्यन्त सरस और मनोमय रूप में व्यक्त किया। भारतेन्दु कृष्ण के परम् भक्त थे, वे स्वयं को कृष्ण का सखा और स्वामिनी 'राधा रानी का गुलाम' मानते थे, उन्होंने रीतिकालीन मांसलता और वासनात्मकता की भूमिकाओं से उठाकर कृष्ण साहित्य को पुनः प्रांजल प्रेम की दिव्य पीठिका पर प्रतिष्ठित किया और कृष्ण के अवतारी रूप को अक्षुण्ण भी रखा।

द्विवेदी युग के कवियों ने कृष्ण चरित का आख्यान करते हुए उनकी अलौकिक कथाओं को बौद्धिक रूप में लौकिक बनाने का प्रयास किया। विरहिणी के साथ ही राधा को लोक सेविका रूप में भी उपस्थित किया। यह रूप "प्रिय प्रवास" में व्यक्त हुआ है। प्रियप्रवास" के कृष्ण लोकोपकार निरत, लोकसेवक, लोकरंजक और राष्ट्रनायक के रूप में उपस्थित किये गये हैं।

बीसवीं शताब्दी में विगत पचासी वर्षों में लिखे गये कृष्ण काव्यों में ऐसे भी काव्य हैं जिनमें कृष्ण की अवतारी और अतिमानवीय लीलाओं का वर्णन मिलता है, किन्तु आधुनिक युग की श्रेष्ठ कोटि की कृष्ण विषयक रचनाओं में उनके अलौकिक अवतारी और अति मानवीय रूपों को तर्क संगत और बुद्धिगम्य मानवीय रूपों में प्रस्तुत किया गया है और कृष्ण को युग दृष्टा, राष्ट्र नेता तथा लोक नायक रूपों में प्रतिष्ठित किया गया।

अध्याय – दो

हिन्दी के मुसलमान कवियो का कृष्ण काव्य
(आदिकालीन एव भक्तिकालीन)

इस्लाम मे अल्लाह् को प्राय सगुण-निराकार और कही कही सगुण साकार के रूप म स्वीकार किया गया है। इस्लाम का तो मूर्ति पूजा और देवी देवतावाद से विरोध है। इस्लाम के एकेश्वरवाद म इसे अनुचित माना गया है। अल्लाह एक है, उसक अतिरिक्त कोई शक्ति नही है। सिद्वात इस्लाम मूर्ति पूजा (बुतपरस्ती) से नफरत करता है, लेकिन हिन्दुओ के साथ रहते रहते उसका यह उसूल भी नरमा गया है ऐसा प्रतीत होता है।

सन् 1911 ई की सयुक्त प्रात की 'सेन्सस रिपोट' से ज्ञात होता है कि बहुत से मुसलमान (चुरिहार) "कालका माई, के पूजक हैं और हिन्दुओं की तरह श्राद्व करते हैं। [1] पूव पजाब की मुस्लिम महिलाएँ बच्चो को चेचक निकलने पर "शीतला मदिर" मे शीतला देवी से प्राणरक्षा की प्राथना करती ह। [2] कच्छ (गुजरात) के मोमिन अपने को ' शिया" लिखते हैं, लेकिन वे मुसलमानो म नही मिलत व मासाहार नही करते, मस्जिद के नियम नही मानते और न रमजान का व्रत रखते हैं। "राम राम" कहकर उनमे अभिवादन की प्रथा है। वे "त्रिमूर्ति ' (ब्रह्मा विष्णु शिव) के उपासक हैं तथा अपन पीर इमामशाह को ब्रह्मा का अवतार मानते हैं। [3]

अवतारवाद की तरह इस्लाम मे एक कल्पना पगम्बरवाद की है। पगम्बर का आशय है – वह धर्माचाय जो मानव को ईश्वरीय सदेश देता है। इसे 'रसूल' भी कहते हैं। अरबी म पैगम्बर का पर्याय 'नबी है। नबी वह है जिसे जनसाधारण ईश्वर का दूत समझते हो। व्यापक अर्थों मे पगम्बर, रसूल या नबी मात्र

---

1 The Census of India Report — XV Pt 1 (United provinces P 141 (1911)
2 C I R (Punjab) pt 1 174 (1911)
3 C I. R (Bombay) pt. VII 59 (1911)

ईश्वर का सन्देश ही नहीं सुनाता प्रत्युत वह मनुष्य के आगे रखता है। वह अपने आदर्शों और आचरणों से ईश्वरीय सिद्धान्तों का व्यवहारिक पक्ष उपस्थित करता है।[1]

भारतीय पुनर्जन्मवाद को ईरान के भावुक कवियों ने स्वीकार किया है। रूमी के एक शेर में "रूह" कहती है कि मैं सात सौ-सत्तर शरीर बदलकर (अब) इस काया में बधी (आयी) हूँ। मैं सब्जे (घास) की भाँति सैंकड़ों दफा उगी और मिटी हूँ।[2] यह निरन्तर उगने मिटने का अविच्छिन्न क्रम ही पुनर्जन्म सिद्धान्त का मूल स्थापन है।

भक्ति के आराध्यों में कृष्ण सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। पुराणों में सर्वत्र उनका माहात्म्य मिलता है। वे बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न एवं लीला पुरुष हैं। वे महाभारत युद्ध के सूत्रधार, कर्मयोगी, पराक्रमी और महान राजनीतिज्ञ हैं। वे योगेश्वर, पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपों में महान हैं। वे गोपी वल्लभ, राधा माधव राजा, नेता, भोगी सभी रूपों में दिव्य हैं। कृष्ण ने भारतीय संस्कृति और साहित्य को बहुत प्रभावित किया है। संसार के इतिहास में इतना व्यापक व्यक्तित्व शायद ही कहीं प्राप्त हो।

वैदिक साहित्य में कृष्ण अवतारी नहीं हैं। ब्रह्म पुराण, पद्मपुराण, वायु पुराण विष्णु पुराण, वैवर्त पुराण आदि में कृष्ण के जीवन के किसी न किसी पक्ष का चित्रण अवश्य हुआ है। महाभारत काल में कृष्ण की अवतारी रूप में प्रतिष्ठा हुई। श्रीमद्भागवत वह मानसरोवर है जिससे कृष्ण भक्ति की ऐसी सरिता प्रवाहित हुई, जो प्रत्येक युग में साहित्य उद्यान को सिंचित करती हुई आधुनिक काल तक चली आई है।

भक्तों को उनका नित्य लीला बिहारी रूप अत्यन्त आकर्षक लगा है। भक्त कवि उन्हीं लीलाओं में रम गए हैं। हिन्दी के भक्ति काल में सर्वप्रथम 'कन्हावत' में ही कृष्ण के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक की कथाओं को महाकाव्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'कन्हावत' हिन्दी कृष्ण काव्य परम्परा का प्रथम प्रबन्ध काव्य है। यह सूर से भी पूर्व की रचना है। इस प्रबन्ध काव्य में राधा पति कृष्ण के रूप को बड़ी मोहकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। प्रेम के चितेरे जायसी को इसमें पर्याप्त अवकाश प्राप्त हुआ है। कन्हावत की कथा के सम्बन्ध में उन्होंने स्वयं लिखा है —[1]

हरि अनंत हरि कथा अनंता। गावहिं वेद, भागवत् संता॥
बिस्नु पदुम, सिउ, अगिन पुराना। भारथ सिरि हरिबंस बखाना॥

---

1 इस्लामी संस्कृति का मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में योगदान—जमील कुरैशी पृ 107
2 हफ्त सद हफ्ताद कालिब दीदा अम।

सुनेउ पढ़ेउ भागवत पुराना । पाएउ प्रेम पथ सधाना ॥
जोग, भोग, तप और सिगारन । धरम, करम, सत के वेवहारन ॥
ज्ञान-भगति रस-क्वल विगासा । भौर दूर सों आवहिं पासा ॥
सुमिरो वेद बिआस क चरना । जिन्ह हरि चरित सहसर बरना ॥
कहु के कथा लोक महं ऐसी । सरग नखत तराइन्ह जेती ॥

अइस प्रेम कहानी, दासरि जग मह नाहिं ।
तुरकी, अरबी, फारसी सब देखउ अब नाहिं ॥[1]

कृष्ण कथा का प्रभाव जायसी पर बहुत अधिक था । महाकाव्य पदमावत् मे भी उन्होने स्थान स्थान पर कृष्ण के विभिन्न प्रसगो का सदभ और रूपको के रूप मे प्रयोग किया है।

मलिक मुहम्मद जायसी कृत पदमावत मे कृष्ण कथा के सूत्र

मलिक मुहम्मद जायसी ने कृष्ण के जीवन चरित्र को केन्द्र बनाकर "पद्मावत" नामक महाकाव्य (मसनवी) की रचना की है। उनके पदमावत का गभीर अनुशीलन करने पर मिलता है कि उपमान रूप मे उत्प्रेक्षाओं और दृष्टान्तो के रूप म अथवा किसी वक्तव्य को अपेक्षाकृत अधिक प्रभु विष्णु बनाने के लिए जायसी ने कृष्ण और उनके चरित्र के साथ ही कृष्ण से सम्बद्ध अनेक पात्रो का अनेकधा उल्लेख किया है। कृष्ण विषयक उल्लेख वाली पक्तियो म से कुछ इस प्रकार है —

"लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी ।
कठिन विछोह जिऊ किमि गोपी ।[2]

नागमती वियोग वणन के सदभ म नागमती कहती है — कृष्ण को लेकर अकरूर वृन्दावन से मथुरा चले गये, और कृष्ण गोपियो से दूर हो गये। स्वभावत उस कठिन विछोह म कृष्ण की प्रेमिकाएँ गोपियाँ कसे जीवित रहती। कृष्ण कथा मे अकरूर द्वारा कृष्ण व बलराम का मथुरा कस के यहाँ ले जान का उल्लेख मिलता है। श्री कृष्ण वहाँ कस को मारकर कुबजा के साथ रहने लगे। भला इस विरह वेदना को गोपियाँ कैसे सह ?

अकरूर की ही तरह हीरामन सुआ राजा रत्नसेन को लेकर सिहल द्वीप चला गया, नागमती स्वय के कठिन विरह को गोपियो के विरह से उपमित करती है। पदमावत मे कृष्ण कथा का एक अन्य सुदर उल्लेख दृष्टव्य है

---

1 कन्हावत छन्द 217, स डा शिवसहाय पाठक, 1982
2 पदमावत 371/7

'बनी मारो पुहुप को लिखी जमुना आइ ।
पूजा नन्द अनन्द सो, सेंदुर सीस चढ़ाइ ॥

वेनी कालिया नाग फूल लेकर यमुना से बाहर निकला और उसने आनंद से कृष्ण की पूजा की जिन्होंने यमुना के सिर पर सिन्दूर चढ़ाया, और भी अर्थ द्रष्टव्य हैं

(1) नन्द का अर्थ कृष्ण है ।
(2) कालिय की संगिनी ने अपने सिर पर सिंदुर चढ़ाया ।
(3) उन कमलों से उसने राजा की पूजा की ।
(4) मोनियर विलियम्स ने 'नन्द' का एक अर्थ विष्णु दिया है ।
(5) 'कृष्ण (अर्थात् विष्णु) ने यमुना के सिर पर सिंदूर चढ़ाया और यमुना कृष्ण का विवाह हुआ आदि ।

यहाँ पूर्ण विनय के साथ इतना ही कहना है कि इस एक दोहे पर डॉक्टर अग्रवाल ने अपने ग्रन्थ में (पृ 27-28 और पृ 489 90) जो 60 पंक्तियाँ लिखी हैं वे सबकी सब अनर्गल प्रलाप हैं — यह सारा वक्तव्य गलत है ।

कहावत में नाग — प्रसंग बड़े विस्तार के साथ दिया गया है । उसे पढ़ने पर डॉ अग्रवाल की 60 पंक्तियों की व्याख्या पर दया आती है । वस्तुत नन्द का सीधा और सहज अर्थ "नन्द (कृष्ण के पिता यशोदा के पति) ही है । यह सबको ज्ञात है ।

पद्मावती की वेणी काली है उसी के लिए जायसी ने कहा कि — मानो नाग (जिसे कवि ने वासुकि और शेषनाग भी कहा है) यमुना से निकला, नन्द ने उसके सिर पर सिन्दूर चढ़ाकर उसकी सानन्द पूजा की। भारतवर्ष में नाग देवता की पूजा की जाती है उनके सिर पर सिन्दूर लगाया जाता है। कंस ने कमल मंगाया था, कृष्ण यमुना में कूद गए थे और जल में बैठकर वे पाताल में गए वहाँ महादेव की फुलवारी से वे नाग के सिर पर कमल लाद कर ले आए । इस सन्दर्भ में कहावत की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं —

'जानु सुरग कहँ रचे बिवाना । सेस नाग आय उतिराना ॥
सब घर बूडि पानि महँ आवे । माथ जइस सिरि सेन्ध दिखाव
जून परवत मो आव चला ।" । × × × × ×
सोइ मुरारि दई गर गढ़ा । आन्द सेस नाग पर चढ़ा ॥
जाई कहा मिलि सबही जहाँ जसोदा नन्द ।
आवा कन्हकुसल सौं, अब घर करहु अनन्द ।

1 वही 41, 8 9 और जायसी ग्रन्थावली (ना प्र सभा)

कृष्ण यमुना मे कूद पडे —'डूब गए" – सारा गोकुल शोक सतप्त हो गया, पर जब कृष्ण नाग पर कमल लाद कर ले आए तो नन्द अत्यत हर्षित हुए उन्होने आनदपूवक नाग की पूजा की।

ऊपर कहावत के दोहे म प्रयुक्त नन्द" और "अनद" शब्द और पद्मावत के दोहे मे प्रयुक्त "नन्द" और "अनद" शब्द मिला कर देखे जा सकते है। वस्तुत पदमावत मे कालियनाग कृष्ण का यमुना से निकलना, नन्द का कालि नाग की पूजा करना, पदमावत के उपयुक्त दोहे मे अभिव्यक्त है। रूप सौदय वणन को योजना के सन्दभ मे पद्मावत का यह उल्लेख अत्यन्त महत्वपूण है। इससे जायसी के पद्मावत मे कृष्ण कथा विषयक एक विशिष्ट सदभ का पता चलता है।

"क्रिस्न कै करा चढा ओोहि माथें। तब सो छूट अब छूट न नाथें।
बारौ कवल गहे मुख देखा। ससि पाछें जस राहु बिसखा।
को देखे पाव वह नागू। सो देखै माथे मनि भागू।"
पन्नग पकज मुख गहे। खजन तहाँ बईठ।
छात सिघासन राजधन ता कहँ होई जो ਤੀਠ॥ [1]

पद्मावत म जायसी ने पद्मावती की 'केश राशि" का वणन करते हुए लिखा है कि–उस पद्मावती के माथे के ऊपर कृष्ण अपनी कलाओ सहित विराजमान है, दूसरी ओर उसकी केस राशि काली कलावन्ती है, केश के लिए 'कृष्ण-कला" की उपमा सार्थक सुख प्रयुक्त है। कृष्णावतार म कृष्ण ने कालीय नाग को नाथा था बाद मे उसे छोड दिया था। जायसी का कथन है कि कृष्णावतार म कृष्ण ने कालिय को छोड दिया है किन्तु अब यह सुगुम्फित केश राशि नाथने पर भी छूटेगी नही—

क्रिस्न कै करा चढा ओोहिमाथें। तब तो छूट, अब छूट न नाथें।
बारा कवल गहे मुख देखा। ससि पाछें जस राहु बिसेखा॥
कौं देखो पावै वह नागू। सो देख माथे मनि भागू॥

प्रस्तुत अश मे "पद्मावत' म जायसी ने कृष्ण कथा से सम्बद्ध 'कालिय-नाग नथन" विषयक कथा को उपमान रूप म गृहीत किया है। कृष्ण ने यमुना मे कूदकर कालिया नाग का मान मदन किया था, उसे नाथा था, उस पर कमल लादा था और वे उसके साथ बाहर आए थे बाद म उसे मुक्त कर दिया था। "कहावत' मे इस कथा का सविस्तार वणन मिलता है, उसे ही यहाँ जायसी ने सक्षेप मे उपमान रूप म उपस्थित किया है।

---

1 पद्मावत (स माताप्रसाद गुप्त) 115/6

जायसी ने अपने 'कन्हावत' महाकाव्य मे कालीय नाग प्रसग का स्तरीय वणन किया है। उस प्रसग को निम्नलिखित पक्तियों के आलोक म पदमावत की उपयुक्त पंक्तियाँ और उनके अथ भास्वर हो उठते हैं

चला कन्हु सँवरि कुलदवा। समुद माँझि बोहित अस (खेवा)॥
जानु सुरग कँह रचे ववाना। सेस नाग आवै उति (राना)॥
सब घर बूडि पानि महँ आव। माथ जइस गिरि मेरु (देखावे)॥
फुलवारि जउन होइ गएउ। कहँ कांदो सब जलहर भएऊ॥
जनु परवत सा आवे चला। मथ कन्ह (गा तरि जल हला)॥[1]
× × × ×
तहि ऊपर मानुस एक आवै। जनु तरुवर पर पाखि देखाव॥
जो नियरान कहहि रे दया। सेजमान जनु बास कन्हैया॥
कोई मुरारि दई कर गडा। आव सेस नाग पर चढा॥
नाव कवल दुह दिसि सोई। ओहि छाडे कोउ आन न होई॥[2]

जब लागे कालिंदिरी बरासी। पुनि सुरसरि होई समुद परासी।
जोवन भवँर फल बन तोरा। बिरिध पोख जस हाथ मरोरा।
क्रिस्न जो जोबन करत तन माया गुनत नाहि साथ।
छरि क जाइहि बान ले धनुक छाँडि तोहि हाथ।[3]

डा वासुदेव शरण अग्रवाल ने पदमावत के सजीवनी भाष्य मे कालिदेह (यमुना) और कृष्ण के विवाह का उल्लेख किया है।[4]

प्रस्तुत प्रसग म जायसी ने कृष्ण और कालिंदी की उसी कथा को उपमान रूप म ग्रहण किया है, जायसी का कथन है कि—'जब तक सरिता (नारी) कालिंदी (कृष्ण केशो वाली) रहती हैं वह विलासवती होती है, और तदनन्तर वह सुर सरिता (श्वेत केशो वाली) होकर समुद्र द्वारा ग्रसित हो जाती है। तेरे फूल जसे शरीर पर भ्रमर जसा यौवन (आया हुआ) है वृद्धावस्था म तो मनुष्य पक्ष (दुम) जसे हाथो को ही मलता रहता है। जो यौवन शरीर को कृष्ण करता है (उसे वण प्रदान करता है) वह साथ म होते हुए भी माया (स्नेह पूण कृपा) का विचार नही करता है। वह तुम्ह छलकर तुम्हारा वण रूपी बाण लेकर और तुम्हारे हाथो म धनुष (शरीर का टेढ़ापन कमर का झुकाना) छोडकर चला जाएगा।[5]

1 कन्हावत कडवक 81/2 3 4 5 6
2 वही 82/4 5, 6 7
3 पदमावत (स माता प्रसाद गुप्त) 593/6
4 पदमावत भाष्य पृ सख्या
5 पदमावत „ 593 6 7 8 9

उहै धनुक किरसुन पहं अहा । उहै धनुक राघौ कर गहा ।
उहै धनुक रावन संघारा । उहै धनुक कंसासुर मारा ।
उहै धनुक बेधा हुत राहू । मारा ओहीं सहस्नर बाहू ।
उहै धनुक मैं ओपहं चीन्हा । धानुक आपु बेझ जग कीन्हा ।
उन्ह भौंहहि सरि केउ न जीता । अछरि छपीं छपीं गोपीता ।

जायसी ने पद्मावती की भौंहों का सौंदर्य वर्णन करते हुए उन्हें धनुष से उपमित किया है। समासोक्त पद्धति और लौकिकता में अलौकिकता के आनयन और उपस्थापन की प्रवृत्ति से सम्प्रेरित होकर भौंहों को धनुष से उपमति करते हुए उस धनुष को विराट संदर्भ प्रदान किया है – वही धनुष कृष्ण के पास था, राम के हाथों में था, उसी से कृष्ण ने कंस का और राम ने रावण का संहार किया था। 'वही धनुष कृष्ण के पास था और उसी धनुष को राघव ने हाथों में ग्रहण किया था। (राम ने) उसी धनुष से रावण का संहार किया था और कृष्ण ने उसी धनुष से असुर कंस को मारा था। (अर्जुन के द्वारा) उसी धनुष से राघव वध किया गया था और (परशुराम के द्वारा) उसी धनुष से सहस्रबाहु मारा गया था। उसी धनुष को मैंने उसके पास पहिचाना है और (उसी धनुष के साथ) वह स्वयं धानुक बनी है और उसने जगत् को बेध्य किया (बनाया) है उन भौंहों की समानता में कोई नहीं जीत सका। इसलिए अप्सराएँ छिप गई और (ब्रज की) गोपियाँ भी छिप गई। उस धनुर्धारी (स्त्री) धानुक्य की भ्रू धनुषों की अन्य कोई (अस्त्र अथवा पदार्थ) समानता नहीं कर सकता है इसी (कारण) गगन में जो धनुष उदित होता है, वह लज्जावश छिप जाता है।"

'चारिउ भुजा चतुरभुज आजू । कंस न रहा और को साजू ॥
हौं होइ भीम आजु रन गाजा । पाछु घालि दुगव राजा ॥
होइ हनुवंत जमकातर ढाहौं । आजु स्वामि साँकरे निबाहौं ॥

जायसी ने गोरा बादल युद्ध खण्ड में गोरा के शौर्य प्रदर्शन के संदर्भ में लिखा है कि – गोरा ने ललकारते हुए कहा कि आज मैं युद्ध में खेल खेलूंगा और साका करूंगा जैसे अगस्त्य तारा आकाश में आरूढ़ रहता है बस ही मुझे देखकर शत्रु सेना मेघ घटा की तरह विलीन हो जायेगी। [1] डा. माताप्रसाद गुप्त ने पद्मावती की इन पंक्तियों का अर्थ करते हुए चतुर्भुज का अर्थ नारायण या विष्णु किया है किन्तु कन्हावत की उपलब्धि से यह अर्थ उचित नहीं रह गया, कन्हावत में जायसी ने कंस वध के अवसर पर कृष्ण के चतुर्भुज रूप धारण करने का उल्लेख किया है। कन्हावत में जायसी ने लिखा है

1 जायसी ग्रंथावली [ना. प्र. सभा] पृ. 289 पद 9

आपु रूप भा कन्ह मुरारी । उठा चतुरभुज कला सवारी ।।
धारिहूँ भुजा कोपि बर किन्हाँ । ओ कर ब्रज क मूसल लोहाँ ।।
चक्र फिराइ भुजा तन पारा । सख पूरि क धनुक सम्भारा ।।
आजु बीजु आइसे बढ़ि साँचो । हइ नचाओ हहैं सो नाचो ।।
हहै आजु मारो चानूरो । हहैं सा बाधि चलौं गिर मउरो ।।
हहीं आजु मारो हो बरो । हहै भगन सय आपुन करो ।।
हहीं खेल आजु नों निधि खेलौं आपुन खेल ।
हहो मारि बिचलाऊँ जा गज गिर्मां अपल ।। [1]

डॉ गुप्त ने लिखा है कि– मैं आज चारो भुजाओ से युक्त चतुर्भुज (नारायण) हूँ मेरे सामने कस नही रह सकता, (तब) और कौन राजा है (जो टिक सकता है)? आज मैं भीम होकर रण मे गजन कर रहा हूं और मने दगर्व राजा को अपने पीछे (अपनी रक्षा मे) डाल लिया है । मैं हनुमान हाकर यम कत्त री को ढाह रहा हूँ और स्वामी को सकट मे से निबाह (निकाल रहा हू) आज मैं नल नील होकर समुद्र मे मेड दे रहा हूँ (सेतुबध की रचना कर रहा हूँ) मैं बादशाह की सेना के रण म सुमेरू (सदृश्य अटल) बडा बनकर टेक (रोक) रहा हूँ । [2]

'कन्हावत" मे जायसी ने कस बध के अवसर पर कृष्ण का चतुभुज रूप म उपस्थित किया है। उसी चतुर्भुज रूप का उल्लेख पदमावत म किया गया है —

धारिउ भुजा चतुर्भुज आजू । कस न रहा और को राजू ।।"

"काहावत" के आलोक मे अब प्रस्तुत पक्तियो का अथ और प्रसग पूणत स्पष्ट हो गया है ।

'इद्र डर निति नावै माथा । जानत क्रस्न सेस जेइ नाथा ।।"

रत्नसेन सूली खण्ड के अन्तगत भाट ने गधव सेन को बाँया हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया था । भाट के इस अभध्य काय पर राजा अत्यन्त रुष्ट हुआ और उसने कहा कि इन्द्र मुझस डरत है मुझे माथ झुका कर प्रणाम करत हैं मुझे शेष नाथ ने वाने कृष्ण भी जानते हैं चतुमुज ब्रह्मा भी डरत हैं पाताल निवासी बलि भी डरता है आदि । भाट ने कहा कि – हे राजा गव किसी को शोभा नही दता रावण न गव किया और उसका विनाश हुआ ।

पदमावत की प्रस्तुत पक्ति स स्पष्ट है कि जायसी यहाँ कृष्ण द्वारा 'कालिय नाग' को नाथन की कथा की ओर इगित कर रह हैं । जायसी न कहावत के कडबक 73 से लेकर 85 तक के अन्तगत इमी कथा का उल्लेख किया है ।

---

1 कन्हावत पृ 199/28
2 पद्मावती [डॉ माताप्रसाद गुप्त] 629

'तुम्ह वलवीर जाज जग दोऊँ तुम्ह मुस्टिक औ माल कडेऊ ॥
तुम्ह अरजुन वो भीव भुआरा । तुम्ह नल नील मेड दोनि हार ॥" [1]

पदमावत के इस सन्दभ का अथ डा० गुप्त ने इस प्रकार किया है – तुम बलशाली वीर जाला और जगदेव हो, तुम मुष्टिक मल के देव हो (?) तुम अर्जुन और भूपाल भीम हो, और (समुद्र मे) मेड (सेतु) बाधने वाले नल नील हो। मुस्टिक/मुष्टिक कस का एक बलशाली मल्ल था जिसको बलदेव ने परास्त किया था। माल केदेह अमीर खुसरो न तारीख ए अलाई और "आशिका" म एक मलकदेव का उल्लेख किया है (दे इलियट जिल्द 2, पृ 76 558)। असभव नही कि जायसी का माल कदेड वही हो। अजुन और भीम महाभारत के प्रसिद्ध योद्धा अथवा मध्ययुग के अजु न वग देव और भीम चोलुक्य।[3]

पदमावत की प्रस्तुत पक्ति म कृष्ण कथा का उल्लेख है। कृष्ण ने कस के मल्लो का मल्ल युद्ध मे मारा था उन मल्लो म मुष्टिक और चाणूर प्रमुख थे। इस पक्ति का मुस्टिक तो स्पष्ट रूप कस का बलशाली मल्ल मुष्टिक ही है। किन्तु "माल कदेउ" जिसे शुक्लजी ने 'माल कदेउ" लिखकर उसके आगे प्रश्न का चिह्न लगा दिया है और आज भी पदमावत के अध्येताओ के लिये यह केदउ" या कंदेउ या माल कडेऊ समस्या ही बना हुआ है। हमे लगता है कि इस माल का अथ तो स्पष्ट रूप मे मल्ल अर्थात् योद्धा है, किन्तु करऊ अथवा कडेऊ पाठ उचित नही है, सम्भव है कि पदमावत का सुन्दर सम्पादन होने पर यह भ्रष्ट पाठ उपयुक्त पाठ के रूप मे आ जाय।

को माहि सौह होइ मैमत्ता। फारौं कुम्भ उखारौ दता ॥
जादौ स्याम सै कर जस टारा। बल्लभ जस जुस्जोधन मारा ॥
हनिवत सरिस ऊ र बर जोरौं। धँसौं समुद्र स्यामि बँदि ओरौं।
जो तुम्ह मात जसौवै का ह न जानहु बार।
जहँ राजा बलि बाँध छोरौ पैठि पहार। [2]

बादल ने माँ से कहा कि मैं रणवादी सिंह बादल हूँ। भला कही सिंह की जाति छिपी रहती है। कौनसा मदमस्त हाथी मेरे सामने हो सकता है मै उसका कुम्भ फाड डालूगा और दाँत उखाड डालूगा। यादव स्याम (कृष्ण) ने जिस प्रकार (कस के द्वारा प्रेरित) शकटासुर को टाला (पछाडा) था और जिस प्रकार वल्लभ (भीम ने दुर्योधन को मारा था) मैं भी उसी प्रकार उनके लिए प्रमाणित हूँ)। मैं हनुमान के सदृश जाँघो म बल जोडूगा (करूँगा) और (उनकी भाँति) समुद्र मे

---

1 पदमावत (स डा माताप्रसाद गुप्त) पद्य 611/3–4
2 पदमावत 611/2–3 पृ 570–71
3 पदमावत (स डॉ माताप्रसाद गुप्त) पद्य 614/6, 7, 8, 9

घँमकर स्वामी का बंधन खोलूँगा। यदि तुम माता यशोमती (यशोदा) हो तो अपने (इस) बालक को बालक न समझो, जहाँ पर मेरा राजा बलि (के द्वारा) बँधा हुआ है उस पाताल में प्रविष्ट होकर मैं उसे मुक्त करूँगा।

शुक्लजी ने जायसी ग्रन्थावली में निम्नलिखित पाठ दिया है —

जुरी स्वामि संकर जस ढारा। पेला जस दुरजोधन मारा ॥
अंगद कोपि पाँव जस राखा। टेका कटक छतीं सो लाखा ॥
हनुवंत सरिस जंघ बर जागो। दहौं समुद्र, स्वामि बँदि छोरौं ॥
सो तुम, मातु जसावँ। मोहि न जानु बार।
जहँ राजा बलि बाँधा छोरौं पैठि पतार ॥[1]

डा० गुप्त और शुक्लजी के पाठ में बड़ा अन्तर है और डा० गुप्त ने जायसी के मूल पाठ के संधान का बड़ा सुन्दर प्रयास किया है। वस्तुतः उपर्युक्त पंक्तियों में जायसी के कन्हावत की कथा का संकेत मिलता है। कृष्ण ने माँ यशोदा का धीरज बँधाते हुए कहा था कि मैं ही राम, परशुराम, नारायण आदि हूँ —

नागमती तू पहिलि बियाही। का ह पिरीति डही जसि राही।

जायसी ने पदमावत में लिखा है कि रत्नसेन ने नागमती को समझाते हुए कहा कि मेरी प्रिय नागमती तू मेरी प्रथम विवाहित है। (इसलिये अवश्य ही तू सभी प्रकार मेरे विरह में दग्ध हुई) जिस प्रकार कृष्ण की प्रीति से राधिका दग्ध हुई थी —

सं राधिका — प्रा० । अप० — राहिआ — राही।

राही — (राधिका वाचक शब्द) का मूल संस्कृत — शब्द "राधिका" है प्राकृत — अपभ्रंश में 'राहिआ' शब्द व्युत्पन्न हुआ है। अन्त्य 'आ' के लोप और 'क्षतिपूरक" दीर्घीकरण के नियम के अनुसार हिन्दी में 'राहिआ' (प्र/अप०) का "राही" बना है।

प्रस्तुत (पदमावत के) प्रसंग से व्यक्त है कि जायसी को कृष्ण और राधा की वियोग व्यथा का सम्यक परिज्ञान था। उसी की अभिव्यक्ति हेतु जायसी ने यह पंक्ति उपस्थित की है। यह पंक्ति तो मूलतः सूत्र रूप में कथित है और इसका भाष्य अथवा सविस्तार इतिवृत्तात्मक कथन कन्हावत में गोपियों और राधा के 'बारह मास' — विरह वर्णन में प्राप्त होता है। वहाँ (कन्हावत में) राधा का बारह महिने का विस्तार वर्णन मिलता है।

---

[1] पद्मावत (डॉ० माताप्रसाद गुप्त) 428/1

लैकान्हहि भा अक्रूर अलोपी । कठिन बिछोह जिऐं किमि गापी ।
मारस जोरी किमि हरी मारि गएउ बिन खागि ।
चुरि चुरि पाँजर धनि भई विरह कै लागी अगि ॥ [1]

कृष्ण को लकर अकरूर आलुप्त हो गया (मथुरा चला गया) (स्वभावत) उस कठिन बिछोह म (कृष्ण की प्रेमिकाएँ) व गोपियाँ कैसे जीवित रहती ? (वे कृष्ण के वियोगाग्नि मे जल मरी (1) ऐ व्याध बधिक सदृश हुए) तूने मरी सारस की जोडी (मेरे प्रिय) को क्या हर लिया ' त इस खगी को क्या न मार गया ? विरह की आग लगने के कारण यह स्त्री पजर हो गयी ।

जायसी के पदमावत से स्पष्ट है कि उन्हे कृष्ण कथा का पूरा ज्ञान था गोपियाँ कृष्ण की दारुण वियोग व्यथा मे कालान्त थी और इसका मूल कारण यह था कि कस के दरबारी अक्रूर या अक्रूर कृष्ण को लेकर आलुप्त हो गय थे अर्थात् अक्रूर ने कस के आदेश पर कृष्ण को आमन्त्रित किया वे कृष्ण को कस के यहाँ ले गये । बेचारी गोपियो से उन्हे दूर कर दिया, इस वियोग व्यथा म गोपियाँ दग्ध हुइ । जायसी ने पदमावत मे यह सूत्र दिया है और इसका भाव्य कन्हावत" मे सविस्तार रूप मे राधा और गोपियो के विरह वर्णन के अन्तगत प्रस्तुत किया है ।

कस राज जीता जो कोपी । कान्ह न दीन्ह राहु कहँ गापी ॥[2]

इस प्रकार हम देखत है कि पदमावत महाकाव्य मे कृष्ण कथा के पर्याप्त दृष्टान्त और सन्दभ उपलब्ध हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि महाकाव्य जायसी कृष्ण कथा के ममज्ञ थे और कृष्ण लीला ने उन्हे प्रभावित भी किया था ।

कन्हावत

जायसी का सद्य प्रकाशित प्रबन्ध काव्य कन्हावत है । पदमावत क पश्चात जायसी का यह दूसरा महाकाव्य है जिनमे 'कन्ह कथा" है । भगीरथ प्रयत्न करन के पश्चात सूफी काव्य के ममज्ञ विद्वान हिन्दी अध्ययनशाला विक्रम विश्वविद्यालय क प्रा डॉ शिवसहाय पाठक ने इसका सपादन किया है । यह कृति सन् 1980 मे ही प्रकाशित हुई है ।

कन्हावत की खोज का इतिहास

जायसी और उनके काव्य क विद्वान शोधक डॉ शिवसहाय पाठक को 1958 इ म जायसीकृत चित्ररेखा की एक सुन्दर हस्तलिखित प्रति थी चन्द्रवली

---

1 पदमावत (स म माताप्रसाद गुप्त) प 358 नहुबक 341/7 8 9
2 जायसी ग्रथावली, (ना प्र स) पृ 18 प 1/6

सिंह से प्राप्त हुई थी। उस प्रति मे कन्हावत भी था। उसमे कन्हावत वाला अंश 132 पृष्ठो का है। कन्हावत की यह प्रति खण्डित है और फारसी अक्षरो मे सुलिखित है। "चित्ररेखा" का प्रकाशन डॉ पाठक ने 1959 ई[1] मे कर दिया था।

डा पाठक को 'कन्हावत" की एक और प्रति श्री भोलानाथ पाण्डेय से प्राप्त हुई थी [2] जिसमे कुल 92 हस्तलिखित पत्र थे। यह प्रति भी फारसी अक्षरो मे है।

डा पाठक को विश्वास हो गया कि 'कन्हावत' की और भी प्रतियाँ देश विदेश मे मिलेगी। उन्होने खोज करते हुए जर्मनी के राष्ट्रीय संग्रहालय से 'कन्हावत' की एक और प्रति मगवाई इसमे कुल 266 पृष्ठ हैं। इन पृष्ठो के साथ ही इस प्रति के आरम्भ मे 17 पृष्ठ नहरनामा के हैं। 19 वें पृष्ठ से कन्हावत प्रारम्भ होता है। यह प्रति भी फारसी लिपि मे है व सुलिखित है। इस प्रति की पुष्पिका इस प्रकार है

'तमाम शुद किताब कन्हावत मिन तसनीफ मलिक मुहम्मद जायसी बनोज चहार शबह तारीख 23 शाबान् अल मुअज्जम् सन् 31 जुलस साहब कुरान सानी शाह जहा बादशाह गाजी मुवाफिक सन 1067 (हिजरी) कितह बन्देह फकीर। जरह हकीर सैयद अब्द अल रहीम (अब्दुल रहीम) हुसेनी साकिन कन्नोज बजहत। बारखुरदार आन्त अत्तार राजाराम वल्द समदत्त इसरुलिया काम कायस्थ सकसेनह मौजा कासिमपुर दाजरह मिन आमाल परगनह गाम सरकार कन्नोज नकारतह आयद।[3]

हर कि ख्वान्द दुआ तमअ दारम्।
जाँकि मिन बन्दहगुनहगारम् ॥"

इस पुष्पिका से ज्ञात होता कि मलिक मुहम्मद जायसी कृत कन्हावत की यह प्रति सन् 1067 हिजरी अर्थात् 1556-57 ई मे शाहजहाँ बादशाह के शासन काल मे तयार की गई थी। [4]

कन्हावत (काव्य का नाम)

जायसी ने इस काव्य का नाम "कन्हावत" रखा है।

मुहम्मद कवि कन्हावत गाए। रस भाखा कै सभों सुहाए।[5]

---

1 कन्हावत – डॉ शिवसहाय पाठक पृ 1
2 कन्हावत – डॉ शिवसहाय पाठक पृ 1
3 कन्हावत – डॉ शिवसहाय पाठक पृ 2
4 कन्हावत – डॉ शिवसहाय पाठक पृ 2
कन्हावत – डॉ शिवसहाय पाठक पृ 3

जमनी से प्राप्त हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका मे भी इस काव्य का नाम कन्हावत है। इसके प्रारम्भ मे भी जायसी ने कन्हावत म "कन्ह कथा' गाने का उल्लेख किया है।

तो मैं कहा अमिय खड गाऊँ। कन्ह कथा करि सबहि सुनाऊ ॥[1]

गार्सां द तासी ने अपने ग्रन्थ 'इस्तवार" द ल लितरेत्युर ऐंदुई ऐं' ऐंतुस्तानी" मे जायसी के सन्दर्भ म डॉ ए स्प्रेंगर की जायसी की "घनावत" की जिस हस्त-लिखित प्रति का विवरण दिया है वह जमनी वाली ही प्रति है। जमनी वाली प्रति डॉ ए स्प्रेंगर वाली प्रति ही है। गार्सां द तासी ने भूल से इसे 'धनावत" कहा है। वस्तुत पुरानी फारसी मे 'क' और 'घ' मे कोई अन्तर नही है। उन्होने कन्हावत को घनावत पढा था।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस ग्रन्थ का नाम 'कन्हावत" है और इसमे कन्ह कृष्ण कथा का सविस्तार आख्यान किया गया है।

कन्हावत की लिपि

जायसी ने अपने काव्यो की रचना किस लिपि मे की थी ? यह प्रश्न विद्वानो के विवाद का विषय बना हुआ है।

सौभाग्य से अभी तक "कन्हावत" की जो तीन हस्तलिखित प्रतियाँ मिली है वे सब फारसी अक्षरो म लिखित हैं। अत हम कह सकते है कि "कन्हावत" की रचना फारसी अक्षरो मे ही की गई थी। यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि जायसी कृत चित्ररेखा कहरानामा, पदमावत आदि की देश विदेश म जो प्रतियाँ मिली हैं उनम बहुलाश फारसी अक्षरा मे ही है।[2]

कन्हावत का रचनाकाल (947 हिजरी)

कन्हावत की रचना विधि के विषय मे कवि ने लिखा है

"सन् नौ से सैतारिस अहई। तहिया सरस बचन कवि कहई॥"
'कार्तिक मह जो परत देवारी। गावहिं आहर खटकै तारी॥[3]

अर्थात कन्हावत की रचना विधि 947 हिजरी अर्थात 1541-42 ई है। कवि ने

1 "आखिरी कलाम" की रचना बाबर के शासन काल म की थी।
2 उसने 'कन्हावत" की रचना हुमायू के जमाने मे की थी।
3 उसने "पदमावत" की रचना शेरशाह के जमाने म की थी।

---

1 कन्हावत – डॉ शिवसहाय पाठक, पृ 3
2 कन्हावत—डॉ शिवसहाय पाठक; पृ –4
3 वही पृ –12

इनके प्रमाण क्रमश इस प्रकार है—

1 बाबर साह छत्रपति राजा ।[1]

2 "नौसे बरस छतीस जब भए तब एहि कथा क आखर कहे"[2]

3 "देहली कहो छत्रपति नाऊँ । बादशाह बड़ साह हुमायूं ।"[3]

सन नौ से सैतालिस अहई । तहिया सरस वचन कवि कहई[4]

4 'सरसाह दिल्ली सुलतानू'[5]

सन् नौ सौ सतालिक अहई । कथा आरम्भ बैन कवि कहई ॥[6]

इन पंक्तियों में क्रमश आखिरी कलाम, कन्हावत और पदमावत की रचना तिथियों और शाह वक्त का भी उल्लेख है ।

हुमायूं के राज्यारोहण की तिथि 936 हिजरी है, चौसा में शेरशाह द्वारा उसकी हार 945 हिजरी में कन्नोज में शेरशाह की उस पूर्ण विजय 947 हिजरी में और फिर शेरशाह का दिल्ली में राज्यारोहण 948 में क्रमश में तिथियाँ हैं ।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि कन्हावत की रचना तिथि 947 हिजरी ही है ।"

बादशाह बाबर की मृत्यु के बाद हुमायूं 1530 ई में अर्थात 936 हिजरी में दिल्ली की गद्दी पर बैठा । चौसा की लड़ाई में (945 हिजरी) शेरशाह से वह हार गया । कन्नोज में शेरशाह ने 947 हिजरी में विजय प्राप्त की । 946 हिजरी में दिल्ली के तख्त पर शेरशाह बैठा । हुमायूं भाग कर राजस्थान की ओर गया । वहीं 948 हिजरी में अकबर का जन्म हुआ और हुमायूं अफगानिस्तान की ओर चला गया ।वहाँ से वह 1555 ई में पुन आया ।

स्पष्ट है कि 947 हिजरी में हुमायूं ही दिल्ली का बादशाह था और जायसी ने कन्हावत" की रचना 947 हिजरी में शुरू की अहई और कहई से भी यही तथ्य प्राप्त है ।

947–49 में हुमायूं की पराजय और शेरशाह के बादशाह हो जाने के बाद जायसी ने पदमावत नामक काव्य लिखना शुरू किया उसके प्रारम्भ में जायसी ने रचना तिथि दी ।

'सन नौ से सतालिस अहई ।
कथा आरम्भ बैन कवि कहई ॥"

1 जायसी ग्रंथावली-अग्रवाल पृ 296
2 वही पृ 298
3 कन्हावत-कड़वक
4 कन्हावत-कड़वक
5 पदमावत-स्तुति खण्ड
वही

अर्थात इस समय हिजरी 947 है जबकि पदमावती कथा का आरम्भ कैन कवि कर रहा है। उसने शाहे वक्त के रूप मे शेरशाह की प्रशसा की।

निष्कर्ष यह है कि 'कहावत" की रचना कवि ने 947 हि मे की और उस पूर्ण कर लने के बाद उसने पदमावत का बिस्मिल्ला अह रहमान रहीम" किया। इस समय शेरशाह 947 मे दिल्ली सल्तनत का मालिक बन गया था।[1]

कहावत की कथा

पदमावत महाकाव्य के अनुरूप ही महाकवि जायसी ने कहावत के प्रारंभ मे प्रस्तावना या स्वरूप प्रस्तुत किया है। प्रारम्भ मे ही कवि ने ससार को नश्वर कहा है। झूठा गर्व निरर्थक है क्योंकि मृत्यु के पश्चात मुह मे छार पडेगी तो पश्चाताप ही शेष रह जायेगा।

सृष्टि के रचयिता का वर्णन नही किया जा सकता। दो सहस्र जिह्वाओ वाला शेष नाग भी करतार के गुणगान मे असमर्थ है। यह जगत निर्मित हुआ है और विलीन हो जायेगा। चिरतन दान के उपरान्त भी उसका भण्डार अक्षुण्ण बना हुआ है। कवि ने मुहम्मद साहब को करतार का "नूर" कहते हुए कहा है कि उन्होने ससार को सजाया है। जायसी ने इसी प्रसग मे आगे मुहम्मद साहब के चार मित्रो का भी वर्णन किया है।

तत्कालीन दिल्ली के बादशाह हुमायू सैयद अशरफ और जायस नगर का वर्णन भी कवि ने मनोयोग स किया है। काव्य मे 'कहावत" के रचनाकाल 947 हिजरी का भी उल्लेख किया गया है तथा कवि ने अपने एक नेत्रत्व को शुक्र के समान भास्वर बताया है। इस प्रस्तावना के पश्चात् 'कहावत" की मूल कथा प्रारम्भ होती है।

मथुरा नगरी म कस राजा था जो रावण के समान था। सारे ससार के दानव राक्षस, देव उसके अधीन थे। उसकी सेवा करते थे ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी उसके आदेशो का पालन करते थे। लका दुर्ग के समान ही उसका सतमजिला 'कोट" था जो वैभव, ऐश्वर्य और विलासिता से परिपूर्ण था। सारा कोट सुवर्ण मय था। उसके दरबार म छत्रपति और जुझारू वीर उपस्थित रहते थे। वन, उपवन, वृक्ष, फूल, पक्षियो का कवि ने विस्तार से वर्णन किया है।

जमुना के दूसरे किनारे पर नद महर की महराई चलती थी उसके पास असख्य गोधन था। सभी गायें श्रेष्ठ जाति की और दुधारू थी। अप्सराओ के समान ग्वालिनें दूध दही बेचा करती थी।

---

1 कहावत – भूमिका पृ 12–13

एक दिन कंस ने सेना सजाई सारा संसार काँप उठा। कंस ने "सूक" को बुलाकर मृत्यु के अधिपति यम को खोजने की आज्ञा दी। "नारद" को बुलाकर पूछा कि मेरी मृत्यु किसके हाथ होगी ? नारद ने कहा कि महर के यहाँ "विष्णु" अवतार होगा और वही तुम्हारा संहार करेगा।

कंस ने देवकी और वसुदेव को बन्दीगृह में डालकर कठोर पहरा बठा दिया। देवकी के गर्भ में जो भी बालक जन्म लेता कंस उसे पत्थर पर पटक कर मार डालता था। कंस के व्यवहार से क्रुद्ध होकर विष्णु ने अवतार लिया। देवकी ने वसुदेव से कहा कि कंस ने सात पुत्रों को मार डाला है अब इसकी रक्षा के उपाय करो। नन्द महर की पत्नी इसे ले लेगी। इसे वहाँ ले जा सको तो ले जाओ। वसुदेव चले तो बन्दीगृह की सातों कोठरियों के ताले खुल गये। वे यमुना तट के किनारे पहुचे। यमुना में बाढ़ आई हुई थी। मन को कठोर करके वह यमुना में उतर चले। चलते चलते वे पार हो गये, उनकी जाँघ तक नहीं डुबी, यशोदा के गर्भ से लक्ष्मी ने जन्म लिया था। वसुदेव ने कन्या को लिया और वापस बन्दीगृह आ गये। प्रात कंस को रखवालों ने सूचना दी। कंस आया। उसने ज्योंहि बालिका को वक्ष पर पटकना चाहा वह हाथ से छूटकर आकाश में चली गई। आकाश से कंस ने मृत्यु का समाचार सुना। वह चिंतित हो उठा।

प्रात होते ही नन्द के यहाँ पुत्रोत्पत्ति के प्रसंग में मंगल वाद्य बजने लगे। नारी नर हर्ष विभोर हो गये। खूब उत्सव मनाया गया। पाँचवें दिन "रतजगा" हुआ और छठे दिन पण्डितों को बुलाकर बालक की कुंडली बतलाई गयी। पण्डितों ने कहा कि ये विष्णु के अवतार है।

एक रात स्वप्न में कंस को बाँसुरी बजाते हुए कृष्ण दिखाई दिये। उन्होंने कंस का दबोच दिया। वे काल बन गये। कंस बहुत डर गया। उसने "सूक" को बुलाकर अपना स्वप्न सुनाया। सूक ने कहा कि वह तो बालक है। नारद ने कहा तुम्हारा शत्रु "नन्द" के घर में है। विष देकर उसे मारने का उपाय करो। कंस ने दरबार में "बीड़ा" रखकर घोषणा की कि जो कृष्ण को विष दे देगा उसे आधा राज्य दे दूंगा। पूतना ने "बीड़ा" उठाया और वह अत्यंत रूपवती होकर गोकुल गई। लोगों ने समझा कि राजघराने की रूपसि आई है। उसने हिंडोले में झूलते कृष्ण को गोद में लेकर विष सने स्तन उनके मुख में दे दिये। "कृष्ण" जो सब कुछ जानते थे उन्होंने पूतना का समस्त रस चूस लिया। पूतना मर गई। गोकुल में आनन्द छा गया कंस घबड़ा उठा। उसने मंत्रणा की। "सूक" ने नन्द से पाताल नगरी के सहस्त्र दल के कमल मंगवाने की सलाह दी। कंस ने नन्द को बुलाकर, लाख कमल लाने की आज्ञा दी। नन्द व्याकुल हो गये। यह सुनकर पाँच वर्ष के गोपाल और बलभद्र यमुना किनारे गेंद खेलने गये। गेंद नदी में चली गई। गेंद लाने हेतु नदी में कूद पड़े। सारे नर नारियों में खलबली मच गयी।

बहुत प्रयत्न किए गए किन्तु कृष्ण नही मिले। कस यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

कृष्ण पाताल मे पहुचे। उन्होने महादेव की बारी और मानसरोवर देखा। अष्टोकुली नाग उसकी रखवाली कर रहे थे। वासुकि सो रहा था। नागिन ने कृष्ण को वर्जित करते हुए कहा कि वासुकि के जग जाने से तू जलकर भस्म हो जायेगा अत शीघ्र ही चला जा। कृष्ण ने कहा कि मुझे एक लाख कमल चाहिए तभी तुम्हारे नाग को छुटकारा मिलेगा। शेषनाग जागा उसकी फूफकार से कृष्ण काले हो गये। कृष्ण ने ललकार कर उसे नाथ दिया और लाख कमल उस पर लादकर विशाल नाव के समान उसे सतह पर ले आये। पुरवासी हर्षित हो गये। नन्द ने वे एक लाख कमल कस को पहुचाते हुए कहा कि इन्हे बाल कन्हाई ले आए हैं आप पूजा करें।

कस ने पुन सूक और नारद से कृष्ण की मृत्यु के सम्बन्ध मे मन्त्रणा की। नारद ने कहा कि कन्ह जहाँ गौएँ चराते हो वहाँ जाकर दैत्य शिलाएँ बरसायें। कस ने आज्ञा देकर दैत्यो को भेज दिया। जहाँ कृष्ण गायें चरा रह थे, वहाँ उत्पल वर्षा होने लगी। कृष्ण ने बाएँ हाथ से बारह योजन पहाड को उठाकर उसे छाता बना दिया। सभी की रक्षा हो गई और दैत्य परास्त होकर लौट गये।

जसे भ्रमर बगिया म भ्रमण करता है वैसे ही कृष्ण वृन्दावन मे विहार करने लगे। गोपिया से अठखेलियाँ करने लगे। गोपिया ने नद से शिकायत की कि कन्ह मटकी फोड देता है, गोरस चखता है, चीर खीचता है, नारग दाडिम को नख देता है, उसे मना करो। कृष्ण ने प्रति उत्तर मे कहा कि ये मुझे अकेला पाकर मुझ पर मटकी धर देती हैं वरबस कठ लगा लेती है और रिझाती हैं। "कन्ह" के भोलेपन पर सभी हस पडे और हर्षित होती हुई गोपियाँ अपने घर लौट गइ।

नक्षत्रो म शशि के समान राधा अत्यन्त रूपवती थी। कृष्ण के हृदय मे राधा के प्रति प्रेम प्रकट हुआ। व उदास रहने लगे। यशोदा ने समझा कि कन्ह' को नजर लग गई है। अगस्त नामक धाय कृष्ण का रोग देखन आई। कृष्ण ने गारुडी बनकर 'चन्द्रावली" से भेंट की। चन्द्रा की सुहावनी बगिया, चिनसारी और नक्षत्र के समान सुन्दर सखियो को देखकर कृष्ण विमोहित हो गये। चन्द्रावली कृष्ण का मिलन हुआ। चन्द्रा के आग्रह से कृष्ण ने अपना विष्णु रूप प्रकट किया।

कृष्ण दिन म राधा के साथ और रात मे चन्द्रा के साथ क्रीडा करते रहे। महेन्द्र की पूजा के समय राधा और चन्द्रा की भेंट हो गई। चन्द्रा ने पूर्ण शृङ्गार किया था उसने राधा से शृङ्गार न करने का कारण पूछा। राधा ने कहा कि तुमने मेरा प्रिय हर लिया है क्यो शृङ्गार करूँ। राधा और चन्द्रा का

विवाद हुआ। जो द्वन्द में परिणित हो गया। सारे शृङ्गार छिन भिन्न हो गये। कृष्ण ने अन्त में दोनों को संतुष्ट किया।

कंस इन समस्त बातों को सुनकर व्याकुल हो गया। उसने नन्द यशोदा को बुलाकर बन्दीगृह में डाल दिया तथा यज्ञ के लिए सभी ग्वालिनों से घी दधि मंगवाया। कृष्ण गाय चराकर लौटे तो उन्होंने घर वृन्दावन को जन शून्य पाया। "शुक" ने कृष्ण का क्रोध सुनकर कंस के दैत्यों को युद्ध के लिये तैयार रहने का आदेश दे दिया। अक्रूर वृन्दावन आये। उनके निमंत्रण पर कृष्ण और बलभद्र मथुरा की ओर चले। गोपियाँ व्याकुल हो गई। कृष्ण ने मधुपुर की अद्भुत शोभा देखी। सुदामा का स्वागत स्वीकार किया। मार्ग में कुब्जा मिल गयी। उसने चन्दन चढ़ाकर कृष्ण की अर्चना की। कृष्ण ने प्रसन्न होकर उसे सीधा और अत्यंत रूपवती बना दिया। कुब्जा स्वीकार करते हुए कृष्ण ने उसी के माध्यम से सन्देश पहुंचाया कि कंस से कह देना कि वह समस्त बंदियों को मुक्त कर दे अन्यथा मैं 'हिरनाकुस' और 'रावण" के समान उनको नष्ट कर दूंगा।

रूपवती कुब्जा महलों की ओर चली तो हाट में बैठे हुए लोग उसके रूप को देखकर विमोहित हो गये। यथा सुनार गहना गढ़ रहा था उसने अपने हाथ पर ही प्रहार कर लिया। जायसी ने इस स्थल पर बहुत ही रोचक वर्णन किया है।

कंस ने नन्द को बुलाकर कहा कि दोनों बालकों और ग्वालों को बुलवाओ वे यहाँ आकर रंग भूमि में मल्लें। 20 हजार ग्वाले और दानव दैत्य एकत्रित हुए। कुवलया हाथी द्वार पर बांध दिया गया। इस खेल की बात सुनकर ब्रह्मा, महादेव, सवा लाख पवन, आठों कुल के नाग, छप्पन वैश्वानर व्याकुल हो उठे। छत्तीस करोड़ देव नमाथ, चौरासी सिद्ध और अट्ठासी हजार ऋषि इस खेल को देखने के लिए आये। कंस ने नन्द से कहा कि यह एकाजा युद्ध होगा। नन्द भिझके कि कृष्ण छोटा है मल्लों से युद्ध कैसे करेगा परन्तु बीड़ा लेकर ही लौटना पड़ा। कृष्ण ने नन्द को ढाढ़स बंधाते हुए अपने स्वरूप और अवतार की बात कही। ग्वाले और दैत्य जूझ गये। चाणूर को मारने के लिए अर्जुन (बलभद्र) आगे बढ़े तो कृष्ण ने कहा कि यह रक्तबीज है, इसे मैं ही युद्ध में मारूंगा। कृष्ण के आते ही दैत्यों ने कपट युद्ध प्रारम्भ किया। कृष्ण शंख, चक्र, गदा, धनुषधारी चतुर्भुज हो गये। घमासान शस्त्र और द्वन्द युद्ध हुआ। कृष्ण ने 'चाणुर' को घुमाकर ऐसा पटका कि एक बूंद रक्त भी पृथ्वी पर नहीं गिरा और वह यमलोक सिधार गया।

कंस भयभीत हो गया उसने नन्द को बुलाया और कहा कि ग्वालों को मना करो। कृष्ण को स्वर्ण चक्र वाला रथ व राजसी पहनावा देकर बिदा किया। गोकुल में हर्ष का पारावार लहराने लगा। कृष्ण गोकुल पहुंचते ही यशोदा के साथ

मगल कलश लिए गीत गाती ग्वालिनो ने च दन आरु, कुमकुम की वर्षा की, और आरती उतारी।

चद्रावती ने अगस्त न चाणुर वध की बात पूछी। अगस्त धाय ने कृष्ण के सम्बध मे सब कुछ बता दिया। चद्रा दशन और मिलन हेतु व्याकुल हो उठी अचेत हो गई। बार बार दशन का आग्रह करने लगी। अगस्त के साथ चद्रा सोलहो शृगार कर सखियो (नक्षत्रा) सहित महर मदिर मे गई। कह्न ने चाद को चाँद ने कह्न को देखा दोनो की दीपक पतग गति बन गयी।

राधा भी महर गृह की ओर चली, दो हजार सखियो के साथ। माग म "दानी" मिल गया। उसने दान माँगा राधा की राह रोक ली राधा ने कहा कि विधना ने मुझे क ह के लिए बनाया है मै उसकी छाया हूँ। कृष्ण प्रकट हो गये दोनो का मिलन हो गया। प्रात राधा सोलहो शृगार कर गौरी पूजन के लिए चली वन म श्री कृष्ण बाँसुरी बजाते हुए मिल गय। उन्होने सभी को स्वण कोट मे घेर लिया फुलवारी से फुल चुराने के अपराध मे। राधा कृष्ण म मिठ बोला हुआ, फिर धमारी हुई और दोनो विलास मे चले गय।

राधा कृष्ण का विवाह हुआ। ब्रह्मा न मत्रोच्चार किया महादेव ने मण्डप सजाया, पावती ने मगल गीत गाये इन्द्र न वादन किया, अप्सराओ ने पल्लू बाँधे भवरी हुई और चौक पूरे गये।

इसके पश्चात् जायसी न राधा कृष्ण की मिलनावस्था के अनेक अनेक वर्णो क चित्र प्रस्तुत किए है। बसन्त धमारी का चित्र भी बड़ा मनमोहक है। राधा आश्चर्याभिभूत है कि कृष्ण प्रत्येक गोपी के साथ कसे सुशोभित हैं। अन्त मे राधा जान पाती है कि कृष्ण पूण कला सम्पन्न पुरुष हैं।

कृष्ण भोग रस मग्न थे और कस व्याकुल था। कस ने कृष्ण को समाप्त करने हेतु सुर और नारद को बुलाकर मन्त्रणा की। मन्त्रियो ने सुझाव दिया की यापावली पर रगभूमि सजाई जाय और द्वद्व युद्ध का आयोजन किया जाय। रगभूमि सजाई गई और खोज खोज कर दैत्य बुलाये गये।

कुबजा महलो म पहुची तो उसे अप्सरा रुप म देखकर सभी ठगी रह गई - कस का मुच्छा आ गई। चेतना आने पर उसने कहा कि क्या तुम्हे इन्द्र न भेजा है — तुम मेरी रानी बन जाओ।

कुबजा ने कहा—राजन् मैं तो तुम्हारी दासी हूँ — सुगन्धी कुब्जा। कृष्ण ने मुझे ऐसा बना दिया और सन्देश दिया है कि आप सभी बन्दियो का मुक्त कर दें अयथा व मधुपुर को दहन कर देंगे। कस यह सन्देश सुनकर दहक उठा। उसने अक्रूर के द्वारा कृष्ण को बुलावा भेजा। कृष्ण समाचार पाकर ईश्वर का स्मरण करते हुए मथुरा की ओर चल दिये। चतुर्भुज रूप धारण किया। सभी लोगो ने अपनी अपनी भावना के अनुरूप कृष्ण के स्वरूप के दशन किये।

कृष्ण गढ के निकट पहुंचे—धनुष चूर-चूर कर दिया एक दैत्य को यमलोक पहुचा दिया। पहली चोकी पर उनका स्वागत हुआ। दूसरी से छठी पौरी तक दैत्यो का सफाया करते वे आगे बढ़ते गये। सातवी पौरी पर कृष्ण और बलभद्र ने सहस्त्र हाथियो के बलवाले कुवला को समाप्त कर दिया। कुवला के समाप्त होते ही हडकम्प मच गयी। 'मुष्टिक" मल्ल को बलभद्र ने समाप्त कर दिया। अन्य मल्ल भी मारे गये। कृष्ण ने 'झोटा" पकड़कर कंस का जमीन में पटक दिया। वह परलोक सिधार गया। उन्होंने नन्द-यशोदा, वसुदेव देवकी को कारागृह से मुक्त किया। कंस के पिता को राज्यासन पर असीन किया। बलभद्र को, द्रव्य और कृष्ण को रनिवास प्राप्त हुआ। कृष्ण कुब्जा के पास चले गये और षट् ऋतुओ का आनन्द लेते रहे।

प्रतीक्षारत गोकुल विरहाकुल हो गया। पशु पक्षी तक विकल हो गये, गोपियो ने कृष्ण के पास पवन दूत को पहुचाया। दूत का सन्देश पाकर कृष्ण ने गोपिया को बुलवाकर मधुवन में रस भोग किया। सोलह सहस्र गोपियाँ और एक पुरुष।

कृष्ण ने धर्मशाला' चलाया—योगी, जोगी सन्यासी, पंडित सभी यथा योग्य पाने लगे। भक्ति की सरिता प्रवाहित हो उठी। दुर्वासा ऋषि ने अन्न ग्रहण नही किया था अत सभी गोपियो ने पकवानो से उन्हे तृप्त कर छप्पन कोटि पुत्र का आशीर्वाद प्राप्त किया। लोटकर गोपियो ने मान किया और यमुना सूखने का रहस्य जानने का आग्रह किया। कृष्ण ने अपने मुख मे समस्त ब्रह्माण्ड के दर्शन करा दिये। कृष्ण ने कहा अपना अन्तरपट उघाडकर देखो सारा भाग ईश्वर करता है—यह सृष्टि उसकी लीला है। गोपियो ने यह भेद जाना।

कृष्ण की कीर्ति सुनकर गोरखनाथ अपनी विशाल योग वाहिनी लेकर आ पहुचे। कान्ह तक योगियों के आने की बात पहुची। कृष्ण मिलने आये। गोरख नाथ ने कहा तुम्हारी कीर्ति सात समुद्र पार तक पहुची है—तुम भोग त्यागकर योगी बन जाओ।

कृष्ण ने कहा—मैं तुम्हारा योग लेकर क्या करूँगा? सोलह सहस्र गोपियाँ मेरी सेवा करती हैं वही तपी और कैलासी है। गोरखनाथ ने आह्वान किया कि आवो "मार' करें जो मरे उसकी हार। गोरख और कान्ह मे युद्ध हुआ। अन्त मे गोरख मान गए कि तू बडा ज्ञानी है। गोरख सुमेरु की ओर गये और कान्ह मधुपुर लौट आए।

लम्बे अन्तराल के पश्चात् एक वृद्ध ऋषि कन्ह के पास आये और वृद्धावस्था मे सेवा के लिए एक गोपी चाही। कृष्ण ने कहा आप यहाँ भोजन करें विश्राम करें। रात्रि को जिस गोपी की सेज सूनी हो उसे अपने साथ ले जायँ।

रात्रि पर्यन्त वे सभी सेजो ने पास गये और उन्होंने सभी जगह पुरुष की खपार सुनी कोई सेज खाली न थी, प्रात होत ही व अपने गन्तव्य की ओर चल दिये।

छप्पन कोटि यादव क्रीडा मग्न थे। उन्होने एक तुन्दिल पडित को देखकर हसी उडाई। ऋषि ने खीभकर कहा तुम लोग आपस म ही लडकर समाप्त हो जावेगे। यादवो का क्षय होन लगा। कृष्ण ध्यान मग्न हुए, उन्हे ज्ञात हो गया कि अब दशा पूर्ण हो गई है। उन्होंने अर्जुन (बलभद्र) को राजकाज दे दिया और स्वय ससार त्यागने की दृष्टि से द्वारका की ओर चल दिये। यह जानकर सभी बिलखने लगे। कृष्ण ने सभा को मधुपुर म रहने को कहा और यह भी बताया कि मैं जहां से आया हूँ अब वही जाऊँगा।

अर्जुन को सारा भार सौंपकर कृष्ण द्वारका की ओर चल पडे। चलते चलते सध्या हो गई। व एक स्थान पर विश्राम करने लगे। इसी मध्य एक शिकारी ने विष बुझा बाण छोडा जो उनके तलवे म लगा और कृष्ण ससार छोडकर चल दिये।

अन्त मे महाकवि जायसी न पुन प्रस्तावना वाले सत्य को दुहराते हुए कहा कि— "इस ससार मे आकर कोई रहा नही। इसे तो मूल रूप म परदेश जैसा समझो।'[1]

कृष्ण कथा और कन्हावत का मूल स्रोत

कथा वस्तु का नवीन सघठन

हिन्दी भक्ति युग के आराध्यो में 'कृष्ण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, पुराणो में प्राय सर्वत्र उनका माहात्म्य मिलता है। भारतीय इतिहास के वे सर्वाधिक प्रधान व्यक्ति हैं। वे महाभारत युद्ध के सूत्रधार है, महान कर्मयोगी हैं, महान पराक्रमी और महान राजनीतिज्ञ हैं। योगेश्वर, पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपो में वे महान हैं। कृष्ण का महिमा मण्डित और अभिव्यक्तियों-वचिश्रया से सम्वलित विराट व्यक्तित्व भारतीय मनीषा की एक महत उपलब्धि और परिकल्पना है गोपीजन वल्लभ, राधा माधव राजा नेता, कर्मयोगी, भोगी वे सभी रूपो मे महत और दिव्य हैं।"[2]

---

1 यह ससार सपन के नाहीं। रहा न कोई आइ जग माहा॥
तुम पुनि चलचल सुनहु सदेसा। सांवर नेहु जान परदेसा॥ कान्हावत पृ 255

2 कन्हावत भूमिका — पृ 48

कन्हावत हिंदी कृष्ण काव्य परम्परा का प्रथम प्रबंध काव्य है। सूर से भी पहले जायसी ने कन्हावत में कृष्ण चरित का वर्णन किया है। यह हिन्दी का प्रथम कृष्ण काव्य है।

कन्हावत की कथा के मूलस्रोत के विषय में जायसी ने लिखा है—
' हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता। गावहिं वेद, भागवत संता॥
विष्णु, पदुम, सिव, अगिन पुराना। भारथ, सिरि हरिबंस बखाना॥
सुनेऊँ पढ़ेऊ भागवत पुराना। पाएऊँ पेम पथ सधाना॥
जोग, भोग तप और सिंगारू। धरम, करम, सत के बेवहारू॥
ज्ञान अगनि रस कवल बिगासा। भौंर दूर सा आवहिं पासा॥
सुमिरो वेद बिआस क चरना। जिन्ह हरि चरित सहसार बरनी॥
कन्ह कै कथा लोक महं एती। सरगैं नरखत तराइन्ह जेती॥
अइस प्रेम कहानी, दोसरि जग महं नाहि।
तुरकी अरबी फारसी - सब देखेऊँ अवगाहि॥'[1]

स्पष्ट है कि जायसी यह मानते हैं कि कृष्ण की अनन्त कथाएँ हैं इनका गायन वेदों मे है भागवत में है और संत जन भी इन्हें गाते हैं।

कवि ने विष्णु, पद्म, शिव, अग्नि हरिवंश पुराणों का भी उल्लेख किया है। उसने यह भी लिखा है कि—"सुनऊ पढऊ भागवत पुराण और इसमें प्रेम पथ का संधान मिला। उसके अनुसार कृष्ण कथा मे योग भोग तप शृंगार, धर्म कर्म सब व्यवहार ज्ञान और भक्ति का कमल अपने परिमल को विकीर्ण कर रहे हैं। उसने वेदव्यास का उल्लेख—चित्ररेखा पदमावत और कन्हावत—अपने तीनों प्रबन्ध काव्य मे किया है। उसके अनुसार वेदव्यास ने हरि चरित्र का सविस्तार आख्यान किया है। उसके एक और महत्वपूर्ण तथ्य की ओर संकेत किया है—'जग में कन्ह कथाएँ इतनी हैं जितनी आकाश मे तराई"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जायसी के समक्ष अनेक पुराणों की कृष्ण कथाएं थी साथ ही लोक में प्रचलित अगणित कृष्ण कथाएँ भी थी और इन सब स्रोतों से उन्होंने कृष्ण कथा के सूत्रों को गृहीत करके कन्हावत की कथा वस्तु की संरचना की है।

कन्हावत' मे गोरखनाथ और कृष्ण के द्वन्द्व की कथा भी है। पदमावत को विद्वानों ने योग पंथ का आकार ग्रन्थ कहा है। कन्हावत में भी कवि पंथ से प्रभावित मिलता है। गोरखनाथ की कथा को कृष्ण कथा से जोडने का यही रहस्य है। यों मध्यकाल में गोरखनाथ के विराट व्यक्तित्व और कर्तव्य का व्यापक प्रभाव था। जायसी ने इससे प्रभावित होकर कृष्ण और गोरखनाथ का द्वन्द्व भी

1 कन्हावत—डॉ शिवसहाय पाठक छन्द 14 पृ 12,

करवा दिया है। क हावत की कथा से ज्ञात होता है कि कवि ने इनके शास्त्रीय रूप म अनक परिवतन भी किय हैं। ये परिवतन कुछ तो उसके कल्पना विलास से जनित है और कुछ का स्रोत लोक जीवन है। कुछ परिवतन ऐसे भी हैं जिनके मूल स्रोत का पता भावी शोधो के अन तर ही लगगा। जायसी ने कृष्ण के ज म स लेकर उनकी मृत्यु तक की विविध कथाओ का इसम सुष्ट सघटन किया है, अनक घटनाओ को अपनी कल्पना से नवीन रूप म उपस्थित किया है—और इस प्रकार उ होने कृष्ण के विराट जीवन चरित्र का महाकाव्यात्मक रूप म अकन किया है।

रूप सौन्दर्य वर्णन

नख शिख

जायसी ने पद्मावत म पदमावती का नख शिख वणन किया है और लौकिक सकता स परम सौ दय की एक झलक देने का प्रय स किया है। उनका सादृश्य विधान प्राय भारतीय काव्य परम्पराओं क अनुकूल है। उ होने भ्रमर, वासुकि, जमुना, सरस्वती, शुक, यामिनी, च द्र, नारगी श्रीफल आदि उपमानो स नायिका का सादृश्य विधान किया है।

क हावत म भी जायसी न राधा च द्रावली आदि के रूप सौ दय वणन क अन्तगत साहित्यिक परम्परा क उपमाना तथा लोकगृहीत उपमानो के साथ ही कतिपय नवीन मौलिक उपमाना का भी आनयन किया है।

नायिका के रूप सौ दय चित्रण क लिए फारसी के कवि नख शिख वणन अवश्य करते ह। इसके द्वारा व नायिका के रूप गुण और अगा की गरिमा को अधिक भास्वर बनाकर प्रस्तुत करत हैं। भारतीय नायको को योगी बनकर निकल पडने के लिए यह रूप सौ दय ही विवश कराता है। पद्मावत म रतनसेन पद्मिनी का रूप सौ दय वणन सुनकर योगी वेश म चित्तौड से निकल पडता है। 'क हावत' मे कृष्ण च द्रावली के रूप सौ दय पर विमुग्ध होकर योगी बनत हैं और च द्रावली की फुलवारी म धुनी रमाकर बैठ जात हैं।

क हावत म निम्नलिखित प्रसगा म रूप सौन्दय वणन की योजना की गई है —

(1) मथुरा नगर वणन के अन्तगत।[1]
(2) गोकुल की ग्वालाओ का रूप-सौ दय वणन।[2]
(3) बालक कृष्ण का रूप-सौन्दय वणन।[3]

---

1 क हावत—पृ 18 छन्द स 21
2 वही पृ 26 छन्द स 29
3 वही पृ 42 छन्द स 51 70 90

(4) चंद्रावली का रूप सौंदय वणन ।[1]
(5) चंद्रावली-राधा-विवाद के संदभ मे रूप वणन ।[2]
(6) राधा का रूप वणन ।[3]
(7) राधा का नख शिख वणन ।[4]
(8) राधा की सखियो का रूप वणन ।[5]
(9) कुब्जा का रूप-सौंदय वणन ।[6]

रूप सौंदय वणन के इन सभी स्थलो पर जायसी ने भारतीय साहित्य के प्रचलित उपमानो, मौलिक उपमानो तथा अन्य प्रकार के उपमानो की सयोजना अत्यंत सुन्दर और काव्यात्मक रूप म की है।

मथुरा नगर वणन के सन्दभ मे कवि ने वहाँ के सप्त भूमिक गढ का वणन करते हुए उसमे रहने वाली रानियो का वणन किया है

सात दीप कै रानी भरी । जनु कँलास माझि आछरी ।।
रूप सुरूप सुरंग सोहाई । जनु बैकुंठ हुती सब आई ।।
चंद देखि तेहि होई मलीना । दरसन सूर जाइ होई खीना ।[7]

कस की रानियो को कवि ने 'स्वग की अप्सराओ की उपमा दी है, उन्हे देखकर चंद्रमा भी मलिन कांति हो जाता है, सूय भी क्षीण प्रभा हो जाता है।"

मथुरा के जल भरे सागर सरोवरो का क्या कहना है, वहाँ पानी भरने जो पनिहारिनियाँ आती है वे अत्यंत रूपवती हैं। उनके सिर पर कनक कलश हैं, वे बाहँ डोलाती हुइ चलती हैं।

'पानि भरन पनिहारी आवहिं । कनक कलस सिर बाहँ डोलावहिं ।।[8]

कृष्ण का जन्म होने पर वासुदेव भारी चिंता म पडकर—कहाँ छिपाऊँ लेई अस दिया । लेऊँ घालि जो फाट हिया ।।[9]

यसुदेउ बार देखि सुठि लोना । अति निरमल चमकै जनु सोना ।।[10]

---

1 वही पृ 75 छन्द स 100
2 वही प 104 छंद स 112
3 वही प 142 छंद स 142
4 वही पृ 107 छंद स 153 व 286
5 व हावत पृ 165
6 वही पृ 189
7 वही पृ 18
8 वही पृ 21
9 वही पृ 43
10 वही प 75

यहाँ श्रीकृष्ण के लिए निमल और उनकी प्रभा के लिए "चमकते सोने" की सुदर उत्प्रेक्षा दृष्टव्य है। कृष्ण के लिए भास्वर "दिया" (दीपक) का उपमान भी अत्यन्त व्यजक बन पड़ा है।

चद्रावली के लिए अगस्त सोच रही है
"वह सो सरग ऊपर छह ऊई। नैन न दीख कर काहु न छुई।
जाकर बदन दूइज सब दीसा। जग जुहार कै करई असीसा।
अस निरमल वह दई सँवारी। चारहु भुवन होई उजियारी ॥
चौदसि गगन सपूरन, जाने सब सर्यसार।
घलै तो होइ अमावस, रहे जगत अंधियार ॥[1]

यहाँ चन्द्रावली के चदरूप का बडा ही प्रभावाभिव्यजक रूपक दिया गया है। वह चौदहवी (पूर्णिमा) के चन्द्रमा सदृश्य भास्वर है। उसकी रूप ज्योति से निखिल भुवन रूपयित हो उठा है। चन्द्रावली विश्व व्यापी महाज्योति का नाम है। उसके अनेक रूप और प्रतीक निखिल ब्रह्माण्ड म व्याप्त है। वही ज्योति चन्द्रमा के रूप मे अ काश म उदित होता है, वह कलाश शिव लोक की मणि है जो गोकुल को प्रकाशित करने के लिए उत्पन्न हुई है, उसी महा ज्योति की रश्मि से भुवनो को आलोक मिला है

चद्रावली 'स्वाति" है, कृष्ण चातक हैं वे अगस्त से कहते है कि 'मेरी प्यास शीघ्र बुझाओ।[2] अगस्त ने कहा—

'वह सो चन्द्रावलि है गोपी । सरग चाँद दिन रहे अलोपी ॥
औ धौराहर ऊपर बनै। सोरह करो ज्योति परगसै ॥
मुख जोवहिं गन गन्धाव देवा। नौ सइँ नखत करहि सब सेवा।[3]

चद्रावली को पूर्ण चन्द्र जसी महाभास्वर कहा गया है, गण, गधव, देवता उसका मुख निहारा करते ह, तारागण उसकी सेवा मे सलग्न हैं। चन्द्रावली को विश्व की चिति (या महाज्योति) शक्ति के रूप मे कवि ने उरहा है।

"जग उजियार भई रहि जोती। पुनिऊँ जोनि कहाँ जग ओती ॥[4]

अलकृति जन्य सौदय के साथ ही कवि चन्द्रावली के विश्वव्यापी भास्वर सौदय की ओर भी सकेत कर रहा है। उसके चद्र बदन की ओर देखकर हरि अपनी सुधि खो बठे :

---

1 चन्द्रावत पृ 75
2 चन्द्रावत छन्द 75
3 वही छन्द पृ 74
4 वही ,, – 109

"सूरज चाँद मुख जोवत, रहा नैन तस लाइ ।
पाल पलो नहिं लावै, लोटि मार नहिं जाइ ।[1]

हरि के लिए सूर्य और चन्द्रा के लिए चन्द्र के उपमान या प्रतीक अत्यन्त सार्थक और व्यजक ह ।

चन्द्रावली की भौंह धनुष हैं – वही जा राम, परशुराम आदि क हाथों म रहा, जिससे रावण, सहस्त्रबाहु आदि के वध हुए । उन भौंहो के धनुष को अवतारी कृष्ण ने चीन्ह लिया

इहई धनुक म रावण मारा । इहई धनुक मैं मार सधारा ।
इहई धनुक छनुवाई कीन्हा । इहई धनुक अरजुन कह दीन्हाँ ।
आज धनुक मैं चीन्हां, सोइ धनुक औ बान ।[2]

चन्द्रावली राधा विवाद के स दभ म दोनो न अपन रूप की प्रशसा म एक से एक सुदर उपमानो का उपस्थापन किया है साथ ही दोनो न एक दूसरे के रूप के लिए तिरस्कार और अपमान सूचक उपमाना के माध्यम से व्यग्य किया है ।

कवि ने राधा का रूप सौन्दय वणन अत्य त उल्लासित और उत्तजित भाव से किया है तथा परम्पराप्रथित उपमाना के प्रयोग किए हैं ।

रूप सौन्दर्य वर्णन के उपमान

पद्मावती के 'नखशिख वणन के समान राधा का नख शिख वणन 'कन्हावत" मे मिलता है । इसम जायसी न राधा के शरीर के विभिन्न अगा क लिए उपमानो का प्रयोग किया है वे समष्टि रूप म निम्नलिखित हैं

(1) माग

(पाटी, पडी माग)– तारा भरा आकाश, सूर किरन, बीर बहूटी, घुंघची मौक्तिक भरी केश राशि –

'पाति पाति मुकताहल बनी ।
सरँग नरवत जनु दीसहि घनी ॥
उगरत सूर किरन जस फूटी ।
रेंगि चली जनु बीर बहूटी ॥
× × ×
सेंदुर माग भाव तस पाई ।
घुघची जइस रात दिखराई ॥

1 कन्हावत छद – 113
2 वही – 115

कनक खभ जनु विसहर चढ़ा।
गारूर भूल मत्र को पढ़ा॥[1]

(2) ललाट

कचन रेख, दूइज का चाँद, सूयकला, माँग मे तिलक-पत्र, रचना-कृति का नक्षत्र—

"मनि ललाट जनु कचन रेखा (कचनरेखा)।
दुइजक चांद उवा अस देखा॥ (द्वितीया का चद्र)
बदन सपूरन ससहर दीसा॥" (पूर्णिमा का चन्द्र)
× × ×
तिलक बनाइ जो चूती रची।
चांद सय जानहु कवाची॥ (कृतिका नक्षत्र)।[2]

(3) नेत्र

कमल कमल पत्र पर बैठा भ्रमर सीपी आदि
नैन सुरूप सुरगम दीठी।
कवल पत्र जनु भवर बईठी॥" (कमल पत्र)
सुरग बिरग सीप मुह राते। (सीपी)
अजन रेख बनी अति कारी।

(4) भौंह :

भौंह धनुक धानि जानु अहेरी।" (धनुष)

कपोल पर तिल

सुरग कपोन सुहाए, तहिं तिल एक विधि दीन्ह।
भा सजोग मसि बिन्दु अचल गगन ध्रुव कीन्ह॥ (ध्रुव)

(6) नासिका

"सूआ नासिक मुह सिगारु।" (शुक)

(7) अधर

बिज्जुमान जनु विद्रुम धारी। (विदुत)
जानु मिलाए चीर पवारी॥ (पवारी सुम्मी)

(8) मुख

मुह सो कवल जिमि बिगसॅ, फूल परहि जनु बात।" (कमल)

---

1 चन्दायन छद 234
2 वही " 235

(9) दशन

दसन पाट जनु बठे हीरा (हीरा)
बिहसत जानहु बीजु दखावै (विद्युत)
घरनिहि मांझ नखत जनु ऊर्वहि (नक्षत्र)

(10) दांत कपोल के लिए अमृत
फूल परहिं जो-जो कहू बोला। जनु अब्रिन जो सुरगकपोला।

(11) कंठ

कोकिल कंठ बात जो कहै। (कोकिल)

(12) ग्रीवा

जानु सोनार साचें भरि काढ़ी। गीऊँ पुछारि मोति जनु ठाढ़ी॥
मानो उसकी ग्रीवा सोनार ने सांचे में भरकर निर्मित की है।
वह मयूर ग्रीवा है।
"जानु उई भरि नखत तराई (रत्नभरी ग्रीवा)

(13) हृदय प्रदेश स्तन द्वय

कुच कचोर दोइ तेहिं महँ साजे। (कचोर)
अमियँ कलस जानु लेई लाई। (अमृत कलश)
मुद्रित रतन जानु बैसाई। (मुद्रित रत्न)
कै रै सिघोरा सेंदुर भरे। (सिंघोरा)
जनु कचन मालूर सवारे। (कचन बिल्व फल)

(14) भुजा

"भुजा सुवरनक केहि लेइ लाऊँ।
जेहि रे जोग बसत कछु पाऊं॥ (बसन्त)
कनक दण्ड जनु साँचे फिरे॥ (कनक दण्ड)

(15) अंगुली

अगुरी छीमी के पतराई (छीमी)
मुदरिन्ह भरी बीजु लेइ दूनी (बिजली)

(16) रोमावली

(17) कटि

अलप लक रहै हिंगुरबारी। (हगुर चौमान का उडा)
पातर लक सिहिनी भीनी (सिंहनी)
बरें लक चाहि अति खीनी (बरें)

(18) खड़ी हुई राधा

जानहु सुरुज किरन हुत काढ़ी। (सूर्य किरण से निकली)

(19) जांघ

जघ अहहि केला के गाभा (केला के गाभा)

(20) परो की ऊँगलियां

"अगुरी जानहु दारिऊ करी। दस नख माऊ महावार भरी
(दाडिम कली)

(21) पर

अमिय केल अनु भाइ विगासा (कमल अमृत)

(22) गति

हंसि गवनि जिमि गवनैं, सउद होइ सकार। (हसगति)

सक्षेप म नख शिख और रूप वणन म प्रयुक्त उपमानो की यह रूपरेखा है। ये उपमान मुख्यत दो प्रकार के है

1 – प्रकृति क्षेत्र से गृहीत उपमान और 2 – अन्य सांसारिक वस्तुओ स सम्बन्धित उपमान। कमल, भ्रमर, चन्द्र, सूय आदि प्रकृति क्षेत्र से गृहीत हैं। खभ, प्रभृति उपमान अन्य सासारिक वस्तुओ से गृहीत उपमानो की कोटि मे आते हैं। ऐसे उपमानो की सख्या अपेक्षाकृत कम है। कवि ने प्राय भारतीय काव्य परम्परा प्रथित उपमानो का आश्रय लिया है। सम्पूर्ण नख शिख वणन का या त्मक है। कहीं कहीं कवि ने नवीन मौलिक उपमानो की भी योजना की है। नख शिख वणन मे जायसी म कहावत म ग्रीव से परो, उगलियो और उगलियो के नखो तक का वणन किया है। नख शिख वणन मुख्य रूप से राधा का ही किया गया है।

षट ऋतुवणन

षट ऋतुवणन की परम्परा के अनुसार जायसी न कृष्ण और कुब्जा के सयोग के उद्दीपन रूप मे षट ऋतुवणन की योजना की है इसके सम्यक अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि इसम अपेक्षित काव्यात्मकता के साथ ही लौकिक तत्वो का भी सुन्दर समावेश मिलता है।

इस षट ऋतुवणन म नवला परम रूपवती कुब्जा के हर्षातिरेक का चित्रण हुआ है।

कस का सहार करके कृष्ण ने शासन का काय बलराम को सौप दिया। कृष्ण ने कस का रनिवास सम्भाला कुब्जा सुन्दरी के साथ उनका भोग विलास शुरू हुआ

"आपु रहे मधुबन होइ, रचि कुब्जा सो भोग।"[1]

---

1 कहावत – पृ 201

जायसी ने बड़े उपयुक्त अवसर पर षट ऋतुवर्णन का अवकाश निकाल लिया है। कुब्जा की संयोगावस्था का चित्रण करने के लिए कवि ने बड़ी कुशलता के साथ ऋतुओं का वर्णन करके एक ओर तो प्रकृति वर्णन का अवसर निकाल लिया है और दूसरी ओर कथा के सौंदर्य को भी अक्षुण्ण रखा है। उसके ऋतु वर्णन की सबसे बड़ी विशेषता है—प्रत्येक मास के अनुसार परिवर्तन का ज्ञान तथा परिवर्तनमान प्रकृति का संयोगिनी के ऊपर पड़ने वाले प्रभाव का विचार। उसने जहां प्रकृति का सीधा और सजीव चित्रण किया है, वहां उसे अपने ज्ञान और अपनी कल्पना से नवीन और मौलिक भी बना दिया है। इस वर्णन में उसकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति भी दृष्टव्य मिलती है। वर्षा का वर्णन करते हुए काले घने बादलों का वर्णन किया है साथ ही वर्षा के अन्य प्रसाधनों का आनयन भी किया है वह उसके सूक्ष्म निरीक्षण का प्रमाण है। इसके द्वारा उसने वातावरण की सुन्दर सृष्टि की है—यह भी उसके कौशल का परिचायक है। उत्तर भारतीय ऋतुओं तथा दृश्यों का समावेश उसे और भी प्रभावपूर्ण बनाने में सफल हुआ है। यद्यपि यह ऋतुवर्णन उद्दीपन रूप में ही है और प्रकृति यहां संयोगिनी के आनन्द को सम्वर्धित करने में उद्दीपन का कार्य करती है, तथापि इसमें कुछ स्थलों पर प्रकृति का आलम्बन रूप में भी चित्रण हुआ है। इससे हमें कृष्ण और कुब्जा के संयोग सुख का अनुमान करने में सहायता मिलती है, इससे कथा का स्वरूप स्पष्ट होता है और विस्तार भी मिलता है, साथ ही काव्य की रमणीयता में भी वृद्धि हुई है।

ग्रीष्म ऋतु का आगमन हुआ है। पवन का झिरकना, शीतल छांह कोमल सेज, फूल ताम्बूल और कपूर—और इन सबके साथ स्वरूपवती कुब्जा

"बनी पदुमिनी कुबजा, जनु आछरि कलास।
सुक्ख सहित बीत भल ग्रीष्म रितु दोई मास।"[1]

पावस ऋतु में अपार जल बरस रहा है सावन भादों बड़े माहिर गंभीर हैं कुबजा ने कचनी कुसमी वस्त्र पहने, कानों में जड़ाऊ खुभी पहन ली। ऊँचे चौबारे पर शयनागार चारों ओर उसके खुले द्वार सुरंग बिछौने चारों ओर सुगन्धि, अंगों में लगे खस और चन्दन और कृष्ण कुबजा का भोग विलास

फूलहिं सखो हिंडोल गावहिं पदुम हुलास।
कुबजई कीन्ह भोग सुख दूसर रितु चौमास॥[2]

संयोगिनी के लिए शरद् ऋतु के समागम का क्या कहना? निर्मल चन्द्र कँवार, कार्तिक का आनन्द, चन्दनिया चीर सवार कर पहनना—सारे जगत में उज्ज्वलता भर गई, सात खण्डों वाला धवलगृह, भाँति भाँति के कटाव उद्वेध

1 कन्हावत पृ 201
2 " पृ 202

उसके ऊपर बिछी सेज, उरेहे हुए चित्र और सजी हुई चार खण्डो की चौकियाँ, दोनों जन गलबाही देकर मिलते हैं, घर मे मानो प्रेम प्रीति ऋतु का आगमन हो गया है। वे क्षण-क्षण मे पान की बीटिका लेते है, कृष्ण नारगी, दाडिम जमीरी नीबू, कमल, केतकी वल्ली, मदन-वल्ली, का रस चखते है—

भाग करहिं रस दूनिऊँ, मिले रहहि एक पास।
खेलत हसत गवाए तीसर रितु छौ मास॥[1]

शिशिर ऋतु के सभार की अनुपमता—अगहन पूस के महीने, घना जाडा दिन छोटे, रात भारी, कुबजा ने भोग की ऐकान्तिक ऋतु को पा लिया? दगलस सवारा गया, श्वेत पीत, हरित रतनारी वस्त्र धारण किए। कुबजा ने दुगुने भाव से प्रीति जोडी, उसने वण-वण की रेशमी साडी पहनी, सौर-सुपेती बिछ गई, सुरग सेज मानो विमान की तरह सजी, उसके ऊपर सुरगी चदोवा ताना गया, दोनों दिशाओ मे जल-पात्र रखे गए—धन्धा और नायक दोनो रग मे भरे हुए

तिल एक बिछुरहिं नाहीं, मिले रहहि एक पास।
एहि विधि कहे चौथहि रितु, सुख के आठहु मास॥[2]

हेमन्त ऋतु मे अति तुषार पड रहा है, पर कुबजा के लिए (लेखे) पाले का कोई अस्तित्व नही है, सखियाँ अवश्य कहती हैं कि— परमशीत काल है" कुब्जा अपने प्रिय के साथ है अत उसके लिए रात दिन के समान हो गई और जाडा न जाने कहाँ चला गया है। वह कभी चन्दनी चोला पहनती है, कभी अमूल्य सिन्दूरी वस्त्र, कभी किंजल सारी पहनती है, कभी मेघवण वस्त्र और कभी चिम्कट सारी। वह फुलडे वाली अगिया भी पहनती है—

बहु सिंगार नित अतिवै, जनु आछीर कयलास।
काम कला, रितु बीतै, पचमे रितु दस मास।[3]

अनुकूल वसत का सुहावना मौसम—चैत्र वैशाख के महिने कुब्जा का सौभाग्य चौगुना हो गया। कात साथ है; वह फाग खेलती है। उसने शृगार करके स्वय को सजाया, सिंदूर से सारा जग रतनार हो गया। मानो कुसुमी फूली हो, ससार के लोग ठगे से देखते रह गए—उसके अधरो पर ऐसा रग चढ़ा कि लोग देखकर पतिगे बन गये। सभी लोगो ने चाचर का आयोजन किया, प्रत्येक द्वार पर अबीर बुक्का की बहार है, चदन और अगर की भारमार है

"खेल फाग रितु मानै, सर्वाहि भोग रस मास ।
साध हियै के पूजे, छवो रितु बारह मास ॥[1]

उपर्युक्त षट-ऋतु वर्णन से स्पष्ट है कि कवि की दृष्टि मे प्रमुख है कुबजा का सयोग सुख वर्णन और उसका माध्यम है षट् ऋतु वर्णन । षट् ऋतुओ के सभार उसके सयोग सुख म उद्दीपन का सचार करते हैं ।

बारहमासा

सदेश रासक, पृथ्वीराज रासो, ढोला मारू रा दूहा, और पदमावत की ही भांति कन्हावत मे भी ऋतु वर्णन के अतर्गत प्रकृति वर्णन किया गया है । 'ऋतुसंहार", "सदेशरासक, और ढोलामारू का दूहा' मे ऋतुओ का वर्णन ग्रीष्म से प्रारभ होता है । पृथ्वीराज रासो और पदमावत मे यह वर्णन वसत से प्रारभ होता है, पदमावत मे 'बारहमासा" आषाढ स प्रारभ होता है । स्पष्ट है कि षट ऋतु वर्णन कहाँ से प्रारभ किया जाय इस प्रश्न पर कोई सर्वमान्य परपरा नही थी । यह अवश्य महत्वपूर्ण था कि किसी उद्दीपक ऋतु से ही उसका प्रारभ हो । यह ऋतु वर्णन मिलनज व आनन्द और विरहजन्य दुख दोनो मे उद्दीपन पर सचार के लिए किया जाता था । इससे काव्य मे मिलन जन्य सुख और विरहजन्य दुख दोनो का रग गाढा हो जाता था । कवियो ने अपने सवेदनशील हृदय स मनुष्य के सुख दुख का प्रतिबिम्ब देखा है । अपनी चिर सगिनी प्रकृति के व्यक्तिगत सुख दुख विशाल पर दृश्य म मनुष्य के व्यक्तिगत सुख दुख उसकी अपनी आशा-निराशा अलौकिक प्रभाव उत्पन्न करती है । हाँ, इस प्रकार के वर्णनो म प्रकृति केवल उद्दीपक का कार्य सम्पन्न करती है । कन्हावत म कवि ने षट ऋतु वर्णन कुबजा के सुख विलास वर्णन के लिए किया है ।

कृष्ण मथुरा मे कुबजा के साथ रम गए । गोकुल म गोपियाँ चिन्तित हो गई 'कनु ने आन की बात सो बार कही थी पर वे लौटे नही । क्या उन्ह मधुपुर म बहुत सुख मिला ? यहाँ क दुखो का स्मरण करके उन्होने आना उचित नहीं समझा । क्या वहाँ उन्हे कोई रूपवन्ती नारी मिल गई ? इस पर लुभा कर उन्होने हम विस्मृत कर दिया ? क्या हम लोगो से उनकी सेवा म कोई कमी रह गई थी ? क्या हमने उनके आदेश का पालन नही किया ?[2]

पुन गोपियो ने कन्ह और कुब्जा भोग की बातें सुनी—सुनते ही उनके मन म वियोग निष्पन्न हुआ । यदि तुम्हे चन्दन ही अच्छा लगा, तो हमसे ही

1 कन्हावत प 206
कन्हावत छन्द पृ 311

क्यो नही माँगा ? यदि तुम्हे टेढी चाल अच्छी लगती है, तो बोलो हम भी उसी चाल चलें ।[1]

कवि ने बडे कौशल से बारह मासा का विधान किया है । कृष्ण कुब्जा के साथ सयोग सुख मे सब भूल गए—षटऋतु वणन की पीठिका पर कवि ने गोपियो के विरह वणन का आयोजन किया है । अषाढ चढ़ा, लोग अपने-अपने घर आए और कन्ह मधुबन म बिलम रहे—

"उनये मेघ चहू दिसि गाजे । चमकि चमकि घन बीजु तराजे ।।
बोले कोकिल सबद सोहावा । आइ पपीहन पीउ बोलावा ॥
दादुर ररहिं कुहूकहिं मोरा । भा बरखा को धर कन्दोरा ।।
अति पुरवा आवँ नित घेरी । भावियोग जिय गोविन्ह केरी ।।
रहब अकेली कन्ह न पासा । कइसँ हम भगउब चोमासा ।
कत लोभाई और सग रहा, सो दुख सँवर जाइ नहिं सहा ।।
जेहि बिच हार न सवरत, तेहिं बिच परा पहार ।
के रे मरन दुखन जिउब, यह र बिरह दुख भार ।।[2]

सावन मे सघन मेह बरस रहा है कृष्ण के स्नेह का स्मरण करके गोप प्रीताएँ बिसूर रही है । घटाघोप बादल छाए हैं । चारो ओर जल ही जल है, सभी अपने घर आ गए हैं, घर-घर मे सखियो न हिंडोले सजाए हैं, जिनके घर मे कात हैं, वे उनके सग झूल रही हैं मेघ-मल्हार गा रही हैं । सखियो ने रच रच कर वस्त्र पहन रखे हैं, गले म अमूल्य हार पहन रखा है—

"हम रख अब निसि दिन, भइ नहिं कन्हु सौं भेंट ।
भरि मानुस गा आनहर, साध रही सब पेट ।।[3]

पदमावत की ही भाँति कन्हावत म भी बारह मास मे कवि ने प्रकृति का यथार्थ चित्रण किया है, दूसरी ओर उसक समानान्तर विरहिणी पर पडने वाले उसके प्रभाव की भी अभिव्यजना की है—'यदि सावन मे सघन घन मेह बरस रहा है तो दूसरी ओर गोपियाँ कृष्ण के वियोग का स्मरण करके झूर रही हैं ।"

काश कि वह बिछोही यह समझता कि भरे भादो म घनी अँधियारी मे कुछ सुझाई नही देता । प्रिय उस परदेश म भूल रहे, वर्षा म न कोई पथिक आता-जाता है और न कोई सदेसा । यमुना मे बाढ आई है जो उस पार गया वह लौटा

---

1 कन्हावत छन्द 311
2 कन्हावत छन्द 312/2 9
3 कन्हावत छन्द 3/3/1–9

नही, शायद वे वहाँ जाकर अधिक सुख पा गए, इसी कारण यहाँ नही आए। हम तो जल म डूब रही हैं नाव जजर है, कौन पार लगाएगा।"[1]

क्वार का महिना—ऋतु नइ नई लग रही है जिसके घर में कात है, वे नारियाँ परम सभागी हैं, वे रसवती सुख भोजन करती हैं, कांत से मिलती हैं, सभी दुखो को भूल जाती हैं। हम से तो हरि न कौल कपट किया, पहल मिले और अब बिछोह दिया। क्वार म अगस्त तारा उगा है, वन म कास फूले हैं और हमारे कान्त कुबजा के साथ भूल हुए हैं। सजन पछी आ गए, पर कान्ह नही आए।[2]

कातिक का सुहावना मास लगा, सभी सोहागिनो के मन को यह अच्छा लगता है—शरदचन्द्र को लोग शीतल क्या कहते हैं, यह हम गोपियो को जला रहा है। जिनके घर मे कात है वे अपने केश का विन्यास करती हैं सिन्दूर लगाती हैं सुख भोग करती हैं हम तो दिन रात वियोग म झूर बिसूर रही हैं।

चद तवै निसि पसरे, सरद केत विहाइ
भानु दहे, दिन दारुन एहि दुख निसि दिन जाइ।[3]

अगहन के महीने मे दिन घटन लगा रात बढने लगी, जाडा लगने लगा एक तो विरह और दूसरे पाला, हम कस इस शीतकाल को झेलेंगी। यदि कान्ह इस ऋतु म आएँ तो वे ही जाडे को देश निकाला दे सकते हैं।"[4]

पूस मास मे घनी सर्दी पड रही है और हमारा बिछोहा अभी भी नही आया। बिना स्वामी के हृदय थर थर काँप रहा है। सारा शरीर और हवा की तरह डोल रहा है। विरह की अगीठी से देह दग्ध है, अभी भी यदि हमारे सूर्य चले आएँ तो शीत भाग जाए। गोपियो के विरह की प्रभु विष्णुता अत्यन्त मार्मिक रूप म अभिव्यक्त हुई है

'आवहु कान्ह मया कै, गोपिन्ह प्रान अधार।
उजरत हिया बसावहु करहु हमारइ सार॥[5]

माघ मे दिन रात तुषार पड रहा है, किसी भाँति जाडा नही छूटता। वन म गोपियाँ तुषार मे मर रही है सार सुपेती तो हिमालय हो गई हैं। अन्या अपने पुरुषो के लिए सजती हैं गले लगाकर सर्दी को दूर भगाती हैं। हमारी सेज हिमाचल की तरह बर्फानी हो गई है।

---

1 कन्हावत पृ 314/1-9
2 " 315/1-7
3 316/1-9
4 317/1-9
318/1-9

"को कुदिष्टि जान हरि केरी। सोत कीन्ह जो कुबजा चेरी॥
हम दुहाग ओहि दीन्ह सोहागू। भए दिन ओछ फिरा अस भागू॥[1]

फागुन में चौगुनी सर्दी पड रही है जाडा सोचता पर कन्ह नहीं आए। पवन झिरकता है, हृदय काँप उठता है। तिल तिल रात घट रही है, दिन बढ रहा है, हमारे प्रिय मधुबन म अलोप ह, उनका स्मरण करके गोपियाँ झूर रही है। जिनके घर म कान्त हैं, वे फाग खेलती हैं, सिंगार करती हैं, सिर मे सिन्दूर लगाती हैं, हमारे लिए सिन्दूर धूल क समान हो गया है —

'चन्दन अगर, कुमकुमाँ, सब काइ खोरे देह।
कान्ह पाछि सब गोपी, जनु सिरमेलहिं खेह॥[2]

ईश्वर चैत्र मे उन्ह ही जाडा दे, जिनके घर मे सेज हो, भोग सुख हो। सभी स्त्रियाँ बसत ऋतु मे हर्षित होती हैं, मधुबन से अपने घरो मे फूल ले आती हैं, कुसुम कलियो स सज बिछाती हे और अब तो कुबजा के भाग्य में सुख है, हमारे माथे दुख है हमारे लिए तो सेज अग्नि के समान दाहक हो गई है, बसत तो तभी अच्छा लगता है जब विहस कर कान्त घर आयें।[3]

वैशाख म सूय अधिक गम हो गया, चन्द्रा और राधा झूर रही हैं सोलह सहस्र गोपियाँ श्री कान्त के अभाव मे कौतुक भूल गई हैं। हमारे लिए तो अगर अग्नि हो गया है, वस्त्र अगारे हो गए हैं।

जेठ जीवु अब पिय बिनु नाही। होइ धाम जनु लूक पराही।
परै बजासन बहहिं लुवारा। पिय बिनु जरै सेज न सुवनारा।
भूहर मुइ धिक रबि होई रही। उठै अठार तन जाइ न सही।
पिउ जो मिलहिं घरै मन पूरा। नतु जरि होब छार कर कूरा।
अबहूँ जौरे कान्ह चलि आवहिं। असम समटहि अगिन बुझावहिं।
अगिन जरहिं दगध जहिं गोपी। ऊधो मधुबन रहे अलोपी।
जरहिं आगि हिय उर सब जरई। बिनु रे कान्ह को सीतल करई।
"पूज अवधि बढ़े दिन, कनु नहिं आए पास।
तपति सहत सब गोपिहि, बीते बरहो मास॥[4]

यहाँ जेठ महीने की प्रतप्त प्रकृति का परिदृश्य चित्रित है, साथ ही उसका वियोगिनी पर पडने वाला प्रभाव भी अंकित है।

---

1 कन्हावत पृ 319/1/9
2 कन्हावत पृ 320/1 9
3 कन्हावत पृ 321/1 9
4 कन्हावत पृ 323/1 9

कन्हावत के विरह वर्णन की बहुत बड़ी विशेषता यह है कि कवि ने अत्यन्त सहज रूप मे विरह के मार्मिक भावों की तीव्र अभिव्यंजना की है। एक उदाहरण इस तीव्रता और प्रभविष्णुता के प्रदर्शन के लिए पर्याप्त होगा।

"का तुम्हार हम अवगुन कीन्हा। जेहि कारन पट अंतर दीन्हा ॥
हीया बीच न राखतहि हारा। अब होइ रहे जउन के पारा ॥
बिनवइ रनि अकेलेउ करी। बिनु प्रिय रैनि, फाटि हिय मरी ॥
औ जोबन धन बरस अढ़ाई। भोग बार का अवधि बुढ़ाई ॥[1]
आउ देखु जस मरण हमारा। कहि कहि सोऊँ करहि सभारा ॥
काहु देखाइ के काहु देखायहु। प्रीति लगाइ आग तन लायहु ॥
प्रेम चिनगि सुलुगे तस हिया। जनु लेसती पाल निसि दिया ॥
कत जरहि बिरहैं सब गोपी। औग के ओप कया सब ओपी ॥
धुवाँ न पावै परगट होई। मुहके भार दाधे सब कोई ॥
चन्द्रावली कहै जस राही। राही जरै अधिक दुख माहीं ॥
चिनगि एक बाहरि होइ पर। धरती डाहु सरग पुनि जरै ॥
हौं सखी अस रावट, चलि आवहु रघुनाथ।
जस सुहाइ अस मारहु हमहि जाहु लेई साथ ॥ [2]

कन्हावत का विरह वर्णन पूर्णत स्वाभाविक बन पड़ा है। कवि ने बड़े कौशल से इस अवसर पर "पवन दूत" का आयोजन किया है। पवन गोपियों का सन्देश लेकर कृष्ण के पास जाता है, कृष्ण कुशल पूछते हैं और पवन गोपियों की दशा का वर्णन करता है और कृष्ण गोपियों से मिलन के लिए व्यवस्था करते हैं।

कन्हावत का महाकाव्यत्व

मूलत "कन्हावत" एक श्रेष्ठ कोटि का भागवत काव्य है। जायसी ने इसकी रचना एक विशिष्ट परम्परा प्रथित शैली में की है। इसमे अलौकिक और अपाव[illegible] तत्व भी हैं। कथा के नायक पूर्ण कलावतारी कृष्ण है। इसमे अनेक कथानक[illegible] रूढ़ियों और कवि समयों के दर्शन होते हैं। यह एक प्रकथन प्रधान महाका[illegible] भी कहा जा सकता है। इसमें अनेक रोमांटिक तत्व भी हैं। कवि का उद्देश[illegible] महान है। शैली साहित्यिक और उदात्त है। कथा का आधार पौराणिक सो[illegible] ख्यात है। इसकी कथा में एक विशिष्ट सुश्रृंखला भी है, इस कथा प्रधान काव्य[illegible] हम रोमांचक शैली का महाकाव्य भी कह सकते हैं। वस्तुत प्रबन्ध काव्य के [illegible] मे कन्हावत, पद्मावत और राम चरित मानस हिन्दी के श्रेष्ठ काव्य हैं।

---

1 कन्हावत पृ 325
326

उदात्त कथा

कन्हावत मे कृष्ण के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक उनके विविध कर्त्तव्यो को उरेहा गया है। कृष्ण कथा का हिन्दी मे प्राय मुक्तकात्मक स्वरूप ही मिलता है, पर जायसी ने कन्हावत की रचना प्रबन्धात्मक रूप मे की है। मथुरा का राजा कंस, उसका वैभव, उसके अत्याचार, कृष्ण का जन्म, उनकी गोकुल की लीलाएँ अनेक राक्षसो व असुरो के वध, उनके अनेक अलौकिक कार्य, कंस का वध आदि का इसमे सविस्तार वर्णन है। इसकी कथा पर्याप्त विस्तृत एव व्यापक है। इसमे हमे पौराणिक कृष्ण विषयक आख्यानो, लोक विश्रुत आख्यानो के साथ ही जायसी का कल्पना विलास भी मिलता है। यद्यपि सम्पूर्ण कथा का विभाजन खण्डो मे नही किया गया है, इसमे सर्ग भी नही दिये गये हैं। तथापि पूरे काव्य को पढने पर ज्ञात होता है कि यदि इसका खण्ड विभाजन करना हो तो इसमे सहज ही निम्नानुसार खण्ड उपलब्ध हो सकते हैं

(1)	स्तुति खण्ड	(2)	कन्ह जन्म खण्ड
(3)	पाताल खण्ड	(4)	चन्द्रावली खण्ड,
(5)	पूतना वध खण्ड,	(6)	दानी खण्ड
(7)	नख – शिख वर्णन खण्ड,	(8)	कंस वध खण्ड,
(9)	षटऋतु वर्णन खण्ड,	(10)	राधा–चन्द्रा विवाद खण्ड,
(11)	पवन दूत खण्ड	(12)	कुबजा खण्ड,
(13)	राधा–गोपी वियोग खण्ड,	(14)	गोरक्ष कन्ह विवाद खण्ड, प्रभृति

कुल 58 खण्ड मिल जायेंगे।

पदमावत के विभिन्न सम्पादित पाठो को पढने पर ज्ञात होता है कि सर जार्ज ग्रियर्सन और प रामचन्द्र शुक्ल के सम्पादित पाठो म खण्डो का विभाजन दिया गया है। डा वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'खण्ड विभाजन" का सुविधा के लिए मान लिया है। डॉ माताप्रसाद गुप्त ने पदमावत का सम्पादन अत्यन्त परिश्रमपूर्वक किया है उन्होंने पदमावत म खण्ड विभाजन नही दिया है। उन्होने बड़ी दृढ़ता के साथ खण्ड विभाजन को अस्वीकार कर दिया है।

लगभग यही स्थिति कन्हावत की भी है। कन्हावत के सम्पादक ने लिखा है कि 'जमनी से प्राप्त कन्हावत की हस्तलिखित प्रति मे खण्ड विभाजन मिलता है।"[1] अन्य "प्र च' मे भी खण्ड विभाजन प्राय नही है। फिर भी प्र च म

1 कन्हावत (जायसी कृत) स डॉ शिव सहाय पाठक पृ 63 भूमिका

शीर्षक या सुर्खियों के रूप में रही नहीं खण्डों के नाम दिये गए हैं। 'ऐसे 12 खण्डों के नाम भी उन्होंने गिनाए हैं। प्र स म भी प्राय खण्ड विभाजन नहीं है, पर उसमें भी आठ स्थलों पर खण्डों के नाम दिये गए हैं।[2]

उपर्युक्त तथ्यों पर विचार करने से कई महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं। कन्हावत की अब तक प्राप्त तीन हस्तलिखित प्रतियों में केवल एक खण्ड बारह मासा का शीर्षक लगभग समान है।

कथा

दण्डी ने सम्भवत भामह के वक्तव्य को दृष्टिपथ में रखकर ही कहा था कि कथा और आख्यायिका में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। दोनों एक ही श्रेणी की रचनाएँ हैं। नायक कहे या कोई अन्य कहे अध्याय का विभाजन हो या न हो, अध्यायों का नाम उच्छ्वास रखा जाय या न रखा जाय, इससे कहानी" में क्या अन्तर आता है।[2] आचार्य भामह ने अपने समय में उपलब्ध संस्कृत गद्य की कथाओं के साथ ही प्राकृत और अपभ्रंश में लिखी कथाओं को भी देखा था। उनके पहले ही वृहत्कथा को ख्याति मिल चुकी थी। रुद्रट ने काव्यालंकार में स्पष्ट लिखा है कि संस्कृत में निबद्ध कथाओं के लिए गद्य में लिखने का विधान है, अन्य भाषाओं में कथा पद्य में भी लिखी जा सकती है। अन्य भाषाओं से रुद्रट का आशय प्राकृत और अपभ्रंश से है। नमि साधु ने अपनी टीका में लिखा था। अन्य भाषाओं का अर्थ है प्राकृत आदि भाषाएं उनमें अगद्य पद्य अर्थात गाथाओं में कथा लिखी जानी चाहिए।

प्राकृत और अपभ्रंश में 'अगद्य' अर्थात् पद्य में गाथाएँ लिखी गई। ईसवी सन् की सातवी आठवी शताब्दी में ही इस प्रकार का काव्य, कथा काव्य मिलने लगता है।

रुद्रट ने कथा और महाकाव्य के लक्षण इस प्रकार लिखे हैं

श्लोकमही कथायां मिष्टान् देवान् गुरु नमस्कृत्य।
संक्षेपेण निजकुलमभिदध्या स्वं च कर्ततया॥
सानु प्रासेन ततो लघ्वक्षरेण गद्य न।
रचयेत् कथा शरीरं पुरेव प्रबन्धक प्रभ तीन॥

1 कन्हावत (जायसी कृत) स डॉ शिव सहाय
दण्डी-काव्यादर्श-1/23/28

आदौ कथान्तर वा तस्यो यस्यंत प्रपंचित सम्यक ।
लघु तारत स धार प्रज्ञा कथा वतारय ।
कथासाभ फला वा सम्यग वि यस्य सरल शृ गारम् ।
इति प्रकृतेन कुर्यात् कथा ममचे न या यन ।।[1]

रुद्रट ने अपन युग तक क इस प्रकार क साहित्य को देख समभकर ही इन नियमा का लिखा था। रुद्रट के पूव की 'लीलावती' नामक कथा म य सभी लक्षण मिलत हैं।

जायसी ने पदमावत चित्ररेखा और क हावत म भी कथा शब्द का प्रयोग किया है—

'सिंहल दीप कथा अब गाओ
औ सो पद्मिनि बरनि सुनाओ।[2]

पद्मावत की कथा को उन्होंने गाथा भी कहा है —

आदि अन्त जस गाथा अह
लिखि भाखा चौपाई कह।[3]
सुनउ कथा जस अंम्रित बानी।
जहाँ चित्ररेखा वह रानी।।[4]

क हावत म जायसी ने अनक बार 'कथा' शब्द का प्रयाग किया है—

ना मैं कहा अमिय खण्ड गाऊँ।
कान्ह कथा करि सबहि सुनाऊँ।।[5]

क हू के कथा लाख मह एती।
सरग नरक तारायन जेती।[6]
कथा कही सुनहु अब साई।
कहत रसाल सुनत सुख होई।।[7]

पदमावत चित्ररेखा आर कहावत म कवि न कहानी शब्द का भी प्रयोग किया है

---

1 दण्डी-काव्यादर्श - 1/23/28
2 पद्मावत सिंहल दीप वणन खण्ड 1/1
3 पदमावत स्तुतिखण्ड का अंतिम छ द
4 चित्ररेखा स डॉ शिवसहाय पाठक पृ 78
5 कन्हावत स डॉ शिवसहाय पाठक प 11
6 क हावत-स डॉ शिवसहाय पाठक पृ 12
7 , वही पृ 14

'अह चित्ररेखा और जु कहानी
लिखे चित्र कीर रचन बानी ॥'[1]
' अइस प्रेम कहानी, दोसरि जग मह नाहि ।
तुरुकी अरबी फारसी सब देखऊँ अवगाहि ॥'[2]
'केहु न जगत जस बेचा ।
केहु न जगत जस मोल ॥
जो यह सुने कहानी ।
हम सुमिरे दुई बोल ॥'[3]
केउ न रहा जग रही कहानी ॥'[4]

इस प्रकार स्पष्ट है कि जायसी ने अपने काव्यो को कथा और कहानी की सज्ञा भी दी है। निश्चय ही —कन्हावत—कथा है— 'कथा-काव्य" है— 'प्रकथन प्रधान काव्य' है।

कवि ने इसमे कृष्ण का आख्यान किया है और इस काव्य म कथा आख्यान आख्यायिका के वशिष्टय मिल जाते हैं।

फारसी, ममनवी और भारतीय कथा आख्यायिका एवम् महाकाव्य म ऐसे अनेक लक्षण मिलते ह जो समान हैं अपभ्रंश म ऐसे अनेक काव्य है जिनमे ईश्वर स्तुति, गुरु स्तवन पूववर्ती कवियो का स्मरण आदि उपलब्ध हैं। समसामयिक शासन का उल्लेख या उसकी प्रशसा भी अपभ्रंश काव्यो मे उपलब्ध है, कवि अपना परिचय भी देता है।

प रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "प्रबन्ध काव्य म मानव जीवन का एक पूर्ण दृश्य होता है उसम घटनाओ की सम्बन्ध शृंखला और स्वाभाविक क्रम के ठीक ठीक निर्वाह के साथ साथ हृदय को स्पर्श करने वाले—नाना प्रकार के भावो का रसात्मक अनुभव कराने वाले प्रसगो का समावेश होना चाहिए। इस इतिवृत्त मात्र के निवाह और व्यापारो का प्रतिबिम्बवत चित्रण होना चाहिए जो श्रोता के हृदय म रसात्मक तरगें उठाने म समर्थ हो।"[5]

कन्हावत की कथावस्तु स स्पष्ट है कि कवि ने कृष्ण के जीवन का एक पूर्ण दृश्य उपस्थित किया है। उसमे घटनाएँ सुशृंखल और अत्यन्त स्वाभाविक क्रम म विन्यस्त हैं। उसमे हृदय को स्पर्श करने वाले एक से एक सुन्दर मनोरम स्थल हैं।

---

1 चित्ररेखा स डॉ शिवसहाय पाठक
2 कन्हावत - स डॉ शिवसहाय पाठक - पृ 12
3 पदमावत - उपसहार पृष्ठ 2
4 वही पृ 3,8 9
5 जायसी ग्रन्थावली—प रामचन्द्र शुक्ल—पृ 53 भूमिका

कवि ने ऐसी वस्तुओं और व्यापारों का चित्रण अंकन किया है जो किसी भी श्रोता या पाठक के हृदय में रसात्मक तरंगें उठाने में समर्थ है।

उसकी प्रकथन प्रधान पंक्तियों में भी रसिकता आ गई है। कवि ने कृष्ण जीवन के बड़े मर्मस्पर्शी स्थलों का चयन और चित्रण किया है— कृष्ण की बाल क्रीडाएँ असुरों का वध कंस वध, गोपियों के प्रति प्रेम, चन्द्रावली राधा के प्रेम प्रसंग और उसकी संयोगावस्था, गोपियों का विरह आदि बड़े अगाध गम्भीर भाव प्रवण और रसात्मक स्थल हैं। कथा सुश्रृंखल एवं सम्बन्ध निर्वाह की दृष्टि से कवि पूर्णतः सफल है।

कन्हावत की पूरी कथा से स्पष्ट है कि उसका विषय व्यापक और महान् है। इस कृष्ण कथा में काव्यात्मक सौन्दर्य का उत्तम विकास मिलता है, अरस्तु ने आदि अन्त कथा में आदि, मध्य और अन्त के सर्वांग के समानुपातिक विकास को महत्व दिया था। कन्हावत में इस समानुपातिक विकास का बड़ा सुन्दर रूप दृष्टव्य है।

कन्हावत की कथा में प्रारम्भ, प्रयत्न, प्रत्याशा नियताप्ति और फलागम— पांचों कार्यावस्था के साथ मुख, प्रतिमुख, गर्भ विमर्श और निर्वहण पाँचों सन्धियों की भी सुन्दर योजना मिलती है। कन्हावत के अन्त में नियताप्ति और फलागम को प्रत्यक्ष रूप से न दिखलाकर कवि ने नियति और अवसान नामक अवस्थाओं का चित्रण किया है। इस प्रकार का अन्त शाहनामा शीरी फरहाद, शीरी खुसरो, जैसी फारसी मसनवियों में भी मिलता है। मार्मिक परिस्थितियों के विवरण और चित्रण के लिए घटनावली का जो विराम पहले कह आये हैं वह तो काव्य के लिए अत्यन्त आवश्यक विराम है क्योंकि उसी से सारे प्रबन्ध में रसात्मकता आती है। जायसी का सम्बन्ध निर्वाह अच्छा है। एक प्रसंग से दूसरे प्रसंग की श्रृंखला बराबर लगी है। कथा प्रवाह खण्डित और सुश्रृंखलित है। इस प्रकार अरस्तू की कार्यान्वित और पाश्चात्य देशीय कार्यावस्थाओं की कसौटी पर कन्हावत पूर्णतः खरा उतरता है। कन्हावत में कोई भी घटना कथा की दृष्टि से अनावश्यक नहीं है। सभी घटनायें और प्रसंग एक दूसरे से कार्य कारण श्रृंखला में बंधे हैं। प्रत्येक घटना कथा प्रवाह में योग देती है। कन्हावत का कथानक पूर्णतः सुसघटित कलात्मक और अन्विति युक्त है।

कन्हावत के नायक साक्षात भगवान् कृष्ण हैं। भगवान कृष्ण सोलह कला सम्पन्न रसेश अवतारी हैं। इनका चरित्र भारतीय चरित्र कोष में अपना प्रतिमान नहीं रखता है। वे माधुर्य, श्रृंगार, ओज वीर नीति, स्थैर्य, धैर्य, गम्भीर, औदार्य शौर्य विनय प्रभृति समस्त वशिष्ट्यों से मण्डित हैं। वे धीरोदात्त हैं। परम ललित हैं समुद्रवत् प्रशान्त हिम गिरिवत् महान अचल एवम् दृढ़ हैं। वे महासत्व अति गम्भीर, क्षमाशील और दुष्ट दलनकर्ता भी हैं। वे परम आदर्श प्रेमी हैं,

ही सर्वेश्वर महायोगी भी हैं। वे परम प्रेमी और परम त्यागी भी हैं। राधा चन्द्रावली तथा अन्य सोलह सहस्र गोपियाँ उनकी स्वकीयाएँ हैं। प्रेमिका के रूप में राधा और चन्द्रा परम दिव्य प्रेम की प्रतीक हैं।

रसात्मकता महाकाव्य का एक अति आवश्यक गुण धर्म है। कन्हावत में प्रमुखतः रति भाव की व्यंजना हुई है अतः इसमें उदात्त कोटि का शृंगार रस प्रवाहमान है। उसकी कथा के अन्त में मानो शान्त रस प्रत्यक्ष रूप धारण करके उपस्थित हो गया है, स्थल स्थल पर करुण, वीर, वीभत्स प्रभृति रसों का भी सुन्दर आनन्द मिलता है। अन्तिम दृश्य, जिसमें श्रीकृष्ण राजपाट रनिवास आदि छोड़कर द्वारका के लिये चल पड़ते हैं — में करुण प्लवित, शान्त रस की उत्तम अभिव्यक्ति हुई है। वहाँ निर्वेद सुन्दर निखार पा सकता है। उसमें अत्यन्त शान्तिपूर्ण उदासीनता अनुस्यूत है। इतना होने के बावजूद प्रेम और रति भाव का प्राधान्य होने के कारण मैं उसे शृंगार रस प्रधान महाकाव्य मानती हूँ। गोपियों के विरह वर्णन में विप्रलम्भ शृंगार का चरम उन्मेष है। शृंगार के संयोग एवं वियोग दोनों के एक से एक सुन्दर चित्र कन्हावत में दर्शनीय हैं। गोपियों के विरह में जायसी एक महान कलाकार के रूप में उपस्थित हुए हैं। कन्हावत में जीवन के अनेक प्रसंगों व प्रकृति के विविध रूपों के विशद कलात्मक एवं प्रभविष्णु वर्णन मिलते हैं। कन्हावत में मथुरा नगर, अनेक राक्षसों के वध, कंस का अखाड़ा, नारद सूक कंस संवाद, चन्द्रावली कृष्ण प्रसंग, राधा कृष्ण प्रसंग, चाणूर आदि का वध, कंस वध, कुबजा प्रसंग, पवन दूत, षट ऋतु वर्णन, बारह मासा वर्णन, यमुना में नौका विहार, विविध वस्तुओं के वर्णन की योजना करते हुए अपने काव्य कौशल का परिचय दिया है। मथुरा नगर वर्णन के अन्तर्गत अमराई, कुंआ, हाट-बाट, सरोवर, दुर्ग, खाई आदि के वस्तु वर्णनों का समावेश है। इन वस्तु वर्णन में वैविध्य, विस्तृति, अलंकृति आदि विद्यमान है। नगर, दुर्ग, यात्रा, मन्त्रणा, जल क्रीड़ा, दूत, युद्ध, पुत्रोदय, विवाह, विरह, संयोग आदि के वर्णनों से एक युग का समग्र रूप चित्रित हो गया है। इन वर्णनों में यद्यपि कहीं कहीं अनावश्यक विस्तार लक्षित होता है फिर भी इनसे कथा में रसात्मकता और सौन्दर्य की निष्पत्ति होती है।

कन्हावत में कंस-वध महत्वपूर्ण कार्य है। कंस के अत्याचार से संसार त्रस्त था। भगवान विष्णु ने कृष्ण के रूप में अवतार लिया और कंस का वध कर दिया। रामचरित मानस में रावण का वध और कन्हावत में कंस का वध महत्व कार्य है। नैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि से सचमुच यह महत् कार्य है।

महाकाव्य में भाषा शैली की गरिमा आवश्यक है। महद् विषय प्रतिपादन और उदात्त भावों की पुष्ट व्यंजना के लिये भाषा और शिल्पगत कुशलता आवश्यक है। सच तो यह है कि कन्हावत में पद्मावत की भांति महाकाव्य,

चरितकाव्य व मसनवियो के तत्वो का समावेश व समन्वय मिलता है। इसी कारण कन्हावत मे इन तीनो शलियो का गरिमामय रूप सुगुम्फित है। भाषा सवत्र व्याकरण सम्मत, माधुय पूरित, लोकोक्तियो व कहावतो, सूक्तियो, अलकृतियो मे सम्वलित अवधी है। इसम आद्यान्त दोहा चौपाई की कडवक पद्धति अपनाई गई है। सात अर्द्धालियो के पश्चात एक दोहे का उसमे विधान किया गया है। कथा कहने की शली अत्यन्त स्वाभाविक प्रवाहमयी एव प्रभविष्णु है। कन्हावत के कवि का उद्देश्य महान है उसमे शिव या लोक मगल का प्राधान्य है, साथ ही काम तत्त्व भी उसमे विद्यमान है। उसम अवतारी भगवान की मानवता के उस सच्चे रूप का उद्घाटन है जो प्रेम, उदारता, साहस, सहिष्णुता, बलिदान और त्याग की व्यापक भूमिका पर प्रतिष्ठित है। प रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि—"एक ही गुप्त तार मनुष्य मात्र हृदयो से होता हुआ गया है जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रग के भेदो की ओर से ध्यान हटा एकत्व का अनुभव करने लगता है।" जायसी ने अपने महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसी गुप्त तार को झकृत करके मनुष्यमात्र के चाहे वह जिस जाति, धम या वग का हो हृदय को जागृत और प्रेम-प्लावित करने प्रयत्न किया है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होने मानव की रागात्मक वृत्ति काम को व्यापक अर्थो मे गृहीत किया है। इसी के माध्यम से जायसी ने प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य उपस्थित किया है। उन्होने हिन्दू और मुसलमानो के बीच की दूरी को स्नेहामृत से भरकर एकत्व की प्रतिष्ठा की है। इसीलिये जायसी के अध्यात्मवाद के अतराल म उदार और प्रेम प्रवण मानवतावाद की सरस्वती प्रवाहित हो रही है। इस प्रकार मानवतावाद की प्रतिष्ठा जाति, धम आदि की कृत्रिम दीवालो को तोडकर मानव मात्र को एक सूत्र मे बाँधना ही कन्हावत का उद्देश्य है और जायसी अपने इस उद्देश्य की पूर्ति मे सफल हुए है।

सास्कृतिक सक्रमण काल मध्ययुग म उन्होने धार्मिक, दाशनिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रो मे विराट, समन्वय करके बडी महत्वपूर्ण भूमिका का निवाह किया है। आधुनिक भारतीय जीवन (और विशेषकर हिन्दू मुस्लिम जीवन) के अनेक सदभ मे जायसी हिन्दू मुस्लिम सस्कृतियो के अमर सतु और सवश्रेष्ठ समन्वयकर्त्ता के रूप मे उपस्थित हुए हैं। उनका जीवन और कतव्य इन दोनो सस्कृतियो का पावन सगम है

"परगट भेस गोपाल गोविन्दू। गुपुत गियान न तुरूक न हिन्दू॥
— कन्हावत'

महती प्रतिभा सम्पन्न कवि जब किसी महत्त्व शक्तिमय प्रेरणा से उद्वेलित और अभिभूत होता है तो वह महाकाव्य की सजना म प्रवत्त होता है। महाकवि मार्मिक स्थलो का सुन्दर विधान करता चलता है। वह जीवन के ममस्पर्शी

प्रसगो का पारखी होता है। ये ममस्पर्शी चित्रण मानव हृदय से रागात्मिका वृत्ति को जागृत कर देते हैं। महाकवि के प्रबन्ध रस से निरस पद्यो मे भी रसवत्ता आ जाती है।

कन्हावत के घटनाचक्र के अन्तगत ऐसे स्थलो का पूरा सन्निवेश है, जो मानव की रागात्मिका वृत्ति को उद्बोधित कर देते हैं, उसके हृदय को भाव मग्न कर देते हैं। जायसी ने वस्तु-वणन के रूप मे और पात्र द्वारा भाव व्यजना के रूप मे इन प्रसगो को कथा प्रवाह के रूप मे रखा है। वस्तुत कथावस्तु की गति इन्हीं स्थलो तक पहुँचने के लिए होती है कन्हावत मे ऐसे अनेक स्थल हैं। इनमे कई अत्यन्त अगाध और गम्भीर है। उन्होने कृष्ण चरित के ममस्पर्शी स्थलो का चुनाव करके अपने हृदय का समस्त रस उडेलकर कन्हावत को रसमय बनाया है। राधा रूप सौन्दर्य और राधा गोपी विरह वणनो म उनकी काव्य प्रतिभा के बहु विध आयाम मिल जाते है। हिन्दी मे कन्हावत को कृष्ण विषयक प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। उसमे जायसी का गम्भीर जीवन दशन, उनकी सशक्त प्राणवत्ता मौलिकता उनका उदात्त प्रेम सन्देश, लोक भाषा अवधि का पूर्ण निखार उनका मानवतावाद एव उनकी लोक मगल की भावना का उत्तम रूप मिलता है। कन्हावत को हिन्दी मे श्रेष्ठ महाकाव्य के रूप मे समादृत किया जाएगा।

मसनवी-शैली —

मूलत मसनवी फारसी साहित्य की एक काव्य शली है। 'मसनवी' शब्द का व्यवहार बडे काव्य के लिये किया जाता रहा है। मसनवी के छन्दो मे प्रत्येक पद अपने मे पूण होते है व तुकान्त होते हैं। आकार म बडा काव्य (कन्हावत) होने के कारण कवि को पूरी स्वतन्त्रता बरतने का सुयोग प्राप्त हुआ है, प्रेमाख्यान, धार्मिक तथा उपदेशात्मक काव्यो के लिये मसनवी का ही सहारा लिया गया है। मसनवी अपने आप मे एक पूण ग्रन्थ होता है। इस ग्रन्थ का एक विशेष नाम होता है। प्रेमाख्यानक कवियो ने अपने ग्रन्थो के नाम उसके नायक नायिका के नाम पर रखे हैं जसे 'साकी नामा । इसमे साकी का ही नाना भाव रूपो म वणन होता है। शराब के दौर की चर्चा होती है। ये ग्रन्थ प्रतीकात्मक हो सकते हैं जिसम शराब को किसी आध्यात्मिक भाव का प्रतीक माना गया हो। नायक नायिका के आधार पर भी कई ग्रन्थो का नामकरण हुआ है—जसे युसुफ जुलेखा" खुसरो शीरीं आदि। इन ग्रन्थो म ऐसे भी हैं जिनके नाम पूण रूप से काल्पनिक हैं और उनम धार्मिक उपदेश देने की प्रवृत्ति की प्रधानता है। साधारणतया मसनवी सगबद्ध काव्य है। पहले सग मे परमात्मा का गुणगान रहता है। दूसरे म पगम्बर को स्मरण किया जाता है। तीसरे मे पैगम्बर के 'मीराज' की चर्चा रहती है। उसके बाद साधारणत शासन करने वाले सुल्तान, शाहे वक्त की

प्रशसा रहती है अथवा किसी महान व्यक्ति की तारीफ रहती है, जिसे कवि उस ग्रंथ को समर्पण करता है। इसके बाद कुछ इस प्रकार का वर्णन रहता है कि किस उद्देश्य से अथवा किसी मित्र की प्रेरणा से कवि ने उस काव्य ग्रंथ का प्रणयन किया। इस सर्ग का शीर्षक भी वह कुछ इसी प्रकार का देता है। इसके बाद ही मूल काव्य ग्रंथ का प्रारम्भ होता है। इस ग्रंथ के खण्ड या विभाग होते हैं और फिर ये विभाग या खण्ड सर्गबद्ध किये जाते हैं। प्रत्येक सर्ग के ऊपर उस सर्ग मे वर्णित विषय का सकेत साधारणत फारसी भाषा मे दिया हुआ रहता है। अन्त मे कवि एक उपसहार से ग्रंथ समाप्त करता है।[1] मसनवी के कुछ विशिष्ट लक्षण इस प्रकार हैं

1– मसनवी मे छन्द स्वत पूर्ण होता है। वाक्य रचना के दृष्टिकोण से उसमे पूर्ण वाक्य आता है।
2– उसकी दोनो अर्द्धालियो मे समान अन्त्यानुप्रास गुणयुक्त होता है।
3– यह प्रकथन प्रधान होता है। इसका विषय कथा प्रधान होता है और उस कथा मे विविध प्रकार के विषयो के सागोपाग वर्णन मिलते हैं।
4– कथा के प्रारम्भ मे ईश्वर, पैगम्बर मुहम्मद, मुहम्मद के मित्र, कवि के गुरु और सामयिक राजा की प्रशसा की जाती है।
5– इसके पश्चात कवि अपनी रचना का स्पष्टीकरण करता है।
6– साधारणत छन्दो का परिवर्तन नही होता।
7– पाँच या सात छन्दो के अनन्तर एक बैत रहता है।
8– उसमे सामी सस्कृति (समेटिक कल्चर) का प्राधान्य भी कभी-कभी प्रदर्शित किया जाता है।

फारसी की मसनवियो मे जिन छन्दो का प्रयोग किया जाता है उनका उपयोग हिन्दी के प्रेमाख्यानो मे नही हुआ है।

मसनवी की दो अर्द्धालियाँ परस्पर तुकान्त होती हैं। इसमे लम्बाई का निश्चित निर्धारण नही होता है तथा प्रारम्भ से अन्त तक एक ही छन्द होता है। प्राय उसमे परिवर्तन नही होता। कवि इस बात के लिए स्वतन्त्र होता है कि वह सात छन्दों की मसनवी लिखे अथवा वह इसे सात हजार छन्दो तक बढ़ाये। विषय निर्वाचन करने में भी कवि स्वतन्त्र होता है। पौराणिक, धार्मिक दार्शनिक, रहस्यवादी आदि कोई भी किसी भी विषय का चयन किया जा सकता है।[2]

---

1 फारसी साहित्य का इतिहास – डॉ असगर हिकमत पृ 153
2 वही पृ 153

प्रसगो का पारखी होता है । ये मर्मस्पर्शी चित्रण मानव हृदय से रागात्मिका वृत्ति को जागृत कर देते हैं । महाकवि ने प्रबन्ध रस से निरस पद्यो म भी रसवत्ता आ जाती है ।

कन्हावत के घटनाचक्र के अन्तगत ऐसे स्थलो का पूरा सन्निवेश है, जो मानव की रागात्मिका वृत्ति को उद्बोधित कर देते हैं, उसके हृदय को भाव मग्न कर देते हैं । जायसी ने वस्तु-वर्णन के रूप मे और पात्र द्वारा भाव व्यजना के रूप मे इन प्रसगो को कथा प्रवाह के रूप मे रखा है । वस्तुत कथावस्तु की गति इन्हीं स्थलो तक पहुँचने के लिए होती है कन्हावत म ऐसे अनेक स्थल हैं । इनम कई अत्यन्त अगाध और गम्भीर है । उन्होंने कृष्ण चरित के मर्मस्पर्शी स्थलो का चुनाव करके अपन हृदय का समस्त रस उडेलकर कन्हावत को रसमय बनाया है । राधा रूप सौन्दय और राधा गोपी विरह वणनो म उनकी काव्य प्रतिभा के बहु विध आयाम मिल जाते है । हिन्दी म कन्हावत को कृष्ण विषयक प्रथम महा-काव्य होने का गौरव प्राप्त है । उसम जायसी का गम्भीर जीवन दर्शन, उनकी सशक्त प्राणवत्ता मौलिकता उनका उदात्त प्रेम सन्देश, लोक भाषा अवधि का पूर्ण निखार उनका मानवतावाद एव उनकी लोक मगल की भावना का उत्तम रूप मिलता है । कन्हावत को हिन्दी म श्रेष्ठ महाकाव्य के रूप मे समादृत किया जाएगा ।

मसनवी-शैली —

मूलत मसनवी फारसी साहित्य की एक काव्य शैली है । 'मसनवी" शब्द का व्यवहार बडे काव्य के लिये किया जाता रहा है । मसनवी के छन्दो मे प्रत्येक पद अपने मे पूर्ण होते है व तुकान्त होते हैं । आकार म बडा काव्य (कन्हावत) होने के कारण कवि को पूरी स्वतन्त्रता बरतने का सुयोग प्राप्त हुआ है, प्रेमा ख्यान, धार्मिक तथा उपदेशात्मक काव्यो के लिये मसनवी का ही सहारा लिया गया है । मसनवी अपने आप म एक पूर्ण ग्रन्थ होता है । इस ग्रन्थ का एक विशेष नाम होता है । प्रेमाख्यानक कवियो ने अपने ग्रन्थो के नाम उसके नायक नायिका के नाम पर रखे है जसे 'साकी नामा' । इसमे साकी का ही नाना भाव रूपो म वणन होता है । शराब के दौर की चर्चा होती है । ये ग्रन्थ प्रतीकात्मक हो सकते है जिसमे शराब को किसी आध्यात्मिक भाव का प्रतीक माना गया हो । नायक नायिका के आधार पर भी कई ग्रन्थो का नामकरण हुआ है—जसे युसुफ जुलेखा' खुसरो शीरी" आदि । इन ग्रन्थो म ऐसे भी हैं जिनके नाम पूर्ण रूप से काल्प निक हैं और उनम धार्मिक उपदेश देने की प्रवृत्ति की प्रधानता है । साधारणतया मसनवी सर्गबद्ध काव्य है । पहले सर्ग म परमात्मा का गुणगान रहता है । दूसरे मे पगम्बर को स्मरण किया जाता है । तीसरे मे पगम्बर के 'मौराज' की चर्चा रहती है । उसके बाद साधारणत शासन करने वाले सुल्तान, शाहे वक्त की

प्रशंसा रहती है अथवा किसी महान व्यक्ति की तारीफ रहती है, जिसे कवि उस ग्रंथ को समर्पण करता है। इसके बाद कुछ इस प्रकार का वर्णन रहता है कि किस उद्देश्य से अथवा किसी मित्र की प्रेरणा से कवि ने उस काव्य ग्रन्थ का प्रणयन किया। इस सर्ग का शीर्षक भी वह कुछ इसी प्रकार का देता है। इसके बाद ही मूल काव्य ग्रंथ का प्रारम्भ होता है। इस ग्रंथ के खण्ड या विभाग होते हैं और फिर ये विभाग या खण्ड सम्बद्ध किये जाते हैं। प्रत्येक सर्ग के ऊपर उस सर्ग में वर्णित विषय का संकेत साधारणतः फारसी भाषा में दिया हुआ रहता है। अन्त में कवि एक उपसंहार से ग्रंथ समाप्त करता है।[1] मसनवी के कुछ विशिष्ट लक्षण इस प्रकार हैं

1- मसनवी में छन्द स्वतः पूर्ण होता है। वाक्य रचना के दृष्टिकोण से उसमें पूर्ण वाक्य आता है।
2- उसकी दोनों अर्द्धालियां में समान अन्त्यानुप्रास गुणयुक्त होता है।
3- यह प्रकथन प्रधान होता है। इसका विषय कथा प्रधान होता है और उस कथा में विविध प्रकार के विषयों के सांगोपांग वर्णन मिलते हैं।
4- कथा के प्रारम्भ में ईश्वर, पैगम्बर मुहम्मद, मुहम्मद के मित्र, कवि के गुरु और सामयिक राजा की प्रशंसा की जाती है।
5- इसके पश्चात कवि अपनी रचना का स्पष्टीकरण करता है।
6- साधारणतः छन्दों का परिवर्तन नहीं होता।
7- पाँच या सात छन्दों के अनन्तर एक बैत रहता है।
8- उसमें सामी संस्कृति (समटिक कल्चर) का प्राधान्य भी कभी-कभी प्रदर्शित किया जाता है।

फारसी की मसनवियों में जिन छन्दों का प्रयोग किया जाता है उनका उपयोग हिन्दी के प्रेमाख्यानों में नहीं हुआ है।

मसनवी की दो अर्द्धालियाँ परस्पर तुकान्त होती हैं। इसमें लम्बाई का निश्चित निर्धारण नहीं होता है तथा प्रारम्भ से अन्त तक एक ही छन्द होता है। प्रायः उसमें परिवर्तन नहीं होता। कवि इस बात के लिए स्वतन्त्र होता है कि वह सात छन्दों की मसनवी लिखे अथवा वह इसे सात हजार छन्दों तक बढ़ाये। विषय निर्वाचन करने में भी कवि स्वतन्त्र होता है। पौराणिक, धार्मिक दार्शनिक, रहस्यवादी आदि कोई भी किसी भी विषय का चयन किया जा सकता है।[2]

---

1 फारसी साहित्य का इतिहास – डॉ अफसर हिकमत पृ 153
2 वही पृ 153

"कन्हावत" मूलत मसनवी आदश पर सजित है। मसनवी की ही भांति कन्हावत की कथा शृ खला बद्ध है। उसका विभाजन खण्डों या सर्गों म नहीं किया गया है – कहीं कहीं शीषक द दिये गए हैं।

विश्वनाथ न 'सर्गाष्टाधिका' अर्थात आठ सर्गों या उससे अधिक सर्ग महाकाव्य मे होत हैं। आठ सर्गों की बात कही गई है, उस दृष्टि से विचार करने पर रामचरित मानस मे सात सर्ग ही मिलते हैं, पदमावत म (डॉ माताप्रसाद गुप्त के अनुसार) सर्ग या खण्ड विभाजन नहीं है। ठीक यही स्थिति कन्हावत की है। पर इससे इस काव्य की गरिमा कम नहीं होती। ये सभी हिन्दी के श्रेष्ठ महाकाव्य हैं – यो यदि खण्ड विभाजन ही करना है, तो पदमावत के खण्डों की तरह कन्हावत मे भी 58 खण्ड हो जायेंगे।

मसनवी फारसी भाषा का एक काव्य रूप है। इस शब्द का अथ 'युग्मक' है – युग्मक अर्थात द्विपदी मूलत मसनवी वह लम्बा धारावाहिक काव्य है जिसमे शेर के दोनो चरण हम काफिया (तुकान्त) हो और प्रत्यक शेर का काफिया अलग अलग हो। मसनवी के प्रत्यक वत स सुदृढ सम्बध होता है – व जंजीर की कड़ियो की तरह परस्पर सुसम्बद्ध होते हैं। मसनवी म लम्बाई की कोई सीमा नहीं होती है। सात पंक्तियों से लेकर लाखों पंक्तियो तक इसका विस्तार हो सकता है। इसम प्रारम्भ से अन्त तक प्राय एक ही छन्द का प्रयोग होता है। प्रबन्ध, आख्यान चरित या वीर काव्य के लिए यह पद्धति उपयुक्त मानी जाती है। इसकी शैली प्रायकथन प्रधान होती है। इसम प्रकृति, चित्रण, ऋतु वणन, रीति-रिवाज आदि का भी समावेश होता है।[1]

जब हम कन्हावत पर इस दृष्टि से विचार करते हैं तो मिलता कि कन्हावत की रचना मसनवी पद्धति पर हुई है।

फारसी मसनवियो की तरह कन्हावत मे भी

1 ईश्वर स्तुति है।
2 पैगम्बर मुहम्मद साहब की वन्दना है।
3 मुहम्मद साहब के चार मित्र (अबुबकर उमर, उसमान और नबी) की प्रशंसा भी है।
4 उसमे शाहे वक्त क रूप म हुमायू बादशाह का उल्लेख है।
5 उसमे कवि ने अपनी गुरु परम्परा का उल्लेख किया है।
6 इसकी कथा सुशृंखलित है।
7 उसम द्विपदी छन्द का प्रयोग है।
8 उसके प्रत्येक छन्द तुकान्त है आदि।

कन्हावत (जायसी) – स डा शिवसहाय पाठक – भूमिका पृ 57

मसनवी की दृष्टि से विचार करें तो लगता है कि कन्हावत के नियमो का कवि ने सुन्दर रूप मे पालन किया है।

जायसी कृत पदमावत चित्ररेखा और कन्हावत मूलतः अवधी मसनवियाँ हैं। इस महान प्रेमाख्यानकार जायसी का वशिष्ट्य यह है कि उन्होंने भारतीय व फारसी काव्य परम्पराओ का ऐसा सुन्दर समन्वय किया है कि जो भावनात्मक एकता की दृष्टि से अपना प्रतिमान नही रखता। मसनवी शैली की परम्परा मे कुछ नियम सब सामान्य सिद्धान्त के रूप मे स्वीकृत हैं।

1 ईश्वर स्तुति

जायसी ने कन्हावत के प्रारम्भ ही मे ईश्वर स्तुति की है "ताकर अस्तुति कीन्ह न जाई। कौन जाहि अस करौं बडाई॥[1] फारसी की प्राय सभी श्रेष्ठ मसनवियो म इस प्रकार की स्तुति मिलती है।

2 मोहम्मद साहब की स्तुति

"नअत का पालन करते हुए जायसी न "कन्हावत" म पैगम्बर मुहम्मद साहब की वन्दना की है।

कहौ मुहम्मद दो सो थानू। जाहि मिठान लेत मुख नामू॥[2]

3 चारो यारो की प्रशसा

मुहम्मद साहब के (1 अबूबकर, 2 उमर, 3 उसमान और 4 अली) चार मित्रो की प्रशसा जायसी न पदमावत चित्ररेखा आदि मे की है।

कन्हावत म भी चार मितो का उल्लेख किया ह
"चारि मीन विधनैं वड कीन्ह। नबी रसून के गोहन दीन्ह॥
पहिले अबूबकर सत बारू। एक मत्री और बीर अपारू॥
दोसरें उमर पोहल हुत आदि। जिता न कोइ वादि के वादी॥
तिसर उसमा पण्डित सयाने। पढ़ि पुरान जिन्ह अरथ बताने॥
चौथें अलिसिंध बरियारू। राउग देखि काप ससारू॥[3]

4 शाहे वक्त

जायसी ने कन्हावत म बडे हुलसित रूप म दिल्ली के बादशाह हुमायू की प्रशसा की है।

---

1 कन्हावत – स डॉ शिवसहाय पाठक पृ 58
2 वही " "
3 वही " "

देहली कहौ छत्रपति नाऊँ। बादशाह बड़ साह हुमाऊँ ॥[1]
सर्भ परिथि मो असीसैं, देखि देखि एहु साज।
छात पाट तुम सोहु, करउ सदा सुख राज ॥[2]

5 गुरु विषयक स्तुति

जायसी ने अपनी अन्य मसनवियों की ही तरह कन्हावत में भी अपनी गुरु परम्परा का सविस्तार उल्लेख किया है।

कहौं तरीकत अगुवा गुरु। रोसन दीन दुनी मुख ।।[3]
कहौं सरीअत पीर पियारा। सैयद असरफ जग उजियारा ॥[4]

18 पंक्तियों में जायसी ने अपनी गुरु पीर परम्पराओं का उल्लेख किया है

मसनवी की कसौटी पर कसो तो हम देखते हैं कि जायसी ने कन्हावत के हम्द नअत, प्रभृति मसनवी की रूढ़ियों का पालन किया है। यह एक धारावाहिक प्रबन्ध प्रधान सुदीर्घ काव्य है। इसमें तुकान्तता या अन्त्यानुप्रास युक्तता प्रत्येक चौपाई या दोहा में विद्यमान है। इसे हम अवधी भाषा की एक सुन्दर मसनवी कह सकते हैं।

कन्हावत फारसी मसनवियों की भाँति अवधि की एक मसनवी है इसके प्रारम्भ में ईश्वर स्तुति मुहम्मद साहब की वन्दना, उनके चार यारों की प्रशंसा शाहेवक्त गुरुस्तुति आदि का विधान किया गया है।

जायसी ने "कथा केहौ कान संजोगु" के द्वारा इसे कन्ह कथा भी कहा है। फारसी मसनवी के साथ ही भारतीय कथा आख्यायिका के तत्व भी इसमें मिलते हैं।

जायसी ने कन्हावत में कृष्ण जीवन का एक पूर्ण चित्र उपस्थित किया है। उसमें घटनाएँ सुश्रृंखल हैं और अत्यन्त स्वाभाविक क्रम में विन्यस्त हैं उसमें हृदय को स्पर्श करने वाले एक से एक सुन्दर मनोरम स्थल हैं। कवि ने ऐसी वस्तुओं और व्यापारों का चित्रण अंकित किया है जो किसी भी श्रोता या पाठक के हृदय में रसात्मक तरंगें उठाने में समर्थ है।

भारतीय और पाश्चात्य महाकाव्यों के परम्परा प्राप्त और आचार्यों द्वारा गिनाए गए लक्षणों में से एकाध लक्षण इसमें नहीं मिले तो भी प्रायः वे सभी गुण प्रमु इसमें विद्यमान हैं जिससे हम 'कन्हावत' को एक श्रेष्ठ महाकाव्य कह सकते हैं।

कन्हावत का विषय स्वयं में महान व्यापक है। ध्यानपूर्वक पढ़ने पर ज्ञात होता है कि इसमें काव्यात्मक सौन्दर्य का भी चरम उन्मेष विद्यमान है।

1 2 3 4 – कन्हावत सं. डॉ. शिवसहाय पाठक

सम्पूर्ण कथा कृष्ण से सुसम्बद्ध है—कृष्ण ही पूरी कथा के मूल तथा अयन सम्प्रसार हैं। कन्हावत के कृष्ण विष्णु के पूर्णवतार है उसमे आचार्य विषयक सारी विशेषताएं हैं।

कन्हावत में 'राधा" को जायसी ने लक्ष्मी, सीता के अवतार रूप मे उपस्थित किया है। (कन्हावत मे) कृष्ण के लिए ही अवतरित हुई हैं। राधा और कान्हा का कवि ने विधिवत विवाह कराया है।

प्रबन्ध काव्य की दृष्टि से यह एक उत्तम कोटि का प्रबन्धन प्रधान कथा काव्य है। महाकाव्य या महाकाव्यो के तत्व भी इसमे पूरी मात्रा में उपलब्ध है। साहित्य दर्पण मे (6/315/328) गिनाए गए लक्षणों की दृष्टि से यदि हम कन्हावत का मूल्यांकन करें तो मिलेगा कि उसमे प्राय वे सभी लक्षण इसम विद्यमान हैं। चरित काव्यो की प्राय सारी विशेषताएँ इसमे हैं ही। सच तो यह है कि जायसी सच्चे अर्थों में "पृथ्वी पुत्र" थे। उन्होने पूरी सहृदयता के साथ भारतीय और फारसी काव्य परम्पराओ के परस्पर अन्तरावलम्बन की प्रक्रिया को अपनाया है। कन्हावत में इन दोनो शलियों का पावन गंगा जमुना संगम उपस्थित है। फारसी काव्य परम्परा की दृष्टि से यह एक सुन्दर अवधी मसनवी है और भारतीय काव्य दृष्टि से यह एक सुन्दर (चरित काव्य, कथा काव्य) महाकाव्य है।

फारसी मसनवी के विषय मे अनेक बार कहा गया है कि उनमें इश्क मजाजी और इश्क हकीकी का निरूपण तो उत्तम कोटि का है पर लोक पक्ष की दृष्टि से वे प्राय शून्य हैं। पर जायसी के कन्हावत और पदमावत की बात सर्वथा भिन्न है—इन दोनो मे एक ओर उत्तम प्रेम ज्योति का स्वर है, तो दूसरी ओर लोक और वेद पक्ष भी अत्यन्त सुन्दर और उत्तम रूप में विन्यस्त है। जायसी वेद पथ को बहुत महत्वपूर्ण मानते है।

पारिवारिक और सामाजिक आदर्शों की दृष्टि से भी जायसी के दोनो महाकाव्यो का बडा महत्व है। राधा कृष्ण और गोपियो के प्रेम का 'परकीया" प्रेम मानने वाले हिन्दी कवियों की बहुत बडी सूची है। कृष्ण के महान भक्त कवियो ने भी राधा कृष्ण और कृष्ण गोपियो के प्रेम को परकीय भाव का प्रेम माना है। जायसी ने कन्हावत मे राधा और कृष्ण गोपियो के प्रेम को स्वकीया भाव का प्रेम माना है। उन्होंने राधा कृष्ण के विषय का अत्यन्त दिव्य और भव्य आयोजन भी किया है

"लीज कहु राधिका नारी। मान गहसि कीजै मनुहारी ॥
जेहि पिय चहै गोपाल गोविन्दू। रास निसाकै होई बरिवदू ॥
हुत जो लुकानि वानि धरि न्हीही। आपुन जोरि लेहु अब चीन्ही ॥
मानु भोग विधि परसन लोकां। बरह्मा वेद मनै सिउ (लोकां) ॥
महादेव तहँ माडव छावा। पारबती सयँ मगल (गावा) ॥

इन्द्र सबद सब बाजन बाज। बदनवार मंदिर महँ (साजे)।।
अछरि जु जोरि गाठि दइ भाँवरि। चौक पुरि कीन्ही (नवछावरि)
ससि दिनयर, रिखि, देवता नवँत फिरा सब काहु।
तीनहु लोक भएउ सुख सुनि राही का ब्याहु।"[1]

धन्य है इस परम भागवत मुसलमान कवि की दृष्टि।

तानसेन

इनकी जाति आविर्भाव काल आदि के बारे में मतभेद हैं। अबुलफजल और शिवसिंह सेंगर।[2] इन्हें ग्वालियर का निवासी मानते हैं किन्तु शिवसिंहजी के मत से ये मकरन्द पाण्डेय के पुत्र तथा स्वामी हरिदास के शिष्य थे। बाद में इन्होंने ग्वालियर-निवासी शेख मुहम्मद गौस से संगीत कला की शिक्षा प्राप्त की। कहा जाता है कि शेख ने अपनी जीभ से तानसेन की जीभ को छू लिया और ये आश्चर्यप्रद ढंग से गायन में पारंगत हो गये।[3] इसी घटना को तानसेन के धर्म परिवर्तन का कारण बताया जाता है। अधिकांश विद्वानों की यही मान्यता है कि तानसेन का जन्म ग्वालियर से सात मील दूर बेहट[4] ग्राम में हुआ था। इनके जन्म संवत् के विषय में भी मतभेद हैं। डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या के अनुसार जन्म लगभग 1520 ई. है।[5] शिवसिंहजी के अनुसार इनका जन्म संवत् 1588 वि. है।[6] शिवसिंह जी का सुझाव ज्यादा सही है, सम्राट अकबर के समय तानसेन का होना भी सिद्ध हो जाता है।

कहा जाता है कि तानसेन का विवाह अकबर की पुत्री मेहरुन्निसा से हुआ था। तानसेन की एक पुत्री और चार पुत्र थे। तानसेन का सम्बन्ध पहले दौलतखाँ (शेरशाह के पुत्र) के दरबार से था। फिर भी रीवाँ नरेश राजा रामचन्द्र की सभा में आये, जहाँ से अकबर ने इन्हें अपने यहाँ बुला लिया। ये सम्राट अकबर की सभा के प्रसिद्ध संगीतज्ञ थे। "आईन ए अकबरी' में शेख अबुल फजल ने इनकी गायन की प्रशंसा में लिखा है कि भारत में ऐसा गायक कलाकार पिछले एक सहस्र वर्षों में उत्पन्न नहीं हुआ।[7]

---

1 कन्हावत – पृ 176 छन्द 265
2 शिवसिंह सरोज पृ *429*
3 , वही , पृ 429
4 कवि तानसेन और उनका काव्य—नर्मदेश्वर चतुर्वेदी पृ 11
5 शिवसिंह सरोज पृ 429
6 ऋतम्भरा प 118
7 [illegible] पृ 681

तानसेन श्रेष्ठ गायक के साथ साथ वादक व कवि भी थे । ध्रुपद तथा अन्य राग रागनियो मे रचित इनके गान इनकी अद्वितीय कवित्व शक्ति का परिचय देते हैं । सगीत के क्षेत्र मे ये ' मियाँ की मल्हार", ' मियाँ की टोडी (गुजरी टोडी), "दरबारी कानडा ' आदि के आविष्कारक हैं । इनका निधन अकबर के सामने ही हो गया था । इसी स दभ मे अकबर का यह दोहा प्रस्तुत है

"पीथल सो मजलिस गई, तानसेन सो राग,
हँसिबो रमिबो बोलिबो गयो बीरबल साथ ।।

इनकी मृत्यु सन 1589 ई[1] अर्थात स 1686 मे हुई । ग्वालियर मे इनकी कब्र विद्यमान है ।

दो सौ बावन वष्णवन की वार्ता के अन्तगत 237 पृष्ठ पर तानसेन की वार्ता दी गई है । उल्लेख है कि एक बार तानसेन ने गोस्वामी विट्ठलनाथजी को एक पद गाकर सुनाया, जिस पर उन्होंने दस हजार रुपये और एक कौड़ी से इनको पुरस्कृत किया । तानसेन ने जब गोस्वामीजी के रुपये के साथ कौडी देने का कारण पूछा तो उन्होने कहा कि दस हजार रुपये इसलिये दिये गये कि तुम बादशाह के कलावन्त हो और कौडी देने का आशय यह है कि तुम्हारे गायन का मूल्य हमारे गवैयो के समक्ष कौडी के तुल्य है । तानसेन ने इसका प्रमाण माँगा । गोविन्द स्वामी बुलाये गये और उन्होने सारग राग म तानसेन के आगे यह पद गाना प्रारम्भ किया —

"श्री वल्लभनदन रूप अनूप स्वरूप कह्यो नहिं जाई ।"

पूरा पद सुनकर तानसेन विस्मित हो गये । इन्होंने गोविन्द स्वामी से गान विद्या सिखाने की प्राथना की, जिसको उन्होने ठुकरा दिया । इसी बात पर वे गोस्वामीजी के शिष्य हो गये ।[2]

तानसेन व भक्त कवि सूरदास से अच्छी मित्रता थी । उन्होने सूरदास की प्रशसा मे दोहा लिखा है

"किधौ सूर को सर लग्यो किधौ सूर की पीर ।
किधौं सूर को पद लग्यो, तन मन धुनत सरीर ।
उत्तर मे सूरदासजी ने यह दोहा लिखकर भेजा
बिधना यह जिय जानि के, सस न दीन्हें कान ।
धरा मेरु सब डोलते, तानसेन की तान ।।[3]

---

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि डॉ उदयभान श्रीवास्तव पृ 247
2 वही पृ 247
3 शिवसिंह सरोज पृ 429

तानसेन की रचनाएँ इस प्रकार हैं

(1) रागमाला, (2) संगीतसार (3) गणेशस्तोत्र और (4) ध्रुपद।

"ख्याल टिप्पा" एवम् "संगीत राग कल्पद्रुम" ? म भी तानसेन की स्फुट रचनाएँ मिलती हैं। इसकी संगीत विषयक 'हृयहुलास' नामक कृति 34 दोहा छन्दों मे है। जिनम छ राग तीस रागिनियाँ, वाद्य के प्रकार आदि वर्णित है। ये वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से मुद्रित हुई हैं। इसकी प्रामाणिकता विषयक चर्चा करना कठिन है।

तानसेन के काव्य मे प्रचुर शृगारिकता है, प्रधान रूप से इन्होने अपने काव्य म नायक नायिका का सौन्दर्य वर्णन नख शिख वर्णन महादेव, सरस्वती गणेश आदि देवी देवताओ की वन्दना एवम स्मरण किया है। होली, दशहरा ईद आदि धार्मिक त्योहारो के पद, आश्रयदाता की प्रशस्ति और गुरु स्तवन, कृष्ण की *बाल लीला, राधाकृष्ण का सौन्दर्य, मुरली, मान, उपालम्भ विरह* आदि का विस्तृत वर्णन इनकी रचनाओ मे मिलता है। रहीम जमाल आदि कवियो की भाँति तानसेन भी भक्तिकाल (पूर्वमध्यकाल) की सीमा के अन्तर्गत रीतिकालीन कविता की लोकरस धारा का पूर्वाभास देत दिखाई पडते है। इनकी रचनाओ से इनका प्रौढ संगीत ज्ञान भी प्रकट होता है। होली के समय कृष्ण की ठिठोली का एक दृश्य

लगर बटवार खेले होरी।
बाट घाट कोउ निकस न पावे पिचकारिन रग बोरी॥
मैं जु गई जमुना जल भरने गह मुख मीजी रोरी।
तानसेन प्रभु नन्द को ढोटा बज्यो न मानत मोरी।[1]

तानसन संगीतप्रेमी कवि थे इनके पदो म संगीत के स्वर की ही प्रधानता है। विषय का अधिक महत्व नही है। मल्हार रागिनी मे बधा एक पद इस प्रकार है

रमिक झूलत हैं री लाल बाल इक् रहसि सग।
ज्यो ज्यो उरपति प्यारी त्यौ त्यौ कर गहत मोहन आली मोहि
अति रस वढ्या वढियो भेंटत भुज भरि अग।
सावन तीज सुहावनो लागति झुलवति सहचोर करत रग।
तानसेन पिउ प्यारी की छवि पर वारे कोटि अनग।[2]

---

1 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि – परिशिष्ट भाग 2 पृ 406 सख्या 110
2 साहित्य मे कृष्ण डॉ सरोजिनी कुलश्रेष्ठ पृ 316

रसखान

रसखान दिल्ली के पठान सरदार थे। इनका जन्म संवत् 1590 वि माना जाता है।[1] प्रेम वाटिका नामक ग्रंथ में उन्होंने लिखा है

देखि गदर हित, साहिबी दिल्ली नगर मसान।
छिनहि बादसा बेस की ठसक छोड़ि रसखान॥[2]

इससे स्पष्ट है कि वे बादशाही खानदान के थे।

"प्रेमदेव की छवि लख, भये मियाँ रसखान" अर्थात्

श्री कृष्ण के दर्शन के उपरान्त मियाँ (मुसलमान) रसखान (हिन्दू) हो गये। वस्तुत रसखान का अर्थ रस की खान नहीं है यह शब्द मूलत 'रस खा या "रसखान" है। इनके पूर्वज सैयद अब्दुल गफूर को वीरता प्रदान के लिये सम्मानसूचक खान की उपाधि प्राप्त हुई थी, इस उपाधि को इनके वंश के सभी लोग धारण करते आये थे। इस तथ्य का समर्थन नवलगढ़ के राजकुमार संग्राम सिंह के पास सुरक्षित रसखान के एक चित्र पर उद्धृत फारसी लिपि में रसखाँ और नागरी लिपि में रसखान शब्द से होता है। हिन्दी में कबीर दास के समय से प्रचलित संक्षिप्त नाम के प्रयोग की परम्परा के कारण ही काव्य में सैयद इब्राहीम रसखान के स्थान पर केवल रसखान शब्द से होता है।

रसखान का अर्थ वास्तव में रस की खान न होकर रसखा ही है इसकी पुष्टि उनके एक दोहे में प्रयुक्त रसखाँ शब्द से ही होती है— रसखाँ ढोल बजाइ के बेचियो हिय जिय साथ" इस प्रकार रसखान शब्द का प्रयोग केवल उपनाम के रूप में हुआ है और इसका अर्थ सैयद इब्राहीम में रसिकता और वीरता का समन्वय है।

"छिनहिं बादशाह वंश की ठसक छोरि रसखान" इस पंक्ति के आधार पर अनेक आलोचकों की धारणा है कि रसखान शाही वंश के थे, परन्तु उनका एक अन्य पद इस धारणा का खण्डन करता है

देस विदेस के देखे नरेशन रीझ की कोऊ न बूझ करैगो।
रसखान तिन्हें तजि जानि गिरयो गुनसो औगुन गाठि परैगो॥

इससे स्पष्ट है कि उन्होंने कई नरेशों का आश्रय ग्रहण करना चाहा होगा परन्तु उन्हें कहीं भी सफलता प्राप्त नहीं हुई। इसके विपरीत दरबार में उनके विरुद्ध चुगली भी की जाती रही होगी, इससे आश्रयदाता से सम्बन्ध विकृत होने की सम्भावना रही होगी, इसी की प्रतिध्वनि निम्न पंक्तियों में मिलती है

---

1 पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ (स वासुदेवशरण अग्रवाल)
2 प्रेम वाटिका – प्रथम पृष्ठ से

"काहा करे रसखानि को कोऊ चुगल चबार
जो पै राखन हार है माखन चाखन हार।

स्पष्ट है कि वे राजवंशो के आश्रय में रहने वाले अमीर उमराव अवश्य थे, परन्तु शाही वंश से उत्पन्न नही थे। इनके पूर्वजो को मिलि उपाधि इन्हें राजवंश के निकट लाने में सहायक रही होगी।

वे महान कृष्ण भक्त और गोस्वामी विट्ठलनाथ के अत्यन्त कृपा पात्र शिष्य थे। दो सौ बावन वष्णवन की वार्ता मे रसखान का उल्लेख कुछ इस प्रकार मिलता है

सोवा दिल्ली मे एक साहूकार रहेतो। सोवा साहुकार को
बेटो बहुत सुन्दर हतो। वा छोरा सों रसखान को मन बहुत
लग गयो। वाही के पीछे फिरयो करे और वाको झुठा खावे
और आठ पहेर वाही की नोकरी करे।। पगार कछू लेवे नही दिन
रात मे आसक्त रहे।। दूसरी बड़ी जात के रसखान की निंदा करते
हुते। परन्तु रसखान कोई कु गनते नही हुते।।[1]

उक्त वार्ता के अनुसार यह पहले एक बनिये के लड़के पर आसक्त थे, एक दिन उन्होने किसी को कहते हुए सुना कि भगवान से ऐसा प्रेम करना चाहिए जसे रसखान का उस बनिये के लड़के पर है। इस वक्तव्य से वे मोहित हो गये और श्रीनाथजी को खोजते-खोजते वे गोकुल पहुचे वहाँ पर उन्होंने गोस्वामी विट्ठलनाथजी से दीक्षा ली। कुछ इसी प्रकार की एक और कहानी भी कही जाती है। कहते हैं कि ये किसी स्त्री पर आसक्त थे पर वह अत्यन्त मानवती थी और बार-बार इनका अनादर किया करती थी। एक दिन वे श्रीमद्भागवत का फारसी अनुवाद पढ़ रहे थे। उसमे गोपियो के अनन्य और अलौकिक प्रेम को पढ़कर उन्हे ध्यान हुआ कि क्यो न उसी पर मन लगाया जाय, जिस पर इतनी गोपियाँ मरती थी। इसी बात पर वृन्दावन चले आये। विद्वानो ने प्रेम वाटिका के निम्न लिखित दोहे मे उसी घटना की ओर संकेत किया है।

तोरि मानिनी ते हियो, फोरि मोहनी मान।
प्रेमदेव की छविहि लखि, भए मियाँ रसखानी।।

उपर्युक्त प्रवादो से स्पष्ट है कि रसखान आरम्भ से ही बड़े प्रेमी जीव थे। 'वह प्रेम अत्यन्त गूढ भगवत् भक्ति में परिवर्तित हुआ। प्रेम के ऐसे सुन्दर उद्‌गार भरे इनके सवैयो को ही "रसखान" कहा जाने लगा — जसे कोई "रसखान सुनाओ" इनकी भाषा बहुत चलती, सरस और शब्दाडम्बर मुक्त थी, व्रज भाषा का जो चलतापन और सफाई इनकी और घनानन्द की रचनाओ मे है वह अत्यन्त दुलभ

1 दो सौ बावन वष्णवन की वार्ता — पृष्ठ 361

है। इनका रचनाकाल सवत् 1640 के उपरान्त ही माना जा सकता है क्योंकि गोसाई विट्ठलनाथजी का गोलोकवास स 1643 मे हुआ था। प्रेम वाटिका का रचनाकाल स 1671 है। अत उनके शिष्य होने के उपरान्त ही उनकी मधुर वाणी स्फुरित हुई होगी। इनकी कृतियाँ परिमाण मे तो बहुत अधिक नही हैं। पर जो हैं वह प्रेमियो के मम को स्पश करने वाली है। इनकी दो छोटी पुस्तकें अब तक प्रकाशित हुई ह। प्रेम वाटिका (दोहे) और सुजान रसखान कवि (सवैया) कृष्ण भक्तों के समान इन्होने गीत काव्य का आश्रय न लेकर कवित्त सवयो मे अपने सच्चे प्रेम की व्यजना की है। ब्रजभूमि के प्रति सच्चे प्रेम से परिपूण एक सवया द्रष्टव्य है

मानुष हौ तो वही रसखान बसौं, सग गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पसु हौ तो कहा बसु मेरो चरौ नित नद की धेनु म कारन।।
पाहन हौ तो वही गिरी को जो कियो हरि छत्र पुरदर कारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौं, मिलि कालिंदि कूल कदब की डारन।।

रसखान पठान होकर भी कृष्ण भक्त कवि थ। उनकी भावना मे ब्रज की महिमा इतनी अधिक है कि वे माघ करील के कुजो पर करोडो स्वण प्रासाद न्योछावार करने के लिए प्रस्तुत हैं। कृष्ण की लकुटी और कामरी पर तीनो लोको का राज्य त्यागने के लिये आतुर हैं

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहू पुर का तजिडारौ।
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख नद की गाय चराय बिसारौं।।
नैनन सो रसखान कहँ ब्रज के बन बाग तडाग निहारौ।
कौटिक ही कलधौत के धाम करील क कुजन ऊपर वारौं।।[1]

इनके कवित्त सवैया मे सुदर अनुप्रासिक छटा है, भाषा की चुस्ती है, और पूरी-पूरी सफाई है, भावो की सुन्दर व्यजना है ओर सवत्र लीला पक्ष की रजनकारिणी अभिव्यजना है।

किशोरीलाल गोस्वामी ने इनकी दो रचनाएँ प्रकाशित की है

(1) सुजान रसखान 159 और (2) प्रेम वाटिका – 52 दोहे

लाला भक्तराम सपादित "राम रत्नाकर" म भी इनके प्राय 130 सवये और कवित्त ह। किन्तु श्री माया शकर याज्ञिक के अनुसार इसकी सख्या 109 है।

इनके रसपूण सवैये हिन्दी कृष्ण काव्य की अमूल्य निधि है। इसमे ब्रज की माधुरी उच्छलित हो रही है। ब्रजभाषा की मिठास, ब्रजभूमि के प्रति चिर अनु-

---

1 प रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 185-86

राग और ब्रजराज कृष्ण के प्रति निश्छल नेह—ये रसखान की प्रेम साधना की तीन उपलब्धियाँ हैं। उनका निर्बंध प्रेम किसी भी साम्प्रदायिक अथवा शास्त्रीय बन्धन से पूर्णत मुक्त और स्वतन्त्र है उनका कृष्ण काव्य पौराणिकता की प्रतीति भी नही है। वह तो रसिक कवि के निश्छल प्रेम का भावात्मक प्रतिरूप है।

इनका अन्तकाल स 1671 के आसपास गोवर्द्धन ग्राम के निकट हुआ यहाँ रसखान की छतरी के नाम स उनकी समाधि आज भी विद्यमान है।

उपर्युक्त विवेचन स निम्न निष्कर्ष निकलते हैं

(1) रसखान का जीवन वृत्त अनिश्चित है।
(2) बाह्य साक्ष्य तथा अन्त साक्ष्य से रसखान के जीवन पर आंशिक प्रकाश पडता है।
(3) रसखान का असली नाम सैयद इब्राहीम था और रसखान इनका उपनाम था।
(4) रसखान का जन्म स 1590 है।
(5) रसखान नाम का एक ही व्यक्ति सयद इब्राहीम हुआ है।
(6) रसखान जाति के सयद थे और खान इनकी वंशानुगत उपाधि थी।
(7) रसखान शाही वंश म न होकर अमीर उमराव थे।
(8) रसखान 1612-13 म हुए गदर के कारण दिल्ली छोडकर ब्रज म चल गए थे।
(9) रसखान के लौकिकप्रेम का उदात्तीकरण हुआ था और उन्हें श्रीनाथजी के दर्शन का लाभ भी मिला था।
(10) रसखान की मृत्यु स 1671 के आसपास ब्रज म हुई।

रसखान के कृष्ण

रसखान काव्य म ब्रजेश्वर कृष्ण का आत्म साक्षात्कार विशुद्ध भाव के धरातल पर हुआ है। इनम बौद्धिकता का तनिक भी आग्रह नही है। इस कारण कृष्ण अध्यात्म के दिव्यासन से उतरकर प्रेम की उदात्त मानवीय भाव भूमि मे रम गय हैं। यहाँ वे आराध्य से कही अधिक प्रेय हैं।

इनके चरित्रांकन म शास्त्रीयता और दर्शन का आवरण न होने से भावुकता दूर तक अग्रसर हुई है। इस तरह लीला पुरुष के कमनीय स्वरूप को हृदय म धारण कर कवि ने उनसे साथ सहज सख्य और कान्त भाव का सम्बन्ध स्थिर कर लिया है। इन सम्बन्धो म वह इस प्रकार तल्लीन हुआ है कि भक्त और भगवान के बीच की दूरी ही मिट गई है।

---

1 पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ प 316

रसखान के द्वारा कृष्ण को विशुद्ध प्रेम की अनुभूति के रूप मे निरूपित किये जाने के मूल म विद्वान जिन कुछ आधारभूत तत्वो की ओर लक्ष्य करते हैं वे ये ह

1– फारसी का स्वच्छन्द सासारिक प्रेम — उदाहरणार्थ लैली प्रेम की श्रेष्ठता ।

3– सूफियो के लौकिक प्रेम द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की व्यजना ।

4– रागानुगा" प्रेम मे स्वच्छन्द प्रम क दशन । कि तु यह अन्तिम तत्व बिल्कुल गौण माना गया है ।

वस्तुत रसखान क स्वच्छन्द प्रेम पर गोपियों क चितचोर कृष्ण के स्वच्छन्द चरित्र की छाप अत्यन्त स्पष्ट है उन्होने ब्रज लीलाओ का स्थूल वणन न करके उनके सकेत मात्र स अपने प्रेम देवता कृष्ण की झाकियाँ उपस्थित की हैं । सूफियो की प्रेम ज्योति से हम रसखान की प्रेम ज्योति की तुलना कर सकते हैं ।

"रवि ससि नखत दिपहि ओहि जाती" —जायसी
मुरली कर मे अधरा मुसकानि तरग महाछबि छाजति है— रसखान[1]

रसखान ने कृष्ण क रूप की पूजा की है शेष महेश ने जिसका स्मरण किया वह अनादि-अनत अखण्ड और अबूझ ही बना रहा । रसखान कहते हैं कि ज्ञान चक्षु तो हार गये, उसका रूप और स्वभाव प्रेमी भक्तो का ही चाक्षुष प्रत्यक्ष हो सका ।

ब्रह्म मे ढूढयो पुरानन गानन, वेद रिचा सुनि चौगुनी चायन ।
देख्यो सुन्यो कबहूँ न कितू वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन ।
टेरत हेरत हारि परयो रसखानि, बतायो न लोग लुगायन ।
देख्यो देख्यो वह कुज कुटीर म, बैठ्यो पलोटतु राधिका पायन ।[2]

रसखान के कृष्ण सगुण भगवान ह, ब्रजेश्वर ब्रह्म के गुणात्मक विग्रह हैं । इस रूप मे व ब्रह्म से भी महान परब्रह्म है। इनके रूप और गुण की कल्पना परम मनोहर है । इनका रूप मोहन है और गुण आनन्द क्रीडा । रूप और गुण से सज्जित कृष्ण लीला-नायक हैं, उन्हें प्रेमी भक्त अहर्निश अपने हृदय दपण में धारण किये रहते है, नयनो म बसाये रहते हैं । नयनो म बसा लेने पर वह उस मूत प्रेम की वारुणी को पीकर इतना बसुध हो जाता है कि फिर आँखें भी नहीं खोलता । यह दशन क्रम अप्रतिहत चलता रहता है

1 प्रेमवाटिका 33 (सखा प्रेमी) वही 38 (गोपी प्रम)
2 सुजान रसखान 28

"सोहत है चंदवा सिर मोर के, जसिये सुन्दर पाग कसो है।
तसिये गोरज भाल बिराजति, जसी हियें बनमाल लसी हैं।
रसखानि बिलोकति बौरी भई दृग मूंदि के ग्वारि पुकारि हँसी है।
खोलि री घूंघट, खोलों कहा, वह मूरति नैननि मांझ बसी है।[1]

अन्तिम पंक्ति के पूर्वार्द्ध में कबीर के प्रति कटाक्ष है तो उत्तरार्द्ध में मीरा के प्रति सहमति। कबीर कहते हैं—घूंघट के पट खोल रे तोको पिया मिलेंगे किन्तु रसखान की गोपियों के लिए घूंघट पट खोलने न खोलने का अर्थ भी क्या है?

कृष्ण के सम्मोहन से गोपियाँ अभिभूत हो जाती है। उनकी प्रेमासक्ति से भी कृष्ण ने मन-मोहन स्वरूप का आभास मिल जाता है। शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श से सज्जित कृष्ण का मोहक रूप तन, मन को झकझोर देने वाला है

'कानन दे अंगुरी रहिबो, जबही मुरली धुनि मंद बजै है।
मोहिनी तानन सों रसखानि, अटा चढ़ि गोधन गैहै तो गैहै ॥
टेरि कहौं सिगरे ब्रज लोगनि काल्हि कोऊ कितनो समुझ हैं।
माई री वा मुख की मुसकानि सम्भारि न जहै न जहै न जहै ॥

रसखान काव्य में कृष्ण की इस मधुर मूर्ति के अनेक चित्र खचित हैं। सच तो यह है कि रसखान विशेषण कृष्ण प्रेमी कवि का पर्याय बन गया है। उनके काव्य मे मानव और कृष्ण का सहभाव दृष्टव्य है, भक्त प्रेमी अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को निर्दोष भाव से कृष्ण के रूप मे तदाकार कर देना चाहते हैं। वे कृष्ण को प्रेम स्वरूप और प्रेम को कृष्ण स्वरूप मानकर दोनों का अंगागिभाव चित्रण किया है

" प्रेम हरी को रूप है, त्यौं हरि प्रेम स्वरूप।
एक होई द्वै मे लसैं, ज्यौं सूरज अरु धूप ॥"

वस्तुत रसखान के कृष्ण प्रेम-देव हैं। उनकी ब्रज लीलाओं को ही चित्रित किया गया है और उन लीलाओं मे सख्य और मधुर भाव मुख्य हैं। उनका कृष्ण प्रेम, प्रेमी और प्रेम के चिरंतन मिलन का मनोमय उदाहरण है।

सच तो यह है कि रसखान ने ब्रजलीला को उतना महत्व नहीं दिया जितना विलोकन और मुसकान को। इन्होंने सयोग और वियोग शृंगार के दोनों पक्षों का सुन्दर वर्णन किया है। रसखान का मन जितना किशोर लीला में रमा है उतना बाल लीला मे नहीं, हाँ दान लीला में भी रसखान का मन खूब रमा है। रास और चीर-हरण लीला को उन्होंने चलता-सा बना दिया है। बाँसुरी के चमत्कार और कुब्जा पर उनकी पैनी दृष्टि पड़ी है।

---

1 सुजान रसखान 21

रसखान विशुद्ध थे न कि स्वच्छन्द प्रेममार्गी कवि। उपर्युक्त विवेचन से निम्न निष्कर्ष स्पष्ट होते हैं

(1) ईश्वर के प्रति अनन्य और दृढ़ अनुराग का नाम भक्ति है।
(2) इस उत्कट अनुराग की सफलतम अभिव्यक्ति दाम्पत्य भाव में होती है।
(3) *मूलतः प्रेमी जीव थे, उनके लौकिक प्रेम का आध्यात्मिक प्रेम में उन्नयन हुआ था।*
(4) रसखान के काव्य में प्रेम का भोग पक्ष प्रबल है।
(5) रसखान की भक्ति की परिभाषा निःस्वार्थ प्रेम है।
(6) रसखान के इस प्रेम का आलम्बन श्रीकृष्ण है।
(7) रसखान के श्रीकृष्ण प्रेमाधीन होने के कारण राधा और गोपियों के वश हैं।
(8) रसखान ने श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं का ही अधिकांश में वर्णन किया है।
(9) रसखान के काव्य में साम्प्रदायिक संकीर्णता की गन्ध नहीं है।
(10) रसखान विशुद्ध भक्त हैं, स्वच्छन्द प्रेममार्गी कवि नहीं।

सैयद इब्राहीम रसखान की सबसे बड़ी उल्लेखनीय चरित्रगत विशेषता उनकी असाम्प्रदायिकता है। मुस्लिम शासन काल में रसखान ने धार्मिक मतभेदों से सर्वथा दूर रहकर हिन्दू धर्म में भगवान के अवतार रूप में स्वीकृत श्रीकृष्ण को इष्ट के रूप में अपनाकर धर्मनिरपेक्षता का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। यद्यपि सिद्धान्त रूप में प्रसिद्ध सूफी साधक रूमी शब्दों में—"इश्क का मजहब सभी मजहबों से अलग है। खुदा के आशिकों का खुदा के अलावा कोई मजहब नहीं।" सच्चा प्रेम धार्मिक मतभेदों से ऊपर होता है, परन्तु व्यवहार क्षेत्र में इस सिद्धान्त को सही उतारने वालों में रसखान अग्रगण्य हैं। रसखान के काव्य में कहीं भी धार्मिक मतभेद की गन्ध नहीं है। इस्लाम में अवतार और मूर्तिपूजा को मान्यता प्राप्त है और न ही इनके लिए कोई स्थान है। रसखान ने इस्लाम धर्मानुयायी होते हुए भी इन दोनों को सिद्धान्त और व्यवहार में मान्यता दी। रसखान के सच्चे प्रेम और मानवता के उच्च आदर्श को देखकर ही भारतेन्दु ने निम्न उद्‌गार प्रकट किये थे

"इन मुसलमान हरिजन न पर कोटिन हिन्दू वारिये।"

रसखान जिस प्रकार धर्म के क्षेत्र में साम्प्रदायिकता से ऊपर उठे हुए थे उसी प्रकार दर्शन के क्षेत्र में भी किसी सम्प्रदाय विशेष से आबद्ध नहीं थे। उनके समय तक कृष्ण भक्ति के क्षेत्र में निम्बार्क, मध्व, चैतन्य तथा वल्लभ सम्प्रदाय प्रतिष्ठित हो चुके थे। रसखान के काव्य में इन विभिन्न सम्प्रदायों के कतिपय

सिद्धान्त मिल जाते हैं परन्तु वे किसी सम्प्रदाय विशेष के प्रति प्रतिश्रुत नहीं थे। उन्होंने महाप्रभु वल्लभाचार्य से दीक्षा अवश्य ली थी, परन्तु न तो उन्होंने पुष्टि मार्ग में स्वीकृत नवधा भक्ति को महत्व दिया है और न ही केवल अलौकिक प्रेम को अपने काव्य का साध्य माना है। वस्तुतः उनके काव्य में निम्बार्क के द्वैताद्वैतवाद का, मध्वाचार्य के द्वैतवाद का, चैतन्य के अचिन्त्य भेदाभेदवाद का और वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैतवाद का अनुसरण नहीं मिलता। वह तो इन सम्प्रदायिक वादों से दूर मात्र प्रेमी भक्त थे।

रसखान मधुर भक्ति रस के कवि थे। उन्होंने भक्ति रस के अन्य प्रकारों की अपेक्षा मधुर भक्ति रस का और संयोगपक्ष का सर्वाधिक और विशेष चित्रण किया है। रसखान मधुर भाव में ही प्रेम की अनन्यता स्वीकार करते हैं। इनके अनुसार

"जदपि जसोदा नन्द अरु ग्वाल बाल सब धन्य।
पै या जग में प्रेम करि गोपी भई अनन्य॥"

सख्य और वात्सल्यभाव से भी अधिक निकटता दाम्पत्य रति में ही सम्भव है, अतः इसी मधुरारति का वर्णन ही कवि को सर्वाधिक अभीष्ट रहा है।

रसखान का यह मधुर भक्ति रस अत्यन्त उज्ज्वल और पवित्र है। न इसमें कहीं कलुषता अथवा उच्छृंखलता आई है और न ही कहीं रसाभास हुआ है। रासलीला के प्रसंग में वर्णित शृङ्गार भी अत्यन्त संयत है। सूरदास, नन्ददास आदि के शृङ्गार की अपेक्षा इनका शृङ्गार पर्याप्त सीमा में शिष्ट और मर्यादित है।

रसखान अपनी असाम्प्रदायिकता, एक निष्ठ भक्ति, काव्योत्कर्ष, श्रुतता, मौलिकता तथा ब्रज संस्कृति के प्रति अनुराग के कारण हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। कृष्ण भक्त कवियों में सूर और मीरा के समान इनका नाम चिर अमर है। रसखान हिन्दी साहित्य के देदीप्यमान रत्न हैं।

अकबर जन्म – 1556 ई

महान सम्राट अकबर का साहित्य कला तथा संगीत की ओर अत्यधिक रुझान था। कृष्ण की रूपमाधुरी के जाल में वे भी बंधे गये थे उन्होंने लिखा है कि–

'शाह अकब्बर एक समय चले कान्ह विनोद विलोकन बालहिं।
आहट अबला निरख्यो चकि चौंकि चली करि आतुर चालहिं।
त्यों बलि बनी सुधीर धरी सुमई छवियों ललना अरु लालहिं।
चम्पक चारु कमान चढ़ावत काम ज्यों हाथ लिये अहि चालहिं॥'[1]

1 डॉ मधोविनो मुनमन्ठ— हिन्दी साहित्य में कृष्ण पृ 315

इब्राहीम

इनका कविता काल मिश्र बन्धुओ ने स 1607 के लगभग निश्चित किया है। इनका कवित्त इस प्रकार है

हरि सों रिसानो हैं पुरदर कहा धों करै,
कोपै आसमाई कै बालायकन जोरे ना ॥
बेलि कै प्रलय के मेघ गोकुल बहायबे को,
मुसर समान धार घनी तार तोरे ना ॥
छाती हाथ दै दै बिराहिम कहत गोपी ॥
हीय के समीप घनस्याम दृग जोरै ना ।
गिरै ना गोवरधन कन्हैया धरी है नख,
दइया कहू आज राधे भौहे मरोरै ना । [1]

रहीम

नवाब अब्दुल रहीम खानखाना का जन्म सन् 1613 विक्रमी मे लाहौर मे हुआ था। इनके पिता का नाम बैरामखाँ खानखाना था और माता जमालखाने वाली की छोटी बेटी थी। दिल्ली के बादशाह हुमायू ने उसकी बडी बेटी से विवाह किया था। बैरामखाँ छोटी अवस्था मे ही हुमायू बादशाह के दरबार म रहने लगा था और धीरे धीरे अपनी काय कुशलता से बडा सरदार और बादशाह का विश्वस्त आदमी बन गया था। कन्नौज की लड़ाई म बैरामखाँ ने बडी वीरता दिखायी थी। जब हुमायू हार कर फारिस भाग गया तो बैरामखाँ भी बादशाह से वहाँ जा मिला और फिर भारत पर चढ़ाई कर उसने हुमायू को राज्य दिलवाया। बैरामखाँ के युद्ध कौशल और पराक्रम के कारण मुगलवश न फिर एक बार भारत का साम्राज्य प्राप्त किया। हुमायू ने प्रसन्न होकर युवराज अकबर की शिक्षा का भार भी बैरामखाँ को ही सौपा और अपने अन्त समय पर राज्य प्रबन्ध भी बैराम खाँ को देकर अकबर का अभिभावक नियुक्त किया।[2]

बैरामखाँ ने अकबर के शत्रुओ को परास्त किया और मुगल साम्राज्य को दृढ़ किया। बडा होने पर अकबर ने बैरामखाँ के हस्तक्षेप को स्वीकार नही किया। बैरामखाँ ने अकबर के विरोध मे विद्रोह किया अकबर ने बैरामखाँ को हज्ज के लिए जाने को बाध्य किया और बैरामखाँ हज्ज के लिए चला। पाटन म उसके एक पुराने शत्रु ने उसे मार डाला उस समय अब्दुल रहीम केवल चार वष का था। अकबर ने कृपा पूवक बालक और उसकी माँ को अपने पास बुला लिया उसकी शिक्षा दीक्षा की व्यवस्था की। बालक भी कुशाग्र बुद्धि था अल्पकाल म ही उसने

---

1 मायाशकर याज्ञिक रहीम रत्नावली पृ 3
2 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि डा उदयशकर श्रीवास्तव पृ 328

उनके आश्रय म रहते थे। गग, प्रसिद्ध, मण्डन सन्त, लक्ष्मीनारायण, बाण जैसे कवि उनके आश्रित थे। गग को एक छप्पय पर रहीम ने छतीस लाख रुपये का इनाम दिया था। गोस्वामीजी से भी रहीम के बडे घनिष्ठ सम्बन्ध थे। मतीराम की कृतियो पर रहीम की गहरी छाप है। केशवदास ने जहाँगीर चन्द्रिका रहीम के पुत्र एलचबहादुर के लिए लिखी थी। तुलसी के बरवै छन्द और बरवै रामायण की प्रेरणा रहीम ही थे। रहीम के जीवन काल मे अब्दुलबाली ईरानी ने "मोआसिर रहीमी" नामक ग्रन्थ म रहीम की जीवनी रहीम के ही जीवन काल मे लिखी थी।

वा अयात बाबरी का उन्होने तुर्की से फारसी मे अनुवाद किया था। कहते हैं कि उन्होने फारसी भाषा मे एक "दीवान" भी लिखा था किन्तु अभी तक मिला नही है। कहा जाता है कि रहीम ने कई युरोपीय भाषाएँ भी सीखी थी और अकबर के लिए वे उन भाषाओ मे पत्र भी लिखते थे।

"भिखारीदास" ने एक कवित्त मे सादर स्मरण किया है।

> "आलम रहीम खानखाना रसलीन बली,
> सुन्दर अनेक गन गनती बखानिये।"

इसी आधार पर शिवसिंह और मिश्र बन्धुओ ने दो रहीम का अनुमान किया है। किन्तु यह मात्र अनुमान ही है। भिखारी दास ने लिखा है कि "एकन को रसही को प्रयोजन है रसखान रहीम की नाई।" वस्तुत हिन्दी साहित्य मे एक ही रहीम है और वह अब्दुल खानखाना। हिन्दी को अपना कर अपनी कृतियो से उन्होने हिन्दी की अपार सेवा की है। अनेक भाषाओ पर समान अधिकार रखने के बावजूद वे हिन्दी के माधुय पर मुग्ध थे। वे हिन्दु सभ्यता और हिन्दु धम को भी बड़ी गहराई से समझ गये थे और उनके प्रति रहीम को बडा आदर था। उनके मन मे हिन्दुओ के प्रति रचमात्र भी घृणा का भाव नही था। अवतारो के साथ ही गगा, महादेव आदि के प्रति श्रद्धा थी। व वैष्णव धम के अनुयायी तथा श्री कृष्ण के महान भक्त थे। हिन्दी के मुसलमान कवियो और लेखको मे रहीम का स्थान बहुत ही ऊँचा है। उनकी कविता सरस, मधुर और नीति पूण है। उनकी भाषा ब्रजी है किन्तु उसमे कही-कही अवधी का भी मिश्रण है, वह परम स्वाभाविक भाषा है। उन्हे ससार का व्यापक अनुभव प्राप्त था, यह उनकी नीतिमूलक कविताओ से स्पष्ट है।

रहीम की रचनाएँ

1 दोहावली कहा जाता है कि रहीम ने एक सतसई लिखी थी। यह अपने मूल रूप मे प्राप्त नहीं है। दोहा सार सग्रह और गुण गज नामक दो सग्रह भी चर्चित हैं। दोहा सार सग्रह 1720 विक्रमी मे रचा गया था। "रहीम रत्नावली" को भी रहीम की कृति कहा जाता है। "रहिमन शतक" नामक इनकी एक और कृति का उल्लेख मिलता है।

2 नगर शोभा इस ग्रन्थ की सूचना माधुरी[1] पत्रिका के एक लेख म दी गयी है। इस पुस्तक के प्रारम्भ मे लिखा है

"अथ नगर शोभा नवाब खानखाना – कृत"

इसमे 142 दोहे है। आरम्भ म मगलाचरण दिया गया है। इससे प्रतीत होता है कि यह एक स्वतन्त्र ग्रन्थ है। रहीम सतसई का अश नही है। महाकवि देवकी ने 'जाति विलास' मे जिस रीति से बहुत सी जातियो की तथा देशों की स्त्रियो का वणन किया है, उसी प्रकार से 'नगर शोभा' म भी अनेक जातियो की स्त्रियो का वणन बडी सुन्दरता स किया गया है। भाव शृगार का है। दोहे की शब्द योजना से ही वर्णित स्त्री की जाति तथा कम का मनोहर चित्र नत्रो के सम्मुख आ जाता है। यह ग्रन्थ रहीम के रसलानी स्वभाव का परिचायक है। कहा जाता है कि रहीम को इसकी प्रेरणा मीना बाजार से मिली थी। रहीम कृत बरवै छन्द म लिखे ग्रन्थ का एक अश और भी मिलता है। नगर शोभा वणन म अनक बरवै मिलते हैं।

3 बरव नायिका भेद यह ग्रन्थ अपने पूण रूप म उपलब्ध है। बरवै छन्द मे रहीम ने नायिका भेद पर आधारित यह प्रख्यात ग्रन्थ लिखा है। कहा जाता है कि रहीम ने तुलसीदास से कहकर बरव रामायण की रचना करवायी थी

कवि रहीम बरवै रचे, पठये मुनिवर पास।
लखि तेइ सुन्दर छन्द म, रचना कियेउ प्रकास॥

बरवै लेखन की शैली मे रहीम हिन्दी के सवश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। हिन्दी का यह आदि नायिका भेद ग्रन्थ माना जाता है।

महाराज काशीराम के पुस्तकालय मे एक पुस्तक है जिसम मतिराम के दोहे व रहीम के बरवै साथ मिलाकर लिखे हुए हैं। मतिराम और रहीम समकालीन थे। मतिराम के काव्य पर रहीम का प्रभाव मिलता है।

4 बरव बरवै की प्राचीन हस्तलिखित प्रति सुलिखित है और प्रत्यक पष्ठ के हाशिये पर फारसी चित्रकला के बेलबूट बने हुए हैं। रहीम की माता मह जमाल खाँ मवस्त की थी और यह प्रतिमेवस्त स ही मिली है। प्रारम्भ मे छ छन्द मगलाचरण के हैं, शेष एक सौ एक बरव सग्रहीत हैं। इसकी भाषा नायिका भेद वाले ग्रन्थ से अधिक प्रौढ है।

5 मदनाष्टक रहीम न मालिनी छन्द मे इस ग्रन्थ की रचना की है इसकी भाषा रेखता और सस्कृत मिश्रित है।

---

1 माधुरी-फागुन, सख्या 52

6 फुटकर पद कहा जाता है कि रहीम ने रास पचाध्यायी नामक एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना की थी किन्तु वह उपलब्ध नहीं है। उसके दो पद नाभादास के भक्तमाल मे दिये हुए हैं।

7 शृंगार सोरठा यह काव्य भी खण्डित रूप म मिला है, इसके सोरठे अत्यन्त भाव प्रवण है।

8 रहीम काव्य यह सस्कृत और हिन्दी मिश्रित श्लोको का सग्रह है। इसम हिन्दु और मुसलमान जाति के समन्वय का प्रयास किया है।

9 खेट कौतुकम रहीम कृत यह ज्योतिष ग्रन्थ अपने पूण रूप मे प्राप्त है। इस ग्रन्थ मे सस्कृत और हिन्दी भाषाओ का सुन्दर मिश्रण द्रष्टव्य है। यह ग्रन्थ श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई स प्रकाशित है। वस्तुत खानखाना हरफन मौला थे और उन्होंन ज्योतिष पर एक सुन्दर ग्रन्थ लिख दिया। एक उदाहरण द्रष्टव्य है

यदा मुश्तरी केन्द्रखाने भिनाणे यदा वक्तखान रिपौ आफताब ।
अतारिद बिलग्ने नरो बख्तपूणस्तवो दौलदारो अथवा बादशाह ॥

पडित रामचन्द्र शुक्ल न लिखा है कि—"भाषा पर तुलसी का सा ही अधिकार हम रहीम का भी पाते हैं, ये ब्रज और अवधी पश्चिमी और पूर्वी दोनो काव्य भाषाओ मे समान कुशल थे।" बरवै नायिका भेद बडी सुन्दर अवधी भाषा मे है। इनकी उक्तिया ऐसी सुभावनी हुई कि बिहारी आदि परवर्ती कवि भी बहुत को अपहरण करने का लोभ न रोक सके। यद्यपि रहीम सव साधारण में अपने दोहे के लिये ही प्रसिद्ध हैं पर इन्होने बरवै, कवित्त, सवैया, सारठा पद सब म थोडी बहुत रचना की है।[1]

रहीम का बरवै-नायिका भेद निश्चित ही रीतिकाव्य का एक मनोहारी ग्रन्थ है इसमे न केवल नायिका भेद वरन् प्रेम और सौन्दय के मन मोहक चित्र है। रहीम के काव्य मे उनके जीवन का व्यापक अनुभव अभिव्यक्त मिलता है। सहज सरल होते हुए भी मार्मिक भावपूण कवित्व एवम् उक्ति वचित्र्य के आहरण इनम देखने को मिलते हैं। इनके दोहे और बरवै दोनों ही बडे लोक प्रिय हैं।

रहीम न छोट बडे कई ग्रन्थ लिखे रहीम दोहावली या रहीम सतसई, रहीम रत्नावली बरवैनायिका भेद, शृंगार सोरठ, मदनाष्टक, रासपचाध्यायी नगर शोभा, फुटकल बरव, फुटकल कवित्त सवय आदि। वे सस्कृत फारसी और हिन्दी के विद्वान थे स्वभाव से अत्यन्त विनोदप्रिय थे— इनकी विनोदप्रियता ममस्पर्शी उद्गार और जीवन की विविध अनुभूतियो के चित्रण काव्य को स्मरणीय बनाते

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास प रामचन्द्र शुक्ल पृ 209

हैं, और इनकी सहज कवित्त प्रतिभा के द्योतक है। रीतिकाव्य के क्षेत्र मे होने वाला इनका ग्रन्थ बरवै नायिका भेद है। जिसमे लोक जीवन के प्रेम और शृंगार पूर्ण आशा आकाक्षाओ से भरे अत्यन्त मधुर चित्र मिलते हैं।

लागेउ आइ नवेलियहिं मनसिज बान।
उकसन लाग उरोजवा दृग तिरछान
भोरहिं होत कोइलिया, बढवति ताप
घरि एक भरि अलिया, रहु चुपचाप
बन धन फूलहिं टेसुओ, बागन बेलि
चले बिदेस पियरवा, फागुआ खेलि॥
बाहर लके दियवा बारन जाइ।
सासु ननद घर पहुचत, देति बुझाय॥
उमडि उमडि घन घुमडे दिसि बिदिसान
सावन दिन मन भावन करत पयान।

रहीम मुगलया दरबार के श्रेष्ठ कोटि के कवियो म माने जाते हैं। कृष्ण के प्रति इनका असीम अनुराग है। उन्होने अपने मन को चकोर पक्षी की भाँति चन्द्रमा रूपी कृष्ण म लीन कर लिया था। "कमलदल नैन कृष्ण" उनके मन मे बस गये थे

कमल दल नैननि की उनमानि।
बिसरत नाहिं नेकु भो मनते मन्द मन्द मुसकानि
ये दसनन दुति-चपला दुते महा चपल चमकानि।
बसुधा की बस करी मधुरता सुधा पगी बतरानि॥
चढ़ी रहै चित उर बिसाल की, मुकत माल पैहरानि।
नृत्त समे पीताबर इसी फहरि फहरि फैहरानि॥
अनुदिन श्री वन्दावन मे ते, आवन जावन जौनि।
अब ' रहिम" चित्त ते न टरति है, सकल स्याम की बानी॥

रहीम मुसलमान होते हुए भी कृष्ण और राम के पूरे भक्त थे। इनको ईश्वर पर पूर्ण विश्वास था।

1 त रहीम मन आपनो कीनो चारू चकोर।
निसि बासर लाग्यो रहै कृष्णचन्द्र की ओर॥
रहिमन को कोउ का करै ज्वारी, चार लबार॥
जो पति राखनहार है, माखन चाखन हार।
माँग मुकुरि न को गयो केहि न त्यागियो साथ,
मागन आगे सुख लोह्यो रहीम रघुनाथ।"

2 "छबि आवन मोहन लाल की।
काछिनि काछे कलित मुरलिकर, पीत पिछौरी साल की।
बेक तिलक कसर को कीनें, दुति मानो विधु बाल की।
बिसरत नाहिं सखी मो मनतें, चितवनि नयन बिसाल की॥"
'नीकी हँसनि अधर सुघर निकी, छबि छानी सुमन गुलाल की।
जल सो डारि दियो पुरइन पर, डोलनि मुकता माल की॥
आप मोल बिन मोलनि डोलनि, बोलनि मदनगोपाल की।
यह सुरूप निरखै सोई जानैं,
या रहीम के हास की॥[1]

3 पकरि परम प्यारे साँवरे को मिलाओ,
असल अमृत प्याला क्यो न मुझको पिलाओ?
इति वदति पठानी मन्मथाङ्गी विरागी,
मदन शिरसिभूय क्या बला आन लागी॥[2]

4 "कठिन कुटिल काली देख दिलदार जुलफें,
अलि-कलित, विहारी आपने जी की कुलफें।
सकल शशि-कला को रोशनी हीन लेखो,
अहह ब्रजलला को किस तरह फेर देखो"[3]

ऊपर के बरवै छन्दो मे निबद्ध चित्र अत्यन्त प्रभविष्णु और मनोमोहक हैं। इनसे रहीम की जीवन सौन्दय और भाव परखी दृष्टि प्रकट होती है। उनके पास जीवन का बड़ा व्यापक ज्ञान और गहरा अनुभव था, जिसके कारण काव्य की लोक रुचि को जगाने की वे क्षमता रखत हैं। रहीम के विविध भाषा सुमनो मे कृष्ण की सुवास बसी है, जिसकी सुरभि लहरियो से आज भी वातावरण महक उठता है।

मधनायक

मधनायक का पूरा नाम सैयद निजामुद्दीन है। मधनायक का सम्बन्ध बिलग्राम के हुसैनी परिवार से है। प्रमाणिक तिथि के अभाव मे सन् 1000 हिजरी अर्थात सन् 1591 ई (1648 वि) को ही मधनायक का जन्म सवत् स्वीकार करते है।[4] ज्ञानाजन की लगन ने संस्कृत और हिन्दी के अमूल्य ग्रंथों के अध्ययन ने मधनायक को दोनों ही भाषाओ का मर्मज्ञ बना दिया।

1 भजन संग्रह (भाग 4) वियोगीहरि पृ 22
2 भजन संग्रह ' वही पृ 25
3 भजन संग्रह " वही पृ 24
4 डॉ घंसराज वैदी बिलग्राम के मुसलमान कवि, पृ 40

आपकी रचनाएँ बडी रसमय बन पडी हैं —

नायिका के नेत्रा की प्रशसा में "मदनायक" भी अपने] समकालीन कवियों से पीछे नही रहना चाहत । नायिका क अवयवो के अतिरिक्त मदनायक न नायक के रूप का भी हृदयग्राही चित्रण किया है । कृष्ण की रूप माधुरी का स्वच्छ और स्पष्ट चित्र मदनायक के कवित्तो के माध्यम से पाठन के हृदय मे बरबस ही अकित हो जाता है

"चदन चित्र बनो तन साँवरे बाहनि सोहत आवत सोहन ।
पीत पिछौरी पछाहन छाजत मनन रग रच्यो रति छोहन ।
कुडल मडित मजुल मजरि नूतन नून लता करि जोहन ।
आसुन की अवली उमहै मदनायक बाल विलोकित मोहन ।[1]

"मोहन क्रीडा" जो ब्रज क्षेत्र म बहुत लोक प्रिय है, उसका भी चित्राकन मदनायक ने किया है — नायक कृष्ण उगली से उतारकर अँगूठी यमुना जल मे डाल देते हैं । ढूढने के लिये बालाएँ जल म डुबकी लगाती हैं और जब थक जाती हैं तब कृष्ण यमुना की पेंदी से अँगूठी निकालकर पहन लेत हैं

"खेलत ही जमुना जल म दुहूँ सौतन के मन मे हरि जोहन ।
डार दई कर तें बरकै नग मडित हेम अँगूठी है सोहन ।
बूडि उठी औ हरी न गइ गडि भूतल बाल विलोकत जोहन ।
ढूढि फिरैं मुँदरी सिगरैं तब पौधि लई अगुरी मनमोहन ।[2]

कृष्ण की इस अनुपम छवि को हृदय मे सरक्षित कर लेने के पश्चात कवि को उनकी क्रीडाओ से आनन्द विभोर होने का सुअवसर प्राप्त होता है। वही प्रोषित पतिका नायिका के प्रसग मे कवि जिस समय श्याम की अवधि निश्चित करके भी न आने की बात करता है नायिका के साथ उसके अपने नयन भी सजल हुए बिना नही रह पाते

"औधि दे सिधाए आली आज हूँ न आए
दुहु नैन घन छाए घनस्याम के वियोग तें ।।[3]

परन्तु कवि घनश्याम को वर्षा के उमडते हुए काले मेघो की ओर से झाकता हुआ पाकर सन्तोष कर लेता है । उसक हृदय मे उनकी सम्पूण छवि साकार हो उठती है

---

1 ड मौलाबदी बिलग्राम ने मुसलमान कवि पृ 110
2 मदनायक मदनायक सिगार 132
3 मदनायक मदनायक सिगार 213

"जाका देवी देन दुज पूजत करत सोम
तईं मेघ मूरति सरूप दरसा वहो ॥
नाद घन गजन चमक दुति दतन की।
उर मनिमाल अन्द बधो दृष्टि भावहीं ।[1]

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि "मधनायक" ने भी प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण की रूप माधुरी के वणन मे रुचि लेकर वष्णव भक्ति परक काव्य मे अपने उद्गारो को सम्मिलित करा लिया है।

जमाल

जमाल का रचनाकाल सवत 1627 के आसपास अनुमान किया गया है। इनके नीति और शृङ्गार के दोहे राजस्थान म बहुत जनप्रिय हैं। भाव व्यजना अत्यन्त मार्मिक पर सीधे साधे ढङ्ग पर की गयी है। ये भारतीय काव्य परम्परा से पूणरूप से परिचित कोइ सहृदय मुसलमान कवि थे। शब्द क्रीडा मे भी ये परम निपुण थे। इनकी पहेलियाँ सुक्तियाँ और दोहे अत्यन्त व्यजनापूण हैं — जस

"कामिन जावक रग रच्यो, दमकत मुक्ता कार।
इम हसा मोती तजे, इम मुग लिए चकोर ॥"[2]

भूमिका क अन्तगत 'जमाल दोहावली" के सकलनकर्ता ने अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है —

"जमाल ने कृष्ण सम्बन्धित दोह भी रचे है, किन्तु स्थान स्थान पर नीति तथा भक्ति के दोहो म भी उन्होने प्रेम को ही प्रमुख स्थान दिया है। जिससे सिद्ध होता है कि वे प्रेम-पीर क पुजारी कोई सूफी कवि थे।"

जमाल के प्रेम निरूपण के दो स्तर है — कभी उन्होने अपने आध्यात्मिक प्रम की चर्चा के लिये सन्तो या वैष्णव भक्ति की शैली को अपनाया है तो कभी व राधा कृष्ण की प्रेम लीला के वणन मे रीतिकवियो के शृङ्गार मूलक नायिका-भेद माग पर चलत प्रतीत होते हैं। एक ओर तो ससार की अनित्यता को देखकर "योगी" होन की चर्चा करते हैं, तो दूसरी ओर दधि माखन (गोरस इन्द्रिय रस) के लिये इनके कृष्ण गोपियो का माग रोकते हैं

1 मधनायक मधनायक सिंगार 1274
2 जमाल दोहावली पृ पृ 10

घेरत नित मुहिं कुंज म भाई नन्द किशोर।
दधि माखन को खान हित कहु जमाल करि गौर ॥[1]

कही "जमाल" के कृष्ण गोपी की आँखो को रग गुलाल ॥ बन्द कर मन-ही प्रेयसी के उरोजस्पर्श करते हैं

इक को आँखिन डार दो, कान्हा रग गुलाल।
इक को कर धरि कुच मल्यो, कारण कवन जमाल ॥[2]

प्राय ईश्वर से अन्त वेदना का निवारण न कर पाने पर क्षोभ व्यक्त करते हैं तो कही दरस के बिना आँखो की प्यास न बुझ पाने की शिकायत भी करते हैं।

दरस बिना नही जात है अँखियन प्यास जमाल।[3]

जमाल की उक्तियो मे कही भी 'सूफीपन' का सीधा सकेत नही मिलता। यदि जमाल श्रद्धावनत होते हैं तो केवल राम, कृष्ण, शिव, गणेश और सरस्वती की प्रतिमाओं के समक्ष।

जमाल की भक्ति और प्रेम सम्बन्धी उक्तियो मे निखार और गहराई है। इन्होंने कृष्ण, शिव गणेश की आराधना की है, कवि के अनुसार परमाराध्य देवाधिदेव हैं "नन्दलाल कृष्ण"

विधि विध कै सब विधि जपत, कोऊ लहत न लाल।
सो विधि को विधि नन्द घर खेलत आय जमाल ॥[4]

अकबर शाह

आपका रचना काल 1631 से 1662 तक समझ पड़ता है। आपका जन्म 1599 म अमर कटक म हुआ था। आप बडे विद्वान न थे परन्तु विद्वानो का सत्सग रखते थे। आईने अकबरी नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ आप ही के विचारो का सग्रह है। आपके दरबार मे कई हिन्दी कवि भी थे। आप हिन्दी कविता भी करते थे जो साधारण श्रेणी की होती थी। अनुमानत 1631 के आस पास ही आपने हिन्दी म छन्द रचना की थी।

कृष्ण के सम्बन्ध म आपका एक पद इस प्रकार है

जाको जस है जगत मे जगत सराहे जाति,
ताको जीवन सफल है कहत अकबर साहि।

---

1 जमाल दोहावली भूमिका पृ 39 दोहा 125
2 वही 39 दोहा 155
3 वही 2 दोहा 5
4 वही 1 दोहा 4

'साहि अकबर एक समै चले कन्ह विनोद विलोकन बालहि
आहट से अबला निरख्यो चकि चौक चली करि आतुर चालहि ।
त्यो बलि बेनि सुधारि धरी सुमई छवि यो ललना अरु लालहि ।
चंपक चारु कमान चढ़ावत काम ज्यो हाथ लिए अहि बालहि ।
केलि करै विपरीत रमै सु अकब्बर क्यो न इतो सुख पावै,
कामिनी की कटि किंकिन कान किये मनि पीतम के गुन गावै ।
बिदु प्रसेद को छूटो लालाट त यो लट म लटको लगि आवै ।
साहि म मौज मनो चित मे छवि चन्द लय चक डोरि खिलावैं ।

काविर बरन

ये हरदोई जनपद क पिहानी ग्राम म निवासी थ । इनक ज म का स 1635 वि माना जाता है । इनके गुरु पिहानी निवासी सयद इब्राहीम थ । इनके स्फुट कवित्त ही प्रकाश मे आये हैं । य तोष श्रेणी के कवि ह ।

'गरज नगार भारे बृन्द हरकारे आग
    ध्वजा धारे धुवा गजतीना बन्न न ।
पवन तरग चढे आये भट रग रग
    घेरि आये चारो ओर सून ही सदन मे ।
तेकी पूक काती कल कोकिला स छाती
    अरि छाती हहराती देखे चपला रदन क ।
कादर विरह सुधि लीजै स्याम सादर जू
    आये बीर बादर बहादुर मदन के ॥[1]

रूपमती बेगम :

रूपमती का ज म सारगपुर नामक ग्राम म एक वश्या क गभ से हुआ था । बचपन से ही ये गायन वादन मे प्रवीण थी । काव्य रचना मे भी अनुराग था । इनके गुणो स आकर्षित होकर मालवा के सुल्तान, सुजावल खाँ सूर के पुत्र नवाब बाजबहादुर ने इन्ह अपनी बेगम बना लिया । स्वय सुल्तान भी चोटी के कलाकार थे । बाज बहादुर न गायन और वादन दोनो म दक्षता प्राप्त की थी । सम्राट अकबर की आज्ञा से स 1647 वि मे अहमदखाँ ने मालवा पर आक्रमण किया जिसमे नवाब की हार हुई । उन्होंने युद्ध मे जान स पूव कुछ सनिको को बेगमा की रक्षा के लिये नियुक्त किया और आदेश दिया कि उनकी हार के पश्चात् शत्रुओ के महल म आने के पूव बेगमो को समाप्त कर दे । अहमदखाँ रूपमती को बेगम बनाने का इच्छुक था किन्तु जीत के बाद महल म आने पर अन्य रानियो के साथ रूपमती को भी आहत पाया । उपचार उपरात रूपमती स्वस्थ

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 140

हो गयी । अहमद खाँ ने बेगम से विवाह की इच्छा प्रकट की । [इस] प्रस्ताव से डरकर बेगम ने स्वीकृति दे दी लेकिन सन्ध्या को जब वह रूपमती के कक्ष में आया तो देखा रूपमती ने आत्महत्या करली थी और एक दोहा लिखकर अहमद खाँ के लिये रख गई थी दोहा इस प्रकार है

रूपमती दुखिया भई बिना बहादुर बाज ।
सो अब जियरा तजत है इहाँ नहीं कछु काज ॥[1]

रूपमति की अधिक रचनायें उपलब्ध नहीं है । रानी सगीत पारगता कवियित्री थी इसका प्रमाण राधा पर आश्रित स्फुट छन्दों से मिलता है ।

मुंशी देवीप्रसाद जी के नागरी प्रचारिणी पत्रिका के तीसरे भाग में प्रकाशित 'रूपमती तथा बाज बहादुर की कविता, नामक लेख से इनके जीवन पर बहुत प्रकाश पडता है । इनके मतानुसार रूपमती सारंगपुर की चतुर सुजान पातुर थी। अब्दुल कादिर बदायुनी के शब्दों में वह आम खास में पदमिनी मशहूर थी। उसकी गान शक्ति का वर्णन करते हुए तवारीख मालवा में मुशी करमअली ने लिखा है कि तानसेन जब दीपक राग की ज्वाला से व्याकुल हो रहा था तो रूपमती ने मल्हार राग गाकर बादलों को निमन्त्रण देकर प्रकृति पर कला की विजय की घोषणा की । बाज बहादुर के रसिक व्यक्तित्व में काव्य तथा संगीत के प्रति एक विशेष आकर्षण था । रूपमती ने अपनी अपार रूप राशि तथा संगीत और काव्य गुण से बाज बहादुर को मुग्ध तो कर ही लिया, स्वयं भी उस पर मुग्ध हो गई । बाज बहादुर इस हास विलास में अपने जीवन के उत्तरदायित्वों को बिलकुल ही भूल गये परिणामस्वरूप उसे अकबर से युद्ध में पराजय मिली ।

मुत खिबुल नवाब के अनुसार रूपमती वेश्या होते हुए भी पतिव्रता थी किसी के हाथ से अपने वस्त्रों का स्पर्श मात्र से ही वह जहर खाकर मर गई । उसकी काव्य रचना के विषय में अनेक उल्लेख विभिन्न ग्रन्थों में मिलते हैं ।

बाज बहादुर के वियोग काल में लिखा एक दोहा मिलता है

बिन पिया पापी जिया चाहत है सुख साज ।
रूपवती दुखिया भई बिना बहादुर बाज ॥[2]

धार राज्य के मीर मुंशी अब्दुल रहमान जी के द्वारा प्राप्त एक पद का उल्लेख भी मुंशी देवीप्रसाद जी ने किया है, वह इस प्रकार है

और धन जोडता है री, मेरे तो धन प्यारे की प्रीत पूंजी
कहूँ खिया की न लागे दृष्टि, अपने कर राखूगी कूंजी ॥

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पूर्ण विवरण पृ 123 124
2 मध्यकालीन हिन्दी कवियित्रियाँ डॉ सावित्री सिन्हा, पृ 250

तान तरग खाँ

ये संगीत सम्राट तानसेन के पुत्र थे। अबुल फजल ने अकबरी दरबार के सगीतज्ञों में इनका नामोल्लेख किया है। इनका कविता काल स 1640 वि के लगभग है इनकी कुछ स्फुट रचनायें मिलती है। उदाहरण के लिए एक छन्द प्रस्तुत है

अब ही हारि न र ईंगुरिया कन्हाई मेरी पचरग पाट की।
हा हा खात तर पैया परति हा नातख मोहि मथुरा नगर हाट की।
मर सग का टूरि निकसि गई हौं न रही कितूँ घाट की।
तान तरग प्रभु झगरो ठान्यो, हँसत लुगाई बाट की ॥[1]

शाहजहाँ

इनका जन्म और मृत्यु का समय क्रमश स 1647 और सं 1723 वि है बादशाह शाहजहाँ काव्य रसिक प्रसिद्ध थे। सस्कृत हिन्दी के विद्वानों का व आदर करते थे तथा स्वय भी ब्रजभाषा मे रचना करते थे। कृष्ण के महत्त्वाकर्षण पर एक पद इस प्रकार है

भादो मैस दिनन भाद स्याम बाह को आयग।
कोकिला की कुहुक सुनि छाती माती राती भई,
बिरही आग ऊधो कव फूल क जरावेंगे।
शाहजहाँ पिया तुम बहु नायक।
बिरहिन के अजुमन की तपत बुझावेंग ।[1]

ताज

धर्म तथा जाति की सीमा तोड़कर कृष्ण के चरणों मे सवस्व समपण द्वारा ताज ने कृष्ण के रूप के प्रति नारी के सहज आकर्षण का प्रमाण दिया। ताज को कुछ विद्वान् 'पुरुष' मानते हैं। सिहोर (भावनगर राज्य) के निवासी कवि गोविन्द गिल्लाभाई को आगे रखकर हिन्दी के मुसलमान कवि म श्री गंगाप्रसाद सिंह (अखोरी) ने इनको 'पुरुष लिखा है। अखोरी जी का तर्क यह है कि सभवत सखी भाव की उपासना करने के कारण ताज ने अपने लिये स्त्रीवाची सबोधना का प्रयोग किया है या हो सकता है कि ताज नाम के दो कवि रहे हों।[1] पता नहीं कैसे उन्होंने यह कहा है कि गोविन्द गिल्लाभाई (ज स 1905 वि) ताज को पुरुष मानते हैं। गोविन्द गिल्लाभाई इन्हे 'स्त्री-कवयित्री' मानते थे जिसकी स्पष्ट सूचना निमलजी को लिखे गये उनके एक पत्र में मिलती है

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि — डॉ सत्यनारायण श्रीवास्तव पृ 249
2 हिन्दी के मुसलमान कवि, पृ 161

दिन दिन बढ़े सवायो डेवढो घट न एको पूँजी।
बाज बहादुर के स्नेह ऊपर निछावर करूँगी धन औ जी ॥

"संसार के समस्त जन धन एकत्रित करते हैं परम वैभव तो प्रिय के द्वारा प्राप्त प्रेम की पूजी पर ही निर्भर है। अपनी उस पूजी को मैं सुरक्षित करके रखूँगी तथा उसकी कुंजी भी अपने ही पास रखूँगी जिससे किसी अन्य स्त्री की दृष्टि इस पर न पड जाए। इस प्रेम की पूजी मे दिनोदिन वृद्धि होती जाती है, उसमे से एक गुजा भी कम नही होता। बाजबहादुर के स्नेह के लिये मे प्राण तथा धन सर्वस्व न्योछावर कर दूँगी।"[1]

उर्दू प्रधान वातावरण मे रहते हुए भी, उनकी भाषा मे संस्कृत शब्दो का प्रयोग है। दृष्टि, प्रिया, पापी स्नेह इत्यादि शब्दो का अस्तित्व मुसलमानी वैभव मे पनपती हुई भाषा के प्रभाव से युक्त वातावरण म आश्चर्य का कारण है, परन्तु ऐसा अनुमान होता है कि बाजबहादर के संसर्ग म आने के पूर्व उनका पालन पोषण हिन्दू वातावरण म हुआ था जिससे उन्हे हिन्दी तथा संस्कृत से कुछ परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला था।

इनका रचनाकाल सं 1637 वि के लगभग है राग-रागनियो से निबद्ध दो उदाहरण प्रस्तुत हैं

राग बिहाग

श्याम बिना उमगे री, बहु बदरा।
बरसत रहत रैन अरू बासर, हिय कियौ अति कदरा।
कासो कहौ, सुनै को मेरी, जोहत बैठी पिय को मगरा।
"रूपमती" को बाजबहादुर, तजि गियो गोकुल मिटि गयो झगरा ॥[2]

राग टोडी

'देखौ री, वो आवत नगर मे, होरी खेलत स्याम सलोना।
छिन मे मन बस करत सबन को, वाकी मुरली म है कछु टोना ॥
मोरे मुकुट कुंडल की अति छवि, आखन नैन अजन घर कोना।
'रूपमती' मन होत बिरागी, बाजबहादुर के नन्द डिठोना ॥[3]

यह सत्य है कि मध्यकालीन जीवन को कुठाओ मे नारी द्वारा सर्जित साधारण रचनायें भी बहुत महत्व रखती थी परन्तु उनके काव्य के विषय मे प्राप्त अनेक अतिशयोक्ति पूर्ण उल्लेख उनके काव्य की साधारणता का उपहास सा करते हुए प्रतीत होते हैं।

---

1 मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ डॉ सावित्री सिन्हा पृ 251
2 पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ पृ 356
3 वही 356

तान तरग खाँ

ये सगीत सम्राट तानसेन के पुत्र
सगीतज्ञो मे इनका नामोल्लेख किया है।
लगभग है इनकी कुछ स्फुट रचनायें मि
प्रस्तुत है

अब ही डारि ? र ईंडुरिया ? ?
हा हा खात तेर पैंया परति हौं ल
मेरे सग की दूरि निकसि गई हा न
तान तरग प्रभु भगरो ठायो, हँसत

शाहजहा

इनका जन्म और मृत्यु का समय ?
है बादशाह शाहजहाँ काव्य रसिक प्रसिद्ध है
आदर करते थे तथा स्वय भी ब्रजभाषा म
पर एक पद इस प्रकार है

भादो कैसे दिनन आइ श्याम काहू क
कोकिला की कुटुक सुनि छाती माती
बिरही आगे ऊधो फव फूल ये जरावें
शाहजहाँ पिया तुम बहु नायक ।
बिरहिन के अजुमन की तपत बुझावेंगे

ताज

धर्म तथा जाति की सीमा लाघकर कृष्ण
ताज ने कृष्ण के रूप के प्रति नारी के सहज भाव
कुछ विद्वान् पुरुष' मानते हैं । सिहोर (भावन
गोविन्द गिल्लाभाई को आगे रखकर हिन्दी के मुस
सिंह (अखौरी) ने इनको 'पुरुष' लिखा है । अखौरी
सखी भाव की उपासना करने के कारण ताज ने अपन
प्रयोग किया है या हो सकता है कि ताज नाम के दो क
कैंस उन्होंने यह कहा है कि गोविन्द गिल्लाभाई (ज से
पुरुष मानते हैं । गोविन्द गिल्लाभाई इन्हें स्त्री-कवयित्री' मा
सूचना निमसजो को लिखे गये उनके एक पत्र मे मिलती है

---

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि – डा० लक्ष्मीनारायण श्रीवास
2 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 161

"भानु के प्रकास बिना कज मुख ढाँपि रहै,
केतकी के वास बिना भौंर दुख सीर है।
देखे बिना चन्द के चकोर चित्त चाय रहे,
स्वाति बूंद चाखे बिना चातक मन पीर है।
दीपक की जोति बिना सीस सो पतग धुने,
नीर के बिछोह मीन कैसे करि जी रहै।
कहू कवि ताज मित्र मानिये हमारी किर्यों
नैनन मे देखू जब नैनन मे धीर है।।[1]

'ताज' की भक्ति भावना का आधार कृष्ण का माधुर्यमय विराट रूप है। उनकी भावनाओ मे निझरणी का चचल वेग नही समतल स्थान मे प्रवाहित सरिता का शान्त स्निग्ध प्रवाह है। विराट की गरिमा के प्रति आस्था और विश्वास उनके काव्य के एक एक शब्द मे प्रस्फुटित है। उपास्य के प्रति उनकी भावना में विश्वास जन्य समपण है। राधा और गोपियो के साथ कृष्ण क्रीडा के प्रति आनद और उल्लास तो है परन्तु उच्छृखल रसिकता नही। कृष्ण के मधुर रूप मे भी नैसर्गिक छाप है, लौकिक व्यक्ति के रूप मे भी उनके कृष्ण उनसे उच्च स्तर ह।

प्रेम पथ की गहनता और गम्भीरता से उनका प्रौढ हृदय परिचित है। कृष्ण के रूप सौन्दय के आकषण मे बधकर उनकी भावनाओ का ज्वार समाप्त नही होता, बल्कि सतुलित मस्तिष्क उसे जीवन का आधार मानकर उसका मूल्य आकने का प्रयास करता है—

"मुसक्यानि सिहारी जो मैंने लखी,
लखि के मन मे अति नेह जुरानो।
जो तुम चाहत एक बिसे,
हम एक के बीस बिसे तेहि मानो।।
राह बडी है जो प्रेम के पथ की,
चातुर होय सोई चित आनो।
जीवन ताज कहे जग मे,
तुम चारहि आदि के अक्षर जानो।।[2]

हिन्दु धम में प्रचलित आडम्बरो पर जो आक्षेप किये हैं, उनम व्यग्य और लाछना नही है, परन्तु उनकी मीठी वाणी मे निहित सकेत इन उपहासप्रद वस्तुओ की महत्वहीनता सिद्ध करने के लिये पर्याप्त है

1 मध्यकालीन भक्तियित्रियाँ डॉ सावित्री सिन्हा, – पृ 189
2 वही , , – पृ 189 190

धर्म मे प्रचलित पौराणिक कथायें, उनके शुद्ध तथा यथातथ्य वर्णन को देखकर विश्वास नही होता कि वे एक मुसलमान घराने मे जन्मी, पली, बढी हुई है।

महाभारत, रामायण आदि धर्मग्रन्थो की प्रचलित पौराणिक कथाओ से ही नही अपितु अन्त कथाओ से भी उनका पूर्ण परिचय था। हिन्दूधर्म ग्रन्थो की छोटी छोटी कथाओं जसे – कुन्दनपुर जाकर भीष्म की सहायता करने जैसी घटनाओ का समावेश भी उन्होंने अपनी रचनाओ मे किया है। जिससे स्पष्ट है कि हिन्दू धर्म की रूपरेखा से वे पूर्णरूपेण परिचित थी तथा उसका उनको विस्तृत ज्ञान था।

कवयित्री ताज का एक अनुपलब्ध ग्रन्थ 'धोबी वादी का भगरा' है। आपत्ति यह की जाती है, उक्त ग्रन्थ भक्त कवयित्री ताज का लिखा हुआ नही हो सकता। यह ताज नामक किसी अन्य कवयित्री की रचना है। श्री अगरचन्द नाहटा का कहना है — कि यह भक्त कवयित्री ताज के ही प्रारम्भिक जीवन से सम्बद्ध है। उन्होने भक्ति सम्प्रदाय मे आने के पूर्व इसे लिखा। सम्भव है, राजमहल जीवन से उन्हे ऐसी कृति रचने की प्रेरणा मिली।[1]

ताज का समय अकबर काल (स 1598–1663 वि) मे ही पड़ता है। इन्होने स्वय एक कवित्त मे अपने कुछ पूर्ववर्ती तथा समकालीन भक्त कवियों का नामोल्लेख किया है जैसे — कबीर नानक, मूलक, सूर, तुलसी, रैदास, नामदेव, दादू, सदना कसाई, मीरा, सेन (नाइ)—

'ध्रुव से प्रहलाद गज ग्राह से अहिल्या दक्ष
सबरी और गीध यो विभीषन जिन तारे है।
पापी अजामिल सूर तुलसी रदास कह
नानक मूलक 'ताज' हरि ही के प्यारे हैं।
धनी नामदेव दादू सदना कसाई जानि
गनिक कबीर मीरा सेन उर धारे हैं।
जगत को जीवन जहान बीच नाम सुन्यो
राधा के वल्लभ कृष्णवल्लभ हमारे है।।'[2]

मानव भावनाओ के आरोपण म माधुर्य भाव की प्रधानता है। अनेक माधुर्य मे लीला रूप तथा प्रेम का सामन्जस्य है। कृष्ण के प्रति उनकी भावनाओं मे अनन्यता है। विरह की अनुभूतियो म मिलन की छाया देखकर सन्तोष कर लेने की शक्ति उनम नही है तो उनके नत्रों को तो साकार दर्शन मे ही विश्वास है प्रेम सम्बन्धित अनेक प्रसिद्ध उपमानो से उनकी भावनाओ का यह सम्बन्ध स्थापन अनुपम है। कृष्ण के प्रति उनकी भावनाओं म अनन्यता है

1 डॉ उमाशकर श्रीवास्तव मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि, पृ 141
2 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 163

"भानु के प्रकास बिना कज मुख ढाँपि रहे,
केतकी के वास बिना भौंर दुख सीर है।
देखे बिना चन्द के चकोर चित्त चाय रहे,
स्वाति बूद चाखे बिना चातक मन पीर है।
दीपक की जोति बिना सीस सो पतग धुने,
नीर के बिछोह मीन कैसे करि जी रह।
कहू कवि ताज मित्र मानिये हमारी बिधो
नैनन मे देखू जब नैनन मे धीर है ॥"[1]

'ताज' की भक्ति भावना का आधार कृष्ण का माधुर्यमय विराट रूप है। उनकी भावनाओ मे निझरणी का चचल वेग नही समतल स्थान में प्रवाहित सरिता का शान्त स्निग्ध प्रवाह है। विराट की गरिमा के प्रति आस्था और विश्वास उनके काव्य के एक एक शब्द मे प्रस्फुटित है। उपास्य के प्रति उनकी भावना मे विश्वास जन्य समपण है। राधा और गोपियो के साथ कृष्ण क्रीडा के प्रति आनद और उल्लास तो है परन्तु उच्छृखल रसिकता नही। कृष्ण के मधुर रूप मे भी नैसर्गिक छाप है, लौकिक व्यक्ति के रूप मे भी उनके कृष्ण उनसे उच्च स्तर ह।

प्रेम पथ की गहनता और गम्भीरता से उनका प्रौढ हृदय परिचित है। कृष्ण के रूप सौन्दय के आकर्षण मे बधकर उनकी भावनाओ का ज्वार समाप्त नही होता, बल्कि सतुलित मस्तिष्क उसे जीवन का आधार मानकर उसका मूल्य आकने का प्रयास करता है—

"मुस्क्यानि तिहारी जो मैंने लखी,
लखि के मन में अति नेह जुरानो।
जो तुम चाहत एक बिसे,
हम एक के बीस बिसे तेहि मानो॥
राह बडी है जो प्रेम के पथ की,
चातुर होय सोई चित आनो।
जीवन ताज कहे जग मे,
तुक चारहि आदि के अक्षर जानो॥"[2]

हिंदु धम में प्रचलित आडम्बरो पर जा आक्षेप किये हैं, उनम व्यग्य और लाछना नहीं है, परन्तु उनकी मीठी वाणी मे निहित संकेत इन उपहासप्रद वस्तुआ की महत्वहीनता सिद्ध करने के लिये पर्याप्त है

1 मध्यकालीन कवयित्रियों की सावित्री सिन्हा — पृ 189
2 वही , , — पृ 189 190

काहू को भरोसो बद्रीनाथ जाय पाँय परे,
काहू को भरोसो जगन्नाथ जू के मान को।
"काहू को भरोसो 'ताज' पुस्कर में दान दिये,
मो को तो भरोसो एक नन्दजी के लाल को॥"[1]

"ताज के कृष्ण" में महाभारत के राजनीतिज्ञ, गीता के उपदेशक तथा ब्रज के कन्हैया के रूपों का समन्वय है। उपास्य तथा भक्ति भावना के अतिरिक्त कर्म काण्ड, भारतीय दर्शन भी उनके काव्य का प्रमुख विषय रहा है। जिनके सौष्ठव तथा स्वच्छता का दृष्टान्त इस प्रकार है

कर्म सो बुद्धि हूँ मान गुनें अरु कर्म सो चातक स्वाति जो पीवे।
कर्म सो जोग अरु भोग मिले, अरु कर्म सो पकज नीर न धोवे॥
कर्म सो 'ताज' मिले सुख देह को, कर्म सो प्रीति पतग ज्यु देवे।
कर्म के यो ही अधीन सबै अरु कर्म कहु के अधीन न होवे॥"[2]

ताज के काव्य म अनुभूतियो के स्रोत का स्वच्छन्द प्रवाह नही है। अनुभूतियो को मुक्तगेय पदो मे स्वच्छ दता प्रदान है। ताज ने कृष्ण काव्य धारा के लेखको की पद शैली को न अपनाकर सवैया शैली एवम् कवित्त शैली को अपनाया है। छन्दो की लय और सगीत तथा शैली की प्राजलता ने इनके काव्य को प्रभविष्णु बनाया है। अनेक स्थानो पर उत्प्रेक्षा, उपमा इत्यादि का प्रयोग इनके काव्य म सुन्दर बन पडा है। उपमाओ का सहारा लेकर अपनी मधुर व सरस भाषा तथा कोमल भावनाओ द्वारा चिरनवीन बना दिया।

उपमा, उदाहरण, सन्देह इत्यादि अलकारों का प्रयोग भी पर्याप्त मात्रा म है। उत्प्रेक्षा का एक सुन्दर उदाहरण इस प्रकार है

"नेकु बिहाय न रैन कछु यह जान भयानक भार भई है।
भौन मे भानु समाज सु दीपक अगन मे मानो आग दई है॥

ताज के माधुर्य गुण मे किसी स्थान पर लौकिक शृगार की भावनाओ का प्रभाव प्रधान रूप से दिखाई देने लगता है। उनकी सरस अभिव्यजना प्राजल भाषा, सजीव कल्पना, भावुक चित्रण तथा सुन्दर अलकृत शैली का परिचय, नीरव रजनी के एकात म अश्रुओ और उच्छ्वासो से तडपती हुई विरहणी बाला के चित्रण से मिल जायगा।

"चैन नही मन मे, मलीन सुनैन भरे जल मे न्हातई है।
ताज कहै पथक यो बाल ज्यो चक्र की माल बिलाय गई है॥

---

1 डॉ सावित्री सिन्हा मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रीयाँ पृ 189
2 वही पृ 190

नेकु विहाय न रैन कछू यह जान भयानक भोर भई है ।
भौन मे भान समान सुदीयक, अगन मे मनो अगि दी है ॥[1]

ताज ने काव्य रचना का आरम्भ एक प्रौढ़ जीवन दशा को आत्मसात् करने के पश्चात् किया था। इस्लाम के एकेश्वरवाद मे उन्हें उनकी अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासा का समाधान नही प्राप्त हो सका। उनके काव्य मे रागात्मक अनुभूतियों के साथ गम्भीर दार्शनिकता की सरस अभिव्यजना मिलती है। इनकी भाषा सस्कृत के अनेक तद्भवो तथा तत्समो से बनी ब्रज भाषा है। उर्दू भाषा के प्रयोग के कारण खडी बोली का पुट भी इनकी भाषा मे यदा कदा मिलता है।

ताज की जो रचनाएँ प्राप्त ह, उन्ही के आधार पर उनकी काव्य प्रतिभा और कला प्रियता का आभास मात्र मिलता है।

"कृष्ण की कविताओं मे, कला के सौष्ठव की दृष्टि से मीरा के पश्चात् ताज का ही स्थान आता है। उनके काव्य की शुद्ध आत्मा सुघर कला की कसौटी पर पूर्ण परिप्लुत होकर निखर गई है। यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि ताज अपने युग की एकमात्र सचेष्ट कलाकार थी मीरा की अनुभूतियाँ की प्रखरता ही कला बन गई थी, उनकी भावनाओ के अजस्र स्रोत की प्रवाह मे सुन्दर मुक्ताएँ मिलती हैं, परन्तु ताज की अनुभूति उनकी प्रतिभा तथा कला के स्पर्श से कुन्दन बन गई हैं।"

कवि जान

रचनाकाल स 1669 से 1721 वि

हिन्दी के विकास मे महाकवि जान का बडा योगदान रहा है। इन्हे हिन्दी प्रेमाख्यानो का सबसे बडा कवि कहा जाता है। जान शक्ति-सम्पन्न कवि थे, ईश्वर ने इन्हे अद्भुत कवित्व शक्ति प्रदान की थी। कहा जाता है कि हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री "ताज" भी इसी कयामख्यानी नवाबो के परिवार की थी।

ताज शादी के बाद मीरा की तरह कृष्ण की दीवानी बन गई थी। बचपन मे जान को ताज ने खिलाया सिखाया था। उसके कवि हृदय और हिन्दु-मुस्लिम एकता के भाव का प्रभाव जान पर पडा था। और जान ने उसका उत्तम विकास भी किया।

वैसे तो महाकवि जान ने 'प्रेमाख्यान" परम्परा का ही निर्वाह करते हुए "चारित काव्य", 'नीति काव्य', 'उपदेश मूलक काव्य" ज्योतिष काम शास्त्र, ककहरा आदि विविध विषयो पर अपने कवित्व का प्रभाव रखा है। इसके साथ ही उन्होंने कृष्ण एव राधा को भी अपने काव्य का विषय बनाया है, जिसको की शृगार मूलक रूप में प्रस्तुत किया है।

1 मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ – डॉ सावित्री सिन्हा, पृ 193

महाकवि जान के कुल 82 ग्रंथ मिले हैं। इनमे कई ग्रंथो म कृष्ण विषयक रचनाएँ हैं। जैसे "मदन विनोद" (स 1693 वि) मे कृष्ण को नायक बनाकर नायक नायिकाओ से सम्बद्ध काम कलाओ का वणन सहृदयो के मनोरजनार्थ किया गया है। यह अत्यन्त मनोरजक ग्रंथ है इसकी एक खण्डित प्रति अभय जैन ग्रंथालय बीकानेर मे सुरक्षित है। बीकानेर की ही अनूप सस्कृत लायब्रेरी मे भी इसकी खण्डित प्रति है। इसकी पूण हस्तलिखित प्रति राजस्थान के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे है।

"विरह सत" नामक एक सौ एक दोहो की पोथी मे (जिसे जान कवि ने दो दिनो में पूण किया था।) कृष्ण के वियोग मे व्याकुल राधा और गोपियों की विरह व्यथा से सम्बन्ध एक से एक रसमय दोहे मिलते हैं इसमे सयोग और वियोग श्रृगार के दोहे हैं। कविवर "जान' मे इस काव्य के द्वारा सष्टि में विरह ही सत्य है इस तथ्य का निरूपण किया है। सूफियो की लौकिक विरह के माध्यम से अलौकिक विरह की व्यजना "विरह सत" का मूल प्रतिपाद्य है। (स 1671) म सम्भवत इसकी रचना की गई है।

विरह सार" नामक एक छोटे से काव्य में दोहा और सवैया छन्द के माध्यम से महाकवि जान ने विरहनी राधा की विभिन्न विरह दशाओ का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया है। जानकृत सवैया" नामक आठ पृष्ठो का एक छोटा सा काव्य मिला है।[1] इस काव्य मे एक से एक अनूठे छत्तीस छन्द हैं। प्रत्येक सवैया अत्यन्त सरस प्रभविष्णु और मार्मिक बन पड़ा है। इस पोथी के प्रारम्भ और अन्त के पन्ने नही मिले हैं। इसमे राधा गोपिकाएँ और कृष्ण की प्रेम क्रीडाओ का बडा रसमय वणन किया गया है। राधा गोपी कृष्ण के प्रेम और उनकी क्रीडाओ को सामान्य लौकिक धरातल पर चित्रित किया गया है। इस विषय मे कहा गया है कि 'यह चित्रण आगे के सुकवि रीभीहैं तो तोकविताई न तु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो हैं' वाली लौकिक पद्धति पर है।

'बारह मासा' इन्दौर से प्रकाशित 'वीणा' नामक मासिक पत्रिका म डॉ शिव सहाय पाठक ने इस ग्रंथ का प्रकाशन किया है, उन्होंने लिखा है कि इसकी हस्तलिखित प्रति मे ढाई पष्ठ हैं। इसम चौदह सवैये हैं इसमे कृष्ण उद्धव और गोपियों के माध्यम से बारहमासा का वणन किया गया है।

सवइया (सवया) या झूलनाह

इसमे कृष्ण की बशी से सम्बद्ध केवल 2 सवैये हैं। आकार की दृष्टि से यह जान कवि का सबसे छोटा ग्रंथ है।

---

1 हिन्दुस्तानी अकेडमी प्रयाग में सग्रहीत जान कवि की हस्तलिखित प्रतियो म से एक।

कवि जान भी विधाता के इस मर्म से परिचित है कि उसने श्रीकृष्ण के श्यामवर्ण पर मोहित होकर ही श्रृङ्गार को सम्पूर्ण रसों में राजत्व प्रदान किया है। सम्पूर्ण जगत् को तारने वाले घनश्याम की छवि जिस रस में विद्यमान हो वह हमारे कवि की दृष्टि में साक्षात् 'जगतारन' स्वरूप है। इष्टदेव की पावन छवि को सकल सृष्टि में व्याप्त देखने के लिए बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि अपेक्षित है। कवि जान वह दृष्टि रखते हैं। तभी तो 'अग सोभा' की प्रारम्भिक पंक्तियों में केश वर्णन के प्रसंग में कहते हैं

"पेखि रंग स्याम को महात्म विधि रीझि जान
रसराज कीन्हो सब रस में सिंगार है।
कीन्हो जगतारन जगतारन की आकृति,
रस भोग कारन सो कृष्ण अवतार है॥
कियो सो पुनीत करै मन जो धरम रीति,
बिघनहरन कारो कालिंदी को बार है।
तिय तेरे बारन की स्यामता को अंश लस
जगत सिंगार कीन्हो दै दै करतार है।[1]

कवि जान लिखित 81 काव्यों में 'बारहमासा' कृति सबसे छोटी है। इसमें वर्णित सावन में जान के कृष्ण विषयक अभिव्यक्ति इस प्रकार है

सावन मास चले मन भावन महा अचनी बाढ़ी तन मैं।
होकर यौवन मनमथ धामी आप सिधारे हैं मधुबन मैं॥
पिय चातिग केकी जारत हैं लौंन लगावत घन धावन मैं।
'जान' कहै तिमि हरि बिनु बीतत, गोपीयै जानत है मन मैं॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि जान की पहचान कृष्ण काव्य में अमिट है।

अहमद

अहमद कवि का पूरा नाम ताहिर अहमद था। ये आगरा के निवासी थे। इनके ग्रन्थों में अद्भुत विलास, मुक्ति विलास, कोकसार (गुणसागर), रस विनोद, रति विनोद सामुद्रिक और बारहमासा प्रसिद्ध है "कोकसार" नामक ग्रन्थ की रचना स 1678 वि है

सवत् सोरह सौ बरस अठहत्तर अधिकाय।
वदि असाढ तिथ पचमी कहि कीन्ही समुझाय॥
धारि धर्म सब विधि रचे जैसे समुद गभीर।
छत्र धरे अविचल सदा, राज साहि जहगीर॥

---

1 जान, अग सोभा, 1

अहमद सम्राट जहाँगीर के समय विद्यमान थे। कुछ लोग उन्हें सूफी श्रेणी में उपस्थित न मानते हैं परन्तु यह ठीक नहीं है। इनकी रचना में वैष्णव मत की झलक दिखाई पड़ती है। डॉ रामकुमार वर्मा, अहमद को असूफी कवि मानते थे। उन्होंने इसी सन्दर्भ में लिखा है कि— ग्रियर्सन का कथन है कि ये सूफी थे पर इनकी रचनाओं में वैष्णव धर्म की छाप है।[1]

'जा दिन ते प्रीतम विदेस को गमन कीन्हो
तादिन ते ललना आनन्द सों छरी रहै।
अहमद केहूँ मिस हेरि हेरि-चहूँ दिसि,
अगुरिनि छाले परे गनत घरी रहै।।
लोचन सकोचन सो बतिया दुरावति है,
मोचन चहत, प्रान औधक परी रहै।
इन्दुमुखी जभा लागी सुरति अचभा लागी
कचन के खँभा लागी रंभा सी खरी रहै।।

अहमद को शृंगार प्रधान कवि माना जा सकता है। क्योंकि इनके काव्य में 'शृंगार' की प्रधानता है। रस विनोद, अहमदी बारहमासी आदि ऐसी ही कृतियाँ हैं। कोकसार' रीति विषयक ग्रन्थ है। 'सामुद्रिक' में हस्तरेखा विज्ञान का निरूपण है। 'मुक्ति विलास' का दूसरा नाम 'हठप्रदीपिका' है। दिग्विजयभूषण नामक ग्रन्थ से उपर्युक्त दो कवित्त उद्धृत किये हैं। इनकी रचनाओं के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं जिनसे कृष्ण विषयक वर्णन का स्वरूप देखा जा सकता है

अलख नाम इति परम गुरु आदि अन्त विस्तार।
जीव जन्तु जल थल जहाँ सरनागति निस्तार।।
निरगुन सरगुन पुरुष को रच्यो सरुप अपार।
जल थल भूमडल सकल प्रगट जीव विस्तार।।[2]

'अहमदी बारहमासी' से

आज भले ही उदोत भयो दिन नारि के नाह विदेस ते आये।
हौं मग जोइ थकी बहु चावनि भाग बड़े घर बठे ही पाये।।
नैन सिराय हियो भयो शीतल कोटिक भावनि मगल गाये।
अहमद सेज सिंगारन साजि के आनन्द सौंपिय गोविन्द गाये।।[3]

---

1 डॉ रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ 853
2 दिग्विजय भूषण पृ 566-567 (अप्रकाशित प्रकाश) (गोकुलप्रसाद कृत)
3 The Second Triennial Report – By Shyam Behari Misra Published by Nagari Pracharini Sabha Benaras 1914 P 420

दोहा "मन म राखो मन जरै, कहो तौ मुग जरि जाय।
'अहमद' बातन बिरह की, कठिन परी दुहु भाय॥
प्रीतम नहीं बजार मे, वहै बजार उजार।
प्रीतम मिल उजार मे वहै उजार बजार॥
कहा करौं बैकुंठ मे, कल्पवृक्ष की छाँह।
'अहमद' ठाक सुहावने, जहँ प्रीतम गलबाँह॥[1]

जहाँगीर

जहाँगीर का शासन काल 1662 वि से 1684 वि के मध्य है। इनका जन्म स 1626 मे हुआ था। जहाँगीर ने भी अपने पिता की परम्परा का निर्वाह किया और ग्वाल रूप कृष्ण को अपनी कविता का विषय बनाया।

'अद्भुत गोप रूप बरनो न जाय कोटिक
काम द्युति सुध बुध बिसारे।
शाह जहाँगीर जान बूझकर सकुचायत इन
ननन मे नैर विहारे॥"

मुबारक बिलग्रामी

सैयद मुबारक अली बिलग्रामी "शिया" (मुसलमान) थे तथा बिलग्राम (हरदोई) के निवासी थे। इनका जन्म स 1640 वि मे हुआ था। इनका विवाह सैयद दुलारे के पुत्र सैयद मुहम्मद खलील की पुत्री से हुआ था। इनके पुत्र का नाम सैयद मुस्तफा तथा पुत्री का नाम सैयद हेमा था।

मुबारक संस्कृत, अरबी और फारसी के विद्वान थे। ब्रज भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था। इनकी रचनाओ मे कल्पनाओ के निचरण के साथ ही विविधता, पदविन्यास, अप्रस्तुत विधान की भी समृद्धता देखते ही बनती है। इन्होंने नायिका के दस अगो पर अलग अलग एक शतक लिखा है।

इनकी अलक शतक और तिलक शतक नाम की रचनाएँ प्राप्त हुई हैं जिसमे अलक शतक अपूर्ण है। इसमे 85 दोहे ही हैं, जबकि तिलक शतक म निन्यानवे दोहे तथा अत मे एक सोरठा है। स्फुट कविता एवम सवैयो की तो भरमार ही है जो मुबारक अथवा 'मबारख नामो' की छाप रखती है।

इन्होन अपने सवैयो मे रीति परम्परा से हटकर नवीन चित्रो, बिम्बो आदि की रचना अपने काव्यो मे की है। फिर भी इनको रीति के अनुसरण कर्ता कहा जा सकता है। प्रेम व्यजना की अभिव्यक्ति इन्होने मार्मिक ढग से की है मुबारक

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 142 143

जब प्यारे के चित्त हौं कहा सखि हौं सखियाँ दुखियाँ अँखियाँ जब खोलिहो जैसी उक्तियाँ देने लगते हैं तो उनके सामने "परिपाटी" नहीं होती है। प्रत्युत म आपातत एक नवीन आश्चर्य भूत विस्तार करके उसमे पक्षियों के समान उड़ाने भरने लगते हैं। इनकी रचनाओ को शृगार मूलक रचनाओ की श्रेणी मे रखा गया है। वे संस्कृत अरबी, फारसी के विद्वान और हिन्दी के सुकवि थे। इन्होंने बड़े मार्मिक दोहा की रचना की है। अलक शतक और तिलक शतक के दोह नख शिख के होते हुए भी अलकारिक चमत्कार से युक्त है।

कृष्ण और राधा के उद्यान वीथी म आकस्मिक मिलन तथा कृष्ण पर राधा के चापल्यपूर्ण स्नेह प्रकाशन से सम्बद्ध है ग्राम्य जीवन के सौम्य वातावरण मे य निब ध युगल बहुविधि कौतुक से एक दूसर का मनोरजन करते हैं।

> वह साँकरि कुंज की खोरि अचानक माधव राधा भेंट भई।
> मुसकान भली अधरा की असी त्रिवली की बली पर दीठि गई।
> झहराइ झुकाइ रिसाइ मुबारक बाँसुरिया हँसि छीनि लई।
> भृकुटी मटकाइ गोपाल के गालन आगुरि ग्वालि गडाई गई॥[1]

राधा की भाव भगिमा, विलास चेष्टा के यथार्थ अकन स औत्सुक्य सुषमा प्रखर हो उठी है।

मुबारक की रचनाओ में राधा कृष्ण से सम्बन्धित बड़े ही सुन्दर और मर्म स्पर्शी छद बन पड़े हैं। इनकी सम्पूर्ण हिन्दी कविता उनके विशाल हृदय और कुशाग्र बुद्धि की परिचायक है।

मुबारक की ही भाँति हिन्दी मे एक और जुगतराय (जगतानन्द) द्वारा रचित 'तिलक शतक' रचा गया किन्तु मुबारक कृत तिलक शतक की सुन्दर सजावट देखते ही बनती है। मुबारक ने अपन काव्य म अनुप्रास, रूपक, उपमा, श्लेष पर्यायोक्ति आदि का सुन्दर समावेश किया, तथापि ये मूलत उत्प्रेक्षा के कवि हैं। भावो के ऐसे सज्जाकार मध्ययुग मे थोड़े ही हुए हैं। उदाहरण के लिये कवित्त इस प्रकार है

> 'हमको तुम एक अनेक तुम्हें उनही के विवेक बनाय रहौ।
> इत आस तिहारी तिहारी उतै बिभिचारी को नेम कबै निबहौ॥
> मन भावै 'मुबारक' सोई करौ अनुराग लता जिन बोय दहौ।
> घनस्याम सुखी रहौ आनन्द सो तुम नीके रहौ, उनही के रहौ॥[2]

× × ×

1 मुसलमानों की हिन्दी सेवा पृ 159
2 सुन्दरी तिलक पृ 16

कान्ह के बाँकी चितौनि चुभी
झुकि कान्हि ही ग्वालिनि झाँकि गवाछन।
देखि अनोखी सी चोखी सी कोर
अनोखी परी जित ही तित ताछन॥
माईरी जान निहार 'मुबारक',
ए सहजै कजरार मृगाछन।
काजर दै रौन एरी सुहागिन,
आँगुरी तेरी करैगो कटाछन॥[1]

× × ×

'चचल चोखे से चोखने मे, चटकार से, चोगुने रूप अभिराम मे।
सान-सगे से विपान लगे से, समान पगे से रगे स ललाम के॥
मजि 'मुबारक' दै विष-अजन, सीप से बाँधे ऊद घनस्यो के।
वान चितै इन तेरे पियारी, रहे सर काम न एकहु काम के॥'

मुबारक ने अलक शतक और तिलक शतक ग्रन्था मे अलक और तिलक दोनो को ही प्रेम के अक्षर के रूप मे देखा है। अलक और तिल दोना का वर्ण श्याम है। प्रतीत होता है कि मुबारक ने इन दानो अगो को श्री कृष्ण के प्रतीक के रूप म स्वीकार किया है और इन्ही का सूक्ष्म अध्ययन करके वे पूण ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहते हैं। कवि—'सोध कियो विधि चिबुक म ममता के अनुसार'[2] और तत्काल ही वह चिबुक को 'रसधाम' बताकर पाठक का ध्यान घनश्याम के क्रीडा क्षेत्र की ओर आकृष्ट कर देता है— 'तिलजु चुबक परसत है सो सिंगार रसधाम।'[3] इस प्रकार मुबारक के काव्य का अधिकाश प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप मे ब्रज एवम् ब्रज नरेश श्रीकृष्ण की परिक्रमा करता हुआ दृष्टिगत होता है।

भक्तिकालीन युग म भक्ति की चार शाखाओ का तो स्पष्ट उल्लेख है ही। ज्ञानमार्गी शाखा म सन्तो ने जो अलख जगाया वह जन जन मे व्याप्त हो गया। इन सन्तो ने सामान्य जन को नई दिशा और नया उत्साह प्रदान किया, एक आत्म विश्वास जाग्रत किया, जिससे उनकी निराशा दूर हुई। भक्ति क्षेत्र प्रतिबधित और मर्यादित न रहकर विस्तृत और व्यापक हो गया। इसका प्रभाव कमकाण्डियो पर भी पड़ा व भी कुछ उदार हुए और सामान्य जन क प्रति आकृष्ट हुए। इस आन्दोलन ने शासन के भय को दूर किया और साथ ही मूर्ति भजन से जो आस्था डगमगा रही थी, उसम साकार के स्थान पर निराकार की स्थापित कर आस्था को पुन दृढता प्रदान की।

---

1 सुन्दरी तिलक पृ 53-54
2 मुबारक तिलकशतक पृ 26
3 वही 28

राम भक्ति शाखा में आचार्य तुलसी ने जिस आदर्श स्वरूप की स्थापना की वह स्वरूप श्रद्धास्पद, वन्दनीय तो हुआ परन्तु सहज न होने से आकर्षण का केन्द्र न बन सका।

कृष्ण भक्ति की सुदीर्घ परम्परा भक्तिकाल तक आते आते अनेक आकर्षक रूपों मे पल्लवित पुष्पित हुई। भागवत अवतारी कृष्ण की बहुआयामी क्रीडायें, लीलाऐं जन रंजन के साथ-साथ रचनाकारो के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गई। कृष्ण के व्यक्तित्व मे असख्य कथानक समायें हुए थे। इन कथानकों मे जिसे जो प्रसग प्रिय लगा वह उसी ओर उन्मुख हुआ। प्रेम-तत्व का विशेषज्ञ सूफी समाज ज्ञान के खुरदुरे धरातल की अपेक्षा प्रेम की सुकोमल धरती पर प्रेमी युगलों की लीलाओ का सृजन करता रहा। प्रेम तत्व के सर्वाधिक सशक्त कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने पदमावत की रचना की। यह महाकाव्य हिन्दी का गौरव है।

जायसी के जीवन से सम्बन्धित अनेक चमत्कार पूर्ण घटनाओ का वर्णन पढ़ने को मिलता है यथा वे परकाया प्रवेश की विधि जानते थे और अपना रूप व्याघ्र का बना लेते थे—यह कथन कितना विश्वसनीय है इसकी चर्चा यहाँ आवश्यक नहीं है परन्तु प्रेम मार्ग के सशक्त सूफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने पदमावत की कथा का ताना बाना बुनकर जो झिलमिल वस्त्र तयार किया था उसके पूर्व वे कृष्ण के बहुरगी व्यक्तित्व से न केवल प्रभावित हुए अपितु उसके प्रति उनमे असीम आकर्षण उत्पन्न हुआ। वे कृष्णमय हो गए और उन्होंने कन्हावत महाकाव्य की रचना की। महान अन्वेषक डाक्टर शिवसहाय पाठक ने अगाध्य परिश्रम करके कन्हावत की खोज की और उसका सम्पादन करके हिन्दी जगत को नया ज्वाजल्यमान रत्न 'कन्हावत' प्रदान किया। कन्हावत के प्रकाशन से कृष्ण काव्य धारा मे एक नया अध्याय जुड गया। कन्हावत पदमावत पूर्व की रचना है। इसमें सम्पूर्ण कृष्ण चरित्र का वर्णन हुआ है। कृष्ण का आद्योपान्त चरित्र इस महाकाव्य मे वर्णित हुआ है। जायसी के भाव धरातल के अनुकूल कृष्ण चरित्र था अत जायसी ने बड़े मनोयोग से इसकी रचना की है। जायसी की लेखनी हेतु यह सुन्दर क्रीडा स्थल था, जिसम उनका मन खूब रमा है। कृष्ण-गोपी और राधा कृष्ण के वर्णन बडे मनोरम हैं। मथुरा मे कुब्जा को कृष्ण ने ऐसा रूप प्रदान किया कि सब उसके रूप को देखकर ठगे से रह गए। एक सुनार जो गहने बना रहा था उसने अपने हाथ पर ही हथौड़ी मार ली। इस प्रकार के रूप सौन्दर्य वर्णन के साथ ही महाकाव्य में कृष्ण के यौगिक रूप का भी वर्णन हुआ है। योगीराज गोरखनाथ कृष्ण का युद्ध होता है उसमें अनेक प्रकार की सिद्धियों का प्रदर्शन बताया गया है। इस युद्ध में कृष्ण विजयी होते हैं।

कन्हावत हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है सूर पूर्व की इस रचना ने कृष्ण भक्ति साहित्य को जहां समृद्ध किया है वहीं कृष्ण भक्ति धारा के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता भी उत्पन्न कर दी है। भक्तिकाल में रामचरित पर तुलसी का "रामचरित मानस" आकर ग्रन्थ है। भक्तिकाल के दो ही महाकाव्य थे पदमावत और रामचरित मानस। कन्हावत पदमावत पूर्व की रचना है और महाकाव्य भी। जायसी ने स्वयं कन्हावत ग्रन्थ की रचना में कहा है कि मैंने भागवत एवम् अन्य पुराणों का अध्ययन किया है। जायसी कृष्ण काव्य की पूर्ववर्ती परम्परा से पूर्णतया परिचित थे। कृष्ण का चरित्र उनके सूफीयाना स्वभाव पर छा गया, उनके अन्तरतम तक उतर गया तब उन्होंने कन्हावत की रचना की। जायसी पर कृष्ण चरित्र, उनके प्रसंगों और सम्बन्धित कथाओं का व्यापक प्रभाव था। जायसी के पदमावत में भी अनेक प्रसंगों पर कृष्ण जीवन के सन्दर्भों का प्रयोग किया गया है यह इस अध्ययन से और स्पष्ट हुआ है। एक मुसलमान कवि द्वारा हिन्दी में कृष्ण चरित्र पर सर्वप्रथम महाकाव्य लिखा जाना आश्चर्य की सीमा तक आनन्द का विषय है।

सैयद इब्राहीम "रसखान की रचनाएँ 'रसखान शतक", "सुजान रसखान" 'हित चिंतक" और "प्रेम वाटिका" नाम से प्रकाशित हुई हैं। रसखान दिल्ली पठान सरदार के लड़के थे। भगवान कृष्ण से आपने रूहानी मोहब्बत की। स्वामी विट्ठलनाथजी ने इनको पुष्टिमार्ग में दीक्षित किया। भागवत में गोपियों के अनन्य और अलौकिक प्रेम को पढ़कर इन्हें ध्यान हुआ कि उसी से क्यों न मन लगाया जाय, जिसे इतनी गोपियां अपने प्राण अर्पण करती हैं। यह विचार आने पर ये देहली छोड़कर वृन्दावन चले गये। यहां आकर रसखान कृष्णमय हो गए। आपने बालकृष्ण, कालिय दमन, कृष्णलीला, मुरली माधुरी होली गोचारण, चीर हरण, कुंज लीला, रास लीला, पनघट लीला बन लीला गोरस लीला, राधा रूप छटा, वय-संधि सुकुमारता, पूर्वराग अभिलाष, दधि लीला उलाहना, सपत्नीभाव, मिलन वियोग, मानिनी, प्रिया विदग्धा, सुरत सुरतांत शुद्ध शृंगार, युगल जोड़ी, भ्रमरगीत आदि प्रसंगों का मनोयोग से वर्णन किया है। रसखान के काव्य में जो समर्पण भाव पाया जाता है वह अन्यत्र दुर्लभ है। उन्होंने कृष्ण के सम्पर्क में आने वाली सजीव निर्जीव कोई भी वस्तु बन जाने की कामना की है। जन्म जन्मान्तरों तक वे कृष्ण के आतिथ्य में रहने की कामना करते हैं और गोपियों के समान रसखान के भी नेत्रों में "नवरंग अनंग भरी छवि सौं, वह मूरति आँखि गड़ी ही रहै।" और इसीलिए वे स्पष्ट कहते हैं — "मन भाई रही रसखानि महाछवि मोहन की तरसाई रही।"

स्वामी हरिदासजी के शिष्य तानसेन संगीत सम्राट थे। सूर और अष्ट छाप के अन्य कवियों से तानसेन की मित्रता रही है। आपने अनेक देवी देवताओं की स्तुति में पद गये हैं। कृष्ण की बाललीला राधा कृष्ण का सौन्दर्य मुरली, मान,

उपालम्भ विरह आदि का विस्तत वणन इनकी रचनाओ मे उपलब्ध है। तानसेन भक्तिकाल मे होत हुए भी रीतिकालीन कविता का पूर्वाभास देते हैं।

कृष्ण भक्ति का जादू इतना व्यापक और अनूठा था कि इससे बादशाह भी अछूते नही रहे। अकबर, शाहजहाँ और जहाँगीर कृष्ण के इस रूप जाल म बँध गए हैं। अब्दुल रहीम खानखाना युद्ध और काव्य दोनो ही क्षेत्रों मे वीर रहे हैं। अकबर के दरबार म रहीम को उच्च पद प्राप्त था। रहीम की रचनाएँ 'दोहावली' 'नगर शोभा' "बरवै नायिका भेद", 'शृ गार सोरठा' आदि शीर्षकों से प्रकाशित हुई हैं। रहीम क मानस पर भी "कमलदल नैन कृष्ण" की गहरी छाप अंकित थी। रहीम अरबी फारसी के विद्वान थे और आपका ब्रजभाषा ज्ञान भी व्यापक था। जमाल भी इस युग के वे कृष्ण भक्त कवि हैं जिन्होंने प्रेम को ही प्रमुख स्थान दिया है। अकबर शाह, कादिर बक्श तान तरग खाँ भी रसिक कृष्ण के रूप जाल से बधे से दिखते हैं रूपमती बेगम गायन वादन में प्रवीण थी। इनकी अनेक रचनाएँ विभि न रागो मे आबद्ध प्राप्त होती हैं। गीत तत्त्व की प्रधानता होने के कारण भाषा म लोच है

'श्याम बिन उमगे री बहु बदरा।"

ताज इस युग की वे उल्लेखनीय कवयित्री है जिन्होंने यह स्पष्ट घोषणा की कि

"नन्द के कुमार कुरबान ताणी सूरत पै -
हों तो तुरकानी हिंदुवानी ह्वै रहूंगी मैं।"

रसखान की भांति ही ताज भी कृष्ण के रूप सौ दय पर मुग्ध हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ताज पर वष्णव धम का गहरा प्रभाव पड़ा है। कृष्ण के प्रति प्रगाढ़ प्रेम के वणन के साथ हिन्दू धम की अन्त कथाओ का उल्लेख आश्चय की वस्तु है। रामायण महाभारत की अनेक कथाओ से आपका पूर्ण परिचय था। ताज न अपने कवित्त मे पूववर्ती भक्त कवियो का भी उल्लेख किया है। ताज के काव्य मे उपास्य के प्रति विश्वास अनय समपण है। राधा और गोपियो के साथ कृष्ण क्रीडा के प्रति आनन्द और उल्लास तो है, परन्तु उच्छृखल रसिकता नही है। उनके काव्य मे प्रेम पथ की गहनता और गभीरता है ताज नि चयात्मक रूप से कहती हैं मो को तो भरोसो एक नन्दजी के लाल को" वास्तव मे हिन्दी कृष्ण काव्य को 'ताज' पर नाज है।

साहिर अहमद आगरा क निवासी थे। इनके 7 ग्रन्थ हैं डॉ ग्रियसन ने अहमद साहब को सूफी कवि माना है परन्तु इनके काव्य मे कृष्ण का रूप सौन्दय और विरहानुभूति की व्यापकता है। वष्णव धम का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। अहमद के कृष्ण मथुरा चले गए हैं अत अहमद केहू मिस हेरि हेरि

कहूँ दिसी, अँगुरिनी छाले परे गनत धरी रह।" अहमद ने भी रीति काल की पृष्ठ पीठिका-सी तैयार कर दी है। आपके काव्य में शृंगार की प्रधानता है। मुबारक बिलग्रामी को इस कड़ी का अन्तिम कवि कहा जा सकता है, जिन्होंने भक्तिकाल में कृष्ण को अलक शतक तिलक शतक में नवीन बिम्बों और चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया। प्राञ्जलता और घोर प्रवाह आपकी भाषा की विशेषता है। इनके मर्यादित शृंगार में एक विशिष्ट आकर्षण और मधुरता है जो पाठक के मन में मिठास घोलती सी लगती है, जब वे कहते हैं

"हमको तुम एक अनेक तुम्हें, उनही के विवेक बनाय रहौ"



हिन्दी के मुसलमान कवियो का कृष्ण काव्य

(सवत् 1700 से 1980 तक)

सवद् 1700 से 1900 तक के समय को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने शृंगार काल कहा है। इस मध्य शृंगार रस प्रधान साहित्य रचा गया। ज्ञान, प्रेम, राम, कृष्ण, भक्ति की सरिताएँ क्रमश क्षीण होती गई। कृष्ण और राधा जो भक्तिकाल मे आराध्य थे, जिनको सगुण और [illegible] लोको को न्योछावर करने हेतु तत्पर थे। सूर के सखा, मीरा के [illegible] कृष्ण, जायसी के लीला पुरुष कृष्ण रीतिकाल में [illegible] नायक नायिका के रूप में प्रस्तुत हुए।

भक्तिकाल की स्वतन्त्र स्वच्छन्द कवि [illegible] राज्याश्रय की ओर आकर्षित हुई। अधिकांश कवि [illegible] के आश्रित हुए। राजाओ, नवाबो की मनोवृत्ति के अनुकूल ही कविता [illegible] शृंगार से सराबोर थी। पुरस्कार और अशर्फी की [illegible] होती गई। कल्पना प्रधान सुरुचिपूर्ण चित्र [illegible]। इस [illegible] में भक्ति एकान्तवासिनी हो गई। अधिकांश [illegible] से प्रभावित हुआ। [illegible] कटि से कचन लेकर कुचों पर [illegible] राधाकृष्ण का स्मरण भी किया।

यहाँ छीपा रगरेजों की बस्ती है। श्री शेख ने लिखा किया है कि आलम मूलत इसी गाँव के निवासी थे। जो भी हो इतना सही है कि आलम औरंगजेब के दूसरे बेटे मुअज्जम के आश्रय में रहते थे। यही मुअज्जम बाद में बहादुरशाह नाम से दिल्ली का बादशाह हुआ। इस प्रकार आलम का कविता काल 1740 से 1760 विक्रम तक माना जा सकता है। इनके पद्य स्फुट रूप से अनेक पद्य ग्रंथों में संग्रहित मिलते हैं और बहुत से उत्कृष्ठ पद्य लोगों को कण्ठस्थ भी हैं। 'आलमकेलि' नामक इनकी कविताओं का संग्रह प्रख्यात है।

आलम के साथ ही शेख रंगरेजीन भी अच्छी कवियित्री थी। इन दोनों के प्रेम की कथा भी बड़ी सुन्दर है। कहा जाता है कि आलम ने एक बार अपनी पगडी शेख रंगरेजीन को रंगने के लिये दी, भूल से पगडी की खूट में एक चिट बंधी रह गई। जब रंगरेजीन ने उसे खोला तो चिट पर एक अधूरा दोहा इस प्रकार लिखा मिला

'कनक छरी सी कामिनी, काहे को कटि छीन।"

शेख ने चिट को अलग रखकर पगडी का बड़े मन से रंग डाला चिट के अधूरे दोहे का निम्नलिखित रूप में पूरा किया

' कटि को कंचन काटि बिधि कुचन मध्य धरि दीन।"

और उस चिट को उसी पगडी के खूट में बांधकर आलम के पास भेज दिया। उस खूट की चिट को पढ़ने के बाद शेख आलम पूरे प्रेमी और पुजारी हो गये और बाद में उनसे विवाह कर लिया।

आलम द्वारा रचित कवित्त व सवयों में भी बहुत सी रचनाएँ शेख की मानी जाती हैं। निम्नलिखित कविता में चौथा चरण शेख रंगरेजीन का व शेष आलम का बनाया हुआ कहा जाता है

' प्रेमरंग पगे जगमगे जगे जामिनि के,
जोबन की जोति जगी जोर उमगत है।
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत है,
झूमत हैं झुकि-झुकि झंपि उघरत है॥
आलम सो नवल निकाई इन नैनन की,
पाखुरी पदुम पै भवर थिरकत है।
चाहत है उडिबे को देखत मयक मुख,
जानत है रैनि तातें ताहि में रहत है॥[1]

आलम प्रेमोन्मत्त कवि थे रीति बद्धता में उनका कुछ लेना देना नहीं था। मन की तरंग के अनुरूप ही वे रचना करते थे। इनके एक एक वाक्य में "इश्क"

1 पं रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 314–315 से उद्धृत

या प्रेम की पीर भरी मिलती है। हृदय तत्त्व ही इनकी कविताओं में प्रधान रूप से मिलता है। शब्द वैचित्र्य, अनुप्रास की प्रवृत्ति इनमें अधिक नहीं मिलती किन्तु इनकी उत्प्रेक्षाएँ बड़ी अनूठी व बहुत अधिक हैं। श्रीकृष्ण के प्रेम में ये दिवाने थे।

शृंगार रस की ऐसी उन्माद भरी उक्तियाँ इनकी रचना में मिलती हैं कि पढ़ने और सुनने वाले लीन हो जाते हैं। यह तन्मयता सच्ची उमंग में ही सम्भव है। रेखता या उर्दू भाषा में भी इन्होंने कवित्त कहे हैं। भाषा भी इनकी परिमार्जित और सुव्यवस्थित है, पर उसमें कहीं-कहीं कीन, दीन, जीन आदि अवधी या पूरबी हिन्दी के प्रयोग भी मिलते हैं। प्रेम की तन्मयता की दृष्टि से आलम की गणना "रसखान' और घनानन्द की कोटि में होना चाहिए। इनकी कविता के कुछ नमूने नीचे दिये जाते हैं

"जा थल कीन बिहार अनेकन ता थल कांकरी बैठि चुन्यो करे,
जा रसना सों करी बहु बातन वा रसना सों चरित्र गुन्यो करे,
आलम जौन से कुंजन में करी केलि, तहां अब सीस धुन्यो करे,
नैनन में जो सदा रहते, तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करे।।[1]

इनके द्वारा रचित दो रचनाओं में कृष्ण का वर्णन है। "श्याम सनेही" और "सुदामा चरित्र"। कुलपति मिश्र ने आलम के लिये एक दोहा कहा है

"नव रस मय मूरति सदा, जिन बरने नन्दलाल।
आलम आलम बस कियो, दे निज कविता जाल।। [2]

दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं

"नन्द सों कहत नन्दरानी हो महर,
सुतचन्द की सी कलन बढ़तु मेरे जान है।"

शेख रंगरेजन

शेख का उल्लेख प्रायः समस्त खोज ग्रन्थों तथा इतिहासों में मिलता है। आलम से परिचय होने के पूर्व उनके जीवन के विषय में कहा जा सकता है कि उनका जन्म एक मुसलमान घराने में हुआ था। ये जाति की रंगरेज थी, तथा कपड़े रंग कर ही अपना जीविकोपार्जन करती थी। नैतिक उच्छृंखलता के इस युग में शेख तथा आलम की पुनीत प्रेम ग्रन्थि प्रेम की अनेकमुखी रसिकता पर एकनिष्ठ प्रेम के विजय की घोषणा करती है। आलम और शेख एक दूसरे के लिए

---

1 पं. रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 314-315 से उद्धृत
2 डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ हिन्दी साहित्य में कृष्ण पृष्ठ-317

ही बने थे। प्रेम, सम्पूर्ण संसार के विरोध, सामाजिक बन्धनों, मान्यताओं को तोड़कर एक दूसरे से मिल गये। भावनाओं को जो पारस्परिक भावगत सामंजस्य प्राप्त हुआ, उन्होंने उनकी प्रेमगाथा को अमर कर दिया।

श्री शिवसिंहजी ने दोनों का उल्लेख "शिवसिंह सरोज" में किया है। आलम सनाढ्य ब्राह्मण थे। इनका रचनाकाल सम्वत् 1740 से 1770 तक माना जाता है। आलमकेलि की हस्तलिखित प्रति की तिथि 1753 है। आलम का समय अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध का आरम्भ रहा होगा आलम औरंगजेब के पुत्र मुअज्जम के दरबार में रहते थे। आलम के निश्चित समय के आधार पर ही शेख के समय का भी अनुमान किया जा सकता है। परन्तु इनकी जन्मतिथि तथा मृत्यु तिथि का ठीक ठीक निश्चय अभी नहीं हो सका है। शेख तथा आलम की प्रणय की कथा प्रसिद्ध है। शेख के विषय में प्रचलित साहित्य से पता लगता है कि उनका जीवन विवाह के पश्चात् भी काफी स्वतन्त्र था। उनके पुत्र का नाम जहान था। शाहजादे मुअज्जम के साथ जिस प्रकार के विनोद का उल्लेख मिलता है, उससे ऐसा आभास होता है कि वे राज दरबार इत्यादि स्थानों पर स्वच्छन्दता पूर्वक आती जाती थीं। एक दिन मुअज्जम ने शेख से पूछा 'क्या आलम की पत्नी आप ही हैं?' शेख ने प्रस्तुत उत्तर दिया 'हाँ जहाँपनाह। जहान की माँ मैं ही हूँ।'[1] इस हास परिहास से शेख के मुखर व्यक्तित्व का परिचय तो मिलता ही है साथ ही उनके जीवन की स्वाधीनता की रेखा भी स्पष्ट दिखाई देती है।

कतिपय तार्किक शेख और आलम को एक ही कवि (शेख आलम) सिद्ध करते हैं किन्तु ऐसा सम्भव ही नहीं है। आलम ने शेख की काव्य प्रतिभा को देख कर सारे बन्धनों का अतिक्रमण कर शेख से विवाह किया था। अतः किसी प्रकार का सन्देह करना अनुचित ही है।

'आलम केलि' के नाम से प्रकाशित संग्रह आलम शेख की कविताओं का संग्रह है। सम्पूर्ण ग्रन्थ की भाषा 'ब्रज भाषा' है। "आलम केलि" संग्रह शृंगार परक उत्कृष्ट ग्रन्थ रचना है। रीति कालिन शृंगारिक काव्य परम्परा के अनुसार नायिका भेदों तथा प्रेमलीलाओं का वर्णन है। पदावली के प्रारम्भ में कुछ बाल लीला के पद हैं, जिसमें एक पद शेख द्वारा लिखा गया है। पद में कृष्ण के बाल जीवन का सुन्दर सजीव चित्रण है। बालक कृष्ण की चंचलता, माँ यशोदा के वात्सल्य को शब्दों के माध्यम से स्वाभाविक रूप में उरेहा गया है

"बीस बिधि आऊँ दिन बारीय न पाऊँ और
याही काज वाही घर बांसनि की बारी है।"
नकु फिर अहहें कहहें बें री दे जसोदा मोहि,

---

[1] डॉ. सावित्री सिन्हा मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ पृष्ठ-254

मों पैं हठि मांगे बंसी और कहू डारी है ।।
सेख कहै तुम सिखवो न कछु राम याहि,
मारी गरिहाइनु की सीसे लेत गारी है ।
संग लाइ मइया नेकु न्यारो न कन्हैया कीजै
धलन बलैया लैके मैया बलिहारी है ।।"[1]

"वय सन्धि"

इस प्रसग के केवल दो कवित्त ही उपलब्ध हैं । एक कवित्त में न तो शेख का नाम है, न आलम का । दूसरा कवित्त आलम द्वारा रचित है। नवोढ़ा प्रसग के अनेक कवित्तो मे शेख द्वारा रचित एक कवित्त भी है । 'शेख" की शृगार भावना में नारी हृदय की शृगारिक अनुभूतियो की अभिव्यजना नही है, उसने अपने युग के कवियों की भांति नारी पर उपभोग प्रधान ही दृष्टि डाली है ।

नायिका को दूती की यह मुखर वाणी सलज्ज नारीत्व से बहुत दूर दृष्टिगत होती है, उनके काव्य मे परम्परागत काव्य रचना का अनुकरण मात्र है, पर उस अनुकरण मे अपनी यथार्थता का अस्तित्व वास्तव मे अनूठा है । अनूठा बालिका का भय, उसकी शका सब कुछ शेख की कल्पना का सजीव रूप है

"कीनी चाही चाहिली नवोढा एकै बार तुम,
एक बार जाय तिहि छल उर दीजिये ।
सेख कही आवन सुहेली सेज आवे लाल,
सीखत सिखेगी मेरी सीख सुन लीजिये ।।
आवन को नाम सुन सावन कियो है नेना,
आवन कहै सु कैसे आइ जाइ कीजिये ।
बरबस बस करिबे को मेरो बस नही,
ऐसी बैस कहो कान्ह कैसे बस कीजिए ?"[2]

प्रथम समागम के भय से आकुल बालिका के विषय में नायक को आश्वासन देती हुई दूती के ये स्वर नारी द्वारा रचित हैं यह भावना विचित्र लगती है ।

मानिनी प्रसग के अनेक कवित्त शेख द्वारा रचित हैं । मानिनी का मान तोड़ने के लिये उन्होंने नायक के विरह की ज्वाला, मूर्च्छा, आँसुओं की बाढ़ का वर्णन किया है—कही उनके श्याम के आँसुओं से सर-सरिताएँ भर जाती हैं

"शेख कहै प्यारी तू जो जबही तैं बन गई,
तब तब ही तैं कान्ह असुवन सर करे हैं ।

1 डॉ सावित्री सिन्हा– 'मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ' पृ - 254
2 डॉ सावित्री सिन्हा 'मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ' पृ - 254

मात जानियत है जू वेऊ नगो नार नीर,
काहू पर विफल वियोग राग भरे हैं ।।"

और कहीं उनकी विरह ज्वाला से विरह भी जलता प्र

"ओमो कैसे फेरनि वियोगी आवै बारबार,
जोगो लें है तो लगि वियागी बिललात है ।
जा दिन ते निरखि किसोरी हरि लियो हरि,
ता दिन तें घटोई घटोई पियरातु है ।।
सेख प्यारे अति ही विहाल होई हाय हाय,
पल पल अग की मरार मुस्कातु है ।
आनि घाम होति तिहि तन प्यारी चलि याहि,
विरही जरनि त विरह जरयो जातु है ।।"[1]

विरही की मृत्यु के साथ मान और समाप्ति की उद्भा
यह उनकी प्रौढ़ अभिव्यजना शक्ति का परिचायक है ।

सेख द्वारा रचित नायक की दूती सम्बंधित कवित्त क
कवित्त म भावा का प्रवाह अलकारों का अलकरण सेख का प्र
है । जिसमे नायक के प्रस्ताव पर दूती की आशा एव नी
अनूठी शब्द योजना म किया है ।

'रस मे विरस जानि कैसे बसि कीजै आनि,
हा-हा करि मोसो अब बोलिहो तो लरोगी ।
जोरिन के आधे जाऊँ आधो रैन दोरि जाऊँ
राधा जू पे सग दे न आधो डग धरोगी ।।
सख होत प्यारे ऐसी पीर लाये प्यारे तुम
अबही हौं विरह रसाने पीर हरोंगी ।
आज हूँ न ऐहे काम कालि चलि ब्र है सोह,
परौं लगि हो की वाके पांय आय परोगी ।।'

सेख के अधिकतर पद दूती काव्य हैं उन्होंने नायक तथ
का चित्रण किया है । कुछ थोडे से पद उन्होंने सौत के प्रति
रूप म लिये हैं । जिसमे नायिका अपनी आप वोती अपनी
अपने उल्लास मे सहभागिनी बनाकर अपने हृदय का भार हल
अभिव्यक्तियों मे शृगार की मुक्त अभिव्यजना है । प्रेम के
विवशता इस प्रकार की भाक उक्तियों में स्पष्ट लक्षित होती

"बोली ताहि सो सोहे जोरे कौन मोहे ऐसे
पाय परो वाके जाके पायन पर वार हो।
प्यारी कहा ताहो सो जु रावरे मो प्यारे कहे,
आजकल रावर परोसिन के प्यारे हो॥"

शृंगार की इन रचनाओ के नायक-नायिक पूर्णरूपण लौकिक हैं, परन्तु शेख ने कृष्ण (हरि), राधा गोपी इत्यादि शब्दो का प्रयोग एवं राधा और कृष्ण की लीलाओ की आड मे साधारण प्रेम की अभिव्यक्ति कर अपने युग की परम्परा का निर्वाह किया है। इन चित्रणो म शारीरिक पक्ष को ही प्रधानता मिली है। शेख ने स्त्रियो की प्राकृतिक सुलभ लज्जा के चित्रण को छोडकर समाज की उन्मुक्तता शृंगार प्रियता म पुरुष के समान ही योग दिया।

कृष्ण की जीवन घटनाओ व प्रसगो पर स्थल व अश्लील भावनाओ का समावेश न कर स्वस्थ व मानसिक अनुभूतियो का सजीव चित्रण किया। भ्रमर-गीत तथा गोपी विरह इत्यादि प्रसगो म व्यक्त शृंगार मे प्रेम प्रसूत अनेक चित्रों को अपने काव्य म उरेहा है, तथा अपनी सूक्ष्म और कोमल अनुभूतियो को प्रस्तुत किया है। इन पदो का लौकिक पक्ष साध्य नही, कामनाओ की अभिव्यक्ति का साधन मात्र है।

शेख ने गोपियो की आशा मे उद्धव के आगमन स व्याघात, उनकी प्रेम-प्लावित भावनाएँ तथा उनके ग्राम जीवन के साथ असामञ्जस्य पर सुन्दर व्यग्य किया है। कृष्ण के जीवन को सवस्व मान लेने वाली गोपियाएँ शेख की साधारण नारियाँ (गोपियाँ) हैं। उद्धव के योग का निर्वाह अपने जीवन के साथ करने मे असमर्थ हैं वह अपनी सहज स्वाभाविकता उत्सुकता को प्रश्न बना कर उद्धव से कहती हैं

'चाहती सिंगार जि ह सिंगी सा सगाई कहा,
औधि की है आस तो आधारी कैसे गहिये ?
विरह अगाध तहं सुन की समाधि कान,
जोग कहिं भावे जो वियोग दाह दहिये।
सेख कहे मैन मुद्रा मोहन पू लाये बन
गुना लाओ कानन सु वेई मूल सहिय॥'

उद्धव के सन्देश के अतिरिक्त जिन पदो मे गोपियों का विरह व्यक्त है उनमे भी भावनाओं की प्रधानता है। भावनाओ का महत्त्व प्रकृति के उपकरणो द्वारा उद्दीप्त होकर व्यक्त है— "काहू के विरस वियोग" मे ये चार पंक्तियाँ इस प्रकार हैं

"सख कहे प्यारी तू जो जबही त बन गई,
तबही ते काहू असुवनि सर करे है।

याते जानियत है जू वेऊ नदी नारे नीर,
कान्ह यर बिरह वियोग रोय भरे हैं ।"[1]

गोपाल जब मधुवन से चले गये हैं, तो गोकुल का मधुवन दानव सा प्रतीत होता हैं। अनेक मधुर स्मृतियो का केन्द्र– कदम्ब वृक्ष, कालिन्दी का तट उनके जाने से सुनसान हो गया है। पक्षियो का कलरव गोपियो की विरह की ज्वाला की टीस को द्विगुणित कर देता है

"जबतें गोपाल मधुवन को सिधारे भाई,
मधुवन भयो मधु दानव विषम सौं।
सेख कहे सारिका शिखंडी खंडरीक सुक,
मिलि के कलेस कीन्हो कालिन्दी कदम सौं।
देह करे करण करेजो लीन्हो चाहत है,
काग भई कोयल कगायो करे हम सौं ।"

कृष्ण उनके काव्य के नायक हैं। उनका निरूपण दो रूपों मे हुआ है– (1) साधारण पुरुष प्रतीक (2) कृष्णावतार (ब्रजनायक)। साधारण मानव कृष्ण की प्रेम लीलाओ में स्थूल क्रियाओ की प्रधानता है, परन्तु अवतारी कृष्ण के प्रति भावनात्मक स्निग्धता, सुरम्यता लक्षित है जो दोनो रूपो मे भिन्नता प्रदान करती है।

पार्थिव व अपार्थिव विषयो को छोडकर भी अन्य विषयो पर उनकी रचनाएँ मिलती हैं। "आलम केलि" मे किसी विषय का क्रमिक निर्वाह नहीं हुआ है ये मुक्तक पदो का सग्रह है। उन्होंने अपने पति के पूर्व धर्म (हिन्दुत्व) का अनुसरण किया है, इसलिए गगा वर्णन, निर्वेद तथा शान्त रस सम्बन्धित पद, देवी की कवित्त, रासलीला आदि अनेक ऐसे प्रसगो पर उन्होने कुशल एवम् सफल रचनाएँ की हैं।

भक्ति विषयक रचनाओं के अतिरिक्त कुछ रचनाओ में फारसी की ऊहात्मक शैली का भी स्पष्ट प्रभाव है। एक ओर भारतीय पद्धति पर लिखा हुआ काव्य और दूसरी ओर लैला मजनू की कहानी का हल्का पुट भी कुछ पदों में परिलक्षित होता है।

शेख मध्ययुगीन नारी के उन अपवादों में से है जो जीवन की समस्त विषमताओं को रौंदकर सभी अडचनों को नष्ट कर, स्वतन्त्र आत्म अभिव्यक्ति में समर्थ हो सकी थी। शेख का अति साधारण व्यक्तित्व रीति युगीन रसिकता से रचा-बसा होकर और आलम जैसा आलम्बन पाकर लौकिक शृंगार की स्थूलता

---

1 'आलम-केलि', छन्द सख्या–45

से प्रस्फुटित होकर, और पति के प्रभाव से अपनी प्रतिभा के विकास और निखार का अवसर प्राप्त कर सका।

शेख ने अपनी अनुभूतियो को व्यक्त करने में मूर्त उपकरणों का प्रयोग किया है। अनुभूतियो और अभिव्यजना के सटीक एव सजीव चित्रण के अलावा कलात्मक चित्रण भी सुदर बन पडा है। अलकारों के समावेश के साथ ही सस्कृत, फारसी तथा देशज शब्दो के प्रयोग से काव्य में निखार आ गया है। उनकी भाषा मे सस्कृत शब्द प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। अधिकतर सस्कृत शब्दो को उन्होंने तद्भव रूप देकर ग्रहण किया है। मुसलमानी सस्कार के कारण काव्य में अरबी तथा फारसी के प्रयोग भी प्रचुरता मे मिलते हैं।

शेख ने अपनी भाषा को अलकृत एव सुसज्जित बनाने का सफल प्रयास किया है। पदों की सज्जा में योग देने के लिये शब्दालकार यमक के अतिरिक्त अनुभूति की व्यजना हेतु अनेक अलकारों का प्रयोग किया है।

उनकी भक्ति विषयक रचनाओ मे माधुर्य तथा विनय दोनो ही भावनाएँ व्यक्त हैं। राम के जीवन एव कृष्ण के प्रसगो की व्यथा को भी आपने काव्य मे बाँधने की चेष्टा की है।

शेख ने प्रकृति चित्रण में प्राकृतिक उपकरणो तथा कवि प्रसिद्धियों के द्वारा शृगारिक भावनाओं को ही अभिव्यक्त किया है। उन्होंने प्रकृति को वियोग भावनाओ के उद्दीपक रूप मे ही लिया है। उद्दीपन के रूप मे प्रकृति के अनेक परम्परा गत उपमानो का वर्णन है– टेसू का कुम्हलाना, कोयल की कूक से उत्पन्न हूक, इत्यादि।

"मध्यकालीन नारी जीवन की परिसीमाओ के बधनों के प्रभाव से दूर रहने के कारण ही शेख की प्रतिभा अपने विकास का पूर्ण अवसर प्राप्त कर सकी, भारतीय एकनिष्ठ नारी भावनाओं मे शेख की रचनायें प्रथम अपवाद हैं। उनकी शृगारिक भावना में नारी की भावनाओ का व्यक्तिकरण नहीं है। शृगार युग के पुरुष का नारी के प्रति उच्छृखल तथा लालुप दृष्टिकोण ही उसमे व्यक्त है, अत शेख की कविता उस युग के नारी हृदय का प्रतीक रूप में नहीं ली जा सकती है। हाँ युग की भावना में अपनी भावना का सामजस्य कर उन्होने अपनी प्रतिभा का महत्वपूर्ण और आश्चर्यजनक परिचय दिया है। जीवन के रसात्मक दृष्टिकोण को व्यक्त करने वाली लेखिकाओं मे ये सर्वश्रेष्ठ हैं तथा नारी द्वारा सर्जित साहित्य में उनका स्थान अमर है।"[1]

---

1 डॉ सावित्री सिन्हा मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ पृ–274

मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी (मृत्यु 1721 ई.)

मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान हुए हैं। यह शुद्ध कृष्ण भक्त कवि थे।[1] इनकी उपलब्ध रचना शृंगार के अन्तर्गत आती है। आपका अरबी, फारसी तथा हिन्दी भाषाओं पर समान अधिकार था। ये इन सभी भाषाओं में कविता करते थे।

मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी एक प्रौढ़ कवि जान पड़ते हैं। उनकी भाषा सरल तथा भावयुक्त है। शब्द संगठन, प्रवाह, ध्वन्यात्मकता तथा भावग्राह्यता की दृष्टि से भी वे सम्पन्न हैं।

रहमत

पूरा नाम सैयद रहमत उल्लाह—जन्म सन् 1060 हि. (1650 ई.)

रहमत की रचनाओं में भी संयोग शृंगार के चित्रों की कमी नहीं है। नायिका नायक कृष्ण की मुरली लेकर उरोजों में छिपा लेती है और अपनी इस क्रिया से नायक (कृष्ण) के हृदय में व्याप्त प्रेमांकुरों को उद्दीप्त कर देती है—

"हरि मुरली हरि की लई धरी उरोज नवीन।
राम रमी पर बीन तिय करी हिये पर बीन॥"[2]

रहमत की उपलब्ध रचनाओं धार्मिक भावना का लगभग अभाव सा है फिर भी उपयुक्त दोहे को वैष्णव भक्ति की सीमा में समेटा जा सकता है।

'पेमी'

'पेमी' का पूरा नाम सैयद बरकत उल्लाह था। व सयद मुहम्मद सुगरा बिलग्रामी के वंशज थे। 'पेमी' का जन्म सन् 1070 हि. (सन् 1959 60 ई.) में बिलग्राम में हुआ था।[3]

एक सूफी मुसलमान होते हुए भी आपने अपने काव्य में एकरूपता पर बल दिया है। वे वैष्णव भक्ति से प्रभावित थे। शुद्ध वैष्णव भक्त की भाँति उनका कवि-हृदय कभी विमुग्ध होकर हमारे हरि बिन और न कोय की स्वर लहरियों में डूब जाता है और कभी उसे हरि के बिना चैन ही नहीं पड़ता'—'हरि बिन कबहू न चैन परी'। उनके हृदय में कृष्ण की ललित छवि समा गई है। प्रसन्न मन पेमी सब जग या मूरत पर वारो। सच्ची बात तो यह है कि मीरा, सूर और रसखान की आत्मा 'पेमी' के काव्य शरीर में पुनः जीवित हो उठी है। पेमी की मृत्यु 10 मुहर्रम सन् 1145 हि. को हुई।

---

1 डा. गणेश जैदी बिलग्राम के मुसलमान हिन्दी कवि पृ.-23

2 रहमत मधुर दोहे

3 बिलग्राम के हिन्दी कवि पृ 58।

'पमी' ने शृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति सयमित सीमा के भीतर ही की है। प्रस्तुत छन्द में कवि ने दम्पति मिलन का परिदृश्य उपस्थित किया है। नायक (कृष्ण) नायिका को भुज पाश मे लेने को आतुर है, किन्तु नायिका आसानी से पकड़ मे नहीं आती है—

"कुंजन मे दरसन है देखो जाइ दम्पति को
सुख के समूह मधुमात न समाति है।
जसे उठे घनश्याम, तसोई हसोरे बाम,
अग प्रतिअग छूटि नियराति है॥
सोटि जात सोटि जात आटिजात कबहू के
दौरे दौरे भांवरे चपल लुभाति है।
कहत न आवे पमी देखे मन चैन पाय,
निहचे पठात रीझि रीझे पठान हैं॥"[1]

'पेमी' द्वारा रचित — प्रेम प्रकाश' का द्वितीय खण्ड लगभग पूरे का पूरा वैष्णव भक्ति परक है। कृष्ण के अनन्य भक्त के रूप में उनके कोमल हृदय मे कृष्ण की ललित छवि अंकित हो चुकी है— 'ललित छवि मन में रही समाय'[2] फलस्वरूप वे अब कृष्ण के अतिरिक्त किसी अन्य को अपना कहना भी पसन्द नही करते— "हमारे हरि बिन और न कोय।"[3]

कृष्ण के वियोग मे गोपियो की मनःस्थिति का चित्रण करने मे कवि को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। गोपियाँ रात दिन कृष्ण की प्रतीक्षा में खड़ी रहती हैं। उनके विचलित हृदय में श्याम की प्रीति निरन्तर गहरी होती जा रही है। वे कहती हैं— 'श्याम को यदि कुब्जा ही अधिक प्रिय है तो वे भी घनश्याम का दर्शन तो करना ही चाहती हैं

'रेन दिन जात इक टक ठाढ़
कछु न सुहाय विकल भयो तन मन, गहे काम रिपुगाढ़े।
अतर मूर हृदय नही लागत, श्याम प्रीत चित बाढ़े,
बिलसत जाइ कूबरी अग सग, गोप स्वास सब छाढ़े।
जो पिय चतुर साम न लागे, कुब्जा की गति हाढ़
पमी' आवो वेग रावरे हमहू कूबर काढ़े॥"[4]

1 पेमी प्रम प्रकाश पृष्ठ 254
2 पेमी प्रेम प्रकाश पृष्ठ 209
3 पेमी प्रेम प्रकाश, पृष्ठ 260
4 पेमी प्रेम प्रकाश' पृष्ठ-211

उद्धव गोपियो को योग उपदेश देना चाहते हैं, चतुर गोपियाँ उनसे कहती हैं कि वे इस मर्म को नही समझ सकती। वे कृष्ण को गोपियों से अलग करके क्यों देखते हैं वे श्याम में उसी प्रकार खो चुकी हैं जैसे मसि मे अंक अथवा अंक में मसि या जल मे लहर अथवा लहर मे जल।

"ऊधो तुम यह मरम न जानो,
हम में स्याम, स्याम मय हम हैं, तुम जनि अनत बखानो।
मसि मे अंक अंक मसि महिया दुविधा कियो पयानो,
जल म लहर लहर जल माहीं कहु विधि बिरहा ठाने।
सिलिका जाय जोग दृढ़ता किंहि जाय ताप अरु ध्यानो
हम सग जोग भोग दुख नाहीं, बूद समुद समानो॥"[1]

गोपियो को कृष्ण के वियोग म कही भी सुख नही मिलता वे पथिक को रोककर विरह आधिक्य और अत्याचार का उलाहना कृष्ण के पास भिजवा रही हैं

'हरि बिन कबहु न चैन परी।
कहियों पथिक सदेस अवधि कर, बिरहा अधिक करी॥
सूर मत्र मुकु ओट न लावत सीरी होत खरी।
काल्ह रूप ससि जोन्ह सतावत, तातें निपट जरी॥
पेमी बिकल कुसल नहिं दीखत, गिनगिन अवध टरी।
आवहु बेग रावरे नातरु अबके सुनी मरी॥"

इस प्रकार 'पेमी' के काव्य में वैष्णव भक्ति परक रचनाएँ प्रचुर मात्रा में मिलती है। पेमी ने इस क्षेत्र में सूरदास द्वारा प्रदर्शित मार्ग का यथा क्षमता अनुगमन किया है। पेमी के धार्मिक मुक्तकों में कबीर तथा नामदेव आदि सतो का प्रभाव भी झलकता है। पेमी एक उच्चकोटी के महात्मा, एक आदर्श सूफी सत, महान धर्म वयी और एक प्रतिभा सम्पन्न कवि है। अरब और भारत की भावनात्मक एकता की जैसी रूप रेखा पेमी के काव्य म मिलती है अन्यत्र दुर्लभ है। इस्लाम धर्म मे अटूट आस्था रखने वाले 'पेमी' भारतीय देवी देवताओ के प्रति भी अपार श्रद्धा रखने वाले एक अनन्य भक्त हैं।[2]

अब्दुल जलील—

मीर सैयद अब्दुल जलील का जन्म सवत् 1719 वि (जून सन 1662 ई) मे हुआ था। मीर सैयद अब्दुल जलील बिलग्राम हरदोई के निवासी थे। ये मीर अब्दुल लतीफ के पौत्र तथा मीर अहमद के पुत्र थे। इनका कविता काल स 1750

1 पेमी प्रेम प्रकाश पृष्ठ–212
2 डॉ गणेश जैन बिलग्राम के हिन्दी कवि पृष्ठ–57।

विक्रम है। सरोजकार के अनुसार य अरबी फारसी आदि यवनी भाषाओं में विद्वान थे।[1] इन्होंने बिलग्राम के कवि हरिवंश मिश्र से भाषा काव्य की शिक्षा प्राप्त की थी। इनकी अनुशंसा म अमी-स उमरा हुसैन अली खाँ न हरिवंश मिश्र को एक हजार रुपये वार्षिक वृत्ति देना स्वीकार किया था इस पर हरिवंशजी ने कहा

'कृष्ण सुदामा सो करी, जानो यही दलीस।
वही कवि हरिवंश को कीन्हें मीर जलील॥"

मीर अब्दुल जलील पर अमीर उल उमरा हुसैन अली खाँ और सम्राट फर्रुखसियर का गहरा विश्वास था। इन्होंने अमीर खुसरो की तरह दिल्ली के अनेक मुगल सम्राटों की कृपा प्राप्त की थी। औरंगजेब के पश्चात् जलील को शाह आलम प्रथम, जहाँदरशाह फर्रुखसियर रफीउद्दौला शाहजहाँ द्वितीय और मुहम्मदशाह से भी बहुत सम्मान मिला।

मीर जलील का विवाह सैयद मुर्तजा की कन्या बीबी सुधरी से हुआ। इनके पुत्र सैयद मोहम्मद भी हिन्दी के कवि थे। जलील 'सुन्नी' थे, लेकिन बाद म इनके वंशज 'शीया' हो गये। इनकी मृत्यु 23 जमादि उस आखिर सन् 1138 हिजरी (सं 1783 वि) म हुई। हरिवंश मिश्र के पुत्र दिवाकर मिश्र ने इनके मरणोपरान्त यह दोहा पढ़ा

'हुआ नहीं ओ हो गया, एसो गुनी सुसील।
जैसो अहमद मद जग हुवे भयो मीर जलील॥"

मीर जलील की एक हिन्दी कृति प्रेमकथा बताई जाती है। स्फुट बरवै का उदाहरण इस प्रकार है —

'अधम उधारन ममता मुनि करि तोर।
अधम काम की बन्यिा गहि मन मोर॥
मन बच कायक निसिदिन अधमी काज।
करत करत मन मरिया हो महराज॥
बिलग्राम कर वासी मीर जलील।
तुम्हरि सरन गहि माड़े ऐ निधि सील॥[2]

नेवाज

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों मे नेवाज नाम स तीन कवियों का उल्लेख मिलता है। जिनका वर्णन इस प्रकार है — व अंतर्वेद के रहने वाले ब्राह्मण थे

1 शिवसिंह सरोज पृष्ठ 423 424। कवि संख्या–43।
2 शिवसिंह सरोज पृष्ठ–116

और संवत् 1737 में लगभग वर्तमान थे। शिवसिंह सरोज में संवत् 1739 का जन्म संवत् लिखा है, जो अशुद्ध है। क्योंकि इनका लिखा हुआ शकुन्तला नाटक संवत् 1737 का है। इतना तो निश्चित है कि ये पन्ना नरेश महाराज छत्रसाल के यहाँ दरबारी कवि के रूप में रहे। अतः संवत् 1730 से पहले ही इनका जन्म हुआ। छत्रसाल के यहाँ रहने के सम्बन्ध में एक दोहा प्रसिद्ध है जो किसी भगवत् कवि का लिखा हुआ है, जिसके स्थान पर नेवाज को छत्रसाल के दरबार में प्रवेश मिला था

'तुम्ह न ऐसी चाहिए छत्रसाल महाराज।
जहँ भगवत् गीता पढ़ी, तहँ कवि पढ़त नेवाज॥"

इस दोहे के प्रथम चरण का पाठान्तर इस प्रकार भी मिलता है — भली आजु कलि करत हो, छत्रसाल महाराज।' इतिहास ग्रन्थों में नेवाज कवि का औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के यहाँ रहने का भी उल्लेख मिलता है। इनका लिखा हुआ 'शकुन्तला नाटक' प्रसिद्ध है। यथार्थ में यह दोहा, चौपाई, सवैया आदि छन्दों में लिखा पद्यबद्ध शकुन्तला सम्बन्धी आख्यान है। नाटक शब्द से भ्रम में पड़कर इसे अभिनेय नाटक नहीं समझना चाहिए। शकुन्तला आख्यान के अतिरिक्त इनकी कतिपय फुटकर रचनाएँ मिलती हैं जिनका प्रधान स्वर शृंगार है। शृंगार वर्णन के लिए जिस कोटि की सहृदयता और काव्य कुशलता अपेक्षित होती है वह इनके पास प्रचुर मात्रा में थी। इन्होंने शब्द चयन में बड़ी सावधानी से काम लिया है। रसिक होने के कारण शृंगार वर्णन में कहीं कहीं अत्यधिक नग्न रूप भी ग्रहण कर लिया है। संयोग शृंगार इनका प्रिय विषय प्रतीत होता है। संयोग शृंगार के लिए जिन प्रसंगों को इन्होंने चुना है, वे रति सम्भोग-परक हैं। अतः वर्णन श्लील मर्यादा से दूर होने के कारण भोग प्रधान हो गए हैं, किन्तु काव्यत्व की दृष्टि से उनमें प्रचुर भाव सामग्री मिलती है। कृष्ण वियोग से दुखी नायिका का वर्णन इस प्रकार है

'देखि हमें सब आपस में जो कछु मन भाव सोई कहती हैं।
ये घरहाई लुगाई सबै निसि द्यौस नेवाज हमें दहती हैं॥
बातें चवाव भरी सुनिकैं रिसि आवत पै चुप ह्वै रहती हैं।
कान्ह पियारे तिहारे लिये सिगरे जग कीं हँसबो सहती हैं॥"

प्रच्छन्न प्रेमाचार के जग विदित हो जाने पर निशंक होकर प्रेम करने की प्रेरणा देने वाला सवैया इस प्रकार है

'आगें तो कीन्हीं लगालगी लोयन कैसे छिपैं अजहूँ जो छिपावति।
तू अनुराग को सोध कियो ब्रज की बनिता सब यों ठहरावति॥
'कौन सकोच रह्यो है नेवाज जो तू तरसै उनहूँ तरसावति।
बावरि जो पै कलंक लग्यो तो निसंक ह्वै क्यों नहीं अंक लगावति॥

रसलीन

रसलीन एक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। उनका व्यक्तित्व साहित्य सगीत, कला तीनो का सगम स्थल था। वे साहित्यकार के रूप मे कवि और आचाय थे।

रसलीन जाति के मुसलमान थे, पर सभी धर्मों के प्रति उनमे अटूट आस्था थी। उनके मन मे जो श्रद्धा इस्लाम धम के प्रति थी उतनी ही हिन्दुओ के देवी देवताओ के प्रति भी रही। इस प्रकार जब हम उनके व्यक्तित्व पर दृष्टिपात करते हैं, तो चलचित्र की भाँति रसलीन को अनेक रूपो मे प्रतिष्ठित पाते हैं।

बिलग्रामी कवियों की यह विशेषता रही है कि वे जाति से मुसलमान थे पर हिन्दी, हिन्दू और हिन्दुस्तान के प्रति उनके मन म अटूट श्रद्धा विद्यमान थी। रसलीन के काव्य मे जो सम्मान हजरत मुहम्मद, हजरत अली नबी और इमाम को प्रदान किया गया है, वही मान हिन्दू भक्तो की भाति कवि ने राधा-कृष्ण, गगा, गणेश, राम, हनुमान आदि धार्मिक महापुरुषो को भी प्रदान किया है।

रसलीन के काव्य मे वैष्णव भक्ति परक छन्द के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जहा इन्होने कृष्ण और राधा को अपने काव्य म नायक और नायिका के रूप मे चित्रित किया है, वही उनकी मोहिनी बशी के प्रभाव का भी चित्ताकषक वणन किया है

"बसी ह्वै छुडावत है बस है न रीति कछु,
बसी सम लेत प्रान मीन को निकार कै।
अधर सुधा मे लग उगलत है विख एतो,
अद्भुत भयो है यह जगत् निहारि के॥
'मोहे मन देव और अदेव रसलीन जब,
पसु पछी थके मानो डार दई मार कै।
यातेँ विधि मेरे जान सेस को न दीन्हा कान,
सेस तन तान दी हो धरती को डारके॥"[1]

रसलीन हिन्दू धम की वैष्णव भक्ति से अधिक प्रभावित थे। इन्होन हिन्दू धम के अनेक देवी देवताओ के प्रति श्रद्धा, विश्वास एव आस्था प्रकट की है फिर भी उनकी धार्मिक भावना का मूल आधार कृष्ण लीला ही रही है।

"राधा पद बाधा हरन साधा करि रसलीन।
अग अगाधा लखन को कीन्हो मुकुर नवीन॥1॥ (अग दपण)

---

1 मुक्तकफरिक कवित 98 रसलीन ग्रन्थावली।

कवि सर्वप्रथम शृंगार रस की ओर आकृष्ट होता है। उसका मत है कि शृंगार के देवता हैं- श्रीकृष्ण जो देवताओं के सिरताज हैं अतः उनसे सम्बंधित रस भी 'रसराज' ही होगा

' रस का रूप बखानि कै बरनौ नौ रस नाम
अब बरनत सिंगार को जाहि तें सब काम ॥
तेहि सिंगार को देवता कृष्ण लीजियो जानि।
और बरनहूँ कृष्ण सों कृष्ण बरन पहिचानि ॥'

'आँसू' भवभूति की धरोहर है वाल्मीकि का गुण मीरा की आहुति है तो पन्त की कविता। यह भगवान बुद्ध का वह दर्पण है जिसमें उन्हें समस्त विश्व दिखाई पड़ा था। पर रीति युगीन कवियों को तो सदा सुख में ही आँसू दीख पड़ते हैं, जिनसे जलती हुई छाती भी एक बार तो शीतल हो ही जाती है। रसलीन कहते हैं

"पिय लखि नही तिय चखन में सुख असुवा ठहिराई।
आपुन मे शीतल हियो शीतल कन्त बनाइ ॥
गरत बान मुख छाहि के दुगन कूप मे आइ।
हरि के सुख असुवा चल पारद ह्वै उफनाइ ॥'[1]

रसलीन का हृद मिश्रित स्तम्भ का एक बड़ा मार्मिक चित्रण प्रस्तुत है— एक नायिका जो दही मथन में तल्लीन है किन्तु हरि को देखते ही उसकी मथनी उसके हाथ में ही रह जाती है और उसका मथना रुक जाता है—

"हरि के देखत ही कहा थकित भयो सुर गात।
रई रही लै हाथ मे दही मथ्यो नहिं जात ॥'[2]

तो दूसरी ओर नायिका अपने बाल सँवारने व जूड़ा बाँधने में व्यस्त है कि इतने में उसकी दृष्टि श्रीकृष्ण पर पड़ जाती है, फिर तो पूछना ही क्या— जूड़े की पेंच (चोटी) नायिका के करों में रह गई और श्याम जूड़े की पेंच में समा गए

'पाग सजन हग्गिन परी जूरो बाँधत बाम।
रहे पेच कर में परे और पेच मे स्याम ॥'[3]

'नायिका न नायक (श्रीकृष्ण) को न देखा, न उसकी ध्वनि ही सुनी केवल उसके सम्बन्ध मे बातें चलते ही वह कम्पित हो उठी – वहाँ नायक

1 रस प्रबोध दोहा 818 19 'रसलीन ग्रंथावली'।
2 रस प्रबोध दोहा 808 रसलीन ग्रंथावली।
3 रस प्रबोध दोहा 809 रसलीन ग्रंथावली'।

(ब्रजराज) नायिका के सुकोमल शरीर तथा चन्द्र ज्योत्स्ना सी शीतलता पाकर प्रकम्पित होता गया। यथा

"लख्यो न कहू घनश्याम अरु बोल सुयो नहिं कान।
कहाँ लगी तू बेल सी बात चलति यहिरान ॥[1]

"तन मन चन्दन बदन ससि दुति सीतलता पाइ।
आजु अग ब्रजराज के कप भयो है आइ ॥[2]

कोई भी प्रेमी थोड़े बहुत परिचय से किसी भी प्रेमिका के घर सीधे नहीं पहुंच जाता है। वह माध्यम ढूंढता है। कृष्ण और राधिका के मिलन में सखी और उसका सदन किस प्रकार सहायक हैं। रसलीन के दोहे मे प्रस्तुत है

'कान्ह बनाइ कुमारिका सखी गेह मे ल्याइ।
चोर मिहि चुनी मे दई ले राधकाहि मिलाइ ॥[3]

इसी प्रकार नायिकाएँ श्रीकृष्ण को कहीं सून घर में पाकर आलिंगन पाश मे भर लेती हैं तो कहीं उन्हे उपवन में देखकर फूली नहीं समाती। विपिन में हरि को अकेले देखकर राधा इस प्रकार लिपट जाती है, जैसे - मानो तमाल के वक्ष से पहुप की लता लिपट गयी हो

"धनि सूने घर पाइयो हरि लौ हौं उर लाइ।
सूने गृह लहि लेत है ज्यो धन चोर उठाइ ॥[4]

"हरि को लखि बहि राधिका ठहिराई यह भाइ।
मनु तमाल तरु को मइ पुहुपलता लपटाई ॥'[5]

श्रीकृष्ण की विविध क्रीडाओ के वर्णन में कहीं कहीं रसलीन का काव्य भी शृंगार मर्यादा का उल्लंघन अवश्य कर गया है, किन्तु ऐसे स्थलों पर भी कवि की काव्यानुभूति सजग रहती है। उसके भाव सौन्दर्य मे शिथिलता नहीं आने पायी है।

कुछ स्थलो पर रसलीन का सौन्दर्य वर्णन अत्यन्त मार्मिक आकर्षक सरस तथा हृदयग्राही बन गया है। राधा गोरी है, पर कृष्ण सांवरे। इधर राधा श्यामल रंग की साड़ी पहने अपनी पौरी पर खडी हो जाती है तो उधर श्रीकृष्ण पीताम्बर धारण किये अपने द्वार पर खड़े हो जाते हैं। दोनों एक दूसरे को चतुरतापूर्वक

1 'रस प्रबोध' दोहा 813 'रसलीन ग्रंथावली
2 'रस प्रबोध' दोहा 814,15 रसलीन ग्रंथावली
3 रस प्रबोध' दोहा 945 रसलीन ग्रंथावली
4 रस प्रबोध दोहा 946 'रसलीन ग्रंथावली
5 मुक्तकिक कवित्त 41 'रसलीन ग्रंथावली'

समागम का सकेत करते हैं, किन्तु इस रहस्य को अधरों पर नहीं आने देते। उन्होंने अपने वस्त्र को आश्वासन प्रदान का माध्यम बनाया है। व इतना अधिक निकट आना चाहते है कि जितना वस्त्र शरीर के निकट हैं। यहाँ राधा को परकीया रूप मे प्रस्तुत किया गया है। रसलीन की यह व्यजना कितनी मार्मिक और चित्ताकर्षण बन पड़ी है—

'स्यामल सारी सजी उत राधिका ठाढ़ी भई निज पौरि सुहाय।
का'हउ तो इत द्वार मे आइ खड़े भये पामरी पीत रगाये ॥
चातुरता रसलीन कहा कहि आपने भेद न काहु जनाये।
जो रग जो रहे पट सो चित्त के पट दोऊ दुहुन दिखाये ॥'[1]

जो बातें अभी तक आखो मे हो रही थी वह अब सकेतों से होती हुई वस्त्रो तक आ गयी, और अब का'ह की बसी में तो इनका प्राण ही बसने लगा—

'पीतम बसुरी को सरिस सब जग तें करि ध्यान।
अधर लगत हरि के जियति बिछुरे बिछुरे प्राण ॥'[2]

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि प्रेमपात्र की प्रत्येक वस्तु और काय प्रेमी को अच्छे लगते हैं। आचाय शुक्ल के शब्दो मे यही 'सम्ब ध भावना' कहलाती है।

इस प्रकार की क्रीडाएँ वास्तव मे प्रेमो को प्रगाढ़ बना देती है। दोनो एक दूसरे से मिलने के लिए आतुर हो उठते ह। प्रेम की मर्यादा, सामाजिक बधन लोक लज्जा, पग पग पर रोड़े बनकर माग को अवरुद्ध करते हैं। रसलीन भी ऐसे ही प्रेम को प्रेम मानते हैं, जिसम तन, धन, लाज व जीवन की भी परवाह न हो। कृष्ण की मुरली की ध्वनि कानो मे पड़ते ही राधा की भी यह दशा हुई।

"यह मति राधे की भई सुनि मुरली की तान।
तन तन धन कह लाज कह देन चहा तक प्राण।'[3]

रसलीन के कुछ ऐसे वणन भी हैं जो रसिकता से ओतप्रोत होते हुए भी कोमल भावनाओं से परिपूर्ण हैं। परकीया की सुरति का एक चित्र प्रस्तुत है—

"राधा तन फूलन मिल्यो पातिन हरि को गात।
नुपुर धुनि सग धुनि मिली भले बने सब भाति ॥'[4]

किन्तु परकीया का वणन अधिक रसिकतापूण हो गया है, फिर भी प्रतीकों के आवरण ने उसे अनावृत होने से बचा लिया है।

---

1 रसप्रबोध दोहा–1126
2 रस प्रबोध दोहा–1126।
3 'रस प्रबोध दोहा 791। रसलीन ग्रथावली।
4 रस प्रबोध, दोहा 949। रसलीन ग्रथावली।

"सब जग हार्यो मे अलख काहू को न लखात ।
कुंजन मे रति के दोऊ पछी लो उड़िजात ॥"[1]

यह रसलीन के वणन की सफलता है। जहाँ कितने समय कवि ऐसे वणन मे अपने को मर्यादित रखने मे असफल सिद्ध हुए, वहाँ रसलीन सौन्दर्य सहायक तत्वो से अपने को बचाते हुए, सौन्दर्यानुभूति के चित्रण की रमणीयता मे रंचमात्र भी कमी नहीं आने दी है। इसमे रसलीन का मन भी अन्य कवियों की अपेक्षा अधिक रमा है।

रसलीन का साहित्य संगीत और कला [illegible] परिपूर्ण हो गया। साहित्य ने रस प्रदान किया, कला ने सौन्दय और संगीत का स्वर देकर उनके व्यक्तित्व को रस, रूप और राग से भर दिया एवं देश और काल की सीमा को पार कर अलौकिकता के ऐसे वातावरण मे पहुचा दिया, जहाँ काव्य रस की धारा, कला सौन्दय की छटा, संगीतमयता थी। जहाँ व्यक्ति हिन्दू रह जाता है, न मुसलमान। बस वह एक अलौकिक पुरुष बन जाता है। "समाधि पर एक ओर पड़ी है तलवार, तो दूसरी ओर रखी है लेखनी, सीने पर झुकी हुई है वीणा। सिरहाने 'रस प्रबोध' है, सीने से लगा 'अंगदपण', तथा रंग बिरंगे फूलों की भाँति बिखरे हैं, 'मुतफरिक कवित्त' के पृष्ठ और समाधि पर स्वर्णाक्षरों में लिखा है—

"अमी हलाहल मद भरे सेत स्याम रतनार।
जियत मरत झुकि झुकि परत जिहि चितवत एक बार।"[2]

उनकी रसधारा साहित्य की धारा को आज भी [illegible] कर रही है, और करती रहेगी।

यारी साहब

यारी साहब का समय सम्वत् 1725–1780 वि है। इनकी "रत्नावली" नामक पुस्तक वेलेवेडियर प्रेस प्रयाग से सन् 1921 ई मे प्रकाशित हो चुकी है। खोज के दौरान तीन ग्रथ और उपलब्ध हुए हैं (1) यारी साहब के शब्द, (2) रमैनी तथा (3) राम के ककहरा। "शब्द" मे निर्गुण भक्ति वर्णित है। "रमनी" मे आत्मज्ञान और 'राम के ककहरा" म फारसी लिपिमाला के "अलिफ' से ए" तक के अक्षरो से पद्यात्मक रूप मे ज्ञान निरूपण किया गया है।[1]

यारी साहब पर सूफी मत का भी कुछ प्रभाव है। इनके काव्य मे अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनो का वैभव दर्शनीय है। 'कवित्त" और 'शब्द' बड़े ही मधुर व सरस हैं। यारी साहब की प्रीति हरि' मे किस प्रकार दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है इसका अनुप्रास युक्त वर्णन इस प्रकार है —

दिन दिन प्रीति अधिक मांहि हरि की।
काम क्रोध, जजाल भसम भयो बिरह अगिनि लगि धधकी।
धुधुकी धुधुकी सुलगनि अति निरमल झिलमिल झलकी।।[2]

मूर्ति पूजन आडम्बर आदि पर प्रभावात्मक शैली मे व्यग्य करने से ये नही चूके हैं —

'आंधर को हाथी हरि हाथ जाको जसो आयो,
बूझो जिन जैसो तिन तसोई बतायो है।
× / ×
आपना सरूप रूप आपु माहि दसै नाहि,
कहै यारी आंधर न हाथी कसो पायो है। [3]

इनकी काव्य भाषा सरस ब्रजभाषा है तथा उसमे अरबी एव फारसी शब्दो की भी सुदर शब्द योजना मिलती है।

अब्दुल्लाह

ये बहरिमाबाद (दिल्ली) के रहने वाले थे। हिजरी सन् 1140 सवत् 1779 वि मे इन्होने अपने मित्र मुहम्मदशाह फाजिल के पठनार्थ दक्षण विलास' नामक ग्रथ की रचना की थी। 'दक्षण इनका उपनाम कहा जाता है। इस ग्रथ मे प्रमुख रूप मे 'नवरस', नायिका भेद का वर्णन मिलता है। इनके समय मे दिल्ली

---

1 हस्तलिखित हिन्दी ग्रथों का अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण (प्रथम भाग) पृ –121
2 यारी साहब की रत्नावली प 1, शब्द 3
3 यारी साहब की रत्नावली पृष्ठ–15

मे बादशाह मुहम्मदशाह का शासन था। 'दक्षण विलास' के अंत में कवि ने लिखा है —

दक्षण कृत यह ग्रंथ है, महा सुदस सुभाइ।
महमद फाजिल मीत लगि, दक्षण लिख्यो बनाइ॥
ग्यारह सौ चालिस बरस, हिजरी सम्वत् आहि।
पातसाह दिल्ली तखत् हतो मुहम्मद साहि॥
दिल्ली मधि दक्षण लिख्यो, अपने कर यह ग्रंथ।
भर कै सरस कवित्त रस, रसिकन लायन पथ।[1]

ग्रंथ के आरम्भ मे छप्पय द्वारा कवि ने अपना भी परिचय दिया है। इस ग्रन्थ की रचना दिल्ली मे हुई थी।

छप्पय

"भाषा काव्य रसाल तामे दक्षण पद पायो।
फारसी काव्य सुदेस सुभग वालिह पद लायो॥
पढ़यो मैं ग्रंथ अनेक फारसी और अरबी।
पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण देख्यो मे सब्बी॥
अहमदुल्लाह निज नाम है, वासी वहरियाबाद को।
शुभ देश महे माध्क का रसी पद जो आदि को॥"[2]

"दक्षण, अरबी फारसी के ममज्ञ थे, ये चारों दिशाओं मे घूम चुके थे। लेकिन इनको 'रसाल' लगा तो सिर्फ भाषा काव्य से। 'दक्षिण विलास' की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है। 'दक्षण' की कविता में शक्ति है। इन्होंने काव्य शास्त्र का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया था। दक्षण' शृंगारी कवि थे। इन्होंने नायिका भेद पर भी अपनी कलम चलाई है। स्वकीया नायिका का लक्षण इस प्रकार से निरूपित किया है

'रस क्रस पियूस भरी सपनेहू न रोष परोस तिया के।
सखि मान ये देखिबे को जिये थक रहे नित खोज प्रवीन पिया के॥
शुभ बोल अमोल करे चख लोल यें चित अडोल दुलाये हिया मे।
जुग अक्षण लाज धनी कुल रक्षण 'दक्षण' के लक्षण ये स्वकिया मे॥'[3]

राधा और कृष्ण को इन्होंने नायक नायिका रूप मे ही चित्रित किया है। राधा कृष्ण का समरस वर्णन का चित्र इस प्रकार है—

---

1 मुसलमानों की हिन्दी सेवा, पृष्ठ–170
2 हिन्दी के मुसलमान कवि पृष्ठ 197 98
3 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 197 98

"राजे एक सेज पर राधिका सुघर हरि,
दक्षण सुघर वर दोऊ समरस है।
काम की कलोलन सो मीठे मीठे बोलन सों,
आवे पख लोलन सा पीवें रूप रस हैं॥
सावरे सहाई मीत माइ के प्रतीति प्रीत,
सुरति समर जोति आनन्द बरस हैं।
केलि के चरित्र सार करत न दोऊ हारे,
प्रेम मतवार एक एक तें सरस है॥"[1]

नायिका के यौवन के उन्मेष पर भी वे अपनी कलम चलाने से नहीं चूके।

"और जाति और भांति औरे रूप औरे कांति,
और राग औरे भांति औरे दुति अंग की।
औरे रंग भीजे नैन औरें प्रेम पागे बैन
औरे चाव औरें चैन औरे चोप संग की॥
औरे चाल डगमग औरें भाल संग वग,
औरें दक्ष' जगमग भूषण के भग की।
औरें रंग औरें ढंग औरें छवि की तरंग,
औरई उमंग गति औरई अनंग की॥"[2]

अब्दुलाह की रचनाएँ रीतिकालीन वृत्तियो मे पगी हुई हैं। राधा-कृष्ण के उल्लेख मे भी इन्होने शृंगारिकता का ही परिचय दिया है जो नायक नायिका का स्वरूप ही प्रस्तुत करता है। राधा कृष्ण की लीलाओ के व्यापक आकर्षण से ये भी अछूते नही रह पाए हैं।

मुहम्मद आरिफ

बिलग्रामी कवि मुहम्मद आरिफ 'जान' सन्त मखदूम मुहम्मद रुकनुद्दीन के वंशज थे। इनका जन्म स 1767 वि (दिसम्बर, सन् 1710 ई) मे हुआ था। इनके पिता 'नसरुद्दीन' थे।

मुहम्मद आरिफ 'रसलीन' स अत्यधिक प्रभावित थे। उनको 'मुनि' नाम से सम्बोधित करते थे। 'जान कह्यो रसलीन मुनि भव सुरसर मे लीन'। ये अरबी, फारसी सस्कृत के विद्वान थे एवं हिन्दी के अच्छे कवि भी थे। इनके द्वारा रचित तीन कृतियाँ उपलब्ध है—

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 198
2 मुसलमानों की हिन्दी सेवा पृ 171

(1) 'अंग शोभा', (2) 'मदन मूरत', (3) 'रस मूरत'।

"आरिफ भाखा में बहुरि धरयो 'जान' निज नाम।"

—अंग शोभा

"आरिफ नाम कवित्त मे भाख्यो 'जान' नवीन।

—मदन मूरत

ऊपर उदाहरण से स्पष्ट है कि अपनी कविता के लिए आरिफ ने अपना उपनाम 'जान' रख लिया था। रसमूरत का उदाहरण दृष्टव्य है —

'समुति सहित करि ध्यान हिय कडी दोड कर जोरि।
सदा रहे जोरी धनी राधा-नन्द किशोर॥[1]

—मंगलाचरण

मंगलाचरण मे राधा कृष्ण की जोडी का स्मरण करके आपने वैष्णव धर्म के प्रति अपनी आस्था का परिचय दिया है। आरिफ की राधा कृष्ण विषयक रचनाएँ भक्ति भाव के अधिक समीप प्रतीत होती हैं।

मीर माधो

सरोजकार के अनुसार ये संवत् 1735 वि मे उत्पन्न हुए थे।[2] उन्होंने 'सुदामा चरित्र' नामक काव्य की रचना की है। ग्रन्थ का रचनाकाल अज्ञात है। परन्तु लिपिकाल सन् 1775 ई (संवत् 1832 वि) दिया गया है।[3] इसके अतिरिक्त कुल फुटकल कवित्त है, जो 'हजारा' मे संग्रहित बताये जाते हैं —

"बाँसुरी बिसद बंसीवट को बसेरो तहा
त्रिविध बयारी बन बिसद बहति है।
बरन बिरह मीरी माधव ये बिधिवर,
बेग बूझि मानो बारि बिरसु करति है॥
बारिज बदन बिरुयो है नैना बानी,
बाकी बिपिन बसन सुनि बिरचि रहति है।
बारक कहति बिलखीही, हौ बार भई,
बार बार मोसो चलु बावरी कहति है॥ [4]

1 नागरी प्रचारिणी पत्रिका (सम्पूर्णानन्द स्मृति अंक), वर्ष 73 अंक 1 संख्या 4 सं 2025 वि पृ 177 180
2 शिवसिंह सरोज पृ 471 कवि संख्या 35
3 चौदहवां त्रैवार्षिक विवरण – विवरण – भाग, पृष्ठ 3 संख्या 12
4 सरोज पृ 273, संख्या 588

और माधो की यानगी से स्पष्ट है कि रीतिकालीन भाषा–शैली के माधुर्य से युक्त आपके कवित्तों में राधा कृष्ण की लीलाओं का सरस वर्णन उपलब्ध होता है।

कारेखां फकीर

ये मुसलमान रंगरेज फकीर थे। सागर जिले के रहली ग्राम में इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म व मृत्युकाल अनिश्चित है। ये कृष्ण के अनन्य भक्त थे। रचनाकाल स. 1843 वि. के लगभग पड़ता है। कारेखां फकीर पर कृष्ण का अनुग्रह हो गया था। कथा है किसी ब्राह्मण पुत्र से इनकी घनिष्ट मैत्री थी। ये कहीं बाहर गये हुए थे कि इस बीच मित्र की अचानक मृत्यु हो गयी। लौटने पर यह शोक समाचार मिला। कारे खां श्मशान भूमि की ओर दौड़े चिता जलाने की तैयारी हो रही थी। इन्होंने दूर से ही उच्चस्वर में कहा 'खबरदार" जीवित व्यक्ति को चिता पर मत जलाना। पहले किसी का विश्वास ही नहीं हुआ कि कारेखां सच कह रहे हैं। वे अपने मित्र के शव के निकट गये उसमें कहा "मित्र उठो। मैं आ गया। पर वह तो निष्प्राण शव था उन्होंने उपस्थित आदमियों से कुछ देर रुकने को कहा और स्वयं कृष्ण की स्तुति करने लगे। खड़े-खड़े इन्होंने 108 कवित्त पढ़े। अंतिम कवित्त समाप्त होते ही शव में प्राण लौट आये और इनका मित्र उठ बैठा। यह दृश्य देखकर आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कारेखां सिद्ध पुरुष के रूप में विख्यात हुए। इनके 108 कवियों में अधिकांश का पता नहीं चलता है। हफीजुल्लाह खाँ के हजारे में भी इनका एक कवित्त लिखा गया है[1]

उदाहरण स्वरूप कवित्त इस प्रकार है
"माफ किया मुलुक मलाह को विभीषन को
कही थी जुबान, कुरबान ये करार की।
बैठिबे का ताइफ तखत दे तखत दिया,
दौलत बढ़ाई थी जुनारदा यार की।
तब क्या कहा था अब सरफराज आप हुए
एरे नन्दलाल क्या हमारी जा वार की॥ [2]

× × ×

वृन्दावन कीरत विनोद कुंज कुंजन में,
आनन्द के कन्द लाल मूरति जुगल की।
कालीदह कवि कारे पाताल पठि नाग नाथ्यो,
के लाको के फूल तोरि लाये माला हार की॥

1 हिन्दी के मुसलमान कवि – गंगाप्रसाद सिंह विशारद पृ. 219/220
2 हफीजुल्लाह खाँ का हजारा (पहला भाग) पृ. 41 (विवरण अज्ञात)

परसत को पूतना परम गति पाय गई,
पलक ही मार मार्‌यो अजामिल जार को।
गीद गुन गान हार छाछि के उगानयार,
आयो ना अहीर कहा हमारी बार बार को॥

कारे खाँ पहले भक्त थे, कवि बाद मे। कविता इनका साध्य नही थी। इनका ध्येय श्रीकृष्ण का स्तवन था, न कि कविता के माध्यम से शब्द चमत्कृति, अथ चमत्कृति के फेर म पडना। फिर भी आत्म म निकली इनकी वाणी 'काव्य' बन गयी। कारे खा यदि श्रेष्ठ कवियो मे नही हैं, तो एकदम सामान्य भी इन्हें नही कहा जा सकता। उदात्त भक्ति भावना के संवाहक इनके कवित्त भी अन्तमन को आन्दोलित करने की क्षमता तथा दीर्घकालिक प्रभाव छोडने की योग्यता रखते हैं। रीतिकाल के शृगार-सागर मे कारे खाँ का कृष्ण स्तवन इनकी आस्था का परिचायक है।

आदिल

कवि आदिल बीजापुर के सुल्तान इब्राहीम आदिलशाह, स 1607 के लग भग रस राग विषयक नवरस कर्ता' से पृथक थे। 'सरोज' मे इनका जन्म समय सम्वद् 1762 विक्रम दिया हुआ है। ग्रियसन के अनुसार ये सन् 1703 ई (स 1760 वि) म उत्पन्न हुए थे।[1] ग्रियसन ने 'सरोज' मे दिय हुए समय से दो वर्षों का अन्तर किया है, लेकिन इसका आधार नही बताया है। आदिल ने सम्भवत कोई पुस्तक नही लिखी थी। इनकी फुटकर रचनायें मिलती हैं। श्रीकृष्ण की रूप माधुरी इनके इस छद मे वर्णित हैं।

मुकुट की चटक, लटक बिबि कुण्डल की
भौह की मटक नेकु आखिन दिखाउरे।
एहो बनवारी बलिहारी जाऊँ तेरी मेरी –
गैल किनि आइ नेक गाइनि चराउ रे॥
आदिल सुजान रूप गुन के निधान कान्ह,
बाँसुरी बजाइ तन तपनि बुझाउ रे।
नन्द के किशोर चितचोर मोर – पखवारे,
बन्सी वारे सावर पियारे इत आउ रे॥ [2]

आदिल यदि कृष्ण के वंशीधर रूप पर मुग्ध हैं, तो तान उनके वीररूप (कसारि रूप) पर। वैसे दोनो के यहा 'सावरे' छल छबीले' कृष्ण का सौम्य

1 शिवसिंह सरोज पृ 681 कवि संख्या 25। हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास (ग्रियसन कृत) पृ 225 कवि संख्या 381
2 सरोज पृ 12

मादक ही है। वे यदि आदिल का चित्त चुराये बैठे है, तो ताज का भी मन मोह चुके हैं —

"छैल जो छबीला, सब रंग मे रंगीला,
बड़ा चित्त का अड़ीला कहू देवतों से न्यारा है।
माल गले सोहे नाक मोती सेत सोहे कान-
कुंडल मन मोह लाल मुकुट सिर धारा है॥
दुष्टजन मारे, संतजन रखवारे 'ताज',
चित हितवारे प्रेम-प्रीति करवारा है।
नन्द जू का प्यारा जिन कंस को पछारा,
वह वृंदावन वारा कृष्ण साहेब हमारा है॥[1]

आदिल तोष—श्रेणी के कवि हैं।[2] इनका कविता काल संवत् 1785 वि है।

तालिबशाह

तालिबशाह जन्म संवत् 1768 वि में हुआ था। इनका कविता काल संवत् 1800 वि है। मृत्यु संवत् अज्ञात है। तालिबशाह का कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नही मिलता। स्फुट छन्द ही अभी तक प्राप्य हैं। इनकी भाषा खड़ी बोली के निकट है। तत्सम शब्द—'महबूब' (अरबी) 'दीवाना (फारसी) तथा 'निमाना' (हिन्दी विनीत के अर्थ में) इत्यादि के साथ संस्कृत के मदन' भृकुटी' आदि शब्दों का कुशलता से प्रयोग किया है। कृष्ण भक्ति विषयक एक 'भुजग प्रयात' (वर्णिक वृत्त) इस प्रकार है।

"महबूब बागे सुहागे बने हैं,
सुमोहन गरे माल फूलों हिये है।
महारस माते अमाते मदन के,
बिलोकत बदन और चन्दन दिये हैं॥
यही भेष हरिदेव भकटी तुम्हारे,
सुलकुटी भवर लेस या लल लिये हैं।
दिवाना हुआ है निमाना दरस का,
सुतालिब वही श्याम गिरिवर लिये है॥[3]

---

1 'मुसलमानों की हिन्दी सेवा' पृष्ठ 130
2 मिश्रबंधु—विनोद (द्वितीय भाग) — मिश्रबंधु पृ 620।
कवि संख्या-693
3 भजन संग्रह' (भाग 4) वियोगी हरि पृष्ठ 155 156

शिवसिंहजी ने भी तालिबशाह के कवित्तों की प्रशंसा की है। बहुवर्णी कृष्ण लीलाओं का बहु भाषा मिश्रण के माध्यम से जो वर्णन हुआ है वह तालिबशाह का महबूब के प्रति सच्चा आकर्षण है।

सन्त दाना साहेब

इनका समय संवत् 1750 से 1800 वि है। जन्म स्थान चापनेर है। दाना साहब काजी गुलशन के शिष्य थे। स्याम की सांवरी सूरत पर ये भी कुर्बान थे —

'मुरली स्याम की सांवरी सूरत निरखत नैना छाकि रहे।
ब्रजवासी हुई ब्रज ठाढ़ि रहु, वंसीधर माधुर वेणु बहे॥
बरसाना कुंज वृंदावन मे हरि दीसत नाही कौन कहे।
दाना ब्रज से नहिं दूर रहे, यह जन्नत का सुख कौन लहे॥
दाना के दिल मे लगी, पीय दरस की आस।[1]
× × ×
विरहिन ब्रज मे आइ कै ठाढ़ी ठौर उदास।
मनमोहन[1] तुम हो कहा ब्रजवासी सुख दैन॥"

बाबा नबी

ये दीन दरवेश के शिष्य हैं। इन्होंने कृष्ण की आराधना की है—

'मैं जानूं हरि अधम उधारन पतित उबारन स्वामी रे।
भक्त वत्सल भूधरजी रे है एक नाम बहुनामी रे॥
प्रथम भक्त प्रहलाद उबारे, ध्रुव को अमर पद दीन्हा रे।
सुदामा के सब संकट कारे, हँस हँस तंदुल लीन्हा रे॥
पांचाली को चीर बढ़्यो पांडव लिये उबारी रे।
कौरव कुल को आप विदारे अर्जुन को रथ धारी रे॥
× × ×
गिरधारी तेरो नाम बड़ो है जहर मीरा का पीया रे।
नामदेव की गाय जिवाई दामा के जीवण जीया रे॥
× × ×
बहुरंगी तोहे कौन बखाने गोविन्दजी गवहारी रे।
दास नबी को सरण राखो, डूबत नैया तारी रे॥'[2]

बाबा नबी की बानगियों से ज्ञात होता है कि आप केवल लीलाओं के सौन्दर्य पक्ष मे ही आबद्ध नही है अपितु उनके लोक कल्याण कारक रूप के आराधक भी हैं।

---

1 कल्याण भक्त-वाणी अंक 1 पृष्ट 449
2 कल्याण संत वाणी अंक पृष्ठ-447

बाबा फजल

इन्होंने अपना गुरु दीन दरवश को ही माना है। कृष्ण की आराधना की है—

"यदुपति कृष्ण मुरार, मोही विदारिये।
लपट मन की चाल, चिदानद वारिये॥
नैया बहे मझधार खेवैया तारिये।
फाजल अपनी जान, हरी उबारिये॥"[1]

सत हुसैन खा

इनको दीन दरवेश की शिष्यता प्राप्त थी। मुसलमान कवि होते हुए भी आपने कृष्ण की आराधना की है।

"बालमुकुदा माधवा केशव कृष्ण मुरार।
पवन सघारन आदये निलज नदकुमार॥
निलज नदकुमार नाथ छाडों निठुराई।
दूध दही घत खाय यादव तेरी चतुराई॥
हुसन तेरा हो गया गिरधर गोविन्दा।
केशव कृष्ण मुरार माधवा बालमुकुन्दा॥"[2]

उपयुक्त पद मे सत हुसैन खाँ का भक्त हृदय अभिव्यक्त हुआ है। भाषा मे प्रवाह है।

बाबा गुलशन

ये ब्रजदास नामक सत (ब्रजवासी मुस्लिम सत) के शिष्य थे। मनमोहन की 'मोहनि सूरत' पर ये भी रीझ गये थे—

'मनमोहनि सूरत मोहन की देखत जग लगि रहा सपना।
सुख चैन न सावरि सूरत बिनु मोहे कोइ यहाँ न लगे अपना॥
चित चचल हरि के चरन लग्यो, रसना लगि प्रिय नामहि जपना।
गुलशन सहकोक कर देख लिया जग झूठ जजाल मन की कल्पना॥'

× × ×

ठाढो रह ब्रज ग्वालिनी गुलशन पूछन तोर।
ब्रजवासी को कहा गये मुरलीधर चित्त चोर॥

× × ×

1 कल्याण — वही — पृष्ठ–447
2 कल्याण संतवाणी अक पृष्ठ–448

"श्याम छवी जिन जिन लखी, गुलशन चहे न आन ।
मुरलीधर सों मन लगा, उन्ह वही भगवान ॥"[1]

बाबा गुलशन ने भी मीरा के धरातल को स्पर्श करते हुए स्पष्ट कह ही दिया कि 'गुलशन चहे न आन । यह इनकी एकनिष्ठता का प्रमाण है ।

सत यकरग

खानजहाँ लोदी के वंशज मुस्तफा कुली खा का उपनाम यकरग था । ये सम्राट मुहम्मदशाह के समय के एक अमीर थे और देहली के उर्दू कवियों मे सम्मानित स्थान रखते थे । इनकी शिक्षा मिर्जा मजहर के यहा हुई थी । यकरग ने हिन्दी में भी कवितायें लिखी है । इनकी रचनाओ मे कृष्ण भक्ति के अनेक पद पाये जाते हैं—

"निसिदिन जो हरि का गुन गाय रे ।
बिगड़ी बात वाकी सब बन जाय रे ॥
लाल कहूँ माने नही एकहु ।
अब कहा, कब लग हम समझाय रे ॥'[2]

सत यकरग का भाव पक्ष भक्तिकालीन कवियो की याद ताजा कर देता है ।

मीर मुराद

मीर मुराद, कविराज चारण बाहनदास के शिष्य हैं, बड़ौदा राज्य के बिलवाई ग्राम मे इनका निवास कहा जाता है । इनका कृष्ण विषयक निम्न पद उद्धत है । जिसमे कवि ने श्याम की छवि को अपने हृदय मे बसा लिया है ।

मुरलीधर मुख मोड़के अब मत रहियो दूर ।
मुराद आयो शरण म रखियो हरी हजूर ॥
श्याम छवी हिरदै लखी, अब कहा निरखू आन ।
मुराद दूसरा कोउ नही, नाम लिया निरवान ॥
बिलपत मन हरि के बिना, दरस बिना नहिं चैन ।
मुराद हरि के मिलन बिन, बरखा ज्यू बहै नैन ॥'[3]

---

1 'कल्याण - सत वाणी अक' पृष्ठ - 449
2 कल्याण सत वाणी अक पृष्ठ -448-449
3 -वही पृष्ठ - 450

नवखान

भारतीय-चरिताम्बुधि' के अनुसार नवखान बुन्देलखड के निवासी थे। इनका जन्म सवत् 1792 वि मे हुआ था।[1] ये हिन्दु या मुसलमान क्या थे, इसका कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है। सम्भावना इनके मुसलमान होने की ही अधिक है। इनकी स्फुट श्रृंगारिक रचनायें प्राप्त होती हैं। एक कवित्त इस प्रकार है—

"प्यारी को बुलाइ चित्रसारी दखिबे के मिस,
लाई वह सखी जहा सोइवे को धाम है।
प्यारे को निहारि परजक मे मयकमुखी
शक मानि भाजो राजी तक अति छाम है॥
वेनी मगननी की कुवर बाह् गहि लई
ऐसी भाति भई नवखानि अभिराम है।
मोहन की चास चटकीली परतचा खेंचि
तमक्यो चढावत कमान मानो काम है॥[2]

मीरन

अनुमानत य भी बिलग्राम के निवासी तथा जाति से मुसलमान थे। सरोजकार के अनुसार इन्होने - नखशिख नामक सुन्दर ग्रन्थ की रचना की है। इनका रचनाकाल सवत् 1870 75 वि के बीच का है। इनके कुछ छन्द दिग्विजय भूषण मे समावृत हैं। मीरन के दोहे, सवैये और कवित्त स्फुट रूप से अनेक सग्रह-ग्रन्थो मे मिलते हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(प्रौढा खडिता)

'आये कहू अनहै मनमोहन, सोहति मूरति मैन भई है।
आरस सो रस सो अनुराग सो रूप सो रीझ सों डीठि ठई है॥
'रावरे ओठन अजन राजत मीरन मो मति तेहतई है।
जानति हो वह भाव तो और सो बालन की मुह छाप दई है॥[3]

(मध्या अधीरा)

'नन रगे सब सैन जगे स नखे से लगे मन को ललचावत।
मेरियो रीझ किधी पिय प्यारे की रूप खरी लगे रीझि रिझावन॥

---

1 मध्ययुगीन सूफी इतर मुसलमान कवि डॉ उमाशकर श्रीवास्तव, पृष्ठ - 289
2 शिवसिंह सरोज - आठवा सस्करण 1966 ई पृष्ठ - 172
3 'दिग्विजय भूषण' - पृष्ठ 93 (गोकुल प्रकाश)

"मीरन" आज की आवन ऊपर पावन ध्वै वरिये वर पावन ।
आये कहूँ अनहू बसि के मनभावन लागे तऊ मन भावन ॥[1]

× × × ×

"धूर कपूर मी पूरी रही अग दूरि ते देखिह दामिनि ज्यो घन ।
कोमल कज से हाथ ओ पाय हैं खेलत खेल के बीच दिये मन ॥
बाल बितीन व्है कवि "मीरन" कालिहि ते कछु और भयो तन ।
सेसव से भलक्यो इत जोवन माल में जैसे पताल धरयौ धन ॥

(दोहे)

जब लगि हिय मे धरि रह्यो, तब लगि धरयौ जु धीर ।
'मीरन' अब कैसी बनी, अधिक पिरानो पीर ॥
'मीरन' बिछुरत ही पिया, उलटि गया ससार ।
चदन चदा-चादनी, भये जरा हुन हार ॥
मीरन प्यारे अस कह्यो, सपने देखो मोहि ।
तुम बिन नींद न आवही कैसे पेखो तोहि ॥[2]

मीरन की बानगियो से ज्ञात होता है कि इनका मन केलि क्रीडाओ मे अधिक रमा है चाहे वे राधा कृष्ण की हैं अथवा नायक नायिकाओ की । इनकी रचनाओ पर रीतिकाल का प्रभाव स्पष्ट है ।

नजीर अकबराबादी

मौलवी नजीर का जन्म सवत् 1797 वि के लगभग हुआ था । ये आगरा के निवासी थे । नजीर स्वाभिमानी व्यक्ति थे । इन्होने किसी की प्रशस्ति स्वरूप एक भी कसीदा नहीं लिखा । ये फारसी अरबी के ममज्ञ तथा हिन्दी उर्दू और पजाबी पर समान अधिकार रखते थे । हिन्दी की एक रचना दृष्टव्य है—

'जो मैं ऐसा जानती प्रीति किये दुख होय ।
नगर ढिंढोरा पीटती, प्रीति न कीजो कोय ॥'[3]

नजीर की रचनाओ मे खडी बोली का प्राधान्य है । सबसे बडी चीज तो यह है कि हिन्दुओ के धार्मिक उत्सवो तथा देवी देवताओ के प्रति इन्होने अपनी कविता मे जितना अधिक आदर दिखलाया है उतना शायद किसी मुसलमान कवि ने नहीं ।[4]

---

1 शिवराज भूषण' - पृष्ठ 550 (षोडश प्रकाश)
2 हिन्दी के मुसलमान कवि पृष्ठ 305
3 महाकवि नजीर (अकबराबादी) और उनका हिन्दी और उर्दू काव्य – रघुराज किशोर वतन' पृष्ठ–7
4 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी – इतर मुसलमान कवि डा उदयशकर श्रीवास्तव, पृ –337

नजीर 'मौजी" व "रसिक" व्यक्ति थे। नजीर की मत्यु सवत् 1877 के लगभग हुई है। इनकी प्रमुख रचनायें इस प्रकार हैं— (1) क हैया जू का ज म, (2) बासुरी, (3) बजारानामा, (4) हसनामा, (5) दोहा सग्रह और (6) दीवान नजीर।

कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

"है रीत ज म की यो होती जिस घर मे बाला होता।
उस मडल मे मन बहुतेरा सुख चैन दोवाला होता॥

× × ×

"य नेक नछनर होते ह इस दुनिया मे ससार जनम।
पर उनके और ही लच्छन हैं, जब लेते हैं औतार जनम॥
जो नारद मुनि हैं घ्यान भली सब इनका भेद बताते ह।
वह नेक महुरत से जिस दम सृष्टि मे ज मे जाते हैं।

(क हैया जू का ज म)

आपने 'क हैया का बालपन' शीर्षक से एक लम्बी कविता का सृजन किया। कविता सीधी सपाट पर तु हृदयग्राही है—

"यारो, सुनो दे दधि के लुटैया का बालपन।
और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन॥
माहन सरूप नृत्य करैया का बालपन।
बन बन के ग्वाल गौयें चरया का बालपन॥'[1]

नजीर का भाषा पर असाधारण प्रभुत्व था। उनकी शैली बडी ही सुन्दर और मनमोहिनी थी, जिसमे उनके शब्दो का पाठको पर बडा प्रभाव पडता था। वे लौकिक और पारलौकिक सभी विषयो पर अपना मत स्पष्ट रूप स सरल भाषा मे प्रकट करते थे जैसा इन अवतरणो से जाना जायेगा —

जोगीनामा

"कोई कहता है जोगी जी किधर को आये।
सच कहो कौनसी नगरी मे तुम्हारा है वतन॥
तुम तो आत हो नजर हमको नये से जोगी।
सच कहो जोग लिया तुमन यह किसके कारण॥
गर गुरु तुम्म हा बनवा दें तुम्हारा अस्थल।
शहर मे बाग म या बरलबे दरियाए जमन॥

---

1 सतवाणी वष कल्याण वष-29 पृ-343

या कि मथुरा जो पसन्द आये तो वा जगह लें ।
या खदिरवन में महाबन मे हो या वृन्दावन ॥

× × ×

बासरी

"मोहन की बासरी के मैं क्या-क्या कहू जतन ।
लय इसकी मनको मोहनी धुन इसकी चित हरन ॥
इस बासरी का आन के जिसवा हुआ वचन ।
क्या जल पवन 'नजीर' पखेरू व क्या हिरन ॥
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी ।
ऐसी बजायी किशन कन्हैया ने बासरी ॥
जब मुरलीधर ने मुरली को अपनी अधर पर धरी ।
क्या क्या परेम मीत भरी इसमे धुन भरी ॥
लय इसमे राधे राधे की हरदम भरी खरी ।
लहराई धुन जो उसकी इधर और उधर जरी ॥
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी
ऐसी बजायी किशन कन्हैया ने बासरी ॥
जिस आन कान्हाजी का वो बन्सी बजवानी ।
जिस कान मे वो आवनी वा सुध भुलवानी ॥
हर मन की होके मोहनी और चित लुभावनी ।
निकली जहा धुन उसकी वह मीठी लुभावनी ॥
सब सुनन वाले कह उठे ज जै हरी हरी ।
ऐसी बजायी किशन कन्हैया ने बासरी ॥

नजीर अकबराबादी भी कृष्ण की बासुरी के आकर्षण म आकठ पगे स प्रतीत होते हैं ।

महबूब

ये शृगारी कवि थे । इनका ज म समय सवत् 1761 वि है । स्फुट छन्दो के अतिरिक्त इन्होंने 'कवित्त' नामक ग्रथ की रचना की, ऐसा कहते हैं । इनका निम्न कवित्त कृष्ण पर आधारित है—

'आग धेनु धारि गेरि ग्यारन बमार बाम,
फेरि फेरि टेरि धौरी धूमरी गगन लें ।

---

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि और उनका काव्य पु 337

पोछि पुचकारण अगोछन सा पोंछि पोछि,
चूमि चाइ चरन चलावें सुवचन तें ।।
वहै महबूब धरे मुरली अधर वर,
फूकि दई खरज निखाद के सुरन ते ।
अमित आनन्द भर नन्द छवि वन्दवत,
मन्द गति आवत मुकुन्द मधुवन तें ।।'[1]

महबूब 'मुकुन्द' की अदा और रूप पर फिदा हैं ।

हाफिज

इनका समय सवत् 1864 वि के लगभग पडता है । वस्तुत ये हरदोई निवासी हकी जुल्लाह खाँ 'हाफिज" (स 1913-1950 वि) "नवीन सग्रह" प्रेम तरगिणी मनमोहिनी और "रसिक सजीवनी" के रचियता से बिलकुल पृथक है । रचनाओ स हाफिज कृष्ण भक्त भी प्रतीत होते हैं ।

"रग नयो तेरो ढग नयो तु कहा नयो तेरी मान नई है ।
तेरी सभा सब रग रगेली हरि की धुनि जो ग्यान नई है ।।
याके रूप को कौन पहचाने ध्यान सो हरि को पहचान नई है ।
'हाफिज' छल ने होरी मे मोही मुरली नई तेरी तान नई है ।।'[2]

वली मोहम्मद

मीर वली मुहम्मद हिन्दू से मुसलमान हो गये थे । गार्सा दतासी के अनुसार 'इस्लाम धर्म स्वीकारने के पूर्व इन्होने हिन्दी मे कृष्ण भक्ति विषयक दो रचनायें- 'श्रीकृष्ण की जन्मलीला' तथा बालपन बसुरी लीला की, — जिन्हें रामस्वरूप नामक सज्जन ने सम्पादित किया है ।[3] इनकी कृतिया फतहगढ से सन् 1868 ई मे प्रकाशित हुई है । इनके पूर्व नाम तथा स्थान आदि का कही विवरण नही मिलता है । इनकी कृतिया' अनुपलब्ध है ।

ईशा अल्ला खा "ईशा'

सैयद् ईशा मीर माशा अल्लाह खा के पुत्र थे । ये लोग मुगल दरबार मे हकीम और मनसबदार थे ।[4] ईशा का जन्म सवत् 1813 के लगभग मुर्शिदा बाद मे हुआ था ।

---

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 195
2 मध्ययुगीन हिन्दी के इतर सूफी मुसलमान कवि डा उदयशकर श्रीवास्तव पृष्ठ 152
3 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास गार्सा दतासी पृ-274-275
4 उर्दू साहित्य का इतिहास ब्रजरत्नदास पृ-90

ईशा की प्रमुख रचनायें इस प्रकार है — (1) फारसी दीवान (2) दीवान (उर्दू गज़लो का सग्रह), (3) रेखती का सग्रह, (4) फारसी कसीदे, (5) फारसी मसनवी, (6) शिकारनामा (7) स्फुट काव्य रुबाईया आदि।[1]

'रानी केतकी की कहानी' ईशा द्वारा विरचित है। यह शुद्ध हिन्दी मे लिखी गयी रचना है। कहानी का एक छद जिस प्रसग मे कृष्ण को जोडा गया है —

"जब छाडि के करील कुज का ह द्वारिका मा जाय छिपे।
कुलधूत धाम बनाय घने महराजन के महाराज बने॥
मोर मुकुट और कामरिया कछु और हिनाते जोड लिये।
धरे रूप नये, किये नेह नये और गइया चरावन भूल गये।"

एक उदाहरण और —

"लिफट कर कृष्ण जी से राधिकाजी यो लगी कहने,
मिला है चाद से ए लो। अधरे पाख का जोडा।"[2]

'ईशा' ने आधुनिक काल के पहले चरण मे खडीबोली मिश्रित ब्रजभाषा मे जो सवाद प्रस्तुत किया है वह इनकी धर्मनिरपेक्षता का परिचायक है।

नेवाज बिलग्रामी

नेवाज बिलग्रामी का जन्म सवत् 1804 वि मे हुआ था। यह बिलग्राम (हरदोई) के निवासी तथा मुसलमान जुलाहे थे। इनका कविता काल स 1830 के आसपास ठहरता है। इनके नाम के अन्य कवि भी हुये थे। इन्होने मुख्य रूप से शृगार प्रधान काव्य की रचना की। बिलग्रामी ने स्फुट सवैयो की ही रचना की। इन्होने किसी ग्रन्थ की रचना नही की है। इनके सवये जो दिग्विजय भूषण से उद्धृत हैं —

"राधिका जू वषभानु सुता सुनो माइहि बाप लडाइहि लाडनि।
वाकी दसा सुनि हो हू 'नेवाज' बिलोकिबे आज गई हुतो चाडनि॥
मैनि मसूसनि कै मुरझानी बडी अखिया वे गई गडि गाडनि।
पासुरी पालुरी बँधि गई धुनि बासुरी की बरमा' मई हाडनि॥"[3]

× × × × ×

पीठि दै पोढि दुराय कपोल को मान न कोटि पियाउत पोटत।
बाहन बीच हिये मुख दोऊ गहे रसना मन ही मन सोचत॥

---

1 'उर्दू साहित्य का इतिहास डॉ रामबाबू सक्सेना पृ 179-180
2 हिदी उर्दू और हिन्दुस्तानी पृष्ठ-97
3 'दिग्विजय भूषण पृष्ठ 78-79 सख्या 107 (पृष्ठ प्रकाश)

सोवत जाति 'नेवाज' पिया कर सो दे निज ओर करोटत।
नीवी विमोचन चोकि पर री मृग छौना सी बाल बिछौना पर लौटत ॥"[1]

× × × × ×

"सोये अकेले रह दिन मे ससुरारि मे काहुवै नाहि सकात हैं।
भोजन काज जगाये 'नेवाज' उठे रति केलि थके अरसात हैं ॥
सारी निसा के जगे ढिग सासु के ज्यों ज्यो लला अगिरात जम्हात हैं।
त्यों त्यो इते लखि लडिली के बडे लोचन लाजन ही गडे जात हैं ॥"[2]

× × × × ×

'काहे को मो मन देखवे को दहिबो करते दृग हैं दुखदाई।
हौ हूँ 'नेवाज' तुम्ह बिसरावती जा विधि सो तुमहूँ बिसराई ॥
चूकी परी चलवे की समैं तब मो मन मे सुधि नेक न आई।
मैं तुमसो निरमोही सो मोहन मागिलियो न कछु निठुराई ॥"[3]

शेख भुल्लन

ये भरतपुर निवासी थे। सन् 1819 ई (स 1876 वि) म भरतपुर नरेश राजा रणधीरसिंह की हिन्दुस्तान के तत्कालीन गवनर जेनरल से एक भेंट हुई थी, जिसका कवित्त मय वणन शेख भुल्लन ने 'महाराजा भरतपुर और लाटसाहब का मिलाप 'अथवा' मिलाप श्री महाराजा को लाट साहब से' नामक ग्रन्थ मे किया है। ग्रन्थ का रचनाकाल भी स 1876 वि है। ईश्वर', 'भवानी' और 'सुरस्वती' की वन्दना के पश्चात् ग्रन्थ म नगर की साज सज्जा का वणन मिलता है —

'हुई सहर म खबर यह सुब साम से जारी।
सरकार की अगरेज से मिलने की तयारी ॥
और सहर भरतपुर म यही सौर है जारी।
करते हैं सभी साथ के लसकर की तयारी ॥
सरकार ने लसकर को हुकुम डेरो का दिया।
सेख इमाम बक्स को उनके साथ कर दिया ॥"

× × ×

अन्त—

मुन्शी के जु हमराही थे वे ऐस कृष्णचन्द।
एक पल म दल दर के सब कटि दिये फन्द ॥

---

1 'गिरिजय भूषण', पृष्ठ 192 स 33 (अष्टम प्रकाश)
2 सुन्दरी तिलक पष्ठ 66-67
'रसिक विनोद' पृष्ठ 23

मैं उनकी सुनै बानी मे कहता हूँ नये छंद ।
तुम ऐसे श्री महाराज हो मेटोगे मेरे दंद ॥
ऐसा मिलाप हमने जग मे कही न देखा ॥"[1]

ग्रंथ मे खडी बोली का प्रयोग किया गया है। रचयिता सामान्य कवि लगते हैं।

वाहिद

इनका समय अनुमानत 19 वी शती विक्रमी का अंतिम चरण है। इनके फुटकर छंद मिलते हैं। प्रस्तुत उदाहरण से प्रतीत होता है कि वाहिद कुशल कवि थे और इनका भाषा पर अधिकार था। नंद नंदन के मोह पाश मे ये भी आबद्ध थे।

'सुंदर सुजान पर मंद मुसकान पर,
बासुरी की तान पर ठौरहिं ठगी रहे।
मूरति बिसाल पर कंचन की माल पर,
खजन सी चाल पर खौरन खगी रहे।
भौंह धनु मैंन पर लोने जुग नैन पर,
सुद्ध रस बैन पर वाहिद पगी रहे।
चचल से तन पर सावरे बदन पर,
नंद के नंदन पर लगन लगी रहे ॥"[2]

आलम (सुदामा चरित्रकार)

सुदामा चरित्र' के कर्ता आलम नाम से मुसलमान प्रतीत होते हैं। अनुमानत ये स 1850 वि के बाद के कवि है। 'सुदामा चरित्र' मे लावनी, छंद का प्रयोग हुआ है। अरबी, फारसी के अतिरिक्त बीच बीच मे अंग्रेजी शब्दो का भी प्रयोग हुआ है। इनका विस्तृत विवरण अप्राप्त है। ग्रंथ मे 'भक्ति' का प्रतिपादन है। रचना सामान्य कोटि की है। उदाहरण इस प्रकार हैं—

"ओंकार है अलख निरंजन कैसा कृष्ण गोवर्धनधारी।
नादर सब के कादर सिर पैं सुंदर तन घनश्याम मुरारी ॥
सूरति खूब अजायब मूरति आलम के महबूब बिहारी।
जगमग जग है जमाल जगत मे हिलमिल दिल की जय बलिहारी ॥"

× × × ×

"सत सुनाम अस बहुत बन्दगी जो इमको नीके कर जाने।
ज्यो ज्यों याद करे वह चन्दा त्यो त्यो वह नीके कर जाने ॥

1 2 सरोज पृष्ठ 314

देखो क्रम किया वामन ने जो कुछ दिया सो मन में जाने ।
ऐसे कौन बिना गिरधारी जो गरीब में दुख को माने ॥

× × × ×

"गदागीर रणम सुखन सुदामा श्रीकृष्णचन्द्र को यार ।
आलम में प्रगटत भये सब राजन सिरदार ॥"[1]

अलीमन

कवि अलीमन सभवत मुसलमान थे । इतिहास ग्रन्थ इनके जीवन परिचय के प्रश्न पर मौन है । इनका आविर्भाव काल उन्नीसवी शती विक्रमी का उत्तरार्द्ध माना जा सकता है । इनके छन्द सुन्दरी तिलक' (प्रथम लीथो मुद्रण का समय स 1931 वि) म सग्रहीत है । एक सवया यह है—

जैयत प्रीतम प्यारे बिदेश को मोहिं कहा उपदेश बतैयत ।
तैयत हु छलिया जो कही बतियाँ चलिबे की सुने खिलखेयत ॥
खेयत रावरे पाँय की सौंह 'अलीमन' या को उपायन पेयत ।
पेयत औधि के औसर जो बिछुरे ते जिये यह साज सजेयत ॥"[2]

अनीस

इनका कविता काल सम्वत 1911 वि के लगभग पडता है । मिश्र बधुओ ने इन्हे तोष कवि की श्रेणी दी है । अनीस का केवल एक छन्द ही देखने मे आता है, जो वास्तव म बेजोड है —

'सुनिये विटप प्रभु पहुप तिहारे हम,
राखिहो हमे तो सोभा रावरी बढाइहैं ।
ताजिहा हरखि के तो बिलग न सोचे कछु ।
जहा-जहा जैहे तहा दूनो यश गाइहैं ॥
सुरन चढेगें नर सिरन चढेगें पर,
सुकवि अनीस हाथ हाथ मे बिकाइहैं ।
देश मे रहगे परदेश मे रहेंगे काहू
वेश में रहेंगे तऊ रावरे कहाइहैं ॥'[3]

---

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि —डॉ उमाशकर श्रीवास्तव, पृ —327
2 सुन्दरी तिलक' नवलकिशोर प्रेस नवीं बार सन् 1905 ई पृ 40 छन्द सख्या 240 ।
3 शिवसिंह सरोज पृ 13

सयद रोशन

इनका जीवनवृत्त अभी तक अज्ञात है। इनकी रचनायें 'भजन शिरोमणि' में संग्रहित है। उनका एक भजन इस प्रकार है—

"प्रभु तुम कहा न प्रभुता करी।
गोकुल घन घेरि आये इन्द्र आज्ञा करी।
बहते ब्रज राखि लीन्हा गिरिवर नखपरधरी।
बीच बन मारीच मार्यो बालि सो छल करी।
ताड़का शर तानि मार्यो यज्ञ मुनिवर सरी॥"[1]

सैयद् रोशन की भाषा से प्रतीत होता है कि ये रीतिकाल के बाद के कवि हैं।

लतीफ हुसन

इन भक्त कवि का जीवनवृत्त भी अज्ञात है। सम्भवत मध्ययुग के अन्तिम दशकों मे अथवा उसके कुछ पीछे ये रचनायें करते थे। लाला दवीदीन द्वारा संकलित तथा इण्लो ओरिएण्टल प्रेस, लखनऊ से मुद्रित 'भजन शिरोमणि' नामक संग्रह ग्रन्थ के सम्वत् 1982 वि के द्वितीय संस्करण मे लतीफ हुसैन की रचनायें मुझे देखने को मिली। प्रस्तुत पद मे गोपियाँ उद्धव के समक्ष अपनी अन्तव्यथा व्यक्त कर रही हैं—

"उधो, मोहन मोह न जावें।
जब जब सुधि आवत है रहि-रहि तब तब हिय बिचलावें॥
विरह व्यथा बेधत है उन बिन पल छिन चैन न आवे।
काह करो कित जाऊँ कौन विध तन की तपन बुझावें॥
व्याकुल ग्वालबाल अति दीखत ब्रजबनिता घबरावें।
गाय बच्छ डोलत अनाथ सम इत उत धाम रंभावें॥
कंस त्रास भीषण लखि सिगरो धो रज छूटो जावें।
कौन बचाव करेगो अब तो यह दुख असह सतावें॥
जब लौं अवधि कंस गृह पूरी करिके मोहन आवें।
तब लो कौन उपाय करें हम कोउ नाहिं बतावें॥"[2]

---

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि —डॉ उदयशंकर श्रीवास्तव, पृ 151
2 -वही -वही

निष्कर्ष—

भक्तिकाल के पश्चात भक्ति धारा न सूखी न समाप्त हुई, परन्तु भूमिगत हो गई सी प्रतीत होती है। राज दरबारों का वातावरण ऐश्वर्यपूर्ण, विलासिता पूर्ण था, वहाँ शृंगार का ही सम्मान था। रसमय, क्रीड़ामय जीवन में शान्त और निर्वेद को स्थान कहाँ ? भक्तिकाल के उत्तरार्द्ध में ही केशव ने राम-चन्द्रिका की रचना करके भक्ति में शृंगार और चमत्कार का समन्वय कर दिया था। बिहारी 'जा तन की झाँई परे, स्याम हरित द्युति होय' कहते हुए कृष्ण से भवबाधा दूर करने की प्रार्थना करने लगे और 'कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत लजियात' के द्वारा भरे मौन में भी सकेतों से राधा और कृष्ण क्रीडारत रहने लगे, फलत भक्ति की एकनिष्ठता विलोपित हो गई। 'मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई' कहने वाला कोई शेष न रहा। रीतिकाल में कोई ऐसा भी नहीं हुआ जो खग बनकर कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन पर ही बसेरा करना चाहता हो।

मुसलमान कवि भी शृंगार के प्रवाह में बहे उनमें से कुछ घाट बनकर स्थापित हुए। *आलम ने 'प्रेमरस पगे' जगमगे पदों की रचना की है।* इसी रसमयता में यत्र तत्र कृष्ण राधा का समावेश हो गया है। आलम ने उत्तरकाल में जिन पदों की रचना की उनमें रसखान सी मिठास पाई जाती है। 'नैनन में जो सदा रहते तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करे।' की कसक भी आपके पदों में पाई जाती है। शेख आलम की पत्नी थी। पगड़ी के पल्लू के माध्यम से आलम और शेख एक दूसरे से बँध गए। आलम की समस्या 'कनक छरी सी कामिनी काहे को कटि छीन ?' को शेख ने—' कटि को कंचन काटि विधि कुचन मध्य धरि दीन'—द्वारा हल कर दिया और साथ ही उनके जीवन की समस्या पूर्ति भी हो गई। सारी सामाजिक मर्यादाओं को भग करके शेख के हो गए और शेख उनकी हो गई। इसके पश्चात् जीवन में अनेक पदों की पूर्ति होती रही। समस्या न बनी। कहा जाता है कि आलम के अनेक पदों में शेख सहायक रही हैं। शेख की अपनी स्वतन्त्र रचनाएँ भी हैं, जो रीति कालीन परिवेश में अवगुंठित है। शेख ने राधा कृष्ण के माध्यम से भी पदों की रचना की है। 'आलम केलि' आपका सग्रह है। इसमें वय सन्धि नवोढा समागम, दूती सन्देश आदि का प्रसग है। इन पदों में राधा कृष्ण हैं तो अवश्य किन्तु भक्ति कालीन नहीं। प्रेम के क्षेत्र में नारी की विवशता के अनेक चित्र हैं—'प्यारी कहो ताहि सो, जु रावरे सो प्यारे कहे।' आजकल रावरे परोसिन के प्यारे हैं। अब मुरली सौत नहीं रही जो अधर पर्यक पर लेटकर कृष्ण से पैर दबवाती थी, उसका स्थान पड़ोसिन ने ले लिया है। शेख के काव्य में उद्धव प्रसग भी है। इसमें सहज स्वाभाविकता के दर्शन होते हैं। शेख के विरह वर्णन मार्मिक हैं। उनमें वेदना की अनुभूति और विरह जनित व्याकुलता है। 'जब तें गोपाल मधु वन को सिधारे माई। मधुवन भयो मधु दानव विषम सो। शेख के काव्य में कृष्ण

नायक हैं। उनका निरूपण दो रूपों में हुआ है–(1) साधारण पुरुष प्रतीक, (2) कृष्णावतार (ब्रजनायक)।

मीर जलील ने 'प्रेमकथा' की रचना की। इनके बरवे छन्दों में कृष्ण का उल्लेख मिलता है। इन्होंने अपने उद्धार के लिए कृष्ण शरण की याचना की है। ये कहते हैं—'अधम उधारन नमवर सुनि करि तोर, मैं तेरी शरण मे आया हूँ—अब इस जलील मीर का उद्धार कीजिए।' कवि नेवाज ने पद्यबद्ध 'शकुन्तला नाटक' की रचना की थी। इस नाटक से ही प्रतीत होता है कि ये रसिक स्वभाव के थे। फुटकर छन्दों में जहां राधा कृष्ण का उल्लेख हुआ वहां संयोग से शृंगार के सुन्दर चित्र उरेहे गए हैं। नेवाज अपनी नायिका (गोपी) को सलाह देते हुए कहते हैं—बावरि जो पै कलक लग्यो तो निसक ह्वै काहे न अंक लगावति है। आपकी रचनाओं पर रीतिकाल का पूरा प्रभाव देखा जा सकता है।

यारी साहब की रचनाओं से प्रतीत होता है कि इन पर सूफी प्रभाव था। आपने राम और कृष्ण दोनों का ही स्मरण किया है। रीतिकाल की बयार से आप अप्रभावित प्रतीत होते हैं— यथा— 'दिन दिन प्रीति अधिक मोहि हरि की। काम, क्रोध, जंजाल भसम भयो, विरह अगिनि लगि धधकी।" विरह की व्याकुलता भोगने वाले यारी साहब ने अलग अलग मतों मान्यताओं के सम्बन्ध में बड़ी सटीक उक्ति प्रस्तुत की है—'आंधरे को हाथी हरि, हाथ जाको जैसो आयो" इससे उनकी तार्किकता भी स्पष्ट होती है।

'दक्षण विलास' के रचयिता अब्दुल्लाह अरबी, फारसी के मर्मज्ञ थे साथ ही ब्रजभाषा पर उनका पूर्ण अधिकार था। आपने नायक नायिका रूप में ही राधाकृष्ण का चित्रण किया है— 'गर्जे एक सेज पर राधिका कुंवरी हरि'। नवोढ़ा और यौवना के अनेक मधुर नाटक रूपों को आपने चित्रित किया है। मुहम्मद आरिफ अच्छे कवि हुए है। आपने रचनाओं में अपना नाम आरिफ जान का उल्लेख किया है। 'रसमूरत' कृति में राधा नन्दकिशोर' भक्तिपरक वर्णन है, जो रीति कालीन प्रभावों से हटकर प्रतीत होता है। कारे खां फकीर सिद्ध पुरुष थे। इन्होंने अपने मृत मित्र को बचाने हेतु चिता के समक्ष खड़े होकर कृष्ण की वन्दना में 108 कवित्त पढ़ दिये थे। इनके कवित्तों में कृष्ण सम्बन्धी गाथाओं का भी उल्लेख हुआ है। कवित्त भक्त हृदय से निकली हुई पुकार है जिसमें करुणानिधान को करुणा करने हेतु आग्रह के साथ बुलाया गया है।

आदिल की फुटकल रचनाओं में कृष्ण की रूप माधुरी के दर्शन होते हैं। इन्होंने 'नन्द के किशोर चितचोर, मोर पखवार बंसीवारे, सावरे पियारे' को अपनी गलियों में गायें चराने का आमन्त्रित किया है। तालिबशाह, नवखान, मीरन, नजीर अकबराबादी, नेवाज, नजीर, शेख मुल्लन आदि कवियों ने भी कृष्ण का प्रकारान्तर से चित्रण किया।

कृष्ण भक्ति की यह धारा आधुनिक काल तक आते आते अतिक्षीण हो गई है। आलम (सुदामा चरित्रकार), अलीमन, अनीस सैयद रोशन, लतीफ हुसैन आदि मुसलमान कवियों की स्फुट रचनाओं में ही कृष्ण राधा को खोजा जा सका है।

□

हिन्दी के प्रमुख मुसलमान कवियो के कृष्ण काव्य मे अभिव्यक्त कृष्ण-चरित

हिन्दी के भक्त कवि, जिनमे मुसलमान भी हैं, उच्च लोकाराधन एवम् दीप्तप्रज्ञ सौन्दर्य स्रष्टा थे। उनके निकट भौतिक जगत् का न कोई कल्मष आ पाया है न किसी प्रकार की लिप्सा उन्हे विचलित कर सकी है। वे राजभय का नाम नही जानते थे, न किसी का अकुश जानते थे। नित्य स्वच्छन्दता उनकी प्रकृति है, आत्म तन्मयता उनका प्रधान गुण है।

आराध्य के चरणो मे आत्मार्पण का नियम सभी भक्तो ने अपनाया है, क्योंकि भक्त-हृदय को यह विदित है, लीलाधर कृष्ण रक्षक और उद्धारक भी है–

"तारन पे तरन कृष्ण सुने जो जहान बीच
मोको तो भरोसो एक नन्द के कुमार का।' –ताज

मुसलमानो मे जितने भक्त कवि हुए है सबने कृष्ण प्रधान ही काव्यो की रचना की है। राधा-कृष्ण की विविध शृगार चेष्टाओ और लौकिकता मे अलौकिकता की अभिव्यजना ही इनका अभिष्ट प्रतिपाद्य था। मूर्त व्यापारों के माध्यम से अमूर्त आशय को सकेतित करना इस साहित्य की व्यापकता का प्राधान्य है।

पूरे मध्ययुग मे कृष्ण चरित्र पर जितना अधिक कहा गया है, उसका चतुर्थांश भी राम के चरित्र पर नही है। कृष्ण का व्यक्तित्व मध्ययुगीन सौन्दर्य कल्पना का एक मात्र सवाहक है। राधा मूर्ति मे दो तत्वो की औदात्यपूर्ण साकारता ससिद्ध हुई है— सौन्दर्य और प्रेम।

कृष्ण ऐन्द्रजालिक रूप रखते हैं — श्याम गात, शीश पर मुकुट, कानों म कुण्डल, मोरपख और पीतपट धारण करने के अतिरिक्त त्रिभगी मुद्रा, मृदुवाणी और तिरछी चितवन से वे चित्त अपहृत कर लिया करते थे। उनकी अप्रतिम चारुता पर विस्मय विमुग्ध भक्त के लिए प्रतिक्षण उनका सान्निध्य ही काम्य है।

भक्तिकाल मे "कृष्ण" और "राधा" विषयक भक्ति, पूर्ण प्रौढता को पहुच गई थी। रीतिकाल मे एक ओर कवियो न संस्कृत काव्यशास्त्र की एक संक्षिप्त हिन्दी रूपरेखा प्रस्तुत की, या यागो का विवेचन किया। दूसरी ओर इन कवियो के द्वारा शृगार रस के अन्तगत शृगारी ग्रन्थ भी लिखे गए। इस काल के बहु लाश कवि शृगारी ही हैं। इन्होने 'राधा कन्हाई सुमिरन" का बहाना किया है। इस काल के हिन्दू शृगारी कवियो की भाति मुस्लिम शृगारी कवियो ने भी 'राधा कृष्ण" के माध्यम मे शृगार रस की ही कविताएँ लिखी हैं।

कृष्ण लीलाएँ

लीला का सामान्य अथलेख अर्थात् कृष्ण (प्रभु) का खेल है। यह खेल ही सृष्टि माना गया है। सृष्टि का अथ रचना है। कृष्ण लीला और आनन्दवाद दोनो एक दूसरे पर आश्रित हैं, जिसने लीला को पहचान लिया है, उसने आनन्द धाम को पहुच हरि लीला के दशन कर लिए। वल्लभाचायजी न इस लीला म भाग लेने को मोक्ष से भी बढकर माना है। अनासक्त पुरुष अपनी शक्ति प्रकृति के साथ क्रीडा कर रहा है। यह पुरुष ही कृष्ण है और प्रवत्ति राधा है।[1] पुष्टिमार्गीय भक्ति का मुख्य लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति नही, प्रभु की प्रेम प्राप्ति है।[2] यह प्रेम भगवत्कृपा से साध्य है। वष्णव कवियो ने इस प्रेम की प्रशसा की है। इसके द्वारा कृष्ण से भेंट होती है बिना प्रेम के हरि लीला के दशन असम्भव है। वास्तव म विश्व की रचना प्रभु की शाश्वत लीला है। प्रभुलीला करना चाहता है।

इसलिए विश्व अस्तित्व मे आता है। वेद और पुराण साहित्य म भी हरि लीला के दशन होते है। श्रीमद्भागवत् के दशम् एकादश स्कधो म इस लीला का विस्तारपूवक वणन हुआ है। अष्टछाप के कवियो ने भी लीला गान को विशेष महत्व दिया। हरि लीला का स्मरण करने मे मुसलमान कवि भी पीछे नही रहे। मुसलमान कृष्ण भक्त कवियो ने कृष्ण लीला का वणन अपने काव्य म विविध आयामो मे प्रस्तुत किया है।

मलिक मुहम्मद जायसी हिन्दी के मुसलमान कवियो मे सवश्रेष्ठ हैं। वे भक्तिकालीन चार प्रमुख कवियो मे एक तथा प्रेम काव्य परम्परा के सवश्रेष्ठ कवि हैं। उनके लिखे हुए ग्रन्थो की सख्या लगभग दो दजन कही जाती है। अब तक उनके [illegible] ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। पद्मावत', 'अखरावट', आखिरी कलम', 'कहारनामा अथवा महरी बाईसी' 'मसलनामा, चित्ररेखा' और 'कन्हावत'

---

1 आचाय वल्लभ ब्रह्मसूत्र 4 4 14 के भाष्य म पृष्ठ 1413 1414 पर लीला को कवल्य और परम मुक्ति (मुक्ति से बढकर) बताते हुए लिखते हैं— लीला विशिष्टमन शुद्ध परब्रह्म न कदाचित् तद्धित इत्यथ। तेन च (लीलाया) नित्यत्वम।

2. ब्रह्मसूत्र' अध्याय 3 पाद 3 सूत्र 38 का अनुभाष्य पृष्ठ 1100

इनम पद्मावत और कन्हावत उनके दो श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य है। पद्मावत अपनी गूढता, गम्भीरता, लोक और अध्यात्म पक्ष, प्रेम पीर आदि के 'कारण हिन्दी का' एक श्रेष्ठ महाकाव्य माना जाता है । शोध के आलोक मे सद्य प्राप्त कन्हावत महा काव्य भी पद्मावत् के इन वैशिष्ट्यो से सम्वर्धित है । कृष्ण कथा भारतीय जीवन की अत्यन्त प्रिय और ख्यात कथा रही है । जायसी ने कन्हावत मे कृष्ण के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक की विविध लीलाओ का महाकाव्यात्मक आख्यान किया है । कृष्ण कथा पुराण और साहित्य के साथ ही लोकजीवन मे भी समाहृत रही है । वस्तुत कन्हावत की कथा वस्तु का मूल स्रोत भारतीय पुराण काव्य और लोक समाहृत कृष्ण सम्बन्धी कथाएँ ही हैं । कवि ने कृष्ण की विविध लीलाओं का बडा ही जीवन्त चित्रण किया है । कुब्जा का पद् ऋतु वणन बडा वैदग्ध पूण बन पडा है । कवि ने राधा और गोपियो के वियोग का बारह मासा रूप मे बडा ही हृदय विदारक वर्णन किया है । नागमती के विरह की ही भाँति राधा और गोपियों का यह विरह वणन भी हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य निधि है । पुराण काव्य और लोकजीवन की कृष्ण सम्बन्धी इस कथा मे जायसी की कल्पना का सम्प्रसार और सम्भावना का प्रस्तार दर्शनीय है । इस कन्हावत का आन्तरिक स्पन्दन और मूल चेतना अलौकिक है और बाहरी ढाचा तथा रूपरंग अभिजात्य साहित्यिक इति का है । इसमे ब्रज सस्कृति अपने भव्य और प्राञ्जल्य रूप मे जीवित हो उठी है। इसमे कृष्ण के विराट जीवन का एक सर्वागीण चित्र उरेहा गया है । कन्हावत का रूप-सौन्दय वणन पद्मावत की ही भाँति नख शिख वणन के रूप मे मिलता है । कवि न राधा के रूप वणन के लिये सादृश्य मूलक अलकारो की योजना की है इसमे अनेक प्रकार के परम्परा प्रचलित लोकदृष्ट तथा नवीन मौलिक उपमानो की उद्भावनाओ का काव्य सौन्दय दृष्टव्य है । कवि न पद्मावत के रूप सौन्दय वणन की तरह ही राधा के रूप सौन्दय के, सृष्टि व्यापी प्रभाव की लोकोत्तर कल्पना की है । राधा की रीति से सारे ससार मे लावण्य और माधुय भर जाता है ।

जायसी ने कृष्ण को अवतारी माना है, उनके कृष्ण विष्णु के ही अवतार हैं । उन्होने राक्षसो के वध करन धरती का भार उतारने और कम का सन्देश देने के लिए ही अवतार लिया है । पूतना वध, कागासुर वध गोवरधन धारण, नेयनाग मदन मल्लवध, कस वध, प्रभृति लीलाओं का कवि ने बडे रसमय ढग से वणन किया है । कन्हावत म जायसी न कथा कइहो कान सजोगू' के द्वारा उसे कह कथा भी कहा है । इसमे कृष्ण जीवन का पूण चित्र उपस्थित किया है । उसमे घटनाएँ सुश्रृंखल हैं । जायसी न कन्हावत म कृष्ण जीवन के मार्मिक स्थलों का चयन और उनका चित्रण किया है । कृष्ण की बाल लीलाएँ असुरों का वध, कस वध, गोपियो के प्रति प्रेम, चन्द्रावली राधा के प्रेम प्रसग, कुब्जा प्रसग और उसकी सयागोवस्था, गोपियों का विरह आदि प्रसग बडे ही मार्मिक बन पडे हैं । इन प्रसगों पर भागवद् कथा का पूण प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । भागवद् की इन कथाओं

को जायसी ने अपने प्रेम रस मे डुबोकर और अधिक रसमय, मधुर और आकर्षक बना दिया है। यहाँ पुनरावृत्ति भय से उक्त कथाओ की व्याख्या नही की जा रही है। द्वितीय अध्याय मे जायसी और उनके 'कन्हावत' महाकाव्य का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया जा चुका है।

भक्त कवियित्री 'ताज' ने कृष्ण को ही अपना सर्वस्व माना है। मानव भावनाओ के आरोपण मे माधुर्य भाव की प्रधानता है। विरह की अनुभूतियो में मिलन की छाया देखकर सन्ताप कर लेने की शक्ति उनमे नही है। उनके नेत्रो को तो साकार दर्शन मे ही विश्वास है कृष्ण के प्रति उनकी भावनाओ मे अनन्यता है—

"भानु के प्रकास बिना कंज मुख ढांपि रहे,
केतकी के वास बिना भौंर दुख सीर है।

× × ×

कहू कवि ताज मिल मानिये हमारी किधौं,
नैनन मे देखू जब नैनन मे धीर है।"

ताज' की भक्ति भावना का आधार कृष्ण का माधुर्यमय विराट रूप है। उपास्य के प्रति उनकी भावना मे विश्वास जन्य समर्पण है। कृष्ण के मधुर रूप में भी नैसर्गिक छाप है लौकिक व्यक्ति के रूप मे भी उनके कृष्ण उनसे उच्चतर हैं।

प्रेमपथ की गहनता और गम्भीरता से उनका प्रौढ़ हृदय परिचित है। कृष्ण के रूप सौन्दर्य के आकर्षण मे बंधकर उनकी भावनाओ का ज्वार समाप्त नहीं होता, उसे जीवन का आधार मानकर उसका मूल्य आंकने का प्रयत्न करता है।

"ताज" ने अपने कृष्ण मे महाभारत के राजनीतिज्ञ, गीता के उपदेशक तथा ब्रज के कन्हैया के रूपो का समन्वय किया है।

महाकवि 'जान" ने अपने काव्य — 'विरह सत" मे कृष्ण वियोग मे व्याकुल राधा और गोपियो का रसमय चित्रण प्रस्तुत किया है।

इसी प्रकार विरहसार' मे भी विरहिणी राधा की विभिन्न विरह दशाओ को उरेहा एवम् अत्यन्त मार्मिक तथा हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत किये हैं।

'बारहमासा' नामक ग्रंथ मे भी इन्होने कृष्ण, उद्धव और गोपियो के माध्यम से 'बारहमासा" का वर्णन किया है। कवि जान' ने राधा गोपी कृष्ण के प्रेम और उनकी अभिव्यक्ति को प्रेम क्रीडाओं को लौकिक धरातल पर चित्रित किया है। इस विषय मे कहा गया है कि—आगे के सुकवि रीझि हैं तो तो कविताई, न तु राधिका कन्हाई सुमिरन का बहानो है' वाली लौकिक पद्धति पर है।

बारहमासा की इन पंक्तियो मे विरह-वेदना स्वाभाविक बन पडी है

"सावन मास चले मन भावन महा अचैनी बाढी तन मे।
होकर यौवन मनमथ धामी आप सिधार हैं मधुवन मे॥
पिक-चातिग केको जारत हैं लोन लगावत घन धावन मे।
"जान" कहै जिमि हरि बिनु बीतत गोपीये जानत हैं मन मे॥"

रसखान ने कृष्ण की अनेक लीलाओ के दर्शन अपने काव्य मे कराये हैं। ये लीलाएँ साधारण मानव की शृंगार क्रीडा के समान प्रतीत होती है। कहीं कहीं तो आध्यात्मिक लीला भी मिल जाती है।

बाल लीला

रसखान ने कृष्ण के बाल लीला सम्बन्धी कुछ ही पदो की रचना की किन्तु उनके ये पद भक्तजनो के कंठहार बने हुए है – 'काग के भाग बडे सजनी हरि हाथ सों ले गयो माखन रोटी।" यद्यपि रसखान को कृष्ण के मानवीय स्वरूप ने अधिक आकर्षित किया, किन्तु यहाँ वे ब्रह्मत्व शब्द को न भुला सके। यहाँ हरि शब्द का प्रयोग साधक है।

रसखान ने कृष्ण को एक शिशु रूप मे दिखाया है। प्रस्तुत पद मे नारी मनोभावनापूर्ण परिचय प्राप्त होता है –

"आजु गई हुनि भोर ही हो रसखानि रई बहि नद के भौनहिं।
बाको जियो जुग लाख करोर, जसुमति को सुख जात कह्यो नहीं॥
तेल लगाई लगाइ के अजन, भौहें बनाई बनाई डिठौनहिं।
डालि हमेलनि हार निहारत वारत ज्यो चुचकारत छौनहिं॥"[1]

दूसरे पद में रसखान ने कृष्ण को खेलते हुए सुन्दर बालक के रूप मे चित्रित किया है

"धूरि भरे अति सोभित स्यामजू तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरे अगना पग पैंजनी बाजति पीरी कछोटी॥
वा छवि को रसखानि बिलोकत वारत काम कलानिधि कोटी।
काग के भाग बडे सजनी हरि हाथ सो ले गयो माखन रोटी॥"[2]

रसखान के बाललीला सम्बन्धी पद बहुत ही सुन्दर है। बाल स्वभाव का चित्रण हृदयहारी है। प्राय बच्चो के हाथ से कुछ छीनकर ले जाना 'काग' की आदत होती है। इस सत्य को काव्य भाषा मे ढालकर रसखान ने मोहक एवम् हृदयस्पर्शी चित्र खींचा है।

1 सुजान रसखान पद 20
2 सुजान रसखान पद 20

गोचरण लीला

कृष्ण बडे हुए। ग्वालो के साथ गायें चराने वन मे जाने लगे। कृष्ण की हर अदा पर दिवानी गोपियाँ गो चारण से प्रभावित फिर क्यो न हो? रसखान ने गा चारण लीला को बहुत ही सुदर ढग से दर्शाया है। कृष्ण धीर समीर कालिंदी के तीर खडे हुए गऊएँ चरा रहे हैं। गायें घरने के बहाने गापियो से आकर अड जाते हैं।

"गाई दुहाई न या पे कहूँ न कहूँ यह मरी गरी निकस्यौ है।
धीर समीर कालिंदी क तीर खरयो रहे आजु ही डीठि परयो है॥
जा रसखानि बिलोकत हा सहसा ढरि राग सा आग ढरया है।
गाइन घेरत हेरत सो पट फेरत टेरत आनि अरयो है॥'[1]

रसखान कृष्ण की गा चारण लीला को मनोहर चित्रात्मक ढ ग स प्रस्तुत करन मे सफल हुए है। ऐसा लगता है अन्त पटल पर एक के बाद एक दृश्य का चित्र अकीत होता है।

चीरहरण लीला

रसखान ने चीरहरण लीला के सम्बन्ध मे केवल एक ही पद लिखा है। चीरहरण लीला आध्यात्म पक्ष मे आत्मा का मग्न होकर माया के आवरणों सांसारिक सस्कारा से पृथक होकर प्रभु से मिलता है।[2] जमना मे नहाती हुई गोपियो की दशा का वणन करते हुए रसखान कहते है—

"एक समे जमुना जल मे सब मज्जन हत धसी बज गोरी।
त्यो रसखानि गयौ मन मोहन लेकर चीर कदम्ब की छोरी॥
न्हाइ जबै निकसी बनिता चहूँ ओ चितै चितरोप करोरी।
हार हियें भरि भावन सो पट दीने लला वचनामृत बोरी।'[3]

रसखान के इस वणन मे बहुत नाटकीयता का साधारण शब्दा म सुन्दर चित्रात्मक वणन किया है।

कुज लीला

वृन्दावन की कुजो में गापियो का कृष्ण के साथ विहार आज भी जगप्रसिद्ध है। रसखान न इसका चित्रण बडी हो रमणीयता के साथ किया है—

1 सुजान रसखान पाठ 21
2 भारतीय साधना और साहित्य प 279
3 सुजान रसखान प 27

निरग मर्यो मुसकात लला सकस्यो कल कुञ्जन ते सुखदाई ।

× × × ×

टूटि गयो घर को सब बंधन छूटि गो आरज लाज बढाई ।।"[1]

कृष्ण कुजो से मुसकाते हुए निकलते हैं— उनका यह रूप गोपियो के दिल म इस प्रकार बस गया है कि निकाले से नही निकलता ।

रासलीला

श्रीकृष्ण की लीलाओ मे रास का बहुत महत्व है । रासलीला मानसिक भावना के साथ साथ लौकिक धरातल पर अनुकरणात्मक होकर दृश्य लीला का रूप धारण कर लेती है । अत इसके प्रभाव की परिधि अन्य लीलाओ की अपेक्षा अधिक व्यापक हो जाती है ।[2] रसोवै स[3] अर्थात भगवान स्वय रास रूप है आनन्द रूप है । रस आन द तीन प्रकार का है, एक लौकिक, विषयानन्द दूसरा अलौकिक ब्रह्मानन्द, तीसरा काव्यानन्द । श्रीकृष्ण के ससग की लीलाओ मे जो रस समूह मिले वह 'रास' है और यह रस समूह गोपी कृष्ण की शरद रात्री की लीलाओ म अपने पूण रूप मे बताया गया है ।[4]

रासलीला के स्वरूप का विचार प्राचीन काल से ही होता आया है । लीला के समस्त रूप भगवान का ही प्रतिपादन करते हैं । गोपियाँ वेद की ऋचाएँ है और भगवान का सम्बन्ध भी नित्य है । भागवत् पुराण म रासलीला का विस्तार से विवेचन मिलता है ।

अष्टछाप के कवियो मे सूरदास और नन्ददास ने रासलीला का वणन भी विस्तार के साथ किया है । वास्तव मे गोपी रूपी कृष्ण भक्तो का रास मे कृष्ण से मिलन वल्लभ सम्प्रदायी भक्ति का फलात्मक रूप है ।[5]

रसखान ने रासलीला का वणन कई पदो मे किया है । इनका रास वणन परम्परागत रास वणन से भिन्न है । राधा कृष्ण की पूरक शक्ति मानी गई है, और रास मे सवथा कृष्ण के साथ ही रहती है किन्तु रसखान ने राधा का चित्रण इस रूप मे नही किया ।

रसखान की गोपियाँ मुरली की ध्वनि सुनकर बेचैन हो जाती हैं, और यह सोचती है कि कृष्ण मुरली के माध्यम से उन्हे बुला रहे हैं—

---

1 सुजान रसखान प 30
2 राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य पृष्ठ 264 ।
3 उपनिषद वाक्यकोश भाग 2 पृष्ठ 547 ।
4 डॉ माजदा असद, रसखान काव्य तथा भक्ति भावना' पृ 63 ।
5 डॉ माजदा असद रसखान काव्य तथा भक्ति भावना पृ 63 ।

"अधर लगाइ रस प्याइ बासुरी बजाइ,
मेरो नाम गाइ हाइ जादू कियो मन म ।

× ×

रस रास सरस रगीलो रसखानि आनि,
जानि और जुगुति विलास कियो जन मे ।।[1]

रास की सूचना मिलते ही गोपिया विवश हो जाती ह। भाग की कोई बाधा च ह रास म सम्मिलित होने से नही रोक सकती । शीत की चिंता न करते हुए वे चल देती ह—

'कीजै कहा जु प लाग चवाव सदा करिबो करि हैं ब्रजमारो ।

× × ×

आवत है फिरि आज बयो वह राति के रास की नायन हारो ।[2]

कृष्ण ने बशी वट के तट पर रास रचाया । गोपियो ने कुल मर्यादा का प्रतिष्ठा बनाये रखने का प्रण किया किन्तु वे राम रचाये जाने की सूचना पाकर अपने प्रण से विचलित हो गई—

'आज भटू मुरली वट के तट मद म सायर रास रच्यो री ।
ननिनि सैननि बैननि सो नहिं कोऊ मनोहर भाव बच्यो री ।।
जद्यपि राखन कों कुलकानि सबै बृजबालन प्रान प्रच्यो री ।
तद्यापि वा रसखानि के हाथ बिकानि को अत लच्यो प सच्यो री ।।[3]

रसखान की गोपियो म कुल मर्यादा का ध्यान बना रहता है किन्तु फिर भी वे रास स्थल पर पहुच जाती है। रसखान के कृष्ण सूर के कृष्ण की भाँति गोपियो को मर्यादा का पाठ नही पढ़ात । भारतीय दशन विनय का निरूपण भी नही मिलता वरन कृष्ण रास की केवल विविध क्रीडाओं के दशन होते हैं।

रसखान की कल्पना अत्यन्त सम्पन्न एव सम्पन्न है। अत उनकी अभि व्यक्ति मे हमे सौन्दय विधान की प्रचुरता चित्रो की अनिपय अनुरजकता तथा रूपाकन की सहजता मिलती है। रसखान की गोपियो म कृष्ण के यौवन को देखकर शृ गार भावनाएँ जागृत होती ह । रसखान न कृष्ण के रूप म प्रभावित होकर गोपियो को वन वन म घुमाया है—

---

1 डॉ माजदा असद, रसखान काव्य तथा भक्ति भावना' पृ 64।
2 डॉ माजदा असद रसखान काव्य तथा भक्ति भावना पृ 65।
3 सुजान रसखान प 33

'बाको बड़ी अखियाँ बडरोर कपोलनि का कल बानो।
सुदरहास सुधानिधि सो मुख मूरति रग सुधारस-सानी।।
ऐसी नवेली ने देखे यहूँ वृजराज लला अति सुखदानी।
डोलति हैं बन वीथिन म रसखानि मनोहर रूप लुभानी।।[1]

रूप के साथ रसखान ने 'मोहन छवि रसखान लखि, अब दृग अपने नाहिं' मे मोहन की छवि को भी निरूपित किया है। रसखान ने नख शिख निरूपण की परिपाटी को लेकर नायिका चित्रण नही किया।

राधा का वर्णन दो स्थलो पर ही मिलता है — एक युगल जोडी के रूप म और दूसरा राधा की रूप की छटा के अतगत। राधा सुन्दरता की पराकाष्ठा है कृष्ण राधा छवि की निस्सीमता है, तभी तो रसखानि राधिका रानी के रग मे रग जाने को धन्य समझते हैं।

"ऐसे भये तो कहा रसखानि रसै रसना जो मुक्ति तरंगहि।
दे चित ताके न रग रच्चा जु रहो रचि राधिका रानी के रगहि।"[2]

राधा कृष्ण की उल्लासमयी क्रीडाएँ जिस नैसर्गिक परिवेश मे सम्पन्न हुई है वह अत्यन्त मनोरम ही लगता है। प्रकृति स्वय अचल पसार कर दोनो को अपनी स्नेह छाया म रख लेने को उत्सुक है। ब्रज मण्डल की शोभा वृद्धि करने वाली मुख्य वस्तुएँ य ह—यमुना गोवधन, करील कुञ्ज, पुष्पलताएँ विहगावलि, वन उपवन, गोचारण, भव्य भवन, स्वच्छ वीथियाँ, हाट इत्यादि।

मुरली

कृष्ण भक्त कवियो ने मुरली के महत्व तथा उसकी आध्यात्मिक विशेषता को स्वीकार किया है। श्रीकृष्ण की चर्चा मुरली के बिना अधूरी प्रतीत होती है। मुरली को शब्द ब्रह्म का नाम दिया गया है।[3] ब्रह्म के समान उसकी वाणी भी सवव्यापक है। अत वशी ध्वनि परम ब्रह्म का शब्द रूप है। वेणु मे तीन अक्षर हैं—व+इ+णु। 'व' ब्रह्म सुख का द्योतक है, 'इ' सासरिक सुख को प्रकट करती है। इन दोनो को जो 'णु' अर्थात् पान करने वाली है, वह है — वेणु'।[4] आचाय वल्लभ के अनुसार—"जब किसी मनुष्य को प्रभु का आग्रह प्राप्त हो जाता है, तब उसके सामने वशी बजने लगती है।[5]

---

1 सुजान रसखान पृ 33 34।
2 रसखान और घनानद पृ 28। छद सख्या 105।
3 "रास पचाध्यायी प्रथम अध्याय पृष्ठ 5।
4 डॉ माजदा असद रसखान काव्य तथा भक्ति भावना पृष्ठ 68।
5 श्रीमद्भागवत स्कन्ध 10 पूर्वार्द्ध श्लोक की सुबोधिनी टीका।

कृष्ण के पास एक ऐसी वस्तु है, जिसका परिचय अब तक किसी भारतीय देवता को प्राप्त न था। वह वस्तु है—'वंशी'। ब्रज की ललनाओं द्वारा बार-बार यह वंशी बैरिनी कही गयी है, क्योंकि इसके ध्वनि श्रवण मात्र से मन उद्विग्न हो जाता है—पारिवारिक मर्यादा के बंधन टूट जाते हैं, और सर्वत्र अस्त व्यस्तता व्याप्त हो जाती है—

"मोहिंहो तानि गोधन गावत बन बजाइ रिझाइ गयो है।
कोउ न काहू की कानि करै सिगरो बृज बीर बिकाइ गयो है॥[1]

× × ×

मुरली कर मे अधरा मुसकानि तरंग महाछवि छाजति है।
वह बाँसुरी की धुनि कान पर कुलकानि हियो तजि भाजति है॥[2]

गोप बधुओं को बेसुध करने वाली इस वंशी के प्रति खीझ भी स्वाभाविक ही है—

"कोऊ न मोहन के करतें यह बैरिनि बाँसुरिया गहि जारै।" [3]

रसखानि की मान्यता में बाँसुरी की ध्वनि से आगे बढ़ी चढ़ी अधरों पर थिरकती मुसकान है, क्योंकि वंशी की तान तो कानों में उंगली देने से नहीं सुनी जायेगी, किंतु उस मुसकान को कैसे सहा जाय, जिसको सुनकर हृदय पर अधिकार ही नहीं रह जाता—

कानन दे अगुरी रहिबो जबही मुरली धुनि मंद बजैहै
मोहनी तानन सो रसखानि अटा चढ़ि गोधन गैहै तो गैहै॥
टेरि कहौ सिगरे ब्रजलोगनि काल्हि कोऊ कितनो समुझैहौ।
माइ री वा मुख की मुस्कानि सम्हारि न जैहै न जैहै न जैहै॥[4]

रसखान ने अपने काव्य को मुरली का विस्तार से वर्णन किया है। उनके मुरली वादन ने केवल गोपियों को ही विचलित किया है, अन्य सृष्टि को नहीं। उनका मुरली वर्णन भी परम्परा की परिधि से कुछ भिन्न ही प्रतीत होता है।

मदनायक

कृष्ण की अनुपम छवि को हृदय में संरक्षित कर 'मदनायक' का उनकी क्रीडाओं से आनन्द विभोर होने का सुअवसर भी प्राप्त होता है। उन्होंने मन मोहन का गोहन, प्रोषित पतिका नायिका के प्रसंग में 'स्याम' से अवधि निश्चित करके भी न आना। इस प्रकार के कई प्रसंगों को कवि ने अपने काव्य का विषय बनाया है।

---

1 रसखान और घनानंद पृष्ठ 21। संख्या 57।
2 रसखान और घनानन्द पृष्ठ-16। संख्या 25।
3 रसखान और घनानन्द पृष्ठ 17। संख्या 26।
4 रसखान और घनानन्द पृष्ठ 21। संख्या 56।

'मदनायक', ने भी प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण की रूप माधुरी के वर्णन में ही रुचि ली है। अपने काव्य में उन्होंने शृगारी कृष्ण' के चरित को उरेहा है।

'मदनायक' की रचनाओं में मिलन तथा सहकारी भावों के चित्र प्रचुर मात्रा में आते हैं। समागम के चित्रण में भी 'मदनायक' ने अश्लीलता नहीं आने दी। 'मदनायक' के विप्रलंभ चित्र अधिकांशतः गम्भीर और प्रभावोत्पादक है।

जमाल

जमाल ने भी राधा कृष्ण की प्रेमलीला का ही वर्णन अपने काव्य में किया है। कभी वे नायिका भेद मार्ग पर चलते प्रतीत होते हैं तो कहीं वे संसार की अनियमितता को देखकर योगी होने की चर्चा करते हैं और कहीं दधि माखन के लिये गोपियों का मार्ग अवरुद्ध करते हैं।

"पैरत निन मुहि कुज में माई नन्द किसोर।
दधि माखन को खानहित, वह जमाल चितचोर॥'

कहीं कवि जमाल के कृष्ण आखो को रंग-गुलाल से बन्द करते हैं व मनचाही प्रेमिका को स्पर्श करने में प्रयत्नरत है—

"इक की आखिन डार दी, कान्हा रंग गुलाल।
इक का कर धरि कुच मल्या, कारन कवन जमाल॥"

इनके काव्य में कृष्ण विषयक दोहों का उल्लेख नायिका भेद रूप में ही सामने आया है। वैसे स्तुति एवं आराधना भी की है। प्रेम निरूपण में निखार एवं गहराई है।

रहीम

रहीम मुसलमान होते हुए भी कृष्ण भक्त थे। इनको ईश्वर पर पूर्ण विश्वास था। कृष्ण के प्रति इनका असीम अनुराग है। इन्होंने अपने मन को चकोर पक्षी की भांति चन्द्रमा रूपी कृष्ण में लीन कर दिया।

रहीम ने भक्त बनकर ही कृष्ण को चाहा, कृष्ण की छवि में ही अपने को लीन रखा। कवि ने कृष्ण को विभिन्न उपमानों से गृहीत किया तथा उनकी ही भक्ति में लीन रहे।

"छवि आवन मोहन लाल की।
काछिनि काछे कलित मुरलि कर, पीत पिछौरी सालकी॥
बक तिलक केसर को कीनें, दुति मानो विधु बालकी।
बिसरत नाहि सखी, मो मनतें चितवन नयन बिसाल की॥
नीको हसनि अधर सुधर निको, छवि छीनी सुमन गुलाल की।
जलसों डारि दियो पुरइन पर, डोलनि मुक्ता माल की॥

आप मोलबिन मोलनि डोलनि, बोलनि मदन गोपाल की ।
यह सुरूप निरखे सोह जाने, या 'रहीम' के हास की ॥"

रहीम न मुसलमान होते हुए भी कृष्ण और राम की भक्ति को स्वीकारा था। इनको ईश्वर पर पूर्ण विश्वास था —

"त रहीम मन आपनो कीनो चारु चकोर,
निसिवासर लाग्यो रहे कृष्ण चन्द्र की ओर ।
रहिमन को कोउ का करी ज्वारी चोर लवार
जो पति राखनहार है, माखन चाखन हार ।
मागे मुकुटि न को गयो के हित त्यागियो साथ
मागन आगे सुख लो रहीम रघुनाथ ॥'

मुबारक के मिलन चित्र सभी रस पूर्ण व स्वाभाविक और हृदयग्राही हैं। कवि का निम्न कवित्त मिलन के कोमल भावो का एक सजीव चित्र प्रस्तुत करता है ।

'खेलो कहा अलबेली इतै उत तेरे समय की सहेली मिलाइ हौं ।
गाइहो मीन बनाइहो स्वाग मुबारक आपने सग सुवाइहौं ॥
पौढी सो प्राण की प्यारी चली पिय देखि कहै चल म फिर आइहो ।
जानि सयानप की बतिया यह कोही लगै डर आगे न जाइहौं ॥'

इस प्रसग मे अभी वास्तविक मिलन नही हुआ, अभी तो प्रिय की झलक मात्र ही मिल पाई है ।

कवि ने नायक और नायिका की रस चेष्टाओ के जो चित्र अकित किये हैं, उनमे मानसिक और शारीरिक सुख के गहरे छीटे हैं । मन और शरीर इस उत्सव मे साथ साथ सम्मिलित हैं ।

मुबारक के विरह सम्बन्धी कवित्त प्रेम की तन्मयता और वेदना की तीव्रता लिये हुए हैं । उनमे चमत्कार और कल्पना की ऊँची उडान होने पर भी सुन्दर भावो का लोप नही हुआ है ।

कृष्ण ने गोपियो के साथ छल किया । वे कुब्जा से प्रेम करने लगे हैं । कृष्ण उन्ह अगर इसी प्रकार 'कलपाते' रहगे तो मिलन तो असम्भव ही है—

छलकरि छल तजी गोकुल की गल लगी ।

× × ×

जु और कलपाइ हैं सो वस कलपाई हैं ॥'

और गोपियाँ—"घनश्याम सुखी रहो आनद सों तुम नीके रहो उनही के रहों म ही सन्तोष कर लेती है ।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि अपने काव्य मे मुबारक ने कृष्ण को विभिन्न आयामो मे प्रस्तुत किया है।

बाल लीला

शेख का उल्लेख प्राय समस्त खोज ग्रन्थो तथा इतिहासो म मिलता है। आलम शेख रचित आलम केलि' सग्रह शृगारपरक उत्कृष्ट ग्रन्थ रचना है। रीतिकालिक शृगारिक का य परम्परा के अनुसार नायिका भेदो तथा प्रेम लीलाओ का वणन है। शेख ने अपनी पदावली म कृष्ण के बाल-सुलभ जीवन का सुदर व सजीव चित्रण किया है।

बालक की चचलता एवम् माँ यशोदा के वात्सल्य को शब्द के माध्यम से स्वाभाविक रूप मे चित्रित कर प्रस्तुत किया गया है—

"बीस बिधि आऊँ दिन बारीये न पाऊँ और।
याही काज वाही घर बासनि को बारी है॥
नकु फिर अइहै कइहै दे री दे जसोदा माहि।
मो पै हरि मागे बसी और कहूँ डारी है॥
सेख कहै तुम सिखवो न कछु राम याहि।
मारी गरिहाइनु की सीख लेत गारी है॥
सग लाइ मइया नकु न्यारो न कन्हैया कीजे।
बलन बलैया लेके मया बलिहारी है॥"

गोपी विरह

शेख के जिन पदो मे गोपियो का विरह व्यक्त है, उनमे भी भावनाओ की प्रधानता है। भावनाओ का महत्व प्रकृति के उपकरणों द्वारा उद्दीप्त होकर व्यक्त हुआ है—'कान्ह' के वियोग मे नदी नाले सब आसुओं स रो रोकर भर गए हं—

'सेख कहै प्यारी तू जो जबही ते बन गई,
तबही ते कान्ह असवनो सर कर हैं।
याते जनियत है जू केऊ नदी नारे तीर
कान्ह बर विकल वियोग रोय भरे हैं।"[1]

गोपाल के 'मधुवन' से चले जाने के पश्चात् उनको मधुर स्मृतियों का केन्द्र कदम्ब वक्ष, कालिन्दी तट आदि ह जो उनके विरह की ज्वाला को द्विगुणित कर देते हैं—

---

1 आलम-केलि, छन्द सख्या–45

'जबतें गोपाल मधुबन को सिधारे भाई,
मधुबन भयो मधु दानव विषम सा।

× × ×

देह कर मरण करेजो लीन्हो चाहत है,
भाग भई कोयल समाया कर हम नों॥'

कृष्ण इनके काव्य के नायक हैं उनका निरूपण दो रूपों मे हुआ है। एक साधारण पुरुष प्रतीक व दूसरा कृष्णावतार", ब्रजनायक। साधारण मानव कृष्ण की क्रियाओं म स्थूल क्रियाओं की प्रधानता है परन्तु अवतारी कृष्ण के प्रति भावनात्मक स्निग्धता, सुरम्यता, लक्षित है जो दोना रूपो म भिन्नता प्रदान करता है।

मानिनि प्रसग

"मानिनि प्रसग" को शेख ने अपने काव्य मे भी लिखा है। मानिनि का मान तोडने के लिए उन्होने नायक के विरह की ज्वाला, मूर्च्छा आसुओ की बाढ का वणन किया है – कही उनके श्याम के आसुओ से सर सरिताएँ भर जाती हैं तो कही विरह ज्वाला से विरह भी जलता प्रतीत होता है –

'जोगी कैसे फेरनि वियोगी आवै बार बार
जोगी ह्वै है तो लागि वियोगी बिललात है।
जा छिन ते निरखि किसोरी हरि लियो हेरि,
जा छिन ते खरोई घेराई पियरातु है॥
शेख प्यारे अति ही बिहाल हाई हाय हाय
पल पल अग की मरोर मुस्कातु है।
आनि चाल होति तिहि तन प्यारी चलि चाहि
विरही जरनि ते विरह जरया जातु है॥'

विरही की मृत्यु के साथ मान और समाप्ति की उद्‌भावना का जो चित्र है, वह उनकी प्रौढ अभि यजना शक्ति का परिचायक है।

उद्धव प्रसग

शेख ने गोपियो की आशा मे उद्धव के आगमन से जो गोपियो की दशा हुई गोपियो द्वारा उद्धव पर किय गये व्यग्य का सुदर चित्रण किया है –

कृष्ण के जीवन को सवस्व मान लेने वाली गोपिकाएँ शेख की साधारण नारियाँ (गोपियाँ) है। उद्धव के योग का निर्वाह अपन जीवन मे करन मे अपने आपको असमथ पाती हैं। वह अपनी सहज स्वाभाविकता उत्सुकता को प्रश्न बनाकर उद्धव को कहती है –

"चाहती सिंगार जिन्ह सिमी तो सगाई कहा,
औधि की है, आस ता आयरी कसे गहिये ?
विरह अगाध तहा सुन्न की समाधि कौन
जोग कटि भावे जो वियोग दाह दहिये ।
सेख वहै मैन मुद्रा मोहन जू लाये बन,
मुद्रा लाओ कानन सुनेई सूल सहिये ॥'

राधा और कृष्ण को कवि अब्दुल्लाह ने भी नायक नायिका के रूप में ही चित्रित किया है। ये मूलत श्रृंगारी कवि थे। नायिका भेद पर भी इन्होंने अपनी कलम चलाई है। नायिका के यौवन व मेघ पर भी व अपनी कलम चलाने से नही चूके। राधा कृष्ण के समास वणन का एक चित्र उदाहरण स्वरूप यहाँ दृष्टव्य है—

"राजे एक सेज पर राधिका कुँवर हरि,
दक्षन सुघर वर दोउ समरस है।
काम की कलोलन सो मीठे मीठे बातन मा,
वाके चरन लोलन सो पीवें रूप रस हैं ॥"
"सावरे सहाई मीत माइके प्रतीति प्रीत,
सुरति समर जोति आनद बरस है।
केलि के चरित्र सार करत न दोऊ हार,
प्रेम मतवारे एक एक तें सरस हैं।"[1]

विरह वर्णन

पमी ने भी अपन काव्य म गोपियो के विरह वणन का अति सूक्ष्मता स उकेरा है। गोपिया रात दिन कृष्ण की प्रतिक्षा मे खडी हैं, उनके बचैन मन मे श्याम की प्रीति निरन्तर गहरी होती जा रही है, तो वही गोपियो को कृष्ण के वियोग मे कही भी सुख नही है। व पथिका को रोक रोक कर विरह आधिक्य और अत्याचार का उलाहना कृष्ण के पास भिजवाती हैं।

"हरि बिन कबहू न चन परी।
कहियो पथिक सदेश अवधि कर विरहा अधिक करी ॥
× × ×
पेमी बिकल कुसल नाहि दोखन, गिन गिन अवध टरी।
आवहु वेग रावरे ना तरु अबके मुनी मरी ॥"[2]

1 मुसलमानों की हिन्दी सेवा पृष्ठ 171
2. पेमी प्रेमी प्रकाश पृष्ठ 211

कवि ने अनेक प्रकार से अपने काव्य म गोपियो के विरह को अभिव्यक्त किया है। कृष्ण के वियोग मे गोपियो की मन स्थिति का चित्रण करने म कवि को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

कृष्ण वियोग म गोपियो की मन स्थिति का चित्रण करने मे कवि 'पमी' को अधिक सफलता प्राप्त हुई है। कुब्जा प्रसग, उद्धव प्रसग विरह वणन आदि रूपो मे कवि ने कृष्ण के चरित्र को अभिव्यक्त किया है।

"कुब्जा प्रसग" म श्याम का कुब्जा क साथ राग रग बढाना और इसी के साथ गोपिया का विरह ऊधो का गोपिया को योग उपदेश देना, प्रत्युत्तर मे गोपियों का यह कहना— "ऊधो तुम यह मरम न जानो" और अत म यह कहकर ऊधो को विदा करना 'हम सग जोग माय कछु नाही कूप समुद समानो।" मे कवि ने गोपियो की विरह-वेदना को बडे स्वाभाविक ढग से उजागर कर अपने काव्य म चित्रित किया है।

नेवाज' ने शृगार परक रचनाएँ ही लिखी है। शृगार वणन के लिय जिस कोटि की सहृदयता और काव्य कुशलता अपेक्षित होती है यह इनके पास प्रचुर मात्रा म थी। सयोग शृगार इनका प्रिय विषय प्रतीत होता है। सभोग शृगार के लिये जिन प्रसगो को लिया है वे रति सभोग परक हैं। कृष्ण वियोग से दुखी नायिका का वणन इस प्रकार है।

"देखि हमैं सब आपस मे जो कछु मन भावै सोई कहती है।
ये घरहाई लुगाइ सबै निसि द्यास नवाज हमे देहती है॥
बातैं चाव भरी सुनिवे रिसि आवत पै चुप है रहती है।
कान्ह पियारे तिहार लिये सिगर जग को हसबो सहती है॥

नवाज न अपन काल म कृष्ण व नायिका राधा गोपिया को शृगार मूलक दृष्टि से ही देखा है।

परकीया भाव

'अष्टछाप' के कवियो न राधा को स्वकीया रूप म प्रस्तुत किया है, किन्तु रसलीन ने राधा कृष्ण को परकीया रूप म चित्रित किया है। उनकी अभिव्यक्ति बडी मार्मिक बन पडी है—

"स्यामल सारी सजी अति राधिका ठाढी भई निज पौरी सुहाये।
कान्हहूँ तब इस द्वार मैं आई खडेभये पामरी पीत रगाये॥
चतुरता रसलीन महा कहि आपने न भेद काहू जनाये।
जो रग ओर रहे पट सो चित के पट दोऊ दुहन दिखाये॥[1]

1 मुक्तफरिक कवित्त — 98 रसलीन ग्रन्थावली।

कवि शृंगार की ओर ही आकृष्ट होता है। नायक-नायिका वर्णन को उन्होंने बड़े सुन्दर ढंग से चित्रित किया है।

श्रीकृष्ण की विविध क्रीडाओं के वर्णन में कहीं कहीं शृंगार मर्यादा का उल्लंघन तो अवश्य हुआ है किन्तु ऐसे स्थलों पर कवि की काव्यानुभूति सजग रही है।

परकीया नायिका वर्णन यद्यपि रसिकता पूर्ण हो गया है, फिर भी प्रतीकों के आवरण ने उसे अनावृत्त होने से बचा लिया है

"सब जग हारयो मे अलख काहू को न लखात।
कुंजन में रति के दाऊ पछी लो उड़िजात॥"[1]

सौन्दर्यानुभूति के चित्रण में रसलीन का मन अधिक रमा है।

मुरली

रसलीन भी 'कान्ह' की बंसी के आकर्षण में बंध गये। उन्होंने अपने काव्य में मोहिनी वंशी का चित्ताकर्षक वर्णन किया है—

'बंसी हू छुड़ावत है बन त न रीति रद्द
बंसी सम लेत प्राण मीन को निवार के।
अधर सुधा मे सम उगलत हैं, नित एती,
अद्भुत भयो है, यह जगत निहारिके॥
माह मन देर और अर्देव रसलीन जब,
पसु पछी थके मानो डार दई भार पे।
बातें विधि मेर जान सेस को न दीन्हा कान
सेस तन तान दीन्हो धरती को डार पे॥"[2]

रसलीन भी अन्य कवियों की भांति कृष्ण की मुरली पर क्या न मोहित हो, जबकि उस मुरली की तान पर सभी मोहित हैं। 'कान्ह' की बंसी में तो राधा के प्राण ही हैं—

'पीतम बसुरी की सरसि सब जगतें करि ध्यान।
अधर लगन हरि के जियति बिछुरे बिछुरे प्राण॥"

मुरली की ध्वनि कानों में पड़ते ही राधा की यह दशा हुई—

---

1 'रस प्रबोध', दोहा – 949 50 'रसलीन ग्रन्थावली।
2 'रसलीन ग्रंथावली – स्फुटकवित्त कवित्त 98।

"यह मति राधे की भई सुनी मुरली की तान ।
तन मन धन कह लाज यह दैन चहे तव प्रान ॥"[1]

यारे खाँ पहले भक्त थे, कवि बाद मे । इनका ध्येय श्रीकृष्ण का ही स्तवन था । उदात्त भक्ति भावना के सवाहन में इनके कवित्त अन्तमन को आंदोलित करने की क्षमता तथा दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ने की योग्यता रखते हैं ।

मोरन ने भी अपने काव्य मे मुख्यत नायक नायिका के रूप म ही श्रीकृष्ण को याद किया है । इनकी नायिका मध्या अधीरा, प्रौढा खण्डिता के रूप म है । स्फुट दोहो म भी इन्होंने कृष्ण को शृ गार मूलक रूप मे ही उरेहा है ।

नजीर ने 'कन्हैया का बालपन" शीर्षक से एक लम्बी कविता का सृजन किया । उनका यह कवित हृदयग्राही है—

"यारो, सुनो ये दधि के लुटैया का बालपन,
और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन ।
मोहन सरूप नृत्य करैया का बालपन,
बन बन के ग्वाल गोवें चरैया का बालपन ॥"

नजीर रसिक व्यक्ति थे । इन्होंने कृष्ण के जन्म को बड़े ही सुन्दर ढग से प्रस्तुत किया है यथा—

'है रीत जन्म की यो होती जिस घर मे बाला होता ।
उस मडल मे मन बहुतेरा सुख चैन दोबाला होता ॥"

—कन्हैया जू का जन्म

और यही से उन्होंने उनके जन्म की कहानी शुरू की है ।

नजीर भी कृष्ण की बासुरी की धुन को अनसुना न कर सके अपनी रचना बासुरी मे उन्होंने कृष्ण की मुरली की विभिन्न मुद्राओ का भी चित्रण किया है—

"जब मुरलीधर ने मुरली अपनी अधर धरी ।
क्या क्या प्रेम प्रीत भरी इसमे धुन भरी ॥
लै इसमे राधे राध की हरदम भरी खरी ।
लहराई धुन जो इसकी इधर और उधर परी ॥
सब सुनने वाले कह उठ जै जै हरी हरी
एसी बजाई कृष्ण कन्हैया ने बाँसुरी ॥'

1 'रस प्रबोध दोहा –197 रसलीन ग्रन्थावली' ।
2 सतवाणी अक – कल्याण वष–291 पृष्ठ–343 ।

निष्कर्ष

श्रीकृष्ण का चरित्र इतना मधुर एवम् व्यापक है कि इसमें योग भोग सभी समा जाता है। राधा माया के रूप में भी कृष्ण के सन्निकट है, और प्रेमिका के रूप में भी। कृष्ण की लीलाएँ अनन्त हैं— इन अनन्त लीलाओं में जिसे जो प्रिय लगा, वह उसी में सम्मिलित हो गया। कोई भक्त रास में सम्मिलित हुआ, और रसमय हो गया। कोई गो चारण के लिए निकल पड़ा, कोई दधि माखन माँगनहार बन गया, कोई यमुना किनारे के कुंजों में खो गया, कोई कदम्ब के डार के समीप ठिठक गया, कोई चीरहरण का दृश्य छुप छुप कर देखने लगा। ब्रज की गोपियाँ एवम् विशेष रूप से राधा के आकर्षण विकर्षण को देखने और समझने में अनेक भक्त खोए रहे। रूठना-मनाना, विहार, केलि क्रीड़ा, मिलन, ऋतु वर्णन के विभिन्न दृश्य तो सभी कवियों को प्रिय लगे। मुरली जो कृष्ण की विशिष्ट पहचान है, उसे भी सभी ने अपनी अपनी भावना के अनुरूप ही देखा है। किसी ने मुरलीधर को आराध्य माना है, तो कोई सौतिया डाह से व्याकुल हुआ है।

कृष्ण काव्य की विभिन्न लीलाओं में लौकिकता स्पष्ट है, परन्तु सभी लीलाओं का आध्यात्मिक स्वरूप है। भक्त इन लीलाओं के आध्यात्मिक पक्ष से बंधा हुआ है। वह लीलाओं की गहराई में बैठा है। जिसने इसकी आध्यात्मिकता को नहीं पहचाना, वह लौकिकता से आगे बढ़कर शरीरी हो गया। शृंगार वासनामय हो गया और शरीरी रस-लोलुपों के आकर्षण का केन्द्र बन गया।

हिन्दी के मुसलमान कृष्ण भक्तियों के काव्य में बाल कृष्ण की लीला गौण हो गई है। 'कन्हावत' के रचयिता 'जायसी' ने कृष्ण की अन्यान्य चमत्कारिक लीलाओं को महाकाव्य में बड़ी कुशलता से उरेहा है। जहाँ इस प्रकार के प्रसंगों का वर्णन हुआ है वहाँ कृष्ण विष्णु के अवतारी रूप में ही अवतरित हुए हैं। राधा कृष्ण की प्रेम-लीला के रसात्मक उपाख्यानों का वर्णन सभी मुसलमान कवियों ने रसमय किया है। हिन्दी के भक्त कवियों की भांति ही परम्परा से प्राप्त राधा तत्व से कृष्ण तत्व से मिलाकर इस भव्य युगलमूर्ति को मधुराभित स्वरूप प्रदान किया है।

राधा के चित्रण में रति, प्रेम, स्नेह मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव का चित्रण अनेक मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों में दृष्टव्य है। परन्तु महाभाव' का सफल चित्रण 'जायसी' ने कन्हावत' में किया है। रसखान ने कुंजों में कृष्ण को राधा के पाँव दबाते देखा और विस्मय में डूब गए। वैसे रसखान मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों में अपनी पृथक पहचान रखते हैं—उन्होंने बालकृष्ण, किशोर-कृष्ण, और युवा-कृष्ण का सौन्दर्य वर्णन बड़े ही मनोयोग से किया है। पुरुष-सौन्दर्य-चित्रण की कला रसखान की हिन्दी साहित्य को अक्षुण्ण देन है।

महाकवि खान आलम मुबारक मदनायक जमाल आलम शेख और अब्दुल्लाह आदि कवियों ने कृष्ण राधा के प्रेम माधुर्य का ही विशेष चित्रण किया है। रहीम की रचनाओं में कृष्ण के प्रति असीम अनुराग के दर्शन होते हैं। कृष्ण के प्रति अभिव्यक्त असीम आस्था रहीम को भक्त कवियों की श्रेणी में प्रतिष्ठित करती है। पमी' वियोग चित्र हैं उन्होंने गोपियों की विरह दशा सम्मिलित करके उसे अच्छी अभिव्यक्ति प्रदान की है। इनका उद्गार प्रथम सहज होते हुए भी विरहानुभूति की मार्मिकता को अभिव्यक्त करता है। रसलीन' भाव भाषा दोनों ही दृष्टियों से मोहक है। शृंगार के मादक चित्र उरेहने में इनकी कुशलता का कोई सानी नहीं है। अम कला पर र नमे रह विश्न' की अभिव्यंजना का अनूठा उदाहरण है।

मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों का साहित्य, भक्ति और रीतिकालीन प्रवृत्तियों की लीक से हटकर नहीं है परन्तु हिन्दी में कृष्ण कथा का प्रथम महाकाव्य कन्हावत' पूर्ववर्ती और परवर्ती कृष्ण साहित्य के दीप स्तम्भ हैं।



अध्याय – पाँच

भारतीय भावात्मक एकता और हिन्दी मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य

संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में कृष्ण चरित्र सम्बन्धी प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। संस्कृत के माध्यम से समस्त भारत में कृष्णाख्यान का प्रचार तथा प्रसार हुआ। प्राकृत भाषा ने उसे सर्वजन सुलभ बना दिया। कृष्ण को विशुद्ध मानवीय स्तर पर देखने की चेष्टा हुई। जैनाचार्य हेमचन्द्र जयवल्लभ क्षेमेन्द्र तथा जयदेव कवियों द्वारा रचित काव्य ने कृष्णाख्यान के प्रति अभिरुचि उत्पन्न कर दी। फलस्वरूप कृष्णलीला के लिये भूमि प्रस्तुत हो गई। 1400 ई० में मैथिल प्रदेश में अभिनव जयदेव मैथिल कोकिल, विद्यापति का आविर्भाव हुआ। महाराष्ट्र के अभंगों के रचयिता नामदेव का नाम हिन्दी के प्रथम कृष्ण भक्ति कवि के रूप में लिया जा सकता है। सन् 1354 ई० में कृष्ण चरित्र सम्बन्धी सबसे प्राचीन ब्रजभाषा हिन्दी ग्रन्थ साधार अग्रवाल जैन कृत – 'प्रद्युम्नचरित' है। इसके नायक कृष्ण न प्रद्युम्न है। विष्णुदास नामक कवि ने गीत पद्धति में 'महाभारत' 'स्वर्गारोहण' रुक्मणि मंगल और 'स्नेह लीला' नामक कृष्ण सम्बन्धी चार ग्रन्थ लिखकर ब्रजभाषा काव्य हेतु पथ प्रशस्त किया। केशव कायस्थ ने सन् 1974 में 'कृष्ण क्रीडा का०य' की गुजराती में रचना की इसमें ब्रजभाषा में दो पद हैं। शंकरदेव असमिया साहित्य के जन्मदाता माने जाते हैं। 1481 ई० में इन्होंने वृन्दावन की यात्रा की और रचनाएं लिखीं। 1500 ई० में महाराष्ट्र के कवि भानुदास ने कृष्ण सम्बन्धी अनेक रचनाएँ ब्रजभाषा में प्रस्तुत की हैं।

मध्ययुग में वल्लभ सम्प्रदाय, निम्बार्क सम्प्रदाय, चैतन्य या गोडीय सम्प्रदाय हरिदासी, राधा वल्लभ चरणदासी आदि सम्प्रदायों ने कृष्ण भक्ति की विस्तृत भूमि तैयार की। इस सुन्दर सुकोमल हरीतिमायुक्त भूमि को देख कर सभी भक्त-जन आनंदित हो गए। कृष्ण भक्तों को यह लीला भूमि रास आ गई।

कृष्ण भक्ति का क्षितिज इतना व्यापक था कि इसने प्रत्येक रसिक भक्त को स्पर्श किया। दिशाओं की परिधि जाति सम्प्रदाय की सीमा रेखायें अवरोध

न बच सकी। रसेश्वर कृष्ण ने सभी को अपना लिया जो रस लोलुप थे, इसमें हिन्दू मुसलमान का कोई भेद शेष ही न रहा। प्रेमरस भरे पठान और मुगल हृदय भी कृष्ण का रसपान करने हेतु गोपिका बन गए और कृष्ण की लीलाओं में सम्मिलित हो गए। रस और प्रेम जगत में कोई भेद होता ही नहीं, वहाँ तो एक ही सत्ता होती है और पुरुष के मनोराज्य में दोष गर्मी नाम दोष होते हैं। इस सन्दर्भ में मुसलमानों की हिन्दी सेवा भी विशेष उल्लेखनीय है। अरबी और फारसी जुबान में कृष्ण के लालित्य को समेटने की अपेक्षा उन्हें ब्रजभूमि में प्रवाहित ब्रज भाषा में बह जाना ही प्रियकर प्रतीत सा हुआ।

इस्लाम और वैष्णव भक्ति भावना

भक्ति की भूमि पर भगवान का रस राज्य स्थापित है। इसमें केवल रसिकों का प्रवेश सम्भव है, अरसिक या रूखे ज्ञानवादी दूर ही रह जाते हैं। वैराग्य का तिरस्कार करने वाली यह भक्ति रागानुगामिनी है परन्तु जिस राग पथ पर यह बढ़ती है उसे सांसारिक भोगासक्ति से बिलकुल अलग विषाद रहित, अमृत स्वरूप राग जानना चाहिए—भक्तों का ऐसा आदेश है। प्रेम प्रेमी और प्रेमास्पद भगवान् स्वयं ही हैं लेकिन रसास्वादन करने कराने के लिये वे सदैव "तीन"[1] बने रहते हैं।

भक्ति की भावना है तो व्यक्तिगत वस्तु पर समष्टि के किसी भी एक व्यक्ति के अन्तःकरण में वह जग सकती है। इस पर देश काल का कोई बन्धन नहीं है। अतः वह आर्यों की भी सम्पत्ति है और सामियों की भी[2] दोनों इस पर अपनापन दिखा सकते हैं। वैष्णव आचार्यों को भी हम किसी प्रकार की परिसीमा निर्धारित करते नहीं देखते। इसके विपरीत वे संकीर्णता मिटाने भेद भाव दूर करने के पक्षपाती रहे हैं। साधक में सच्ची निष्ठा है, तो वह निम्न कुलोत्पन्न होकर भी साधना का अधिकारी है। निर्गुण मार्गीय सन्त जातिवाद के पक्के शत्रु और मूर्तियों मन्दिरों के (मसजिदों के भी) उपहासक थे। कुरान भी यही शिक्षा देता है कि—इस्लाम का प्रत्येक व्यक्ति मानवीय सम्बन्धों में भ्रातृत्व

---

1 कल्याण वर्ष 41 अंक 7 सौर श्रावण 2024। रस (प्रेम) साधन की विलक्षणता हनुमान प्रसाद पोद्दार का प्रवचन पृष्ठ - 1053।

2 इट इज सिमेटिक एज वेल एज आर्यन् इट इज दि मीएथलन आफ दी हट एगैन्स्ट रिजिड इन्टेलेक्चुअलिज्म – इस्लामिक कल्चर (हैदराबाद रिव्यू), दि इन्फ्लुएन्स आफ इस्लाम आन दि कल्चर आफ भक्ति इन मीडियावेल इण्डिया' - डॉ यूसुफ हुसैन पृष्ठ–642।

(बन्धुत्व)[1] का विचार दृढ़ करें। यहा तक कि हिन्दुओ के बीच का इस्लाम, जिसे "भारतीय इस्लाम" कहना चाहिये, हिन्दू धर्म का प्रभाव कही कही स्वीकार करते हुए भी जाति विभाजन के मामने मे उससे पूरी तरह असहमत हैं।

विक्रम की नवी शती (आठवी शती ईसवी) के पहले अरब के कुछ मुसल मानो ने मलाबार तट की ओर अपना उपनिवेश स्थापित कर लिया था। इनमे से तो अधिकतर इराक के शरणार्थी थे[2] और दक्षिण मे शांतिपूर्ण ढग से इस्लाम का प्रचार करते थे। इस आधार पर किन्ही किन्ही मुसलमान विद्वानो मे यह विश्वास जम गया है कि आचार्य रामानुज का चिन्तन इस्लाम से प्रभावित था।[3] कहना नही होगा कि यह विश्वास हास्यास्पद है। मध्य युगीन वैष्णव धर्म मे प्रचलित मधुर रस की उपासना सूफियो से कुछ न कुछ प्रभावित हुई थी, इतना स्वीकार किया जा सकता है। महमूद गजनवी के समय से ही सूफी फकीर पूरे देश मे बिखर कर धर्म प्रसार का काय करने लगे थे। लाहौर मे बुखारा के शेख इस्माइल (स 1060 वि) सिंध मे बुखारा के ही मूल निवासी सयद जलालुद्दीन (स 1247-1348 वि), पजाब मे जलालुद्दीन के पौत्र सैयद् अहमद कबीर या 'मखदूम ए जहाँनिया' (मृत्यु स 1293 वि), बहाउल हक, बाबा फरीदुद्दीन, काश्मीर मे बुलबुलशाह, पानीपत मे अबूअली कलदर (मृत्यु स 1381), गुजरात मे अब्दुल्ला यमनी (स 1124 वि) और फारस मे फकीर नूरुद्दीन (स 1151-1200 वि), बगाल मे शेख जलालुद्दीन तब्रीजी (मृत्यु स 1301 वि) तथा अन्य सूफी साधु दक्षिण मे गेसूदराज और पीर महाबीर खम्दायत (अरबी, स 1361 मे बीजापुर आये थे।)[4], इत्यादि ने सूफी मत का प्रचार किया। जनता को सूफियो का सन्देश भला लगा, अत सूफी मत फलने मे खास देर न हुई, और इस्लामी सरकार प्रश्रय पाने लगे। आचार्य शब्दावली मे— 'इस्लामी सरकार धीरे धीरे जमते जा रहे थे। सूफी पीरो के द्वारा सूफी पद्धति की प्रेम लक्षणा भक्ति का प्रचार काय धूम से चल रहा था। मुसलमानी जमाने मे इन सूफियो का प्रभाव देश की भक्ति-भावना के स्वरूप पर बहुत अच्छी तरह से पडा। माधुर्य भाव' को प्रोत्साहन मिला। माधुर्य-भाव की जो उपासना चली आ रही थी, उनमे सूफियो के प्रभाव से 'आभ्यान्तर मिलन', मूर्छा 'उन्माद' आदि की भी रहस्यमयी योजना हुई। मीरा बाई व चैतन्य महाप्रभु दोनो पर सूफियो का प्रभाव

1 Indian Islam – Muway T Titus, Oxford University press 1909, P 53
2 Ibid, P 38
3 Islamic Culture (The Hydeabad Quarterly Review) Vol XII Oct 1938
4 Indian Islam P 42, 46

पाया जाता है।[1] बात ठीक भी है लेकिन इस्लामी मान्यताओं में जो अन्तर है, वह और भी आश्चर्यप्रद है। अकबर का चलाया हुआ 'दीन ए इलाही' खुदा का मजहब कहने भर को था। निःसन्देह उसमें इस्लाम की जगह अद्वैतमत (डिवाइन मोनोथीजम) का आदर सत्कार हुआ था। कुरानी सिद्धान्तों में अकबर की अरुचि और सार्वजनिक प्रार्थनाओं में 'मुहम्मद' के नाम का प्रतिषेध विचारणीय है।[2] हिन्दुओं के पौराणिक आख्यानों से इस्लामी समाज को एक नवीन प्रेरणायें मिली। राम लक्ष्मण के आदर्श सम्बन्धों को हुसन-हुसैन में देखा गया अमीर उबिया अलौकिक शक्ति सम्पन्न हनुमान बना दिये गये और अली को भीम-अर्जुन की विशेषतायें प्रदान की गयी।[3] वैष्णव सम्प्रदाय का 'रास' सत्रहवीं शती के आसपास अरब में, 'धमाल नृत्य' के रूप में अपनाया गया।[4] 'धमाल नृत्य' रास का ही एक प्रकार है।

मध्यकालीन हिन्दी काव्य सांस्कृतिक दृष्टि से समन्वय का प्रयास कहा जा सकता है। यह समन्वय कार्य एक ओर हिन्दू धर्म के नेताओं द्वारा हुआ तथा दूसरी ओर सूफी सन्तों द्वारा। कबीर आदि सन्तों ने ईश्वर के माध्यम से दो परस्पर विरोधी समाजों तथा धर्म मतों के बीच ऐक्य को प्रकट करके इस समन्वय का यत्न किया था।

'कबीर ने हिन्दुत्व और मुसलमानत्व के बाह्य उपकरण को हटाकर, उनका असली स्वरूप पहचानने की चेष्टा की। मुसलमानों की ओर से यह काम प्रेम कहानियाँ लिखकर सूफी सन्तों ने किया।'[5] मनुष्य मनुष्य के बीच जो रागात्मक सम्बन्ध हैं वह उनके द्वारा व्यक्त न हुआ। अपने नित्य के जीवन में जिस हृदय साम्य का अनुभव मनुष्य कभी कभी किया करता है, उसकी अभिव्यंजना उससे न हुई। हिन्दू और मुसलमान हृदय को आमने-सामने करके अजनबीपन को मिटाने वालों में 'कुतुबन' 'जायसी' आदि कवियों का नाम लेना पड़ेगा।[6]

---

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ-152 और 154
2 धार्म इन मिडीवल इण्डिया जे ई कारपेंटर-लेक्चर-8
'हिन्दूइजम एण्ड इस्लाम' पृ 498 502
3 प्रो हुमायूं कबीर हमारी परम्परा गिरिजा प्रकाशन उदयपुर हिन्दी संस्करण 1949 पृष्ठ 65
4 ब्रजभारती (रामलीला विशेषांक) वर्ष 16 अंक 7 8 9 मार्गशीर्ष सं 2015 वि पृ 27
5 डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ 63 64
6 पं रामचन्द्र शुक्ल (सं जायसी ग्रन्थावली) पृ

खुसरो ने अलाउद्दीन खिलजी के जमाने में हिन्दी में कविता रची थी। खुसरो बड़े भारी पंडित थे। वे अरबी, फारसी, तुर्की, ईरानी, हिन्दी प्रभृति कई भाषाओं को जानते थे। उन्होंने ग्यारह बादशाहों को दिल्ली के शाहीतख्त पर चढ़ते उतरते देखा और सात बादशाहों के तो ये स्वयं दरबारी ही थे। वे अपने देहान्त के समय लगभग 40 वर्ष के थे। (1925 ई०) उन्होंने खालिकबारी लिखकर फारसी राजभाषा और हिन्दी का एक कोष तैयार कर दिया था।

'खालिकबारी' के सिवा खुसरो की बहुत सी पहेलियाँ, मुकरियाँ या कह मुकरियाँ और सुखने आदि प्रसिद्ध हैं। ये सब फारसी अक्षरों में लिखे गए होंगे। यद्यपि खुसरो हिन्दुओं और मुसलमानों की भाषाओं के बीच में सेतु का काम कर रहे थे, तथापि उनकी पहेलियाँ, मुकरियाँ आदि उन मुसलमानी रईसों और दरबार के मनोविनोद का कारण ही होती थी, जो हिन्दी और फारसी आदि भाषाएँ जानते थे। हिन्दुओं में बहुत कम लोग अमीर साहब की जबांदनी का लुत्फ उठा सकते थे, क्योंकि वे मुसलमानी भाषाओं में प्रवेश नहीं कर पाए थे।[1]

भारतीय और ईरानी संगीत में समन्वय स्थापित करके उसे एक नई पद्धति का रूप देने में अमीर खुसरो का बहुत बड़ा हाथ है। अमीर खुसरो दोनों संगीत पद्धति के ममज्ञ विद्वान थे, इसीलिए उन्होंने दोनों के मिश्रण से कुछ ऐसे नये रागों का निर्माण किया जो हिन्दुस्तानी संगीत की अमूल्य निधि है। मजीर, साजगरी, इमन, उश्शाक, मुवाफिक, गनम, जिल्फ, फरगना, सरपर्दा, बकहरार, फिरदोस्त, मनम् जैसे रागों की उन्होंने सृष्टि की। यही नहीं वाद्य यन्त्रों के परिष्कार तथा नये रागों के उपयुक्त वाद्य यन्त्रों के निर्माण में भी खुसरो ने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया।[2]

खुसरो अप्रतिम विद्वान और अद्भुत देश भक्त व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी रचना 'नुह सिपेहर' में बड़े विस्तार से यह बताया कि वे हिन्दुस्तान को प्रेम क्यों करते हैं। उन्होंने हिन्दुस्तान के गौरव को बढ़ाने वाले दस कारणों का उल्लेख किया है। संगीत, भाषा, जलवायु, आदमी, रहन सहन आदि के बारे में विस्तार से बताया कि वे हिन्दुस्तान को प्रेम इसीलिए करते थे। भाषा के बारे में खुसरो का कहना है कि दिल्ली में हिन्दवी भाषा बोली जाती है जो काफी प्राचीन है। हिन्दवी का आशय सम्भवतः ब्रजभाषा है, क्योंकि दूसरी भाषाओं के साथ ब्रज का नाम नहीं लिया है, जबकि सिंधी, बंगला, अवधी आदि का नाम आता है। देशी भाषाओं के उदय की सूचना देने वाला यह अत्यन्त महत्वपूर्ण संकेत है। इसी प्रसंग में खुसरो ने भारतीय संगीत की भी चर्चा की है। उसने स्पष्ट लिखा है कि 'हिन्दुस्तानी

---

1 पं० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी — हिन्दी पर फारसी का प्रभाव — पष्ठ भूमिका 9

2 एम० वी० मिरजा — लाइफ एण्ड वर्क आफ अमीर खुसरो

संगीत सुनकर हिरन तक मग्न हो जाते हैं, व दौड़ना भूल जाते हैं।"[1] गोपाल नायक, बैजू और तानसेन के बारे में, उनके संगीत के सम्बन्ध में खुसरो ने स्पष्ट विचार किए हैं।

फारसी हिन्दी के दो सुनने से ही उन्होंने बस नहीं किया, बल्कि फारसी हिन्दी गज़ल भी लिख डाली। उनकी यह गज़ल बहुत मनोहर है और जिस समय यह बनी होगी हिन्दी व मुसलमानों में चारों तरफ से वाह-वाही की झड़ी लगी हो होगी। वह गज़ल यों है—

'ज़िहाले मिस्कीं मकुन तगाफुल,
दुराय नैना बनाय बतियाँ।
कि ताब हिजरां न दारम् ऐ जाँ
न लेहु काहे लगाय छतियाँ।
शबाने हिजरां दराज़ चूं जुल्फो,
रोज़े वसलत चु उम्र कोताह।।"

× × ×

सखी पिया को जो मैं न देखूं।
तो कैसे काटूं अंधेरी रतियाँ।।"

अकबर के शासन काल में उच्चकोटि का साहित्य निर्माण हुआ, क्योंकि साधारण कवि ही नहीं, बादशाह और उनके हिन्दू मुसलमान मन्त्री भी हिन्दी में कविता करते थे। बीरबल अकबर के बड़े मुंहलगे थे और उनकी मृत्यु पर बादशाह बड़े शोकाकुल हुए थे। उन्होंने अपना मनोभाव इस सोरठे द्वारा व्यक्त किया था —

सब कुछ दीनन दीन, एक दुरायो दुसह दुख।
सोउ दे हमहिं प्रवीन नाहिं राख्यो कछु बीरबर।।"

नवाब खानखाना का हिन्दी की अनेक उप भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। इन्होंने ब्रजभाषा राजपूतानी और खड़ी-बोली में भी कविता की है, और तो क्या जहाँ अमीर खुसरो ने फारसी हिन्दी की खिचड़ी पकायी है, वहाँ उन्होंने संस्कृत हिन्दी मिश्रित कविता की है।

हिन्दी खड़ी बोली

"कलित ललित माला वाज वाहिर[2] जड़ा था।
चपल चलन वाला चान्दनी में खड़ा था।।

---

1 खिलजी कालीन भारत । सैयद अतहर अब्बास रिज़वी अलीगढ़ 1954 पृ 179 80
2 'वाज वाहिर — रत्न स ।

कटि तट बिच मला पीत सेला नवेला।
अलि बन अलबेला यार मेरा अकेला॥"

मुगल सम्राटो के राज्यकाल म ललित कलाओ ने राजाश्रय पाया और वे उत्कर्ष को प्राप्त होने लगी। अकबर ने फतहपुर सीकारी को जब से राजधानी बनाया, चित्रकला को नया जीवन मिल गया। सम्राट अकबर को चित्रकला से अत्यधिक प्रेम था। उनकी व्यक्तिगत देख रेख म राजपूत शली तथा फारसी शैली के सम्मिश्रण से उत्पन्न मुगल शैली का पूण विकास हुआ। 1588 ई म जब महाभारत का अनुवाद 'राजमनामा' के नाम से फारसी मे हुआ। उसका चित्रांकन भी पुस्तक के साथ मुगल शैली मे हुआ। 'हरिवश पुराण' के ऊपर आधारित चित्रो का अकन भी इसी प्रकार अकबर काल मे ही हुआ।[1] इन दोनो ग्रथो का सम्बन्ध कृष्ण चरित्र से है। अत कृष्ण का महाभारत कालीन रूप मध्ययुग म चित्रकला जगत् की पहली देन है।

सम्राट जहांगीर के समय ललित कलाओ को आदर एवम् सम्मान प्राप्त था। जहाँगीर रसिक था। अकबर की तरह सवधम समन्वयकारी नही था। अत उसके राज्यकाल मे रामायण तथा महाभारत की चचा नही हुई। उसके स्थान पर केशव की 'रसिक प्रिया'[2] नागरी लिपि मे लिखी गई तथा मुगल शैली मे उसका चित्रांकन भी हुआ। पुट्टकर कवि की 'रसवेलि'[3] रचना भी चित्रांकित की गई।

मुगल सम्राट अकबर मुसलमान होते हुए भी हिन्दू धम के प्रति उदार थे। उनके समय मे कछवाहा नरेश मानसिंह न अपने दोनो गुरु रूप तथा सनातन क आदेश से वृन्दावन म गोविन्द देव के मन्दिर का निर्माण कराया। वृन्दावन के प्राचीन मन्दिरो मे यह सवश्रेष्ठ है।

औरगजेब तो नही, पर उसकी पुत्री शाहजादी जेबुन्निसा बगम ने हिन्दी म कविता करने का पता लगता है। कहते है कि—"नैन विलास" कविता ग्रन्थ की कर्त्री ये ही है। इस ग्रन्थ का अन्तिम दोहा इस प्रकार बताया जाता है —

"जेबुन्निसा जहान मे, दुख्तर आलमगीर।
नन विलास बिलास मे, खास करी तहरीर॥"

1 मेट्रोपोलिटन म्यूजियम न्यूयार्क।
2 बोस्टन म्यूजियम — अमरीका।
3 राष्ट्रीय सग्रहालय — नई दिल्ली।

"हिन्दू मुस्लिम समन्वय के सेतु जायसी"–

अरबी, फारसी और हिन्दी हृदयों को पास पास लाने में अमीर खुसरो का कर्त्तव्य बड़ा ही महत्वपूर्ण है। 'जायसी' ने इस प्रयास को बहुत बड़ी शक्ति दी है। वे कहते हैं—

'तुरकी अरबी, हिन्दवी भाषा जती आहि।
जेहि मह मारग प्रेम का सबै सराहैं ताहि॥
आदि अंत जस गाथा अहै।
लिखि भाखा – चौपाई कहै॥
(पद्मावत)

अइस प्रेम कहानी दोसर जग मह नाहि।
तुरकी, अरबी फारसी सब देखऊँ अवगाहि॥ [1]
' का भाषा का संस्कृत प्रेम चाहिए साँच॥ [2]

मुसलमान शासकों ने हिन्दी भाषा के कवियों को संरक्षण दिया, अनेक मुसलमान बादशाहों और नवाबों की हिन्दी कविताएँ भी मिलती हैं। सन्तों-भक्तों ने भी अपनी भाषा में फारसी शब्दों का जमकर प्रयोग किया है। जायसी ने भी भावित समन्वय साधना में भारी योग दिया है। वे सच्चे अर्थों में जनकवि थे। उन्होंने ठेठ अवधी को काव्य के उत्तम सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने में भी सर्वाधिक योगदान दिया है। भारतीय अद्वैतवाद अवतारवाद और मुस्लिम एकेश्वरवाद के समन्वय का सफल प्रयास जायसी की दार्शनिकता का वैशिष्ट्य है। उन्होंने परम तत्व की बड़ी मधुर प्रेममय परिकल्पना की है। वे संसार के कण कण में प्रियतम का ही सौन्दर्य देखते हैं। लौकिक सौन्दर्य और प्रेम को अलौकिक सौन्दर्य और प्रेम से मंडित करके देखने और अभिव्यक्त करने का इनके जैसा सामर्थ्य अन्यत्र ही शायद कहीं मिले। जायसी ने अपने दिव्य प्रेम के माध्यम से विश्व प्रेम का सन्देश दिया है। मध्यकालीन सांस्कृतिक संकट के विषम समय में यह 'प्रेम सन्देश' भारतवर्ष के लिए वरदान स्वरूप रहा है। सूफियों के इस सन्देश का व्यापक प्रभाव मीरा कबीर दादू नानक आदि के यहाँ देखा जा सकता है। हिन्दू और मुस्लिम दोनों के भीतर के प्रेम या रागात्मक तार को जानने और साधने वाले जायसी सही अर्थों में मानवतावादी थे।

सूफियों ने खण्डन मण्डन की दृष्टि से दूर रहकर हिन्दू मुस्लिम एकता दोनों के हृदयों को बड़ी गहराई से स्पर्श करने का प्रयास किया और उनका व्यापक प्रभाव इन दोनों पर पड़ा। अपनी कथाओं द्वारा इन्होंने प्रेम का शुद्ध मार्ग दिखाते

---

1 पद्मावत – सं डॉ शिवसहाय पाठक पृष्ठ 12 दोहा 14।
2 दोहावली दोहा 572।

हुए जन सामान्य जीवन दशाओं को सामने रखा जिनका मनुष्य मात्र के हृदय पर एक विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है। आचार्य शुक्लजी ने ठीक ही कहा था—"हिन्दू हृदय और मुसलमान हृदय आमने सामने करके अजीबपन मिटाने वालों में इन्हीं का नाम लेना पड़ेगा। इन्होंने मुसलमान होकर हिंदुओं की कहानियाँ, हिंदुओं की बोली मे पूरी सहृदयता से कहकर उनके जीवन की मर्मस्पर्शी अवस्थाओं के साथ अपने उदार हृदय का पूर्ण सामंजस्य दिखा दिया इन कवियो ने यह दिखला दिया कि एक ही गुप्त तार मनुष्य मात्र के हृदयो से होता हुआ गया है जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रंग के भेदों की ओर से ध्यान हटा कर एकत्व का अनुभव करने लगता है।"

जायसी ने धर्म और मजहब से बहुत ऊपर उठकर मनुष्यत्व का परिचय दिया है। 'मानुष प्रेम भएउ बैकुंठी" का संदेश दिया। सत्-सत्व का महासत्य गायन किया है। इनके काव्य मे प्रेम पीर की स्निग्ध पुकार है विरह की प्रशान्त गम्भीर तड़प है आत्म समर्पण का पुनीत आग्रह है। इन्ही कारणो से इनकी वाणी हृदय को सीधे छू लेती है।

जायसी का उद्देश्य आत्म संकीर्णताओं से ऊपर उठकर आत्म शुद्धि और जन जन मे प्रेम सम्प्रसार था वे निखिल सृष्टि मे प्रेम को ही देखते थे

'तीनौ लोक चौदह खण्ड सबै परे मोहि सूझि।
प्रेम छाड़ि, किछु और न लोना जो देखौ मन बुझि॥'[1]

सूफियो के जीवन-दर्शन मे प्रेम ही संसार का सबसे सुन्दर और सर्वांगीण विशिष्ट तत्व है, उससे ही मनुष्य जीवन द्वादशवर्णी, काचन धर्मिता को प्राप्त करता है। जायसी में बहुत बड़ी विशेषता है कि मनुष्यता' उनकी सर्वोपरी साधना रही है।

यही स्थिति अन्य सूफी कवियो की है। महाकवि जान के पूर्वज हिंदी रा-पूत थे और बाद मे मुसलमान हो गए।

'आलिफखान दीवान को बहुत बडो है गात।
चाहुवान की जोट की और न जग म होत॥
जिती जात राजपूत की सगर हिंदुस्तान।
तामें निहचे जानिए बडी गोत चाहुवान॥'[2]

1 पद्मावत (भूमिका) स डॉ शिवसहाय पाठक, पृष्ठ
2 पद्मावत (भूमिका) स डॉ शिवसहाय पाठक पृष्ठ 8

जाति से मुसलमान होकर भी व अकटेटर थे। परम उदार थे। उनका कहना है कि एक ही पिंड से हिंदु और मुसलमान पैदा हुए हैं, उनके रक्त और धर्म मे कोई भेद नही है, करनी के कारण ही उनके अलग अलग नाम हैं—

"एक पिंड इन दुहुन को, ना अतर रत चाप।
प करनी नाहिन मिले, ताते न्यारे नाम ।।"[1]

जान मुसलमान थे, पर उनम हिंदुत्व' और चौहानत्व पर गव था। उ होने नबी हजरत मुहम्मद आदि के साथ ही विरचि, ईश्वर आदि की भी वन्दना की है। वे मानते है कि मृत्यु के पश्चात् उनके पिताजी वैकुंठ म गए—

"आलिफ खान बैकुंठ गए रौव अटठाईस।"[2]

जायसी न भी हिंदू और मुसलमान दोना को ही एक करतार की सन्तति कहा है—

तिन्ह सतति उपराजा, भातिहि भाति कुलीन।
हिंदू तुरक दुवौ भए, अपने अपन दीन ।।'[3]

वस्तुत जायसी साधना की उस उदात्त भूमि पर पहुचे हुए थे, जहाँ मनुष्य इसान या धम मजहब जैसा कोई भेद नही होता । उन्होंने लोक रक्षा और लोकरजन के आदर्शों को सम्मान की दृष्टि से देखा। न्यायनिष्ठ, राजशक्ति सच्ची वीरता, सुख विधायक प्रभुत्व लोकरजनकारी सुखकारी ऐश्वय, ज्ञानवधक पांडित्य आदि म वे ईश्वर की लोकरक्षिनी कला के दशन करते थे। उन्होंन ईश्वर, पैग म्बर पण्डित मौलवी किसी की भी निन्दा नही की, अपन दोनो महाकाव्यो के आरम्भ मे उन्होंने इन सबकी स्तुति की है और अपन को पण्डितो का 'पिछलगा' कहा है। हिंदू मुसलमान दोना की विधि पर इनकी आस्था थी। वद, पुराण और कुरान को वे लोक कल्याण माग प्रतिपादक वचन मानते थे। 'पद्मावत्' म उन्होंने राघव चेतन के सन्दभ मे कहा है

"वेद पथ जे नहिं चलहिं ते भूलहिं बन मांझ।'
"पण्डित सोइ वेद मत साधा।"

'वद वचन मुख साच जो कहा। सो जुग जुग अहथिर होइ रहा।

हिंदू धम और हिंदू जीवन का जायसी का ज्ञान अगाध था। यह तथ्य उनके दोनों महाकाव्यों को पढन से स्पष्ट रूप स ज्ञात होता है। उनके काव्यो म हिन्दू धम और पुराणो के ऐसे अनेक सूत्र हैं जिन्हें हिन्दी के बड़े बड़े पण्डित भी अभी तक नहीं समझ पाए हैं। हिंदू जीवन का आचार व्यवहार एव कम काण्ड मूलक उनका ज्ञान बड़ा व्यापक और गम्भीर था। भगवत् साधना और लोकपक्ष दोनों की उनकी गूढता और गम्भीरता अद्भुत है।

---

1 कन्हावत् (भूमिका) स डॉ शिवसहाय पाठक पृ २
एव 3 'कन्हावत् (भूमिका)—स डॉ शिवसहाय पाठ

'कहावत' के कवि का उद्देश्य महान है, उसमें शिव या लोक-मंगल का प्राधान्य है, साथ ही काम तत्व भी उसमें विद्यमान है। उसमें अवतारी भगवान की मानवता के उस सच्चे रूप का उद्घाटन है जो प्रेम, उदारता, साहस, सहिष्णुता, बलिदान और त्याग की व्यापक भूमिका पर प्रतिष्ठित है। पं० रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि—"एक ही गुप्ततार मनुष्य मात्र के हृदयों से होता हुआ गया है, जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रंग के भेदों की ओर से ध्यान हटा एकत्व का अनुभव करने लगता है।" जायसी ने अपने महान उद्देश्यों की पूर्ति के लिये वही गुप्ततार को झंकृत कर मनुष्य मात्र के हृदय को जागृत और प्रेम प्लावित करने का प्रयत्न किया है।

इस उद्देश्य के लिये उन्होंने मानव की रागात्मक वृत्ति 'काम' को अधिक व्यापक अर्थों में गृहीत किया है। इसी माध्यम से जायसी ने प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य उपस्थित किया है। उन्होंने हिन्दू और मुसलमान के बीच की दूरी को स्नेहामृत से भर कर एकत्व की प्रतिष्ठा की है। इसीलिये जायसी के अध्यात्मवाद के अंतराल में उदार और प्रेम प्रवण मानवतावाद की सरस्वती प्रवाहित हो रही है। मानवतावाद की प्रतिष्ठा जाति धर्म आदि को तोड़कर मानव मात्र को एक सूत्र में बांधना ही जायसी का उद्देश्य है और जायसी अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में पूर्ण सफल हुए हैं।

सांस्कृतिक संक्रमण वाले मध्ययुग में उन्होंने धार्मिक, दार्शनिक सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में विराट, समन्वय करके बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। आधुनिक भारतीय जीवन (और विशेष कर हिन्दू मुस्लिम जीवन) के अनेक सन्दर्भ में जायसी हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों के अमर सेतु और सर्वश्रेष्ठ समन्वयकर्त्ता के रूप में उपस्थित हुए हैं। उनका जीवन और मंतव्य इन दोनों संस्कृतियों का पावन संगम है —

"परगट भेस गोपाल गोबिन्दू। गुपुत गियान न तुरक न हिन्दू॥"

— कहावत्

महती प्रतिभा सम्पन्न कवि जब किसी महत्त शक्तिमय प्रेरणा से उद्वेलित और अभिभूत होता है तो वह महाकाव्य की सजना में प्रवृत्त होता है। महाकवि मार्मिक स्थलों का सुन्दर विधान करता चलता है। वह जीवन के मर्मस्पर्शी प्रसंगों का पारखी होता है। ये मर्मस्पर्शी चित्रण मानव हृदय की रागात्मिका वृत्ति को जागृत कर देते हैं। महाकवि के प्रबन्ध रस से नीरस पद्यों में भी रसवत्ता आ जाती है।

कहावत में घटना-चक्र के अन्तर्गत ऐसे स्थलों का पूरा सन्निवेश है जो मानव की रागात्मिका वृत्ति को उद्बोधित कर देते हैं उसके हृदय को भावमग्न कर देते हैं। जायसी ने वस्तु वर्णन के रूप में और पात्र द्वारा भाव व्यंजना के

रूप में इस ग्रन्थ का नया प्रकार से रूप रचा है। वस्तुतः कथावस्तु की गति कहीं कहीं तक पहुँचा कर दिखा दी है। कन्हावत में ऐसे स्थल अनेक हैं। गोपियों की भाँति गोपों की क्रीड़ायें, राधाकृष्ण प्रसंग, राधा चन्द्रा प्रसंग, कुब्जा प्रसंग, रास वध प्रसंग, षट्ऋतु वर्णन, बारहमासा, नख शिख वर्णन, बालगोपाल प्रसंग, ऐसे स्थलों में प्रमुख हैं। इनमें दर्द अगाध और गम्भीर है। उन्होंने कृष्ण चरित में मर्मस्पर्शी स्थलों का चुनाव करके अपने हृदय का समस्त रस उड़ेलकर कन्हावत को सरस बनाया है। राधा रूप की छवि और राधा गोपी विरह वर्णनों में उनकी काव्य प्रतिभा के बहुविध आयाम मिल जाते हैं। हिन्दी में कन्हावत को कृष्ण विषयक प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। उसमें जायसी का गम्भीर जीवन दर्शन, उनकी भावुक भावप्रवणता, मौलिकता, उनका उदात्त प्रेम, सरस लोकभाषा अवधी का पूर्ण निखार, उनकी सांस्कृतिक मान्यतायें एवं उनकी लोक मंगल की भावना का उत्तम रूप मिलता है। इन महत् विशेषताओं के कारण 'कन्हावत' को हिन्दी के श्रेष्ठ महाकाव्य के रूप में समादृत किया जायगा।

हिन्दी के विकास में मुसलमान कवियों का योगदान अप्रतिम है। अमीर खुसरो, मुल्ला दाऊद, कुतुबन, जायसी, मंझन, उस्मान, नबी, जान, हुसैनअली, कासिम शाह, नूर मोहम्मद, निसार, ख्वाजा अहमद, रसखान, रसलीन, रहीम, नसीर, निजामी, वजही, गवासी, मुकीमी, इब्ननिशाती, तबई, इनाअल्लाह खाँ, गुलाम अली आदि सैकड़ों मुसलमान कवियों ने हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में अपार योगदान दिया है। हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में इन मुसलमान कवियों के वैभवपूर्ण कृतित्व का महत्व निःसंदिग्ध है।

क्यामखानि वंश के महाकवि जान इसी परम्परा के एक श्रेष्ठ कवि हैं। इसी क्यामखानि वंश में हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री 'ताज' भी थी। वह इन्हीं नवाबों के परिवार की थी। 'ताज" ने अपनी दिलजानी को सुनाते हुए अपने इश्क की कहानी कही थी—

'सुनो दिलजानी मेरे दिल की कहानी तुम
इश्क की बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
देव-पूजा ठानी मैं नवाज हू भुलानी
तजे कलमा कुरान सारे गुनन गहूँगी मैं॥
सावला सलोना सिरताज पत्र कुल्हेदार
तेरे नेह दाग में निदाघ ह्वै दहूँगी मैं।
नन्द के कुमार कुरबान तोरी सूरत पै,
हूँ तो मुगलानी हिन्दुवानी ह्वै रहूँगी मैं॥

'ताज" का विवाह एक बहुत बडे अमीर नवाब मुसलमान के साथ हुआ था, किन्तु विवाह के पश्चात् ताज मीराबाई की तरह भगवान श्रीकृष्ण की दीवानी बन गई। यद्यपि वह मुसलमान थी, फिर भी स्वय को हिंदुआनी हिंदू मानती थी और सावले सलौने सिरताज कुल्हेदार पाग पहनने वाले नन्द के कुमार की सूरत पर कुर्बान थी।

हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य के प्रेरणा और प्रोत्साहन दोनो मे राधा वल्लभी सम्प्रदाय का महत्वपूर्ण स्थान है। इस मत के अनुयायी कवियो की सख्या बहुत अधिक है। इसके प्रवतक स्वामी हित हरिवश स्वय सिद्ध भक्त कवि थे। सूरदास के साथ उन्हे भी हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य का प्रवतक माना जाता है। गोस्वामी हित हरिवश रसिक और रससिद्ध भाव प्रणव भक्त थे। इनके अनुयायियो म कई सिद्धान्तवादी विवेचक हुए ह। इन्ही मे हरिराम व्यास सस्कृत के विद्वान तथा दीक्षा लेने से पूर्व एक प्रसिद्ध गोस्वामी पडित थे। उन्होंने राधा वल्लभी मत के सिद्धान्तो का विवेचन किया है। इसके सिद्धान्त प्रतिपादन अत्यन्त सरस कवित्व से समन्वित हैं। इस सम्प्रदाय मे चतुर्भुज दास, ध्रुवदास हितवृन्दावनदास की वाणियाँ भी महत्वपूर्ण हैं।

कृष्ण भक्ति काव्य के अनेक परवर्ती कवियो ने कृष्ण भक्ति का साम्प्रदायिक भेद भाव रहित रूप अधिक ग्रहण किया। यहाँ तक की अनेक कवियों के विषय म कहना कठिन है कि वे किस सम्प्रदाय के कवि थे। रसखान को पुष्टिमार्गीय भक्त कहा गया है।

'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता" मे उनका वणन भी मिलता है परन्तु उनकी रचनाओ म पुष्टिमार्गीय साम्प्रदायिक सिद्धान्तो को ढूढना बेकार चेष्टा है। क्योंकि उनकी सभी रचनाओ को पढने पर स्पष्ट लगता है कि रसखान के हृदय मे ब्रज, ब्रजभूमि ब्रजपति के प्रति अगाध श्रद्धा प्रेम और भक्ति है। व इन तीनों के आगे तीनो लोको के राज्य को भी तुच्छ मानते हैं। वस्तुत उनके काव्य म ब्रज और कृष्ण प्रेम की पावन गगा के दशन होते हैं।

सैयद इब्राहीम रसखान की सबसे बडी उल्लेखनीय चरित्रगत विशेषता उनकी असाम्प्रदायिकता है। मुस्लिम शासनकाल म रसखान ने धार्मिक मतभेदों से सर्वथा दूर रहकर हिन्दू धम मे भगवान के अवतार रूप मे स्वीकृत श्रीकृष्ण को इष्ट के रूप म अपनाकर धम निरपेक्षता का एक अनुकरणीय उदाहरण पेश किया है। यद्यपि सिद्धान्त रूप मे प्रसिद्ध सूफी साधक रूमी के शब्दों म-'इश्क का मजहब सभी मजहबो से अलग है। खुदा के आशिकों का खुदा के अलावा कोई मजहब नहीं।" सच्चे प्रेमी धार्मिक मजहबो से ऊपर होते हैं, परन्तु व्यवहार क्षेत्र में इस सिद्धान्त को सही उतारने वालों म रसखान अग्रगण्य हैं। रसखान के काव्य म कहीं भी धार्मिक मतवाद की गन्ध नहीं। इस्लाम मे अवतार और मूर्तिपूजा

को न था जता प्राप्त है और न हो इसके लिये कोई स्थान है। रसखान ने इस्लाम धर्मानुयायी होते हुए भी इन दोनों को सिद्धान्त और व्यवहार में मान्यता दी। रसखान के सच्चे प्रेम और मानवता के उच्च आदर्श को देखकर ही भारतेन्दु ने निम्न उद्गार प्रकट किये थे—

"इन मुसलमान हरिजनन पर कोटिक हिन्दू वारिये।"

रसखान जिस प्रकार धर्म के क्षेत्र में साम्प्रदायिकता से ऊपर उठे हुए थे उसी प्रकार दर्शन के क्षेत्र में भी किसी सम्प्रदाय विशेष में आबद्ध नहीं थे।

रसलीन भी एक ऐसे उदारमना निज धर्मोपासक सहिष्णु कवि थे जिन्होंने मोहम्मद साहब, हजरत अली, इमाम हुसन, इमाम हसन दोहत पीर और अतिथि के ही साथ साथ गंगा राम हनुमान और लक्ष्मण को भी श्रद्धापूर्वक उपस्थित किया है। इसे देखकर ऐसा भ्रम लगता है कि वे निया थे किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि संत और कवि होने के लिये आदमी होना आवश्यक है फिर कुछ और। रसलीन सच्चे अर्थों में मनुष्य थे और अपने धर्म के श्रद्धालु अनुयायी। इसलिये अन्य धर्मों के प्रति वे परम सहिष्णु थे। यह सहिष्णुता उनके व्यक्तित्व एवं साहित्य को मौलिक मान का अधिकार प्रदान करती है।"

रसलीन स्वाभिमानी गुणी और वीर थे। इस रणबाकुरे की मृत्यु युद्ध क्षेत्र में ही हुई। रामचिनौनी के युद्ध में लड़ते हुए सन् 1750 ई० में इनकी मृत्यु हुई। बिलग्रामी कविवर जान ने इनकी मृत्यु पर लिखा है—

मीर गुलाम नबी हुता सकल गुनन को धाम।
बहुरि धर्यो रसलीन निज कविताई मो नाम॥

"गयो जो यह सुर लोक को प्रभु सासन आधीन।
जान कह्यो 'रसलीन' मुनि भव रस सर में लीन।[2]

रसलीन के 'अंग दर्पण' व "रस प्रबोध" नामक दो ग्रन्थ विख्यात हैं। फारसी लिपि में लिखे हुए इनके कुछ कवित्त सवैया व लोकगीत भी मिले हैं।

इस्लाम का जन्म लिए हुए केवल सिर्फ 80 वर्ष हुए थे, कि उतने ही समय में उसका झण्डा एक ओर तो भारत की सीमा पर पहुँच गया और दूसरी ओर वह अटलांटिक महासागर के किनारे पर जा पड़ा। सात सौ ईसवी लगते लगते इस्लाम ईराक, ईरान और मध्य एशिया में फैल गया। सन् 712 ई० में सिन्ध मुसलमानों के अधिकार में आ गया और इसी वर्ष सुदूर पश्चिम स्पेन में भी मुसलमानी राज्य हो गया। हिजरी सन् के सौ साल होते होते मुसलमानों के राज्य के समान

---

1 रसखान ग्रन्थावली पृ० 61
2 रसलीन ग्रन्थावली, पृष्ठ-62

शक्तिशाली राज्य दुनिया में और कोई नहीं रह गया था।[1] कालान्तर में अनेक मुस्लिम आक्राता भारतवर्ष में आते रहे। सैयद लोदी, तुगलक पठान, दास मुगल बादशाहों ने भारतवर्ष पर शासन किया।

1857 के पश्चात् भारतवर्ष से इस्लामी शासन की समाप्ति हुई, किन्तु 712 ई० से लेकर 1857 ई० तक लगभग 11-12 सौ वर्षों तक भारतवर्ष इस्लाम के सम्पर्क में रहा। मुस्लिम शासकों ने संस्कृत का संरक्षण किया और हिन्दी को भी पूर्णतः अपनाया। तुर्की, फारसी और हिन्दी को पास लाने में अमीर खुसरो (1255 से 1324 ई०) का व्यक्तित्व एवम् साहित्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मुस्लिम सूफी सन्तों, व्यापारियों के यहाँ आने जाने और यहाँ बस जाने से तथा अन्य कारणों से बाद में सिन्ध पर भाषा की दृष्टि से इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि सिन्धी भाषा की लिपि भी अरबी भाषा के समान बन गई।[2] इस अरब विजय को सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बताया गया है।[3] उत्तर भारत में इस विजय से मुस्लिम सम्पर्क का श्रीगणेश निश्चित ही हुआ है।

महमूद गजनवी (998 1030 ई०) की सेना में हिन्दू मुसलमान दोनों ही होते थे उसके सेनापति तिलक का नाम जगत विख्यात है। उसकी हिन्दीप्रियता का भी इतिहास में अनुपम उदाहरण मिलता है। उसने पंजाब को अपने राज्य में मिलाकर अपने गुलाम अयास को यहाँ का सूबेदार नियुक्त किया। ख्वाजा मसऊद साद सलमान इस काल का एक विख्यात फारसी कवि था जिसके हिन्दी काव्य का इतिहासों में उल्लेख मिलता है। अमीर खुसरो ने भी सलमान के हिन्दी दीवान का उल्लेख किया है। पंजाब में गजनवी सम्राटों के लगभग पौने दो सौ वर्षों के शासनकाल में अच्छा खासा सांस्कृतिक लेन देन रहा। इस युग के बड़े बड़े फारसी कवियों ने भी अपनी रचनाओं में भी हिन्दुस्तानी शब्दों का प्रयोग किया है। बलबन के काल में सूफी शेख शकरगंज शेख बहाबउद्दीन, शेख बदरुद्दीन और कुतुबुद्दीन बख्तीयार, काकी, आदि सूफी सन्त थे, जिनकी हिन्दी कविता भी मिलती है। बलबन की प्रशंसा में तात्कालीन शिलालेख भी मिलता है जिसमें संस्कृत में रूपकात्मक ढंग से उसकी प्रशस्तियाँ अंकित है। खिलजी वंश के शासनकाल में हजरत निजामुद्दीन औलिया की हिन्दी रचनाएँ भी मिलती है। अमीर खुसरो निजामुद्दीन के मुरीद थे। वे महान संगीतज्ञ भी थे। तुगलक वंश में मुहम्मद तुगलक हिन्दू स्मारकों का आदर करता था और हिन्दी कवियों का भी आदर करता था एवं रत्नशेखर नामक कवि फिरोज तुगलक का अत्यन्त प्रिय कवि था।[4]

---

1 'संस्कृति के चार अध्याय' पृष्ठ–224
2 हिन्दी पर फारसी प्रभाव पृष्ठ–16
3 एन एडवान्स हिस्ट्री आफ इण्डिया भाग–2 पृष्ठ–275
4 मुस्लिम सपात्त पृष्ठ–193

हिन्दी के सूफी कवि मुल्ला दाउद ने अपना प्रेमाख्यानक काव्य 'चदायन' इसी काल मे लिखा। जिसमे फिरोजशाह के दिल्ली सुल्तान होने का वर्णन है। सुल्तान सिकन्दर (लोधीवश) स्वयम् कवि था, उसने हिन्दू-मुस्लिम सस्कृति के लिए बड़ा कार्य किया।[1]

लोधीवश के फरमान हिन्दी के साथ साथ नागरी अक्षरो मे भी जारी किये जाते थे। बीजापुर के आदिलशाही वश के सुल्तान विद्वान थ। वे हिन्दी के कवियो को बड़ा सम्मान देते थे। यूसुफ आदिल शाह के शासनकाल मे माल विभाग मे अनेक हिन्दू अधिकारी नियुक्त किये गये थे। अहमदनगर, गोलकुण्डा, मालवा खानदेश, जौनपुर आदि रियासतो मे भी हिन्दी को प्रश्रय मिला था। कश्मीरी शासक सुल्तान जैनुल आबदीन बुदशाह का हिन्दू मुस्लिम मेल-जोल और भावनात्मकता के लिए सदैव याद रखा जायेगा। अलाउद्दीन हुसैनशाह (बगाल) के शासन काल मे मृगावती की रचना हुई, उसमे कुतुबन ने हुसनशाह की प्रशसा की है।[2]

मुगलकाल में शासको ने सस्कृत और हिन्दी को सरक्षण दिया। उस काल के हिन्दी कवियों की अनेक ऐसी रचनाएं मिलती हैं जिनसे तात्कालीन हिन्दू मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क का परिणाम स्पष्ट होता है।[3]

"बाबर साह छत्रपति राजा। राज पाट उन कह विधि साजा।
मुलुक सुलेमा कर आहि दीन्हा अदल दुनी उमर अस कीन्हा॥
अली केर जस कीन्हेसी खाडा। लीन्हसि जगत समुद भरि डाडा।
'बल हमजा' कर जैसे मभारा। जो बरियार उठा तेहि मारा॥[4]

जायसी ने यहा पर मुल्क सुलेमा, खलीफा उमर के समान न्यायी, हमजा के समान बली तथा खलीफा अली के समान खड्ग वीर, मुस्लिम सस्कृति की उपमाओ एव अन्तकथाओं के द्वारा हिन्दी साहित्य मे नवीन स्थापनाएँ की हैं। नरहरि ने बाबर के विषय मे फारसी बाहुल शब्दावली युक्त कीर्तिगान करते हुए कहा कि दुनिया मे मने अन्य कोइ बादशाह बाबर के बराबर नही देखा—

'नेकबख्त दिल पाक सखी अवा मद नेर नर।
अब्बल अली खुदाई दिया बिसियार मुलक जर।
खालिक बहुवेश हुकुम आलिया जो आलिब।
दौलत बख्त बुलन्द जग दुस्मन पर गालिब॥

1 ओरएण्टल कालज मगजीन मई सन् 1933 ई पृष्ठ–116
2 ओरिएण्टल कालेज मैगजीन मई सन् 1933 ई प 203
3 पजाब में उर्दू पृ 145 184 187
4 जायसी ग्रन्थावली (आचार्य शुक्ल) पृ 341 342

अवसाफ तुरा गोयद सकल कवि नरहरि गुफ्ताम चुनी ।
बाबर बरोबर बादशाह दिगर नदीरम दर दुनी ।।"[1]

हुमायू के दरबार म शेख अब्दुल वाहिद बिलग्रामी और शेख गदाई ने बडे सुन्दर गीतो की रचना की है । नरहरि उसके दरबार के श्रेष्ठ कवि थे और उनके ऊपर बादशाह की कृपादृष्टि थी । "अकबरी दरबार के हिन्दी कवि ग्रन्थ के परिशिष्ट से ज्ञात होता है कि मुगलकाल म हिन्दू मुस्लिम सस्कृति का अन्योन्य सम्ब ध हो रहा था ।

शेरशाह साहित्य ममज्ञ शासक था । मलिक मुहम्मद जायसी ने उसकी भूरी भूरी प्रशसा की है । शेरशाह ने हिन्दू धम के प्रति धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया । नरहरि ने भी उसकी प्रशसा की है ।[3]

अकबर के दरबार मे अनेक कवियो के अतिरिक्त उस काल मे सूरदास, तुलसीदास और सुन्दरदास हुए । तुलसीदास को रहीम ने सरक्षण दिया था, और मानस की सरचना मस्लिम सरक्षण मे ही हुई । इससे अधिक अकबर के शासन का श्रेय और क्या हो सकता है ।

अब्दुल रहीम खानखाना अकबरी युग के प्रसिद्ध सेनापति दानशील' साहित्य कार एव प्रसिद्ध कवि थे । कहा जाता है कि खानखाना ने गग को निम्नलिखित छन्द पर प्रसन्न होकर छत्तीस लाख रुपये पारितोषिक के रूप मे प्रदान किए थे ।[4]

'चकित भवर रहि गय, गमन नहि करत कमल बन ।
अहि फनि मनि नहिं लेत, तेज नहि बहत पवन घन ।।
हम मानसर तज्यो चक्क चक्की न मिले अति ।
बहु सुन्दरि पदिमनि पुरुष न चहै न करै रति ।।
खत मलित सेस गग मन अमित तेज रविरथ खस्यो ।
खानखाना बैरम सुवन जवहिं क्रोध करि तग कस्यो ।।"[5]

रहीम हिन्दी के श्रेष्ठ कवि हैं । व्रज, कन्नौजी और अवधी की उन्नति मे भी मुसलमानो का योगदान महत्वपूण है ।[6] मुसलमान शासको मे सूफियो एव साहित्य कारो का अरबी फारसी हिन्दी साहित्य के सरक्षण और प्रसार का वृत्तान्त हिन्दू-मुस्लिम सम्पक का सुखद परिणाम है । जहागीर के दरबार मे हिन्दी कवियो का

---

1 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि पृ 329
2 शिवसिंह सरोज पृ 102
3 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि' पृ 329
4 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि प 119
5 — वही — प 119
6 पजाब मे उर्दू पृ 27

चन्द्रबली पाण्डेय का कथन है कि औरंगजेब हिन्दी में कविता करता था और हिन्दी को आदर की दृष्टि से देखता ही नहीं प्रत्युत उसका प्रचार भी भरपूर करता था।[1] औरंगजेब का भाई दाराशिकोह संस्कृत एवं हिन्दी ज्ञान एवं संरक्षण के लिये विख्यात है। संस्कृत भाषा एवं दर्शन और तसव्वुफ में उसकी विशेष रुचि थी।[2]

हिन्दी साहित्य में भारतीय दर्शन के साथ इस्लाम की भी पूरी पूरी छाप दृष्टिगोचर होती है। मोमीन मुसलमान कुरान हदीस अल्लाह, कायनात अन फना फानी, जिन्न, मलाईका इस्राईल, जिब्राईल इस्राफिल मीकाईल, इब्लीस शैतान, नबी, रसूल, पैगम्बर, आदम नूह इब्राहिम, युसुफ, यूनुस मूसा, ईसा, खीजर, मोहम्मद, पैगम्बर पीर, खलीफा अबूबक्र सिद्दीक उमर फारुक, उस्मान अली, हजरत अली, रोजे कयामत हराम हलाल सजा जजा पुलसिरात दोजख, जन्नत, कलमा नमाज अरकान गुस्ल वजू अजान तसबीह, मुसल्ला मस्जिद, रोजा, दरवेश, वली, शान दरगाह नूर इश्क मुर्शीद मुकाम शरीयत तरीकत मारीफत, हकीकत, नफस, जिक्र फिक्र, प्रभृति शब्द जो साहित्य कला दर्शन और आध्यात्म की दृष्टि से उत्तरोत्तर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, उन्हें हिन्दी साहित्य में हिन्दी के मुसलमान कवियों ने सहज सुलभ करा दिया है।

हिन्दी के मुसलमान कवियों ने भारतीय संस्कृति को राजनीतिक दृष्टि से भी इस्लाम के निकट ला दिया। तुलसी के राम, गरीब निवाज हैं रंक निवाज विशेषण निवाज है। शाहों के शाह हैं सुल्तान या सुलतान हैं। महल दरबार, दरबान गुलाम, खव्वास, वकील, वजीर काजी दीवान खास, आम अमीन, मोहर्रिल, जासूस आदि हिन्दी साहित्य के प्रचलित शब्द मुस्लिम संस्कृति अथवा हिन्दी के मुसलमान कवियों की ही देन है।

दुश्मन, कूच, मुकाम वैरक, फौज, सवार, असवार जनाज, जिरहबख्तर, सिपर, तीर, कमान, तरकश नेजा, तेग, शमशीर बारूद फलीता जैसे शब्द मुस्लिम सम्पर्क से ही आये हैं। कृषि तथा ग्राम सम्बन्धित जीवन में अरबी फारसी के माध्यम से आयी हुई शब्दावली का हिन्दी साहित्य में भी चित्रण मिलता है, जो मुसलमान सम्पर्क का परिणाम है। बाजार, दुकान, दलाल, माल, नफा बरामद, तलब, बजाज, बाकी, पेशा, पेशेवर, जुलाहा दरजी जौहरी, रंगरेज बाजीगर, कसाई, कागज, कलम, रुक्का, मसुव्वदा, चर्चा लफ्ज मानी जिल्द जिल्द-साज, शिकंजा, पता, लिफाफा, हरकारा आदि मुस्लिम सम्पर्क से साहित्य उपकरणों के प्रयोग में वृद्धि हुई है।

---

1 'मुगल बादशाहों की हिन्दी' पृ 45
2 मुस्लिम संपादित' पृ 224

अरब और दक्षिण भारत का यद्यपि व्यापारिक सम्बन्ध बहुत प्राचीन था, किन्तु 712 ई में मुहम्मद बिन कासिम के सिंध विजय के पश्चात् उत्तर भारत से भी मुसलमानों का सम्बन्ध स्थापित हो गया था। मुस्लिम शासन की विधिवत् भारत में स्थापना के पश्चात् फारसी भाषा का अध्ययन, अध्यापन भी प्रारम्भ हो गया। शाही दरबारों ने नौकरी पाने और राजकीय कर्मचारियों का नैकट्य प्राप्त करने आदि की इच्छुक स्थानीय जनता ने उस भाषा में योग्यता प्राप्त करना आरम्भ कर दिया। डॉ केलाग के मतानुसार 'हिन्दी' अपने जन्म से ही विदेशी भाषाओं से प्रभावित होती रही है।[1] इससे यह परिणाम भी निकाला जाता है कि हिन्दी कवि भी प्रारम्भ से ही फारसी के सम्पर्क में रहे होंगे। अकबर से पूर्व प्रशासन सम्बन्धी रिकार्ड हिन्दी में रखे जाते थे, और फारसी को राज्याश्रय प्राप्त था। अरब, ईरानी अफगान, तुर्क, तातार, पठान आदि देशी विदेशी मुसलमान फौजों के कारण भी बाजारों नगरों और देहातों में मुस्लिम सम्पर्क की सम्भावना पाई जाती है। मुसलमान शासकों के हरमों, दरबारों और अमीर उमारा के वातावरण से भी भारतीय जनता ने सम्पर्क सूत्र स्थापित किया। मुगल काल में विशेष रूप से मुस्लिम सम्राटों, अमीर उमरा ने हिन्दू स्त्रियों से विवाह करके सांस्कृतिक सम्पर्क को बढ़ावा दिया। अनेक कारणों से हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी कवियों का मुस्लिम संस्कृति से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित होने के फलस्वरूप हिन्दी के अनेक कवियों ने केवल अरबी, फारसी, तुर्की शब्दों का ही प्रयोग किया। बहुत कम लोग जानते होंगे कि हिन्दी कवियों की अधिकांश प्राचीन पाण्डुलिपियाँ फारसी लिपि में मिलती हैं।

महमूद गजनवी काल के विद्वान अलबीरूनी के बाद अमीर खुसरो से लेकर अकबरी दरबार के अबुल फजल, फैजी जैसे मुसलमान अरबी, फारसी के विद्वान संस्कृत और हिन्दी से परिचित थे। ऐसा इससे पूर्व कहा जा चुका है। मनोहर कवि भी फारसी का अच्छा कवि था तथा चन्द्रभानु ब्राह्मण को फारसी ज्ञान भी प्रमाणित है।[2]

नानक द्वारा भी कुरान का उल्लेख है —

'कलि परवाणु कतेब 'कुराण'। पोथी पंडित रहे पुराण ॥
नानक नाउ भइया रहमाणु। करि एकता तू एके जाणु ॥"[3]

---

1 आलमोस्ट फ्राम इट्स वरी ओरिजिन हिन्दी हेज बिन सब्जेक्ट टू फारिन इन्फ्लुएन्स — एच एस केलाग 'ए ग्रामर आफ दी हिन्दी लैंग्वेज' चेप्टर–3 पेज 36

2 मुस्लिम सराफत, पृ 557 58

3 नानक वाणी पृष्ठ 501

तुलसी तत्कालीन राजभाषा से परिचित मालूम होते थे। तुलसी ने अनुस्वार के माध्यम से परमात्मा सम्बन्धी गुत्थी को सुलझाया[1] वहाँ निम्न उदाहरण मे अरबी, फारसी, वर्णों के माध्यम मे फलसफाए ऐनुलयकीन और इल्मुलयकीन का हल तलाश कर दिया है -

"नाम जगत सम जानु जग, वस्तुन करि चित चैन।
बिन्दु गये जिमि 'गैन' ते रहत ऐन को ऐन ॥"[2]
आपु ऐन' विचार विधि, सिद्ध विमलमति मान।
मान वासना 'बिन्दु' सम तुलसी परम प्रमाण ॥'[3]

"ऐन" और "गैन" अरबी, फारसी, उर्दू वर्णमाला के अक्षर हैं। कवि आलम जो ब्राह्मण थे, स्वेच्छा से मुसलमान हुए थे। उन पर तो विशेष रूप से मुस्लिम प्रभाव नजर आता है। फारसी अन्दाज का एक सुन्दर शेर प्रस्तुत है—

"अलब मुबारक तिय बदन लहकि परि यो साफ।
खुसनसीब मुनसी मदन लिख्या काँच पर 'काफ' ॥[4]

इसके अतिरिक्त यारी साहब[5], भीखा साहब[6] आदि सूफी सत कवियो न अलिफनामा के अन्तगत अलिफ[7] से लेकर 'ये' तक क्रम म अरबी फारसी वर्णमाला के प्रत्येक वर्ण से प्रारम्भ करके दोर कहे हैं। अनेक हिन्दी के कवियो ने अपने काव्य मे अरबी, फारसी, तुर्की के शब्दो का इतने सुन्दर और स्वाभाविक एव ठीक रूप से प्रयोग किया है कि देखते ही बनता है -

अत कहा जा सकता है कि आलोच्यकालीन राज्य द्वारा सम्मानित हिन्दी मे राजभाषा फारसी के माध्यम से मुस्लिम-सस्कृति एव साहित्य के प्रसार का बहुत अवसर मिला है। जिसको हिन्दी कवियों न उदारता से ग्रहण किया है।

मुस्लिम काल मे मकतबों मे कुरान और फारसी की शिक्षा दी जाती थी। मुगलकाल म हिन्दी और फारसी दोना का समावेश हो गया। उस काल मकतबो और मदरसों म हिन्दू और मुसलमानो के साथ साथ शिक्षा ग्रहण करने के कारण गहरा प्रभाव पडा है।[8] कबीर ने मुस्लिम सूफियो के सम्पर्क मे बहुत समय बिताया

---

1 तुलसी और उनका काव्य पृ-250
2 तुलसी सतसई (वस्तु सग दोहा 71), पृ 135
3 वही-दोहा 72। पृष्ठ-136।
4 रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमिका पृष्ठ 11
5 यारी साहब की रत्नावली पृष्ठ 711
6 भीखा साहब की बानी, पृ 73
7 दादू-बानी भाग 1, पृष्ठ 23
8 'परशियन इन्फ्लुएन्स आन हिन्दी', पृष्ठ 8

उनकी अभिव्यक्ति पर सूफी दरवेशो और फारसी कवियो की पूरी छाप पायी जाती है। इस्ठासीना मसूर हल्लाज तथा इस्लाम के अनेक सिद्धान्तो का कबीर पर प्रभाव पड़ा है।[1] सूफी कवियो की मसनवियो मे स्तुति खण्ड पूणत इस्लाम एव फारसी साहित्य की परम्परानुकूल हैं। हिन्दी-सूफी काव्य फारसी अन्दाज के प्रेम काव्य हैं। संस्कृत परम्परा के विपरीत इनमे 'औरत को 'माशूक' और मर्द को 'आशिक' बनाया गया है।

हिन्दी के मुसलमान कवियो पर जितनी गहरी छाप मुस्लिम परम्पराओ की थी, उतनी गहरी छाप हिन्दू धर्म दर्शन की भी थी। तुलसी और सूर के काव्य मे फारसी और इस्लाम का प्रभाव पर्याप्त अशो मे मिलता है।

सगीत कला के क्षेत्र म ढफ, निशान, दमामा नगारा, शहनाई, सूर, नवौबत आदि का हिन्दी साहित्य मे आगमन मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क का ही सुखद परिणाम था।

वास्तु कला के क्षेत्र मे कारीगर, गच दरवाजा, दहलीज, कगूरा, मस्जिद, महल हवेली खाना, आदि इस्लाम की ही देन है।

कव्वाली, गजल, बरवै, बहर, रदीफ, मसनवी कसीदा, मुकरी, अलिफ नामा कहरा, रखता दा समुने आदि काव्य रूप मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क के परिणाम है।

मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क के परिणाम स्वरूप अनेक भाषागत अलकरण उपनामो, मुहावरों आदि के रूप मे आय है।

इस कदर जुलकरनन सुलेमान, उमर, हातिम अली, यूसुफ आदि क प्रयोग भक्तिकालीन कवियो मे मिलते हैं। अरबी फारसी शब्दों द्वारा निर्देशन और परम्परा स चले आते हुए हमजा, तीर, कमान, जजीर, बादवान, बैरख, नकीब, गुलबदन माहरू, कबूतर, गुलन, तरकश कसाई, मरतुल, मनक, सुराही, हब्सी चौगान, नरगीस, अमीन, ताजी आदि भी मुस्लिम सस्कृति और कवियो की देन है। सैकड़ों मुहावरे जैसे— 'सिरतापायी, गरदनमारी चिसलाया, करमोनत, सलाम करना, सौदासूत, मुस्लिम सस्कृति की ही देन है।

सूरदास, तुलसीदास, कबीर रैदास, नानक, दादू दयाल, मलूकदास, नरहरि आदि काव्यो मे हिन्दू मुस्लिम सास्कृतिक सामासिकता देखते ही बनती है।

भक्तिकालीन कवियो द्वारा निरूपित सामान्य जीवन सम्बन्धित आवरण खान पान (क्याब तरकारी, लहसुन, चुकन्दर, पोदीना, प्याज गाजर शलजम,

---

1 इस्लामुप्त आर म्यान एण्ड इण्डियन कल्चर, पृष्ठ 148 149 एव 151

सब्जी, तरबुज, सेब, अनार, नारंगी, अंगूर आलूबुखारा, पिस्ता, बसराट, बादाम, किशमिश काजू खुरमा, हलवा, मलाई ।) से भी इस्लाम ने हिन्दी को समृद्ध किया है ।

वशभूषा – में सम्बद्ध ताफता, जग्वसी, जरतारी कुलह चौतनी, कलगी मखमूल, तन सुख कमीदा, अमिरा, कालिन तोषक लिहाफ रजाई बिस्तरा आदि फारसी शब्द हैं । कफन भी फारसी शब्द है । आभूषण प्रसाधन मगनी मनो विनोद, खेल कूद आदि से सम्बद्ध अनगिनत शब्द इस्लामी संस्कृति और कवियों की ही देन है ।

हिन्दी साहित्य में मुसलमान कवियों ने अपने कृष्ण काव्यों में प्राय भारतीय संस्कृति और हिन्दी भाषा का ही उपयोग किया है । किन्तु मुस्लिम संस्कृति से उपरोक्त सूत्र शब्दावली आदि भी उनके काव्यों में प्रयुक्त मिलते हैं ।

इस्लामिक संस्कृति में पली बड़ी ताज कृष्ण भक्ति सागर में मज्जन करने के पश्चात् यमुनारत् हो गई । उन पर दूसरा रंग चढ़ता कैसे ? उन्होंने घोषणा ही कर दी कि– 'हिन्दुवानी" हो मैं रहूंगी मैं । पठान रसखान ब्रज के कण को स्पर्श कर दीवाने हो गए । देहली को भुला बैठे और करील की कुंजों में कूजन लगे । तीनों लोकों यथा स्वयं का भी न्योछावर कर बठे । छछिया भरि छाछ के नृत्य को देखते हुए अपनी सुध बुध खो बठे । रसलीन कृष्ण रस में ही लीन हो गए । नित्य नये 'हावों भावों के हिंडोलों में झूलने लगे ।

अकबर, जहांगीर और शाहजहाँ भी कृष्ण लीला के जादू से अछूते नहीं रहे । आलम और शेख रगरेजन पगड़ी के खूट के माध्यम से सभी लोक-मर्यादाओं को नकारते हुए एक दूसरे से बंध गए और दोनों पर कृष्ण की रूप माधुरी का ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे कृष्ण वियोग की पीड़ा का आनन्द भोगने लगे । नेवाज ने भी कह ही दिया कि– "जो कलंक लग ही गया है,तो 'निशंक' होकर (कृष्ण) गले क्यों नहीं लगाती "यारी साहब के हृदय में दिन दिन प्रीत अधिक उत्पन्न होती गई । अब्दुल्लाह औरे रंग, औरे ढंग औरे छवि की तरंग में खो गए । कारे खाँ फकीर बार बार पुकार कर "अहीर" की प्रतीक्षा में रत रहने लगे । सैयद बरकत उल्लाह पेमी को अपनी कुशलता कृष्ण के दर्शन में ही दिखाई देती है– पेमी बिकल कुसल नाहिं दीखत, गिन गिन अवध टरी ।'

लाहौर वासी संत बुल्लेशाह मनुष्य को मनुष्य मानते हैं । वे हिन्दु तुरक में भेद नहीं करते । वे कहते हैं—

'दुई दूर करो कोई सार नहीं हिन्दु तुरक कोई होर नहीं ।
सब साधु लखो कोई चोर नहीं, घट घट में आप समाया है ।
ना मैं मुल्ला, ना मैं काजी, ना मैं सुन्नी ना मैं हाजी ॥

मनुष्यत्व की इस रसमय भूमि पर आकर समस्त भेद विभेद समाप्त हो जाते है। इस रस जगत मे प्रेम प्यासा मानव ही बसता और आनन्द भोग करते हुए आनन्द और कल्याण की वर्षा करता है। लोक मानस के आकाश म ऐसे अनेक मेघ-खण्ड मन्द्र मन्द्र ध्वनि से गरजे और भूमि को रससिक्त करते रहे। अब्दुल जलील, मीर अब्दुल्लाह मुहम्मद आरिफ, मीर माधा, आदिल, सन्त दाना साहेब, बाबा नबी, बाबा फजल, बाबा गुलाम, सन्त मकरन, तालिबशाह, नवसान वली मोहम्मद, इशाअल्ला खाँ नजीर, शेख मुल्लन, अलीमन सय्य रोशन आदि अनेक मुसलमान कवियो न व्रज भाषा और व्रजराज के सम्मोहन स्वय को गला दिया है। भावात्मक एकता का इमस सुन्दर समन्वय मानव इतिहास म अन्यत्र दुर्लभ है।

वस्तुत य सभी कृष्ण भक्त कवि अपने सम्प्रदायो की सकीर्ण परिधि से ऊपर उठकर राधा कृष्ण की व्यापक दृष्टि से उपासना किया करते थे और उन सबका समान रूप से एक ही उद्देश्य था– रस, आनन्द और प्रेम की मूर्ति श्री कृष्ण और राधा कृष्ण की लीला का गायन।

ये सभी कवि समाज के कल्याण की भावना से प्रेरित थे। उन्होने आन्तरिक शुद्ध आचरण पर बल देने वाले सब प्रकार के भेद भाव से रहित भावना प्रवण सामान्य लोकधम का प्रचार करने के लिये ही अपनी वाणी का उपयोग किया था। इन कृष्ण भक्तो को नितान्त वैयक्तिक साधना म लीन और लोक सग्रह शून्य नही कहा जा सकता।

भाव तो कवि के अतस का एक धम होता है। भाव सम्प्रदाय और जाति निरपेक्ष तथा देशकालातीत होता है।

शाह बरकत उल्ला 'पेमी" ने कहा —है

> "पेमी हिन्दू तुरक मे हरि रग रह्यो समाय।
> देवल और मसीत मे दीप एक ही भाय॥

दीप का यह प्रकाश ही महत्वपूर्ण है—यह प्रेम का, भावना का प्रकाश है जो हिन्दू हो या मुसलमान सबके हृदय को समान रूप से आलोकित करता है।

कृष्ण भक्ति रस, आनद और 'प्रेम" की त्रिवेणी है इसम अवगाहन करने के पश्चात् बिहारी और रसलीन, मीरा और ताज घनानद और रसखान, जायसी (पद्मावत्) और जायसी (कन्हावत्) का भेद समाप्त हो जाता है। सब भक्तो का भाव जगत् एक हो जाता है, और इसी भाव जगत का परिचय विवेच्य कवियो म सवत्र उपलब्ध है।

□

उपसहार

मध्ययुग की नूतन वैष्णव भक्ति के प्रणेता चार आचाय रामानुज (सन् 1037 – 1137, स 1090–1290 वि निम्बाक बारहवी शताब्दी ई (मह्व त) तेरहवी शताब्दी ई) और विष्णु स्वामी माने जाते हैं। पर तु उत्तर भारत म कृष्ण भक्ति का प्रचार करने वाले सम्प्रदायो का सगठन कदाचित सोलहवी शताब्दी मे ही हो सका। यह स्वाभाविक है कि यह सगठन कृष्ण लीला की भूमि व्रज प्रदेश–प्राचीन शूरसेन जनपद–के केन्द्र मथुरा, व दावन से प्रारम्भ हुआ। सोलहवी शताब्दी म सगठित कृष्ण भक्ति सम्प्रदायो का सम्बध उपयुक्त तीन आचार्यों निम्बाक, मह्व त और विष्णुस्वामी से जोडा जाता है।

सोलहवी शताब्दी म स्थापित सम्प्रदायो म विशेष रूप से जहा तक हिन्दी कृष्ण भक्ति साहित्य का सम्ब ध है वल्लभाचाय का पुष्टिमाग, चैतन्य का गौडीय, गोस्वामी हित हरिवश का राधावल्लभी तथा स्वामी हरिदास का सखी भाटटी सम्प्रदाय प्रमुख है। वल्लभाचाय के पुष्टिमाग को छोडकर सोलहवी शताब्दी के उपयुक्त सभी सम्प्रदाय नितात साधना पथी थे।

प्राय सभी कृष्ण भक्ति सम्प्रदायो का मूलाधार श्रीमद् भागवत है। प्रस्थान त्रयी (ब्रह्मसूत्र, उपनिषद्–श्रीमद् भगवत गीता) मे भागवत को जोडकर प्रस्थान चतुष्टय की परम्परा चली। निम्बाक मह्व त, गौडीय, राधावल्लभी, सहज आदि मे भागवत का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

यहाँ यह उल्लेख करना सगत होगा कि प्रत्येक सम्प्रदाय मे श्रीमद् भागवत की व्याख्याएँ अपनी अपनी दृष्टि से की गई है और ऐसा करने का मूल उद्देश्य है अपनी अपनी भक्ति के स्वरूप को प्रमाणिकता देने का प्रयास। जैसे मध्वचाय ने रासलीला और गोपी प्रेम को महत्व नही दिया और दूसरी ओर गौडीया वैष्णव भक्ति मे राधा गोपी कृष्ण प्रेम को अत्यन्त व्यापक रूप मे प्रतिष्ठित करने के लिए श्रीमद् भागवत के एक एक श्लोक की सहायता ली गयी है। और उनमे राधा का सकेत प्रमाणित किया गया है। आचाय वल्लभ ने पुष्टि माग के अन्तगत बाल कृष्ण की लीला भक्ति की प्रतिष्ठा की कि तु उनके सुपुत्र आचार्य विटठल सुरदास आदि अष्टछापीय कवि की भक्ति म माधुय भाव की प्रतिष्ठापना श्रीमद् भागवत के ही आधार पर हुई है।

वस्तुत श्रीमद् भागवत म जिस प्रेमाभक्ति का निरूपण हुआ है सोलहवी शताब्दी के कृष्ण भक्तो ने उसी को आधार या स्रोत रूप मे ग्रहीत करके अपनी

अपनी पद्धति के अनुसार पराकाष्ठा पर पहुचा दिया है । इस भागवत में कृष्ण के साथ ही आराध्य रूप मे राधा या कृष्णाराध्य रूप में राधा की प्रतिष्ठापना भी की है । सच तो यह है कि वैष्णव भक्ति के पुनर्निर्माण और पुनरोत्थान मे भागवत का योग सर्वाधिक रहा है । वही कृष्ण, भक्ति, मधुरा प्रेम भक्ति आदि का अक्षय स्रोत भी रही है ।

भारतवर्ष के प्राय सभी कृष्ण भक्ति सम्प्रदायो में कृष्ण के सगुण रूप को ही दृष्टि में रखा गया है । कृष्ण ज्ञेय, आनन्दमय, साभास पूर्ण ब्रह्म हैं । इन कृष्ण सम्प्रदायो मे जीव और जगत को ब्रह्म का अंश माना गया है । सभी कृष्ण सम्प्रदायो ने कृष्ण को ब्रह्म या भगवान मानते हुए अपने अपने भाव के अनुसार मानवीय गुणो का आरोप किया है सभी सम्प्रदायो में कृष्ण के गोलोक या वृन्दावन को नित्य और परम आनन्दमय धाम माना गया है । वहाँ के गोप गोपी यमुना वन, वृक्ष, लता, कुञ्ज आदि सब श्रीकृष्ण से अभिन्न हैं । पार्थिव वृन्दावन को नित्य कृष्ण धाम मानकर राधा कृष्ण और गोपियो को कृष्ण से अभिन्न माना गया है ।

वस्तुत भक्ति और काव्य के आवश्यक तत्वो और लक्षणो से समन्वित हिन्दी कृष्ण काव्य के चरित नायक व्रजवासी गोपाल कृष्ण ही है, उन्ही की मधुर लीला का भक्त कवियो ने अपनी अपनी भावना के अनुसार गाया है । गोपाल कृष्ण व्रजभूमि मे केवल अपनी मधुर लीला विस्तार मात्र करते है, लीला के अतिरिक्त किसी अन्य उद्देश्य से अवतरित होकर उसके लिए प्रयत्नशील नही होते । अत उनकी कथा में किसी फलागम की उत्सुकता नही है, अपितु उनकी लीला का प्रत्येक अंग अपने मे पूर्ण है । अत इस लीला का वर्णन करने वाले कवियो द्वारा गीति पद्धति का अपनाया जाना स्वाभाविक है । फिर भी कृष्ण लीला गाने वाले कवियो में कृष्ण कथा के किसी न किसी अंश विशेष की प्रबन्ध कल्पना पृष्ठ भूमि के रूप में प्राय पाई जाती है । उदाहरण के लिए हरिवंश और उनके अनुयायियो के पदो की पृष्ठ भूमि मे राधा कृष्ण विहार के कथा प्रसग निरन्तर विद्यमान रहते हैं, रसखान के कवित्त सवयो के पीछे कृष्ण कथा की छोटी छोटी प्रसग कल्पनाएँ रहती है जो कृष्ण के सौन्दर्य और माधुर्य की व्यजक हैं और सर्वस्व बलिदान करने की आकाक्षा रखने वाले प्रेम का रूप उपस्थित करती हैं ।

इस दृष्टि से इन समस्त कृष्ण भक्त कवियो द्वारा वर्णित कृष्ण कथा के विविध अशो को एकत्र करके एव सम्पूर्ण चरित कथा का निर्माण तथा कृष्ण भक्त कवियों की प्रवृत्ति की समीक्षा की जा सकती है ।

इस्लाम एक कट्टर मजहब है । भारतवर्ष में मुसलमानो का आगमन लूट खसोट और मन्दिरों की तोड फोड से आरम्भ होता है । इस्लाम मे सूफी मत

उदार विचारों वाला है। सूफी सन्तों ने मनुष्य मनुष्य के हृदय के बीच विद्यमान रागात्मक तार को झंकृत किया, उन्होंने हिन्दू मुस्लिम के बीच की खाई को पाटने का प्रयत्न किया। 'राम" मुसलमानों के हृदय में घर न कर सका। राम के प्रति इनके हृदय में कोई उमंग नहीं उठ सकी, किन्तु कृष्ण के माधुर्य भाव के प्रति उनमें सहज भावना जगी जो किसी किसी में मस्ती एवं उन्माद में रूप में भी प्रकट हुई। फारस में उन्मद प्रेम का चिर अभिलाषी मुसलमान हृदय बरसाती नदी की तरह उमड़ कर कृष्ण रूपी सागर की ओर बह चला। कृष्ण का अनुपम रूप, मनोरम शृंगार एवम् माधुर्य सभी के हृदय मोहित करने लगा, हृदय को न्यौछावर करने के लिए बाध्य करने लगा। कृष्ण तथा राधा कृष्ण के प्रेम में डूबकर वे मदहोश हो गये। इन्होंने जब प्यार किया तो अपने पास कुछ भी नहीं छोड़ा। मुसलमानों ने हिंदी के लिए क्या किया इसके विकास में उन्होंने कितना योगदान दिया ? इस सन्दर्भ में विचारणीय है कि यदि मुसलमान और मुस्लिम संस्कृति का संयोग हिन्दी, संस्कृत और हिंदी भाषा से न होता तो आधुनिक हिन्दी भाषा भी क्या इसी रूप में होती, इसका साहित्य भी क्या इतना ही समृद्ध होता ? इस विषय में कहा जा सकता है कि वास्तविक हिन्दी, भक्ति कालीन हिन्दी का प्रारम्भ ही मुस्लिम आक्रमण की प्रतिक्रिया के कारण हुआ है। इस विचार से कुछ विद्वान प्रायः असहमति प्रकट कर रहे हैं। उनकी मान्यता है कि यदि मुसलमान भारत में न आते, उनकी संस्कृति का आदान प्रदान न भी होता तो भी हिन्दी का स्वरूप प्रतिगत रूप ऐसा ही होता।

अनेक उदार मुसलमानों ने हिन्दी के साथ वही सम्बन्ध स्थापित किया जो हिन्दुओं का सदा से है। भक्ति कालीन काव्य में मुसलमानों का अपार योग मिलता है। यदि एक ओर सूर और तुलसी हैं तो दूसरी ओर कबीर और जायसी हैं। राम कृष्ण भक्तों के साथ ही सूफी और निर्गुणियाँ सन्तों का योग भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। एक ने भक्ति तो दूसरे ने प्रेम की पीर को परिवर्तित किया। रीति काल में बिहारी और देव हैं तो रहीम रसखान रसलीन भी हैं। आधुनिक युग में सयद अमीर अली मीर, ईंशा अल्लाखाँ और मुंशी अजमेरी के कवित्व का योगदान भी महा मूल्यवान है। जिस तल्लीनता से हिंदुओं ने हिन्दी की उन्नति में योग दान दिया उसी लगन और तल्लीनता से मुसलमानों ने भी हिन्दी की सेवा की है। अनेक मुसलमान बादशाहों ने भी हिन्दी के विकास में योग दिया है। सूफी कवियों की हिन्दी सेवा, ज्ञानमार्गी सन्तों की हिंदी सेवा, मुसलमान कृष्ण भक्तों की हिन्दी सेवा, रीतिकालीन मुसलमानों की हिन्दी सेवा और आधुनिक मुसलमानों की हिन्दी सेवा— इन सबका हिंदी के विकास में अपार योग है।

कहा जाता है कि सर्वप्रथम मुसलमान साहित्यकार कुतुबअली (सम्भवतः बारहवीं शताब्दी) हैं। इनकी रचनाएँ आज नोटिस या सूचना रूप में ही प्राप्त होती हैं। इनके पश्चात अमीर खुसरो को खड़ी बोली हिन्दी का प्रथम कवि होने

का सौभाग्य प्राप्त है, उनकी पहेलियाँ मुकरियाँ दो सखुन भावा समक अलकार आदि के उदाहरण आज भी लोगों की जबान पर है। उन्होंने फारसी दाँ लोगों के हिन्दी सीखने के निमित्त और हिन्दी प्रसार के लिए पर्यायवाची कोषों का भी निर्माण किया और ये कोष भी पद्य में लिखे गये।

मुस्लिम आक्रान्ताओं की नंगी तलवारों ने जब हिन्दू संस्कृति के आगे प्रश्न चिन्ह लगाया तब सूफी सन्तों ने अपनी प्रेम की पीर द्वारा हिन्दू मुस्लीम एकय का महान सन्देश दिया। उनकी हिन्दी साहित्य साधना हिन्दी साहित्य में एक महत्व-पूर्ण धारा के रूप में स्थापित है। शैली, भाषा, तथ्य आदि दृष्टियों से इनका बड़ा महत्व है मुल्लादाऊद के चन्दायन से प्रारम्भ हुई सूफी प्रेमाख्यान परम्परा उन्नीस सौ अठारह ईसवी तक (कवि नसीर) तक चली आयी है। इसी परम्परा में मलिक मुहम्मद जायसी के अमर काव्य "कन्हावत" 'पद्मावत" और "चित्ररेखा" आते हैं हिन्दी की अवधी बोली को साहित्य के सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय इन्हीं सूफी कवियों को है।

प्रेमाश्रयी साधकों के प्रिय में, ज्ञानियों के ब्रह्म योगियों के परमात्मा, भक्तों के भगवान में स्थित परम सौन्दर्य वाला आकर्षण मिलता है। ये प्रेमी कवि प्रियतम प्रभु को प्राप्त करने की चेष्टा में प्रवृत्त रहे, उनके मत से पृथ्वी और आकाश का कण कण प्रियतम के तेज से ही प्रकाशमान और गतिशील है। इन प्रेमियों का यह प्रियतम पारस रूप है जो सृष्टि के कण कण को द्वादशवर्णी कांचन अस्मिता प्रदान कर सकता है। सूफी सन्त अपने प्रियतम में किशोर वय को और उसके सौन्दर्य को बड़ा महत्व देते आए है उसकी छाया को उन्होंने परम् आत्ममयी एवं शक्ति सम्पन्नता नारी के रूप में देखा और उसके सयोग को पाकर परम माधुर्य का रस प्राप्त किया। सूफियों के यहाँ सहज सयोगी प्रिय के सयोग का कोई बाहरी माध्यम नही था इसी कारण उन्होंने इसके एकान्त दिव्य मिलन का अनुभव करते हुए सासारिक वस्तुओं से अपनी आँखें मोड़ ली थी।[1]

जायसी की साधना ने प्रेम की शक्ति से सांसारिक पति पत्नी के सयोग में परमात्मा आत्मा के मधुर मिलन की झाँकी को प्रत्यक्ष करते हुए प्रेम मार्गियों को एक नई दिशा भी दी और प्रेम का आलोकिक आदर्श का प्रतिमान भी स्थापित किया। सासारिकता से प्रेमी का सम्बन्ध न होने के कारण इन प्रेमियों ने ससार को उस परम प्रभु के प्रेम का प्रसार ही मान लिया और भगवत प्रेम में सराबोर हो गये। इन सूफी भक्तों की दृष्टि में साध्य भी वही प्रेम है और साधन भी। इस प्रेम के कारण अम्ल मधुर, अरूप-रूपवान ताम्र स्वर्ण, अग्नि प्रकाश दुख आनन्द शूली सिंहासन, काँटा फूल और मृत्यु जीवन बन

1 दी आइडिया आफ पर्सनालिटि इन सूफीज्म पृ 62

जाता है। कितना सामर्थ्यवान है यह प्रेम, जिसने जड को चेतन और शुष्क को सरस बनाकर रस सागर मे डुबो दिया। गोपिया इसी प्रेम मे मतवाली हो गई थी, और राधा ने इसी प्रेम से श्याम सुन्दर के हृदय को जीतकर उनका नित्य संयोग प्राप्त कर लिया था। भला प्रेम मार्गियो से यह बातें छिपी रह सकती है? उन्हे इसका सब रहस्य पूर्व से ही ज्ञात रहता है और तभी वे अपने लक्ष्य (प्यारे प्रभु) को पाने के लिये इसी प्रेम के मार्ग पर बेधडक चलते है। उनका तो यह अटल विश्वास है कि जिस प्रेम ने उन्हे इस जगत मे लाकर छोडा है, वही प्रेम उन्हें उस स्थान पर भी ले जायगा जहाँ उनका परम रूपवान प्यारा रहता है।[1]

रागानुभक्ति का यह प्रभु प्रेम लोक मर्यादा की चिंता से दूर भागवत पक्ष की मधुर साधना का दिव्य सदेश देता है। पद्मावत मे, प्रेममार्गी रसिक जायसी का ईश्वरो मुख प्रेम, अपनी सपूर्ण छवि के साथ उपस्थित हुआ है और प्रियतम के प्रेम मे वशीभूत उनकी आत्मा प्रारम्भ से ही अपने प्यार के वियोग मे तडपती हुयी प्रतीत होती है इस प्रकार 'जायसी की उपासना" माधुर्य भाव से प्रेमी और प्रिय के भाव से है।[2]

भक्तो की भाति जिसके हृदय मे उसे पाने की टीस उत्पन्न हो जाय वही सच्चा साधक है और वही उसे प्राप्त भी कर सकता है। साधक का अह यहा समाप्त हो जाता है और प्रिय दर्शन की उत्कट अभिलाषा का उदय हो जाता है। दर्शनो की यह लालसा उसके हृदय मे मिलन की आकुलता को पैदा कर हृदय मे सर्वस्व त्याग की भावना का समावेश कर देती है। कृष्ण भक्त उस मधुरिमा का आस्वाद करने के लिये इसी कारण विरक्त हो गये थे।

ईश्वर के प्रति पहले प्रेम का उदय भक्त के हृदय मे होता है, ज्यो-ज्यो यह प्रेम बढता जाता है त्यो त्यो भगवान श्रीकृष्ण की कृपा दृष्टि भी होती जाती है, यहा तक कि पूर्ण प्रेम दशा को प्राप्त भक्त भगवान को भी प्रिय हो जाता है, प्रेमी होकर प्रिय होने की पद्धति भक्तो की है। भक्ति की साधना का क्रम यही है कि पहले भगवान हमे प्रिय लगें, पीछे अपने प्रेम के प्रभाव से हम भी भगवान को प्रिय लगने लगेगें।[3]

---

1 दी आइडिया आफ पर्सनालिटि इन सूफीज्म पृ 62

2 जायसी ग्रथावली– भूमिका पृ 156 – डा रामचन्द्र शुक्ल

3 जायसी ग्रथावली पद्मावत–भूमिका पृ 54

रत्नसेन की तरह पद्मावती का प्रेम भी प्रबल है उसका रंग निवास प्रेम के लिए प्रवेश द्वार और स्वयं उसके प्रियतम का निवास स्थल। इस रमणीय स्थल पर वह अपने स्वामी के आने का आग्रह करती है। इस पद्मावती ने जब तक अपने प्रभु का नाम नहीं सुना था तब तक किसी पीर का अनुभव नहीं किया था किन्तु प्रियतम का नाम सुनते ही धैर्य छूट जाता है और वह भी उसी प्रकार व्याकुल होती है जिस प्रकार रत्नसेन। कृष्ण भक्ति के रसिक सन्तों ने भी राधा कृष्ण की इस आकुलता का बड़ा सरस वर्णन किया है।

सन्तमत मूलरूप से भारतीय था और उसमें कृष्ण का प्रभाव हो सकता था। सूफीमत में कृष्ण की चर्चा देखकर तो उसकी ओर प्रियता में सन्देह नहीं रह जाता है। मलिक मुहम्मद जायसी ने भारत के हिन्दू जीवन की कतिपय गौरवशालिनी कथाओं का स्मरण किया है। वे उन कथाओं की चर्चा करते करते कृष्ण की जीवन गाथा का स्मरण करने लगते हैं—

'तइमा कृष्णहि मरम आनापी।
कठिन बिछोह जियहि किमि गोपी॥[1]

अक्रूर के द्वारा कृष्ण को मथुरा ले जाना और गोपियों का उनके कठिन वियोग में तड़पना नागमती की विरह व्यथा को विषाद का गहरा रंग देने के लिये कवि वह साम्य चित्र प्रस्तुत करता है।

अछरी छपी छपी गोपिता।[2]

'पन्द्रहवीं शताब्दी में भक्ति साहित्य ने नवीन जीवन दृष्टिकोण और नवीन जीवनादर्श दिया था। चार सौ वर्षों तक उस आदर्श ने भक्ति को प्रेरणा प्रदान की परन्तु अन्तिम दिनों में यह प्रेरणा वेग क्रमशः एकांगी और क्षीणबल होता गया। भक्ति साहित्य ने भाषा में उत्तरोत्तर माधुर्य भरा, किन्तु अन्त तक यह माधुर्य भाव को अतिक्रमित कर गया।"[3]

भक्तिकालीन कृष्ण काव्य का एक महत् वैशिष्ट्य यह है कि कृष्ण की वात्सल्य और प्रेम लीलाओं का उत्तम कोटि का सरस, मनोहर साहित्य अन्यत्र दुर्लभ है। वात्सल्य और प्रेम के इतने सूक्ष्म चित्रण सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य में अन्यत्र नहीं मिलते। ब्रज को एक श्रेष्ठ कोटि की काव्य भाषा बनाने में इन कृष्ण भक्त मुसलमान कवियों का अनुपम योग है। इन कवियों में ही वस्तुतः गीति काव्य का उत्तम विकास और परिपाक मिलता है। इन भक्तों के ऐकान्तिक आत्म समर्पण ने मधुर रस की पावन मंदाकिनी कोटि कोटि जनों के लिए सुलभ कर दी

---

1 जायसी ग्रन्थावली नागमती वियोग खण्ड—दोहा—1
2 वही नखशिख खण्ड दोहा—4
3 आचार्य प० हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास पृ० 213 14

है। भाव, भाषा अलकार आदि दृष्टियो से इस काल का साहित्य अनूठा है। राधा कृष्ण की पावन लीला को इन कवियो ने उत्तर भारतीय जनता के लिए सहज ही उपस्थित कर दिया है। लोक भाषा के साहित्यिक पुनरुत्थान की दृष्टि से भी कृष्ण भक्त कवियो का योगदान महत्व है। लोक प्रचलित काव्य रूपो के साथ जीवन के महत् लक्ष्य और आदर्श का योग हो जाने के कारण इस साहित्य म एक अपूर्व तेजस्विता आ गई है। इनके छन्दो, गीतो, पदो म कृत्रिमता का बोझ नही है। भाषा और भाव के आडबर के वहन करने म वह पूर्ण रूप से समर्थ है। शुद्ध सात्विक जीवन भगवद भक्ति, भगवान के निमल पावन चरित्र का गान और भक्ति इस साहित्य को प्रेरणा देने वाले अंग है।

महाकवि जायसी और उनका महाकाव्य न हावत, "ताज", महाकवि जान दीवाने रसखान, जमाल और रहीम के कृष्ण भक्ति के इसी लोक कल्याणकारी स्वरूप की स्थापना की जिसने जनता के मन का एक महान लक्ष्य और महान आदर्श का सम्बल प्रदान किया।

भारतीय साहित्य म श्रीकृष्ण षोडश कला अवतार या पूर्णावतार ब्रह्म मान गये हैं। उन्ह निष्काम कम योग का प्रतीक माना गया है। वे साक्षात् योगेश्वर महाभारत युद्ध के सूत्रधार, महान कर्मयोगी, महान पराक्रमी, महान राजनीतिज्ञ योगेश्वर, पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपो म महान है। कृष्ण का महिमा मडित और वैभिन्य उपलब्धि वैचित्र्यो स समन्वित विराट व्यक्तित्व भारतीय मनीषा की एक महान उपलब्धि है—गोपीजन वल्लभ, राधा माधव राजा नेता कर्मयोगी, भोगी—सभी रूपो म व महान् और दिव्य हैं।

वे रसज्ञ, रसिक और रसस्वरूप हैं। राधा उनकी आदि शक्ति है। व उनकी जीवन सगिनी रूप में प्रतिष्ठित है। कृष्ण बाललीला, रासलीला प्रेमलीला, दक्ष शिरोमणि है।

रीतिकालीन कवियो ने कृष्ण की रास लीला और प्रेमलीला का रूपायन अत्यन्त मनोयोग और सम्पूर्ण सुरुचि के साथ किया है। सच तो यह है कि रीति काल मे कृष्ण का 'महाभारत एवम् श्रीमद्भगवत गीता' का योगेश्वर रूप प्राय समाप्त ही हो गया है। केवल कृष्ण रसिक शिरोमणि, राधा रमण, गोपी रमण भोग विलास वृत्ति के प्रधान नेता नायक, रसिया, आनन्द मूर्ति और छैला ही रह। वे श्रृगार रस के प्रधान नायक बने और रीतिकाल के कवि राधा कृष्ण की भक्ति के नाम की सूर सरिता में अपनी श्रृगारिक प्रवृत्ति का प्रदर्शन कराते रहे। य कविगण राजा और सामन्तो को रिझाने के लिए उनकी तृप्ति के लिए कविता का सृजन करते थे। राधा और कृष्ण का स्मरण तो केवल समाज म प्रतिष्ठित होने का बहाना था। कवि भिखारीदास ने स्पष्ट किया और ड के की चोट घोषित किया

'आग के सुकवि पै रीझी हैं तो तु कविताई
न तु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है।'

श्रीकृष्ण भक्ति साहित्य मनुष्य की सबसे प्रबल भूख का समाधान करता है। वह मनुष्य को बाह्य विषयो की आसक्ती से तो अलग कर देता है, लेकिन उसे शुष्क तत्ववादो और प्रेमहीन बन्धनो का उपासक नही बनाता।

वह मनुष्य की सरसता को उदबुद्ध करता है उसकी अन्तर्निहित रससिक्त अनुराग लालसा को उर्ध्वमुखी करता है। और उसे निरन्तर रस सिक्त बनाता रहा है। यह प्रेम साधना एकान्तिक है।

मनुष्य के मन की प्रक्रिया के ज्ञान, अनुराग अथवा भाव तथा संकल्प क्रिया मे रागानुगा भक्तिमार्ग अनुराग अथवा भाव को सबसे अधिक महत्ता दी है, तथा ज्ञान और कर्म को इसी के अन्तर्गत स्वयसिद्ध मानता है। आत्म ज्ञान की प्राप्ति के उपरान्त भले ही अहं का विनाश हो जाय साधनावस्था मे प्रत्यक्षत अहं की स्वीकृति रहती ही है। ज्ञान भक्तों के लिए सहज सुलभ है, ज्ञानियों के लिए कष्ट साध्य और दुलभ। साधारणत ज्ञानमार्ग का प्रथम सोपान वैराग्य है। भक्त भी वैराग्य को महत्व देता है। अन्तर केवल यह है कि वैराग्य भक्ति का अनिवार्य साधन नही, उसका स्वाभाविक अंग या लक्षण है। मनुष्य के हृदय मे यदि विरक्ति का अंकुर न भी हो तो भी भगवान की कृपा से मन और इन्द्रियाँ लीला पुरुष परमानन्द रूप श्री कृष्ण रूप की ओर उन्मुख हो जाती है और भक्त अनायास ससार के विषयो से विरक्त हो जाता है किन्तु भक्ति पथ मे वैराग्य को किसी प्रकार लक्ष्य और साधन नही माना जा सकता। कृष्ण भक्ति के वैराग्य को ही महत्व देती है केवल ऐसा नही है सासारिक कर्तव्यो को त्यागने वाले विरागियो का पक्षप नही देती।

कृष्ण भक्तो के निकट प्रेम का पथ ही सबसे बडा योग व सबसे बडा तप है। प्रेम भक्ति मे चितवत्ति का निरोध और सासारिक विकारों का नाश सहज है।

कृष्ण भक्ति सम्प्रदायो म कालान्तर म अनक प्रकार के कर्मकाण्ड विकसित हो गये, किन्तु आरम्भ मे भाव पर ही विशेष बल दिया जाता था। इसलिए भक्त कवियो ने अपने काव्य मे कर्मकाड का विशेष स्थान नही दिया, उन्होंने भक्ति के भाव पक्ष को ही एकान्त रूप से चित्रित किया है और उसी मे ज्ञान वैराग्य, योग, तप और कम का समाहार दिखलाया है। रागानुगा भक्ति की स्वत पूर्णता के कारण ही उसमे धर्म के स्मार्त विधि निषेध अनावश्यक माने गए हैं। यही नही, परिवार, समाज और शास्त्र के नियम यदि भक्ति के सहज परिपालन में बाधक हों तो उनका तिरस्कार भी आवश्यक बताया गया है। इसी भाव से गोपियाँ भक्ति मे बाधक लोक वेद और कुल की मर्यादाओ का प्रत्याख्यान करती

दिखाई गई हैं। धर्म की इस भाव पद्धति मे मनुष्य की अच्छी बुरी सभी प्रवृत्तियो मे दमन के स्थान पर कृष्णोन्मुख करने का विधान तथा सदाचरण के सुलभ मार्ग का निदर्शन है।

इन रीतियुगीन मुसलमान कवियो ने कृष्ण की रूप माधुरी का वर्णन और कृष्ण चरित का आख्यान ब्रज भाषा मे ही किया है। ब्रज भाषा का पूर्ण सौन्दर्य इसी युग म निखर कर चरम उत्कर्ष पर पहुचा। कवियो ने जादुई पच्चीकारी अलकृति शब्द शक्ति आदि का बडा सुन्दर और मोहक रूप प्रस्तुत किया है।

शब्दो को काव्य मे नगो की तरह जडकर अद्भुत कलात्मकता का परिचय दिया है। इसमे सन्देह नही कि भाव सौन्दर्य की अपेक्षा भाषा सौन्दर्य पर ही कवियो की रुचि केन्द्रित रही। भाषा स्निग्ध और स्वाभाविक है, सगीतात्मकता और ध्वन्यात्मकता के गुणो से ओत प्रोत है, उसमे चित्रमयता भी है। रसलीला मे नाद सौन्दर्य और चित्रमयता की प्रधानता है, तो आलम शेख, नेवाज मे व्यजना प्रयोग की विचित्रता है। दरबारी सभ्यता के कारण उक्तिया और वाकपटुता ने भाषा सौन्दर्य मे चार चाद लगा दिये हैं। यमक, अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, प्रभृति अलकारो ने भाषा सौन्दर्य को प्रभविष्णु बनाया है।

वस्तुत कृष्ण काव्य के अभाव मे रीतिकाव्य की कल्पना ही नही की जा सकती पूर्ववर्ती युगो की पार लौकिकता और परवर्ती युगो कि इह लौकिक सास्कृतिक चेतन्यता के बीच मे सेतु की तरह कृष्ण काव्य हमारे सामने आते है, उसम हमारी इन्द्रिय गति चेतना को अध्यात्म उन्मुख बनाया गया है। सूफियो के प्रेम की पीर की पराकाष्ठा को कृष्ण काव्य मे अपने सन्दर्भों मे आत्म सात किया है। इस युग म अनेक मुसलमान कवि कृष्ण भक्ति की ओर आकर्षित हुए। इन कृष्ण प्रेमी मुसलमान भक्तो या कवियो ने सौन्दय, शृगार माधुर्य और प्रेम की अत्य त भाव प्रवण मन मोहक आकर्षक और ललित अभिव्यक्तियो से हमे आन्तरिक स्वास्थ्य प्रदान किया है उसमे नैतिक और लोक मगल विधायक आदर्शों का समारम्भ भले ही नही हो, कि तु सौन्दर्य के भीतर स एक नये प्रकार की सकल्प बद्धता जो राम काव्य की मर्यादा वाली सकल्पबद्धता की पूरक है, हमे स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

"वैष्णव सस्कृति की भीतरी माधुरी एवम् अन्त सौन्दर्य से सम्वर्धित कर काव्य चेतना को नई मार्मिकता देने वाला कृष्ण काव्य मध्ययुगीन रामकाव्य की देन का पूरक है।"[1]

---

1 डॉ रामरतन भटनागर, हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास – पृ 205

रीतिकालीन कवियों की भक्ति भावना में वह पवित्रता शेष नहीं रही जो सूर और मीरा में थी। सच तो भक्तिकाल में ही नायकी नायिका जनित प्रेम की स्थापना की है वहीं रूप सौन्दर्य के चित्रण में रीतिकालीन कवियों को भी सर्वप्रथम स्थान पर पीछे छोड़ दिया है। "पद्मावत" में कुब्जा का सौन्दर्य वर्णन दृष्टव्य है। रीतिकाल में कवियों ने राधा कृष्ण प्रणय प्रसंग का संयोग चित्रण द्वारा अभ्यास किया है कि वे इसी जगत में जीते जागते विलासी प्राणी से प्रतीत होने लगे हैं। यह स्वाभाविक भी था क्योंकि भक्तिकालीन राधा कृष्ण के प्रति कवियों का जो पूज्य भाव तथा श्रद्धा भाव था, वह समाप्त हो चुका था। शृंगार काल के कवियों ने राधा कृष्ण की अलौकिक प्रेम लीलाओं का स्थूल रूप में ग्रहण किया। उनमें राधा कृष्ण के मधुरतम चरित्र में निहित सूक्ष्म भक्ति भावना का निर्वाह न हो सका। इसी कारण यह काव्य मनोविलास और मनोरंजन की वस्तु बनकर रह गया। शेख रंगरेजन ने नारी होते हुए भी दूतिका संदेश और दूतिका प्रसंग के पश्चात् रमण लीला का ही विशेष चित्रण किया है। "कवि" इस काल के संतुलित रचनाकार है जिनके काव्य में भक्तिकाल और शृंगारकाल का समन्वय सा प्रतीत होता है। रसलीन तो कुशल एवम् कल्पना सम्पन्न कवि हैं। जिन्होंने अनेक स्थानों पर बिहारी की चित्रात्मकता को भी पीछे छोड़ दिया है। नेवाज यारी साहब, अब्दुल शाह मीर माधो, प्यारे खाँ, नजीर अकबराबादी ने राधा कृष्ण का स्मरण तो अवश्य किया है परन्तु इन्हें भी लौकिक कृष्ण की लीलाएँ ही अधिक रुची है।

ब्रजभाषा और मुसलमान कविगण लेख में ब्रजभाषा के लगभग सात सौ कवियों के नाम गिनाये हैं। अलीखान अलीदीन के नाम वल्लभ सम्प्रदाय की सूची में गिनाये गये है। इनमें अनेक मुसलमान कवि भी हैं। रीतिकाल की शृंगारिक रचनाओं ने इनका ध्यान आकर्षित किया है। किसी कवि ने शृंगारिक रचनाओं में कृष्ण का नाम तो नहीं लिखा किन्तु अनुमानतः कृष्ण से सम्बन्धित भाव का समावेश जरूर किया है। किसी कवि ने नायक के स्थान पर कृष्ण के पर्यायवाची नामों में से एक का प्रयोग किया है। यदि इनमें से सौ कवियों ने अपनी कविता तथा संगीत में कृष्ण को आलम्बन माना है तो इसका श्रेय कृष्ण की भक्ति की तथा लोकप्रियता को दिया जा सकता है।

मुसलमान भक्त और रीतिकवियों के अति प्रिय छन्दों में कवित, सवैया एवं दोहा सोरठा का नामोल्लेख हो सकता है। सवैया छन्द मुख्यतया करुण और शृंगार रस के लिए उपयुक्त है, पर कवित्त की अनुकूलता के साथ साथ वीर रस के क्षेत्र में देखा जाता है। ये दोनों ही छन्द अंतिम पद प्रधान है। 'कवित' वीर काव्य के अन्तर्गत छप्पय' के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है। आश्चर्यप्रद है कि प्राचीन संस्कृत प्राकृत साहित्य में कहीं भी यह छन्द व्यक्त नहीं हुआ, लेकिन भक्तिकाल के उत्तरार्द्ध और सम्पूर्ण रीतिकाल में इसकी धूम है। कवित्त का हम हिन्दी का

निजी छन्द माने जाते हैं। मुसलमान कवियों में रसखानि, यारे खाँ फकीर, वाहिद, ताज, मुबारक, आलम, शेख, कादिर बख्श, नबी, अहमदुल्लाह, तालिब अली रसनायक, आजम, अली मुहिब खाँ 'प्रीतम' आदि इसके सफल प्रयोक्ता हैं।

ब्रजभाषा साहित्य में कोमल और मधुर भावों की अभिव्यंजना के लिए 'सवैया' का महत्व हमेशा रहा है।

पदों का गायन कृष्ण भक्तों में बहु प्रचलित था वे किसी न किसी रूप में 'संगीत' का ज्ञान भी रखते थे। कवि रसखानि ने परम्परा का निर्वाह न कर पद प्रथा को त्याग कर कवित्त और सवैया को अपने उद्गारों का माध्यम बनाया। पदों की रचनाएँ साधारणतः सभी मुगल सम्राटों ने की हैं। फारसी और उर्दू की तरह हिन्दी में भी गजलें और मर्सिये लिखे गये। 'जफर' और 'सौदा' को ऐसे रचनाकारों में अग्रणी माना जाता है। इसी प्रकार आलम बेगम जफर आदि की ठुमरियाँ भी प्रशंसनीय हैं।

कुछ अपवादों को छोड़कर प्रायः समस्त मुसलमान कवियों (मध्ययुगीन) की काव्य भाषा ब्रजभाषा ही रही है। भक्तिकाल में बोलचाल की भाषा और साधारण भाषा को परिमार्जित करके साहित्यिक भाषा का रूप दिया तो रीतिकाल में उसे तराशकर प्रौढ़ता प्रदान की। ब्रजभाषा इतनी उन्नत नहीं हुई थी। उसे व्याकरण बद्ध करने की चेष्टा नहीं की गई। शुक्लजी की धारणा है कि—'इस च्युतसंस्कृति दोष का निवारण होता जो ब्रजभाषा काव्य में थोड़ा बहुत सर्वत्र पाया जाता है, और नहीं तो वाक्य दोषों का पूर्णरूप से निरूपण होता जिससे भाषा में कुछ और सफाई आती।'

मुहावरों लोकोक्तियों का स्थानोपयुक्त प्रयोग भाषा सम्पन्नता का द्योतक है। मुसलमान कवि मुहावरों और लोकोक्तियों के संग्रह तथा यथा स्थान बैठाने की कला में निपुण थे।

मुसलमान कवियों की कृष्ण भक्ति साधना शृंगार काल में तो पल्लवित पुष्पित हुई किन्तु आधुनिक काल की ओर अग्रसर होते हुए यह क्षीण होती गई। आधुनिक काल में कृष्ण साहित्य में जिस बदलते हुए दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं उसका मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों में अभाव प्रतीत होता है। बाबा नबी, बाबा फजल, मीर मुराद, तालिबशाह नवखान, नजीर, नेवाज, आलम अलीमन अनीस सैयद रहमान, लतीफ ने कृष्ण विषयक रचनाएँ की हैं जो इस परम्परा की महत्वपूर्ण कड़ियाँ होते हुए भी भक्ति और शृंगार दोनों ही दृष्टि से पूर्ववर्ती रचनाओं को नहीं छू सकी हैं। हिन्दू कवियों ने आधुनिक काल में भी श्रेष्ठ कृष्ण कथा काव्य की रचना की है। रत्नाकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' मैथिलीशरण गुप्त 'दिनकर' व द्वारकाप्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती तक यह परम्परा निरन्तर बनी रही है और इसमें भक्तिकाल तथा

रीतिकाल की कृष्ण विषयक दृष्टि म भी परिवर्तन परिलक्षित होता है। इस काल मे रचनाकारो ने नई नई उद्भावनाओं के साथ कृष्ण कथा को ग्रहण किया है। मुसलमान कृष्ण भक्ति कवि रीतिकाल मे छोर सब कृष्ण क रूप सौन्दय की लीलाओ का रसमय वणन करते रहे हैं। आलम ने आधुनिक काल मे सुदामा चरित्र की रचना की परन्तु नरोत्तमदास के सुदामा चरित्र से इसका साम्य स्थापित करना उचित प्रतीत नहीं होता। अलीमन, सयद रोशन हाफिज, महबूब, वली मोहम्मद, इन्शा अल्ला खॉ ने अपनी रचनाओं म कृष्ण का उल्लेख तो किया है परन्तु इनके कृष्ण भक्तिकाल के कृष्ण के समान न तो भक्त वत्सल बन, न रीतिकालीन कृष्ण के समान रसेश्वर और नही आधुनिक युग के कवियो की नई उद्भावनाओं के प्रणेता। मुसलमान कृष्ण भक्त कवियो का स्रोत क्रमश क्षीण होता चला गया है।

हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य परम्परा मे मुसलमान कवियो का योगदान विषय वस्तु काव्य का रूप अलकरण आदि की दृष्टि स अत्य त महत्वपूर्ण है। विशष ध्यान देन योग्य है कि मुस्लिम संस्कृति की प्रवत्ति प्रारम्भ से विभिन्न संस्कृति के गुणो को इस्लाम के प्रभाव मे सवारकर अपने मे समोने की रही है हिन्दी साहित्य म सम धम और हिन्दू मुसलमान के एक होने की भावना को इस सम्पक से बल मिला है हिन्दी के सन्त कवियो न इसे आगे बढाया है। दादू दयाल ने कहा है—

(1) 'सब हम देख्या सोधि करि, दूजा नाही आन।
सब घट एकै आतमा, क्या हिन्दू – मुसलमान॥"

(2) 'हिन्दू तुरूक का कर्ता एक ताकी गति लखी न जाई।

(3) बन्दे एक खुदाय है, हिन्दू मुसलमान।
दाया राम रसूल का, लडते बेईमान॥
मुसलमान है रब्बी मेरा हिन्दू भया शरीक।
हिन्दू भया शरीफ दोऊ है फजिल हमारी॥
दोनो को समझाया ज्ञान के न्तर खोल।
मुसलमान है रब्बी मेरा हिन्दू भया शरीक॥

पलटूदास की बानी, पृ 6

सर्वव्यापी एक मोहारा, जाकी महिमा और न पारा।
हिन्दू तुरूक का एकै करता, एकै ब्रह्म सबन को भरता॥

मलूकदास

(दादू) दोनो भाई हाथ पग दोनो भाई कान।
दोनों भाई नैन है हिन्दू मुसलमान॥

मुस्लिम शासकों, फकीरों आदि ने उदार दृष्टिकोण अपनाया। हिन्दी भाषा एवं साहित्य को अपना कर प्रसारित करने में इन शासकों, दरबारों और कवियों का बड़ा हाथ रहा है मुस्लिम संस्कृति के सम्पर्क से हिन्दी साहित्य को अमूल्य निधि प्राप्त हुई है।

हिन्दी का भक्तिकालिन साहित्य तसव्वुफ से प्रभावित दिखाई देता है धर्म दर्शन, राजनीति, सामाजिक रहन सहन, अर्थ व्यवस्था, सामान्य जन जीवन आदि की दृष्टि से भी मुसलमान कवियों ने प्राय भारतीयता को ही अपनाया है उन्होंने कृष्ण के सिर पर मुस्लिम दौर की तातारी और चौतनियाँ कुलह भी रख दिखाई है। कृष्ण का निरूपण समय उन्होंने तत्कालिन मुस्लिम शासन व्यवस्था की छाया का अनुकरण किया है।

श्रीकृष्ण का चरित इतना आकर्षक, इतना व्यापक, विराट और सम्मोहन-कारी रहा है कि जायसी, ताज, जान, रहीम रसखानि प्रभृति पचासों मुसलमान कवियों ने उसे अभिव्यक्ति का केन्द्र बनाया।

वस्तुत श्रीकृष्ण का जीवन चरित और उनकी लीलाएँ रहीम रसखान, आदि कवियों को भा गईं। इसीलिए तो वे लकुटि और कमरिया पर तीनों लोकों का राज्य न्योछावर करने के लिए प्रस्तुत थे।



सदर्भ ग्रंथ सूची

क्र	पुस्तक	लेखक
1	अकबरी दरबार के हिन्दी कवि	– डॉ सरयूप्रसाद अग्रवाल
2	अनुराग बाँसुरी (नूर मुहम्मद कृत)	– स रामचन्द्र शुक्ल
3	आधुनिक साहित्य	– आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
4	आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका	– डॉ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
5	इस्लाम में सूफी साधक (निकल्सन)	– अनु प नर्मदेश्वर चतुर्वेदी
6	ईरान में सूफी मत	– बाँके बिहारी भटनागर तथा कन्हैयालाल
7	उत्तरी भारत की संत परम्परा	– प परशुराम चतुर्वेदी
8	उर्दू साहित्य का इतिहास (भाग 1)	– डॉ रामबाबू सक्सेना
9	उर्दू साहित्य का इतिहास	– ब्रजरत्न दास
10	उर्दू हिन्दी शब्द कोष	– मुस्तफा खाँ मद्दाह प्रकाशक शाखा, सूचना विभाग उ प्र प्रथम संस्करण 1959 ई
11	कन्हावत (म मु जायसी कृत)	– स डॉ शिवसहाय पाठक
12	कवीन्द्र वचन समुच्चय	–
13	काव्य निर्णय	– आचार्य भिखारी दास
14	कुतुब शतक और उसकी हिंदुई	– स डॉ माता प्रसाद गुप्त भारतीय ज्ञानपीठ कलकत्ता 1967 ई
15	कुतुब मुश्तरी (मुल्ला वजही कृत)	– स डॉ बाबू नसीरुद्दीन
16	कुरुक्षेत्र	– प रामधारीसिंह दिनकर
17	कृष्णायन (प द्वारका प्रसाद मिश्र कृत)	– भूमिका लेखक डॉ राजेन्द्रप्रसाद
18	कृष्ण जन्मोत्सव	– प्रीतम
19	कृष्ण चरित	– बकिम चन्द्र
20	खिलजी कालीन भारत	– सैयद अतहर अब्बास रिजवी
21	गउडवहो (महाकाव्य)	
22	गीतिकाव्य का विकास	– प लालधर त्रिपाठी प्रवासी
23	घनानन्द	– सुजानहित

24 चित्रावली — उस्मान (प्र स 1912 ई) वाराणसी
25 चित्ररेखा (जायसी कृत) — स प शिवसहाय पाठक
26 चदायन (मुल्ला दाउद कृत) — स डॉ परमेश्वरीलाल गुप्त
27 छिताई वार्ता — स डा माताप्रसाद गुप्त
28 जय भारत —मैथिलीशरण गुप्त
29 जायसी —प्रो राम पूजन तिवारी
30 जायसी ग्रन्थावली —स आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
31 जायसी का पद्मावत काव्य और दर्शन —डॉ गोविन्द त्रिगुणायत
32 तसव्वुफ अथवा सूफी मत —प चन्द्रबली पाण्डेय
33 ध्वन्यालोक (आचार्य ध्यान वर्धन)
34 दक्खिनी काव्य धारा —स राहुल सांकृत्यायन
35 दक्खिनी हिन्दी के प्रेमाख्यानक काव्य —डा दशरथ राज
36 नारदीय पुराण —(प्र) बगवासी प्रेस
37 नूरजहा —ख्वाजा अहमद
38 पद्मावत का काव्य सौन्दर्य —प्रो शिवसहाय पाठक
39 पद्मावत का ऐतिहासिक आधार —इन्द्रचन्द्र नारग
40 पद्मावत सार —इन्द्रचन्द्र नारग
41 पद्मावत (सटीक) —स डा मु शीराम शर्मा
42 पद्मावत —स लाल भगवानदीन 1925 ई
43 पद्मावत (मूल और सजीवनी व्याख्या) —डा वासुदेव शरण अग्रवाल
44 पदुमावति —श्री सूर्यकान्त शास्त्री
45 प्रेमकली —सत्यनारायण कविरत्न
46 प्रेमप्रकाश —शेमी
47 प्रिय प्रवास —अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
48 फारसी साहित्य की रूपरेखा —अनु हीरालाल चोपडा
49 बिहारी सतसई —बिहारी
50 बिलग्राम के मुसलमान हिन्दी कवि —डॉ गणेश चौबे
51 भारतीय दर्शन —बलदेव प्रसाद मिश्र
52 भारतीय वाङ्मय म श्रीराधा —प बलदेव उपाध्याय
53 मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य —डॉ शिवसहाय पाठक
54 मलिक मुहम्मद जायसी —मदन बरव मुस्तफा
55 मधुमालती (मझन) —स डॉ शिवगोपाल मिश्र

56 मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियां —डॉ सावित्री सिन्हा
57 मध्ययुगीन सूफी इतर मुसलमान कवि —डॉ उमाशंकर श्रीवास्तव
58 मध्यकालीन धर्म साधना —डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी
59 मध्ययुगीन प्रेमाख्यान —डॉ श्याम मनोहर पाण्डेय
60 मिश्र बन्धु विनोद (द्वितीय भाग) —मिश्र बन्धु
61 मुसलमानो की हिन्दी सेवा —कमलधारीसिंह दिनकर
62 मैनासत (साधनाकृत) —स हरिहर निवास द्विवेदी
63 मृगावती —स डॉ शिवगोपाल मिश्र
64 रसलीन और उसका साहित्य —डा रामसागरसिंह
65 रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि —डॉ शिवलाल जोशी
66 श्रीमद् भगवद् गीता —
67 सूफीमत और हिन्दी साहित्य —डॉ विमल कुमार जैन
68 सूफी काव्य सग्रह प परशुराम चतुर्वेदी
69 सूर पूर्व ब्रज भाषा और उसका साहित्य —डॉ शिव प्रसाद सिंह
70 सदेश रासक (अद्दहमाण कृत) —स हजारी प्रसाद द्विवेदी और विश्वनाथ त्रिपाठी
71 हमारी परम्परा —प्रो हुमायूं कबीर
72 हकायके हिन्दी —प डा अतहर अब्बास रिजवी
73 हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास —डॉ प्रताप नारायण टडन
74 हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास ख 4 — प्र ना प्र सभा
75 हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास ख 1 —स राजबली पाण्डेय
76 हिन्दी साहित्य कोष —डॉ धीरेन्द्र वर्मा
77 हिन्दी साहित्य का इतिहास —आ रामचन्द्र शुक्ल
78 हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास —डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी
79 हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास —डॉ रामकुमार वर्मा
80 हिन्दी सूफी काव्य का समग्र अनुशीलन —डॉ शिवसहाय पाठक
81 हिन्दी प्रेम गाथा सग्रह —प गणेशप्रसाद द्विवेदी
82 हिन्दी और फारसी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन —डॉ शिवनिवास वर्मा

83 हिन्दी पर फारसी का प्रभाव —अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी

84 हिन्दी साहित्य में कृष्ण —डॉ॰ सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

85 हिन्दी के मुसलमान कवि —डॉ॰ सरयूप्रसाद अग्रवाल

86 हिन्दी के मुसलमान कवि —गंगाप्रसादसिंह

87 हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य —डॉ॰ कमल कुलश्रेष्ठ

88 हिन्दुई साहित्य का इतिहास (तासी कृत) अनु॰ डॉ॰ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अंग्रेजी

1 आउट लाइन्स आफ इस्लामिक कल्चर — डा ताराचन्द
2 ए डिक्शनरी आफ इस्लाम — ह्यूम टी पी
3 आवर दी लव ऑफ कृष्ण
4 गीजेट बुक ऑफ इण्डिया वा 1
5 दी कृष्ण प्राबलम — ग ज पनिकर
6 दी आइडिया आफ पर्सनलिटी इन सूफीज्म
7 इवाल्युशन आव अवधी — डॉ बाबूराम सक्सेना
8 इन्फ्लुएंस ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर — डॉ ताराचन्द्र
9 इनसाइक्लोपीडिया आव इस्लाम — एम टी ह्स्टम आदि।
10 इन साइक्लोपिडिया आव रिलिजन एण्ड एथिक्स — एडीटेड बाई जेम्स
11 हिस्ट्री ऑफ मेडीवल हिन्दू इण्डिया — चिंतामणि विनायक वैद्य
12 हिस्ट्री आव ब्रजबुली लिटरेचर — सुकुमार सेन
13 मुगल इम्पायर इन इण्डिया — एस आर शर्मा
14 वैष्णविज्म शैविज्म एड मदर रिलिजस — डॉ भंडारकर
सिस्टम आफ इण्डिया।

सन्दर्भ सूची

पत्र-पत्रिकाएँ

1 करन्ट, 21 मार्च 1981
2 नवभारत टाइम्स बम्बई 3 मार्च 1975
3 महाकोशल (रायपुर) 19 अप्रेल 1981
4 कल्याण, संतवाणी अंक वर्ष 29
5 कल्याण, वर्ष 41, अंक, हनुमान प्रसाद पोद्दार का वक्तव्य
6 धर्मयुग, 30 मार्च 1980
7 परिषद् पत्रिका 1961
8 ना प्र पत्रिका, काशी, भाग 57, स 2008
9 ना प्र पत्रिका, सम्पूर्णानन्द स्मृतिअंक, वर्ष 63, अंक 14 स 2055 वि
10 हस्तलिखित ग्रन्थों का अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण
11 हिन्दी अनुशीलन — डॉ धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक